एच० आर० शिवदासानी
आई० सी० एस०, ओ० बी० ई०, बार-एट-लॉ, चीफ़ कमिश्नर, अजमेर-मेरवाड़ा,

आपने आतुरालय के पुरुष रक्षा विभाग का शिलान्यास ता० ७-११-४५ ई० को करने की कृपा की है।

ग्रन्थ प्रकाशन और औषध विक्रय

इस संस्था की ओर से ग्रन्थों का प्रकाशन और औषध-विक्रय, ये दोनों कार्य सेवा भाव से किये जाते हैं। इस हेतु से प्रत्येक वस्तु का मूल्य भरसक कम रक्खा गया है, और भविष्य में परिस्थिति अनुकूल होने पर और भी कम किया जायगा। हमारे ग्रन्थों का अन्य भाषाओं में कोई भी चिकित्सक अनुवाद कराना चाहेंगे, तो उन्हें निःस्वार्थ भाव से सहर्ष अनुमति दी जायगी। इतना ही नहीं, भविष्य में कदाच किसी कारण से इस औषधालय द्वारा ग्रन्थ प्रकाशन बन्द हो जाय, तो कोई भी धर्मार्थ संस्था हमारे ग्रन्थों को प्रकाशित करा सकती है। हमारी ओर से किसी भी प्रकार का विरोध नहीं किया जायगा।

हमने औषध प्रयोगों में से अभी तक एक भी प्रयोग गुप्त नहीं रक्खा, और भविष्य में भी प्रयोग छिपाये नहीं जायेंगे। प्रयोग विधि गुप्त रखने से उनका इच्छानुसार, दस-बीस गुना या अधिक मूल्य मिल सकता है परन्तु ऐसा करने में आयुर्वेद साहित्य को और देश को हानि पहुँचती है। अतः इस नियम के सम्बन्ध में हमने अन्य फार्मेसियों का अनुकरण नहीं किया और न भविष्य में करेंगे। यह धर्मार्थ संस्था महाप्रभु कल्याणराय की है। वे यदि इसे निभाना चाहते हैं, तो इसके संरक्षक वर्ग (ट्रस्टियों) के हृदय में विशाल और सत्य पालन में दृढ़ता प्रदान करेंगे, ऐसा हमारा दृढ़ विश्वास है।

दीनजनों के हितचिन्तक,

सेवापरायण,

विद्यावारिधि

श्री० एच० आर० शिवदासानी, आइ. सी. एस;

ओ. बी. ई; बार. एट-लॉ.

भूतपूर्व चीफ कमिश्नर

अजमेर-मेरवाड़ा

की

सेवा में

सादर समर्पित

ठा० नाथूसिंह

इस्तमरारदार-कालेड़ा-बोगला

मैनेजिंग ट्रस्टी

कृष्ण-गोपाल औषधालय

१०. सत्वाभ्र रसायन।

प्रथम विधि—अभ्रक-सत्वको कूट बारीक चूर्ण कर समान घी मिलाकर लोहेकी कड़ाहीमें भूनें। कड़ाही अति लाल होजाने पर लोहेकी खरलमें डालकर घोटें। पुनः घी मिलाकर भूनें। लाल हो जानेपर लोह खरलमें घोटें। इस तरह सात बार करें। फिर ८ वां हिस्सा गन्धक मिला बड़की जटाके क्वाथमें खरलकर टिकिया बना, सुखा, सराव सम्पुटकर गजपुट दें। इस तरह बड़की जटाके काथके ५० गजपुट दें और बट दुग्धके भी पुट देवें तो विशेष बलवान होता है। फिर त्रिफला काथके ५० गज-पुट दें। सब गजपुट बार-बार गन्धक मिलाकर देते रहें। इस तरह १०० पुट देनेपर उत्तम सत्वाभ्र रसायन तैयार होता है।

(र० र० स०)

द्वितीय विधि—अभ्रक-सत्वको मूषामें रख कर कोयलों की तीव्राग्निपर तपावें; और लाल होजाने पर कांजीमें बुझावें। फिर इमाम-दस्तेसे खूब कूट, लोहेकी खरलमें घोटें। जो कण बड़े रह गये हों, उनको मूषामें डाल कर तपावें। फिर काँजीमें बुझा कर कूटें। पश्चात् लोह खरलमें घोट कर बारीक चूर्ण करें। इस चूर्णके साथ समभाग घी मिला कर लोहे की कड़ाही में भूनें। कड़ाही खूब लाल हो जाने पर नीचे उतार लोह खरल में डाल कर घोटें। शीतल हो जाने पर पुनः समभाग घी मिला कर कड़ाहीमें भूनें। पुनः लोह खरलमें घोटें। इस तरह तीन बार करनेसे मुलायम चूर्ण हो जायगा। पश्चात आँवलों का रस और आंवलोंके पत्तोंका स्वरस मिला-मिलाकर ३-३ बार तपावें। बार-बार लाल हो जाने पर लोह खरलमें घोटें। फिर पुनर्नवा का रस, वासापत्रका स्वरस और कांजी, इन तीनोंके मिलाये

श्री० देवी शिवदासानी साहिबा

आपने आतुरालय के स्त्री रक्षा विभाग का शिलान्यास ता० ७-११-४५ ई० को करने की कृपा की है।

सेर जलमें मिला चतुर्थांश क्वाथ कर उस क्वाथका इस भस्ममें पचन करें। फिर ४ सेर गोमूत्र तथा १ सेर तिल-तैल का पचन करावें। जिससे कलईके प्रत्येक परमाणुमें रहा हुआ दोष जल जायगा, और भस्म निर्दोष बनेगी। फिर भस्मके वजनसे दूने वजनके मेंहदीके ताजे पत्ते बिना जल डाले कूटें, उसके साथ भस्म मिला टाटके टुकड़े पर दो अंगुल मोटी तह फैलावें। पश्चात् दृढ़तापूर्वक लपेट कर गोल गट्टा बनावें और ऊपर नारियल की डोरी कसकर बाँध दें। फिर गट्ठे को निर्वात स्थानमें मिट्टीके बरतनके भीतर ३ गोबरीके ऊपर रक्खें। पश्चात् ऊपर ५-७ गोबरी रखकर अग्नि दे देनेसे सफेद पुष्पवत् वङ्ग भस्मकी खील बन जाती है। इस भस्म को पुनः दूसरी बार मेंहदीके पत्तोंके साथ मिलाकर अग्नि देनेसे अति गुणवान् वङ्ग भस्म बनती है।

नोट—यद्यपि तैलादिके प्रयोगसे अशुद्ध भी निर्दोष हो जाती है। परन्तु तेल, तक्र, गोमूत्र आदि में ३-३ बार बुझाली जाय तो विशेष गुण वृद्धि होती है। (आ. नि. मा.)

मात्रा और गुणधर्म—रसतन्त्रसार प्रथम खण्डमें लिखे अनुसार।

द्वितीय विधि—१ सेर शुद्ध कलईको दलदार, मजबूत मिट्टी (या लोहे) की कड़ाहीमें डाल कर द्रव करें। उसमें थोड़ा-थोड़ा पोस्त डोडेका चूर्ण डालते जाँय और बबूलके ताजे डंडेसे चलाते रहें। ४ सेर पोस्त डोडेका चूर्ण समाप्त होने पर लगभग १२ घण्टे में भस्म बन जाती है। फिर भस्मको कड़ाईमें इकट्ठी कर ऊपर तवा ढक दें और ६ घण्टे तक अग्नि देवें। स्वांग शीतल होने पर भस्मको कपड़ेसे छान, घीकुंवारके रसमें २ दिन खरल कर १-१ तोलेकी टिकिया बना कर धूपमें सुखावें। फिर निवात स्थानमें एक परातके भीतर २॥ सेर गोबरीके टुकड़े रख ऊपरमें बिनौले

सूचना—यदि भस्म में पारा घोट (कुमारी रस से) टिक्की बनाकर सुखाले पुनः गजपुट में भस्म करें तो, अति उत्तम भस्म बनेगी (संशोधक)

मात्रा—१ से २ रत्ती दिन में दो बार शहद, मक्खन-मिश्री, सितोपलादि चूर्ण या रोगानुसार अनुपान के साथ देते रहें।

उपयोग—यह भस्म जीर्ण ज्वर, क्षय, कास अन्त्रप्रदाह, नेत्ररोग, प्रलाप आदि में अति हितकारक है। उरः क्षत और श्वास नलिका प्रदाह जन्य कास रोग में जब अत्यन्त दुर्गन्ध युक्त कफ निकलता हो, तब जसद भस्म और सुवर्णमाक्षिक भस्म १-१ रत्ती मिलाकर दिन में ३ समय ४ तोले गरम जल में मिलाकर पिलाते रहने से ३-४ मास में रोग दमन हो जाता है। नेत्र की लाली, अश्रुस्राव, दाह, दृष्टि की निर्बलता आदि रोगों पर धोये घृत में २ प्रतिशत का मलहम बनाकर भोजन तथा मक्खन मिश्री के साथ उदर सेवन करना चाहिये।

उरः क्षत में कफ रक्त मिश्रित आता हो, तो यह भस्म दिन में ३ बार अमृतासत्व, मिश्री और घृत के साथ देने से दो चार दिन में ही रुधिर निकलना बन्द हो जाता है।

सूचना—विशेष गुण विवेचन रसतन्त्रसार प्रथम खण्ड में किया गया है। यदि स्वर्ण मालिनी वसंत में खर्पर के अभाव में अन्य द्रव्य की अपेक्षा यशद भस्म डाली जाय तो उक्त रस प्रभावशाली बनता है। (संशोधक)

द्वितीय विधि—शुद्ध यसद १ सेर को लोहे की कड़ाही में डाल कर द्रव करें। फिर पोस्त डोडे का चूर्ण और भांग (मिश्रण) थोड़ा २ डालते जायं और नीम के डण्डे से चलाते रहें। ४ सेर चूर्ण डालने पर जसद भस्म हो जायगी। उसे तवे से ढक कर ६ घण्टे तक तेज अग्नि देवें। फिर स्वांग शीतल होने पर कपड़ेसे छान घी कुंवारके

निवेदन

आज बड़े हर्ष का समय है कि, परम कारुणिक भगवान् कल्याणरायजी ने विघ्न समूहों को एक तर्फ करके हमको अवकाश प्रदान किया है कि, हम अपने आदरणीय संरक्षकों सहायकों तथा प्रेमी पाठकों के कर कमलों में रसतन्त्रसार व सिद्धप्रयोग संग्रह का द्वितीय खण्ड समर्पण करें। इस खण्ड में प्रथम खण्ड की अपेक्षा, पठन, मनन तथा अनुभव करने की सामग्री अत्यधिक है। इसका एक एक पत्र उपादेय है। इसमें उन प्रयोग रत्नों को स्थान दिया गया है, जिन्होंने अपने अलौकिक व चमत्कारिक गुणों के कारण आतुरों व उनके परिचारकों के दांतों के नीचे अंगुलियां दबवा दिया है। इसी खण्ड के कतिपय प्रयोगों ने पाश्चात्य वैद्य विद्या विशारदों के चहकते हुए मुखों को बन्द कर असाध्य और भूमिस्थ मरणप्रायः रोगियों को शय्यारूढ ही नहीं, प्रत्युत स्वस्थ और सबल बना दिया है, अतः हम आशा करते हैं कि, यश की इच्छा रखने वाले वैद्य तथा उदार सज्जन वृन्द इस खण्ड को भी पूर्व की भांति अपना कर हमारे प्रयत्नों को सफल बनावेंगे।

इन प्रयोग रत्नों का संग्रह करने में श्री०पू०स्वामीजी महाराज को जो त्याग और परिश्रम करना पड़ा है, उसका वर्णन यह क्षुद्र लेखनी कर नहीं सकती। विद्वान् तथा कदरदान पाठकों को हमारे कथन की सत्यता आपसे आप मालूम पड़ जावेगी। इस खण्ड में प्राचीन महर्षियों, सिद्धों, अर्वाचीन त्याग मूर्ति सन्तों की प्रसादियों के साथ साथ अनुभवी वैद्यों के चिर परीक्षित सद्य फलदाता प्रयोगों का भी संग्रह किया गया है। इसमें घरेलू नुस्खों व चलतू चुटकलों को भी यथास्थान अपनाया गया है। ये नुस्खे दवा का नहीं; प्रत्युत दावा-खुदाई का दावा रखने वाले हैं।

रस में १२-१२ घण्टे खरलकर टिकिया बना बना कर ७ गजपुट देने से रक्ताभपीत वर्ण की मुलायम भस्म बन जाती है।

गुण धर्म—यह भस्म शीतल, रोपण और कसैली है। इसका विशेष उपयोग पित्त प्रमेह, राजयक्ष्मा और अन्त्र विकार पर होता है।

तृतीय विधि—शुद्ध यसद १ सेर को लोहे की कड़ाही में डालकर द्रव करें तथा कलमी सोरा और पीपल वृक्ष की छाल का जौ कुट चूर्ण १-१ सेर लें। द्रव होने पर दोनों की एक-एक मुट्ठी डालते जायं और बड़के डण्डे से चलाते रहें। जसद बिल्कुल धूल जैसा हो जाय, तब चलाना बन्द करें। फिर भस्म को तवे से ढक कर ६ घण्टे तक तेज अग्नि दें, स्वांग शीतल होने पर भस्म को जल में मिलाकर रख दें। जल साफ नितर जाय ऊपर ऊपर से निकाल दें। फिर नया जल मिलावें और नितरे हुए जल को निकाल डालें इस तरह ४-६ समय जल मिलाकर निकाल देवें। पश्चात् कोरी हंडी में भर कर धूप में रख देवें। भस्म सूखने पर टिकिया बना संपुट कर २० गोबरी की अग्नि देवें। दूसरे दिन घीकुँवार के रस में १२ घंटे खरल कर टिकिया बनाकर गजपुट दें। इस तरह ७ पुट देने से पीले रंग की मुलायम भस्म बन जाती है।

सूचना—बड़का डण्डा ३ हाथ लम्बा रखें। कारण कलमी सोरा डालने पर आग की लपट उत्पन्न होती है। उस समय बरा बर चलाते रहेतो भस्म पीली बनती है; नहीं तो काली बनकर फिर सफेद हो जाती हैं।

गुण धर्म—यह भस्म विशेष शीतल है। मूत्रसंस्थान के रोगों पर विशेष हितावह है। शेष गुण धर्म रसतन्त्रसार प्रथमखण्डमें लिखी हुई यशद भस्मके अनुसार। श्री-वैद्य नाथूरामजी देहलीवाले

१३. नागभस्म

प्रथम विधि—१ सेर शुद्ध शीशे को लोहे की कड़ाही में

जिन लोगों को श्रीमान् स्वामी जी महाराज के चरणों के दर्शन प्राप्त हो चुके हैं, तथा जिन लोगों ने रसतन्त्रसार व सिद्धप्रयोगसंग्रह प्रथमखण्ड, चिकित्सातत्वप्रदीप, वैज्ञानिक-विचारणा, रुग्ण परिचर्या को पढ़ा है, वा जिन लोगों ने कृष्ण-गोपाल आयुर्वेदिक धर्मार्थ औषधालय की दवाइयों का सेवन कर लिया है उनको श्री० स्वामी जी महाराज के व्यक्तित्व व अध्यवसाय का परिचय देना बेकार है। हमारा इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि, यह श्री स्वामीजी का ही आत्मबल था कि लोगों ने "शिरं दद्यात् सुतं दद्यात् न दद्यात् मंत्रमौषधम्" कथन को ठुकरा कर मंत्रमुग्ध सर्पवत् अपने अपने प्रयोग रत्नों और धातूपधातुओं को भस्म करने की क्रियाओं को दे दिया।

श्री० स्वामीजी महाराज इन प्रयोग रत्नों के बलपर धन संग्रह कर आतुरालय को, जिसके लिये आज दिन अपना सर्वस्व अर्पण किये बेचैन बैठे हैं, आसानी से बना सकते थे, मगर नहीं। इस त्याग मूर्ति में लोभ कहाँ? श्रीमान् स्वामीजी महाराज ने उन योगों को जैसा का तैसा छपवा दिया है। जनता जनार्दन निः संदेह निः संकोच उनको बनावें। काम में लें और अपने बाल बच्चों को भावी आपत्तियों से बचावें। इस प्रकार श्री० स्वामी जी ने भारतवर्ष की संपत्ति की रक्षा कर दी है, जो एक दिन अज्ञानतावश अनन्त अन्धकार में डूब जाने वाली थी।

जिन लोगों ने अपने प्रयोगों को देने की कृपा की है, हम उन सब महानुभावों के अपने अन्तः करण से आभारी हैं। कई प्रयोग दाताओं ने प्रयोग के साथ उनके व्यापक गुणों का परिचय नहीं कराया था। जिससे श्री० स्वामी जी महाराज ने उनको कल्याण रसायनशाला में तैयार करा स्वयं, अपने परिचित सज्जनों, परिचारकों तथा कृष्ण-गोपाल आयुर्वेदिक

क्षत, शूल और गुल्म आदि रोगों में हितावह है।

इस भस्म का गुणधर्म विवेचन रसतन्त्र सार व सिद्ध प्रयोग संग्रह प्रथम खण्ड में आयुर्वेदिक दृष्टि से विस्तार पूर्वक दिया है।

इनके अतिरिक्त शीशाधातु के गुण धर्म आधुनिक वैज्ञानिक दृष्टि से यहाँ पर दिया है। जिसे जान लेने पर उसका कभी दुरुपयोग न हो सकेगा।

शीशा अति मारक धातु है। इसकी भस्म कच्ची रहनेपर या योग्य न बनने पर विविध प्रकार के विपलक्षण उत्पन्न करती है। परिपक्व भस्म का भी दुरुपयोग होने पर कुछ अंश में अहितकर सिद्ध हुई है। अतः शीशा, मुर्दासंग (Lead oxide) नाग शर्करा (Lead Acitate) आदिके सम्बन्ध में डाक्टरी मतानुसार गुणधर्मका विवेचन किया जाता है। यह गुणधर्म कच्चे शीशेका है। उत्तम बनने पर सौम्य बन जाता है। फिर भी दोषपूर्णांशमें दूर नहीं हो सकेगा।

शीशा धातु उदर में जाने पर प्रारम्भ में कुछ भी क्रिया नहीं दर्शाता; तथापि आमाशय और अन्त्र के विविध रसों के साथ रासायनिक सम्मेलन होने पर द्रवणीय होकर शोषण हो जाता है। फिर ग्राही गुण दर्शाता है।

शीशा धातु की क्रिया द्विविध हैं। पहली स्थानिक-संकोचन और अधिक मात्रा में प्रयोग करने पर उग्रता उत्पादन। दूसरी क्रिया शोषण होने पर व्यापक क्रिया। दोनों क्रिया परस्पर विरुद्ध है। कारण स्थानिक उग्रता उतनी उपस्थित होती है कि उस स्थान की शोषण शक्ति का ह्रास होता है। इसलिये व्यापक क्रिया प्रकाशनार्थ नागघटित औषध प्रयोग करना हो तो मात्रा बहुत कम देनी चाहिये। जिससे स्थानिक उग्रता उत्पन्न न हो।

शीशा घटित औषध की व्यापक क्रिया संकोचक और अव-

धर्मार्थ औषधालय के रोगियों को सेवन करा उनके गुह्यातिगुह्य गुणों की समीक्षा कर उनके गुण धर्मो का वर्णन विस्तार के साथ किया है। ऐसे स्थानों में श्री० स्वामी जी के अप्रतिम प्रतिभा का पता चलता है। इस खण्ड में ऐसा कोई भी प्रयोग नहीं है जो कि, कसौटी पर कसा न गया हो, अतः सन्देह करना अनावश्यक होगा। यह खण्ड आयुर्वैदिक प्रेमी वैद्य बुभूक्षुओं तथा विद्वान् वैद्यों को भी सहायक होगा। जहाँ प्रथमखण्ड में शास्त्रीय औषधियों का प्रचुरता थी, वहाँ इसमें अनुभूत प्रयोगों की रोगानुसार शृंखला है। मुझे खेद है कि, इस खण्ड को उस सूची से वंचित कर देना पड़ा है, जिसमें रोग के किन किन अवस्थाओं पर कौन कौनसी ओषधियों का प्रयोग किया जाना लिखा था। वह सूची ज्ञानवानों तथा गृहस्थों के बड़े काम की वस्तु थी; मगर इसमें हताश होने की कोई बात नहीं। श्री० स्वामी जी महाराज ने तत्तत् ओषधियोंका गुण धर्म वर्णन में स्पष्ट कर दिया है कि. कौन कौन से लक्षणों क तारतम्य होने से कौन कौनसी ओषधियों का प्रयोग करना चाहिये। इसमें देश, काल, वय के अनुसार ओषधियों की मात्रा तथा पथ्यापथ्य पर पूर्ण रुपेण प्रकाश डाला गया है फलतःयह खण्ड एक विश्वसनीय पारिवारिक चिकित्साशास्त्र बनगया है

इस खण्ड के प्रकाशन का समाचार हमने आज के ३-४ वर्ष पहले छाप दिया था। उस समय इसका काम समाप्त हो चुका था। केवल प्रेस में देना बाकी था कि, इतने में एक दिन श्री० स्वामी जी महाराज ने पूरे लेख को वैद्यराज श्री पं० राधाकृष्ण जी द्विवेदी, आयुर्वेदाचार्य, प्रिंसिपल गवर्नमेण्ट आयुर्वेदिक कालेज हैदराबाद (दक्षिण) के पास भेज दिया। वैद्यराज जी ने कृपा करके एक एक प्रयोगों की समुचित जांच की. और तत्तत् स्थानों पर अपने आवश्यक सूचना और विवेचन से

मात्रा—२ से चार रत्ती मक्खन-मिश्री, शहद या दूध के साथ देवें।

गुणधर्म—शीतल, शामक, अम्लता नाशक और उदरवातहर है। इसका उपयोग मुक्ता पिष्टी के समान होता है, ऐसा आचार्य-जी का मत है। विशेष गुणधर्म रसतन्त्रसार प्रथम खण्ड में दिया है।

चन्दनादि अर्क—चन्दन चूर्ण, मौसमी-गुलाब के फूल, केवड़े के फूल और कमलपुष्प को १६ गुने जल में मिलाकर ¾ अर्क खींच लें।

१७. प्रवाल भस्म।

प्रथमविधि—प्रवाल शाखा २० तोले को १ सेर गोमूत्र में डालकर मन्दाग्नि पर उबालें। गोमूत्र चतुर्थांश शेषरहनेपर हांडी को नीचे उतार लेवें। शीतल होने पर प्रवाल को जल से धो नींबू के रस में ३ दिन तक डुबो देवें। चौथे दिन प्रवाल को जल से धो लेने पर उपर से सफेद हो जाती है। पश्चात् उसे सराव सम्पुट में बन्द कर लघु पुट देवें। स्वाङ्ग शीतल होने पर निकाल घी कुंवार के रस में १२ घण्टे खरल कर २-२ तोले की टिकिया बनाकर सूर्य के तेज ताप में सुखावें। फिर सराव सम्पुट कर गजपुट में फूंक देने से श्वेत भस्म बन जाती है। इस भस्म को जिह्वा पर डालने से खारापन नहीं जाना जाता, एवं जिह्वा नहीं फटती। श्री. पं० हरि नारायणजी शर्मा आयुर्वेदाचार्य

मात्रा—१ सेर ४ रत्ती दिनमें २ से ३ बार रोगानुसार अनुपानके साथ देवें।

उपयोग—यह भस्म सब प्रकारके ज्वरमें दोषपचनके लिये अति हितावह है। कब्जहो, तो उसे भीदूर करती है।

अलंकृत किया, चिरकाल के अनुभूत गुप्त उत्तम प्रयोगों को जोड़ कर लेख को और भी उपादेय बनाकर वापस किया। इसके बाद अजमेरस्थ राजवैद्य पं० रामचन्द्रजी शर्मा ने इस खण्ड की पुनरावृत्ति की। आद्यन्त लक्ष्य पूर्वक पढ़कर संशोधन कर दिया और उदारता पूर्वक अपने सफल उत्तम प्रयोगों को भी सम्मिलित कर दिया। इस प्रकार समय तो लगगया, मगर सम्पादन कार्य विशेष संतोषप्रद हुआ है।

विलम्ब के अन्यान्य कारणों में से एक मुख्य कारण विश्व-व्यापी संग्राम को आप लोग भी भली भांति जानते हैं। यह संग्राम समाप्त तो हो गया है मगर अन्याय पूर्वक धन कमाने की लालसा या आर्थिक कठिनाइयों के मारे देश का नभो मण्डल साफ होने नहीं पाता। आवश्यकीय सामग्रियां अत्यधिक प्रयत्न करने पर भी नहीं मिल पाती। कागज मिलने पर इसे (१॥ वर्ष पहले) आदर्श प्रेस (अजमेर) में दिया गया किन्तु सुबोध कम्पोजीटरों की योग्य व्यवस्था न होने तथा योग्य टाइप आदि साधनों के न मिलने के हेतु से कार्यारम्भ में १४ मास लग गये और कार्य आधा ही हुआ। फिर उनने छापना बन्द किया। निरुपायवश हमें शेष कार्य भारतीय प्रेस में कराना पड़ा। इस प्रेस में भी समय अधिक लग गया। इस तरह विघ्नों के हेतु से दीर्घकाल के पश्चात् भगवान् कल्याणराय के कृपा प्रसाद से ही आज दिन प्राप्त हुआ है और हम आपके कर कमलों में इस पुस्तक रत्न को समर्पित कर रहे हैं। हमें दुःख के साथ इतना स्वीकार करना पड़ता है कि "श्रेयांसि बहुविघ्नानि" के नाते छपाई के समय अन्तिम प्रुफ देखने का योग्य प्रबन्ध हम नहीं करा सके, जिससे इसमें बहुत सी त्रुटियां हो गई हैं, कागज और छपाई सन्तोषप्रद नहीं हो सकी, तथा दीर्घकाल भी व्यतीत हो गया; उन सब के लिये हम सानुनय

भांग, वच्छनाग आदि विष, दूषीविष, कृत्रिम विष आदि नष्ट होते हैं।

सूचना—विष प्रकोपके शमनार्थ इस औषधके साथ नींबू (कागजी नींबू) के बीजकी गिरीका चूर्ण निवाये जलके साथ देना विशेष हितावह माना जायगा। नींबूके बीज सब प्रकारके विषको दूर करनेमें सहायक हैं। किन्तु वच्छनागका विष हो, तो सोहागा देना चाहिये। सोहागा, वच्छनागके विषका, प्रतिहारक द्रव्य है।

दूसरी विधि—हल्दी, सोहागाका फूला, जावित्री, नीला-थोथाका फूला, इन चार औषधियों को समभाग मिला देवदालीके रसमें ३ दिन खरल कर २-२ रत्तीको गोलियां वना लेवें। (र० र०)

मात्रा—१ से ४ गोली निवाये जल, गोमूत्र या मनुष्यके मूत्रके साथ देवें। यदि २ घण्टे तक वमन न हो, तो पुनः दूसरी मात्रा देवें।

उपयोग—यह रसायन सब प्रकारके स्थावर, जङ्गम विषोंको दूर करता है। इसके सेवनसे वमन और दस्त लगते हैं। जिससे आमाशय और अन्त्रमें रहा हुआ विष सत्वर निकल जाता है। एवं यह रस कुछ अंशमें रक्तमें रहे हुए विषको प्रस्वेद द्वारा निकाल देता है तथा कुछ अंशका रूपान्तर करा देता है।

सूचना—विषका निवारण हो जाने पर भी यदि वमन और दस्त वन्द न हों, तो लाही (मुर मुरे) शहद और मिश्री मिलाकर खिलावें; अथवा नारंगी या मोसम्बीका रस पिलावें।

२. वमनेश्वर रस।

निर्माण विधि—अंकोलकी गिरी १० तोले, नीलाथोथा, शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक और ताम्र भस्म ५-५ तोले लें। पारद गन्धककी कज्जली करके नीलाथोथा और ताम्र भस्म मिलावें।

क्षमा याचना करते हैं। उन न्यूनताओं का निराकरण दूसरे संस्करण में किया जावेगा।

हम अपनी हार्दिक कृतज्ञतापूर्वक प्रयोग दाताओं के समक्ष प्रार्थना करना चाहते हैं कि, उनकी चीजों को उनके नामों से ही प्रकाशित कर दिया है। प्रमादवश किसी स्थान पर नाम देना रह गया हो या कहीं कुछ अन्यथा छप गया हो, उसके लिये वे कृपापूर्वक हमें सूचित कर दें, ताकि हम प्रयोगों की अशुद्धियों को दूर कर सकें और भूल सुधार सकें।

प्रथम खण्ड में जिस तरह मराठी औषध गुणधर्म शास्त्र के अनेक प्रयोग लिये थे, उस तरह इस खण्ड को भी उनके अनेक प्रयोगों से अलंकृत किया है। इस सम्बन्धमें माननीय श्री० पं० गंगाधरजी शास्त्री गुणे आयुर्वेद पंचानन और उस ग्रन्थ की प्रकाशन संस्था के हम आभारी हैं। इसी तरह हम आचार्य प्रवर श्री० पं० यादवजी त्रिकमजी महोदय का आभार मानते हैं। आचार्य महोदयने अपने "सिद्ध प्रयोग संग्रह" में से हमें जिस उदारताके साथ प्रयोगों को लेने को अनुमति प्रदान की, वह उन्हीं को शोभा देती है। हम उनके भूरि भूरि कृतज्ञ हैं। हम अपनी कृतज्ञता श्रद्धेय पं० राधाकृष्णजी द्विवेदी आयुर्वेदाचार्य तथा श्रद्धेय राजवैद्य पं० रामचन्द्रजी शर्मा की सेवा में भी अर्पण करना परम कर्तव्य समझते हैं, जिसके कृपाप्रसाद से इस खण्ड का सम्पादन सुचारु रूप से हो सका है।

अन्त में महाप्रभु कल्याणरायजी से प्रार्थना है कि श्री० १०८ श्री० स्वामी कृष्णानन्दजी महाराज को दीर्घ जीवन प्रदान करते हुए [illegible] प्रदान करें, जिसके प्रसाद स्वरूप हम

फिर अंकोलकी गिरीका चूर्ण मिला, नमक जल, देवदाली स्वरस, मैनफलका क्वाथ, वासा स्वरस, वचका क्वाथ, नीमके पानोंका स्वरस, परवलके पानोंका स्वरस और मुलहटीकाक्वाथ इन ८ द्रव्योंकी १-१भावना देकर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लेवें।

(र० यो-सा०)

मात्रा—१ से ३ गोली २० से ४० तोले निवाये जलके साथ प्रातः काल दें।

उपयोग—अम्लपित्त, अपचन, कफ, पित्त प्रकोप, वान्ति, कुष्ठ आदि रोगोंमें जहां वमन करानी हो, वहां पर यह रस दिया जाता है। अति योग होने पर आंवलोंका चूर्ण शक्कर मिलाकर खिलावें।

इस रसायनमें अंकोल मिलाया है। वह स्वेद जनक, शोधक, सारक और विष हर है। वह कफको शिथिल करके बाहर निकालता है। पूरी मात्रा देने पर वमन, विरेचन होते हैं तथा प्रस्वेद भी आता है। चूहेके विष पर अंकोल विशेष हितावह है। अंकोल देकर वमन कराने पर हृदय और धमनीमें शिथिलता आ जाती है। इस हेतुसे वमन हो जाने पर लक्ष्मी विलास, रससिंदूर प्रवाल या सुवर्णवसंतका सेवन कराया जाय तो अच्छा है।

द्वितीय विधि—देवदालीके बीज १६ भाग, शुद्धपारद और शुद्ध गन्धक १-१भाग लेवें। पहले कज्जली करके देवदालीका चूर्ण मिलावें। फिर देवदालीके रसकी ७ भावना देकर सुखा लें। पश्चात् उसके समान वजनमें शुद्ध नीलाथोथा मिलाकर खरल कर लेवें। (र० यो सा०)

मात्रा—२ से ६ रत्ती निवाये जलके साथ।

उपयोग—ऊर्ध्व जत्रुगत रोगोंमें जब मल कफ या पित्त प्रकोप हो गया हो, तब इस रसायनका उपयोग करनेसे यथेष्ट वमन होकर शुद्धि हो जाती है।

संसार के समक्ष उत्तमोत्तम ग्रन्थों, रसायनों व कल्पों को रख सकें। इति शम्।

पो० कालेड़ा-बोगला (जि० अजमेर) ता० १-९-४७. — विनीत ठा० नाथूसिंह संचालक-कृष्ण-गोपाल औषधालय।

ता० क०

रसतन्त्रसार व सिद्ध प्रयोग संग्रह प्रथम खण्ड का पञ्चम संस्करण ४ मास पहले तैयार हो गया था। वह समाप्त होने आया है। उसका षष्ठ संस्करण छपवाने का प्रबन्ध कर रहे हैं। चिकित्सातत्वप्रदीप प्रथम खण्ड का द्वितीय संस्करण तथा नेत्र-रोगविज्ञान छप रहा है, जो ३-४ मास में तैयार कर देने का वादा कान्ति प्रेस (आगरा) ने किया है। उसके लिये हमें उधार रकम की आवश्यकता है। चिकित्सा तत्वप्रदीप के लिये ८०००) रु० और नेत्ररोग विज्ञान के लिये १३०००) रु० कागज, ब्लोक, छपाई आदि में लग जायेंगे। इसी तरह रसतन्त्रसार व सिद्धप्रयोगसंग्रह (प्रथम खण्ड) के नये संस्करण के लिये भी ८०००) रु० चाहिये। इन सब ग्रन्थों के लिये अभीतक ९१००) रु० हमें उधार मिले हैं। (४१००) बिना व्याज से ५०००) व्याज से शेष रकम चाहिये। इन ग्रन्थों के लिये उदार सज्जन १ वर्ष के लिये १०००) १०००) या अधिक अथवा ५००) या कम से कम २००) २००) रू०तक उधार देने की कृपा करेंगे। बिना व्याज उधार देने वालों के नाम औषधालय के नियमानुसार उन ग्रन्थों के निवेदन के अन्त में प्रकाशित किये जायेंगे। एवं साभार रकम १ वर्ष बाद वापस भेजवा दी जायगी।

ग्रन्थका मूल्य ५) रु० रक्खा है। यह वर्तमान समयमें अन्य प्रकाशकोंकी अपेक्षा अधिक नहीं हैं, किन्तु हमारी नीति अनु-सार हमें अधिक मालूम होता है। परन्तु पुस्तक प्रकाशन में कितनेक व्ययखर्च हमें भोगने पड़े हैं। इस हेतु से निरुपाय वश ऐसा करना पड़ा है।

पारदको नमक और सेहुंडके दूधके साथ मिलानेसे वान्ति कारक गुणकी उत्पत्ति होती है। यदि सेहुंडका दूध न मिलाया जाय, केवल नमक मिला कर तैयार किया जाय तो, विरेचन गुण दर्शाता है। डाक्टरी में कैलोमल (Hydrargyri Subchloride or Calomal) का प्रयोग है, वह भी एक प्रकारका संशोधक रस कर्पूर है। डाक्टरी विधि और गुण आगे द्वितीय विधिमें दिये हैं।

द्वितीय विधि—खनिजहिंगुल (Persulphate of Mercury) १० औंस, पारद ७ औंस और समुद्र नमक (Chloride of Sodium) ५ औंस लें। पहले हिंगुलको थोड़े जल में पीसें फिर पारद मिला कर खरल करें। पारद निश्चन्द्र होने पर नमक मिला मर्दन करें। अच्छी तरह मिल जाने पर डमरु यन्त्रमें डाल संधि को वज्र मुद्रासे वन्द करें फिर चूल्हे पर चढ़ा कर केलोमल को उड़ालेवें। उड़नेके समय कुछ अंश नीचे गिर जाता है। उसे तब तक साफ जलसे बार बार धोवेंकि, जब तक धोया हुआ जल हाइड्रो सल्फ्यूरिड एसिड ऑफ एमोनिया मिलने पर कृष्णवर्ण न हो जाय। फिर लगभग २११ डिग्री ताप द्वारा सुखा कर बोतल में भरलेवें।

यह गन्ध और स्वाद रहित श्वेतवर्णका मुलायम चूर्ण भासता है। जल, शराब और इथरमें मिलाने पर नहीं मिलता। अग्निपर डालनेसे उड़ जाता है। चूनेके जल और पोटासके द्रवमें डालनेसे काले रंग के ऑक्साइड ऑफ मर्क्युरी (Oxide of Mercury) होकर तले बैठ जाता है।

मात्रा—½ से ५ ग्रेन। १ से ३ ग्रेन तक। लाला निःसारक रक्तशोधक और स्रावक क्रियावर्धक। ५ से १० ग्रेन मात्रामें देने पर विरेचन, पित्त निःसारक और कृमिनाशक गुण दर्शाता है।

उपयोग—इस रसायन में विरेचन, पित्त निःसारक, कृमि-

जाता है। यदि ज्वरके साथ यकृतमें रक्त संग्रह आदि उपद्रव हो या किसी यन्त्र का प्रदाह होता हो तो केलोमल स्वल्प मात्रामें अहिफेन या एन्टिमनि (सुरमा)के साथ मिलाकर तथा कृमिनाशके लिये रेवाचीनीके साथ दिया जाता है।

संन्यासरोगमें जमालगोटेका तैल या जुलावाके साथ अति विरेचन करानेके उद्देश्यसे व्यवहृत होता है।

इनके अतिरिक्त व्युची, कुष्ठ और अनेक प्रकारके त्वचारोगों पर केलोमलका मलहम लगाया जाता है। वालकोंको चक्षुप्रदाह होने पर सलाई पर किञ्चित् केलोमलको लगाकर अञ्जन करें। फिर १-२ घण्टे बाद थोड़ेसे जलसे नेत्रोंको धोदेवें। रोग उत्कट हो तो, यह प्रयोग प्रातःसायं दिनमें दोवार करें। नहींतो एकवार प्रयोग करते रहनेसे एक सप्ताहमें आरोग्य लाभ होजाता है।

उपदंश जन्यरोगोंमें भी केलोमलको आवश्यकतानुसार केवल भुरकाने अथवा मलहमके रूपमें लगानेसे विशेष लाभ होता है।

४. रुक्मीशरस।

विधि—हरड़काचूर्ण १ सेर और नीबूके रसके साथ शोधित जमालगोटा १६ तोलेको मिलाकर २० तोले थूहरके दूधमें १२ घण्टे खरलकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनालेवें। (र० सा० सं०)

मात्रा—१-१ गोली प्रातः कालको जलके साथ देवें।

उपयोग—यह रसायन उत्तम कोटिका विरेचक है। इसके सेवनसे अन्यविरेचन ओषधियोंके समान दाह, मूर्च्छा, चक्कर आना, थकावट आदि कोईभी विकार नहीं होते; वेग सहित दस्त आते हैं। आमको दूरकरनेमें यह श्रेष्ठ ओषधि है। इस गुटिकाके सेवनसे जैसा रेचन होता है, वैसा निरूह वस्ति (सारक ओषधियों के क्वाथकी वस्ति) देनेपर, विन्दुघृतसे या निसोतके सेवनसे नहीं होता। इसके सेवनसे देह अति शुद्ध होती है; और वल का भी

विशेष ह्रास नहीं होता है। यह रसायन सौंदर्य, बल और आयुको बढानेमें उत्तम है।

यह रसायन कोष्ठबद्धता, दारुण उदररोग, अर्शरोग और जो रोग अधोभागके शोधनसेशमन होते हों, उन सबपर महौषधि है। अतः इसकी सर्वत्र योजना करनी चाहिये। यह आमनाशक, कामवर्धक और देह को शुद्ध बनाने वाली ओषधि है।

नोट—सगर्भास्त्री और अति सुकुमार, क्षत, क्षयी, आदि रोगियों को इसका प्रयोग नहीं करना चाहिये।

५. गुड़ादिमोदक।

विधि—गुड़ ३२ तोले, हरड़ ८० तोले, दन्तीमूल और चित्रकमूल २-२ तोले तथा पीपल और निसोत १०-१० तोले लें। सबको मिलाकर १-१ तोलेके मोदक बना लेवें। (वं० से०)

मात्रा—१-१ मोदक १०-१० वें दिन प्रातःकाल निवाये जलके साथ लेवें।

उपयोग—इस मोदकके उपयोगसे कोष्ठस्थ दोषका संशोधन होता है। जिससे ग्रहणी, पाण्डु, अर्श और कुष्ठ रोग नष्ट होते हैं। जिसदिन मोदकका सेवन करें, उस दिन उष्णभोजन करें। केवल इतना परहेज रक्खें।

यह अतिसौम्य संशोधक है। सामायतः इससे १-२ दस्त साफ आजाते हैं, कोष्ठ में रहे हुए सेन्द्रियविष, आम, कृमि आदि नष्ट होते हैं। जिससे ग्रहणी, अर्श, कुष्ठ, त्वचारोग, पाण्डु आदि अनेक रोगों के पोषक आम आदि की उत्पत्तिही नहीं होती। परिणाममें ग्रहणी आदि रोग नष्ट हो जाते हैं।

६. सुख विरेचन वटी।

विधि—जमालगोटेके बीजोंको धोकर फिर तोड़ उसके मग्जोंकी दो दो दाल करलें। ऐसी दाल १ तोलेको रात्रिको एक

प्रकरण सूची

कलईदार पात्रके भीतर उबलते हुए जलमें डालकर ढक दें। सुबह दालको हाथसे मसल कर गरम जलसे धोकर खरलमें घोटें। अच्छी तरह पिस जाने पर सोंठका कपड़छान चूर्ण १० तोले मिला जलके साथ ३ घण्टे खरल करके २-२ रत्तीकी गोलियां बना लेवें। श्री० पं० श्री गोवर्धनजी शर्मा छांगाणी

उपयोग—१-१ गोली रात्रिको सोते समय शीतल जलसे निगलने पर सुबह १ दस्त साफ आ जाता है।

सूचना—सगर्भा एवं सुकुमार स्त्रियों को नहीं देना चाहिये।

७. बृहन्मञ्जिष्ठादिचूर्ण।

विधि—मजीठ, छोटी इलाचीके दाने, सौंफ, पाषाणभेद, सोरा, गोखरु छोटा और रेवन्द चीनी १-१ तोला; सोनागेरु घीमें (एरण्ड तैलमें) भुनी हुई, हरड़, बड़ी हरड़, बहेड़ा, आंवला और गुलाबके फूल २-२ तोले; तथा सनाय ४ तोले लें। सबको मिला कूट कर कपड़छान चूर्ण करें। श्री० पं० यादवजी त्रिकमजीआचार्य

मात्रा—३ से ६ माशे सुबह अथवा रात्रिको शीतल या निवाये जलके साथ लेनेसे १-२ दस्त बिना कष्टसे साफ आ जाते हैं।

उपयोग—यह चूर्ण दस्त और पेशावको साफ लाने वाला और रक्त शोधक है। यह कब्ज, मूत्रकी रुकावट, अर्श और रक्त विकारमें विशेष लाभ प्रद है। पित्त प्रकृति वालोंको तथा पित्त और रक्त विकारमें इसका प्रयोग होता है।

८. पारद वटी (नीली वटी)

विधि—शुद्ध पारद २ औंस, गुलकंद ३ औंस और मुलहठी का चूर्ण १ औंस लेवें। पहले पारदको गुलकंदमें मिलावें। फिर मुलहठी मिलाकर २-२ रत्तीकी गोलियां बना लेवें।

प्रयोग सूची

उपयोग यह वटी विरेचनार्थ दी जाती है। इसका उपयोग मुंहमें लाला निःसरण वृद्धि कराने और रक्त शोधनके लिये सर्वदा होता है। यकृत्के पित्त प्रकोप (Biliousness) होने पर, यकृद् वृद्धि, दबाने पर वेदना, यकृत्मेंसे पित्त निःसरणाधिक्य, वेदना, शिरदर्द, आलस्य, मानसिक अवसाद, बेचैनी और आहार पचनमें विकृति, खांसने पर पीड़ा होना, किञ्चित् शीत लगकर ज्वर आजाना और कोष्ठ बद्धता आदि लक्षण होते हैं; ऐसे रोगों में इस ओषधिका उपयोग रात्रिको सोनेके समय करनेंसे आश्चर्य-कर फल प्राप्त होता है। इसका उपयोग अन्त्रके भीतरसे समस्त वेदना उत्पादक पदार्थोंको बाहर फेंक देता है; यकृत्का संशोधन करता है; तथा पित्तप्रणालीके प्रदाह को दूर करता है।

सामान्य मस्तिष्कावरण प्रदाह (Meningitis) में १ गोली खिलाने और पारद मलहमकी मालिश करनेसे अच्छा लाभ पहुंच जाता है। फिरंग रोग (Hard Chancre) पर दिनमें दो बार १-१ गोलीकी मात्रामें इस औषधका उपयोग करनेसे तथा नीला धावन (ब्लेक वाँश) की पट्टी बाहर लगाते रहनेसे रोग शमन हो जाता है। किन्तु सामान्य उपदंश (Soft Chancer) पर पारदका आभ्यन्तरिक उपयोग नहीं होता। इस बात को सर्वदा लक्ष्यमें रखना चाहिए।

फिरंग रोगमें एक क्षत होता है; सामान्य उपदंशमें अधिक (४-५) घाव होते हैं। फिरंगमें चारों ओर की धारा कठिन और बीचमें गड्ढा होता है। पूय नहीं आता, जल सदृश रस-स्त्राव (उग्र रूप धारण करने पर पूय) होता है; तथा ज्वर आ जाता है; किन्तु सामान्य उपदंशमें चारों ओरकी धारा नरम रहती है। और बहुत पूय निकलता है; ज्वर नहीं आता। इन लक्षणोंके भेदसे फिरंग रोग पृथक् हो जाता है। उपदंश शिश्नेन्द्रिय परसे मिट जाने पर विष समाप्त हो जाता है। परन्तु फिरंगके व्रण

पड़ता है। एवं आमाशयके दोषसे केवल ज्वर उत्पन्न होता है, ऐसा नहीं। दोष दूष्य आदिके संयोगसे इतर व्याधि भी निर्माण हो सकती है। इस दृष्टिसे ओषधिके गुणधर्म का विचार करना चाहिये।

केवल सामदोषसे अग्निमान्द्य उत्पन्न होकर ज्वरोत्पत्ति होने पर त्रिभुवनकीर्ति, आनन्द भैरव आदि औषधों का उपयोग होता है; किन्तु सामदोषज अग्निमान्द्यका निमित्तकारण (हेतु) मनोव्याघात, अतिशय मानसिकश्रम, काम, शोक, भय आदिका अतियोग हो; अथवा मानसिकश्रम और उसीके हेतुसे शरीरके भीतर विशेषतः रक्तमें पाण्डुता आकर फिर ज्वर आने पर इस रसायन का उपयोग करना चाहिये। इस कारणसे उत्पन्न धातुवैषम्य प्रवृत्ति के मूलमें ही अन्तर होता है। इसी हेतुसे उन दोनोंसे उत्पन्न रोगोंमें भी भेद स्पष्टरूपसे प्रतीत होगा ही। धातुवैषम्यको दूर करने के समय इस अन्तरकी ओर अवश्य लक्ष्य देना पड़ता है।

मिथ्या आहार से उत्पन्न हुई धातु वैषम्य प्रवृत्ति स्थूल रूपकी होती है; और मनोव्याघात जनित धातु वैषम्य प्रवृत्ति सूक्ष्म स्वरूपकी होती है। इस हेतुसे इसका परिणाम पहले मन पर होकर फिर शरीर पर प्रकाशित होता है; तथा मिथ्या आहार जन्य वैषम्यमें स्थूल शरीर के अवयवों में दोष संगृहीत होता है। इस तरह संप्राप्ति शास्त्रकी दृष्टिसे इन दोनोंमें यह अन्तर अवस्थित है। चिकित्सा करने में इस उत्पत्ति की ओर दुर्लक्ष्य नहीं करना चाहिये।

इस अमृतार्णव रसायनमें अभ्रक और लोह, इन दोनोंका कार्य मनोव्याघात जन्य दोष दुष्टि को नष्ट कर धातु साम्य प्रवृत्ति प्रस्थापित करना है। इस हेतु से कामज्वर, भय या शोकसे उत्पन्न ज्वरोंपर यह रसायन ब्राह्मीअर्क, पित्तपापड़ा, सारिवा या

इस औषधमें कज्जली जन्तुघ्न, योगवाही, रसायन, विकाशी, और व्यवायी है। इसके गुण धर्मके हेतुसे श्लेष्म दुष्टि नष्ट होकर धातु साम्य प्रस्थापित होता है। अभ्रक और लौहभस्मका कार्य रसायन आदि गुण के हेतुसे अत्यन्त सूक्ष्म परमाणुपर्यन्त पहुँच जाता है। अभ्रक भस्ममें वातवाहिनियां और वातवह केन्द्रके लिये शक्ति दायक और शामकगुण हैं। एवं लोह भस्ममें रक्तको सबल बनाकर सारे शरीरके बलको बढानेका गुण रहा है। वच्छ-नाग ज्वर हर, वेदनाशामक और वातका आवेग कम करने वाला है। वच्छनागको गौमूत्रमें शुद्ध करके मिलानेसे हृदयकी शक्ति क्षीण नहीं करता। चित्रकमूलमें अग्निप्रदीपक, पाचक और आमा-शयस्थ कफदोषकी विषमताको नष्ट करना तथा लघु अन्त्र और बृहदन्त्रमेंसे वात दुष्टिको दूर करना, ये गुण अवस्थित हैं।

(औ० गु० ध० शा० के आधार से)

२ चिन्तामणि रस।

विधि—शुद्धपारद, शुद्धगन्धक, शुद्धवच्छनाग, ताम्रभस्म, अभ्रकभस्म, हरड़, बहेड़ा, आंवला, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल और शुद्धजमालगोटा, इन १२ औषधियों को समभाग मिलाकर द्रोण-पुष्पीके रसमें १ दिन खरल कर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लेवें।

(भै० र०)

मात्रा—१ से २ गोली दिनमें दोबार अदरखके रस या रोगा-नुसार अनुपानके साथ देवें।

उपयोग—यह रसायन अजीर्ण और उससे उत्पन्न ज्वर पर रामबाण है। इसके अतिरिक्त आठों प्रकारके ज्वर और सब प्रकारके शूलोंका नाश करता है।

जिस तरह ज्वर केसरीवटीमें हरताल बढ़ाकर अश्वकंचुकी रस निर्माण किया है। उस तरह ज्वरकेसरीमें ताम्रभस्म और

मलेरिया ज्वरके अतिरिक्त सामान्य कफज्वर और अजीर्णज्वर पर भी यह रस हितावह है।

१३. अश्वकञ्चुकी रस।

द्वितीय विधि—शुद्ध पारद, सोहागाका फूला, शुद्ध-गन्धक शुद्ध वच्छनाग, सोंठ, मिर्च, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, चित्रक-मूल, भुनीहींग, शुद्धहिंगुल, रेवाचीनी, नागरमोथा, शुद्ध हरताल, वच, शुद्ध सोमल, शुद्ध जमालगोटा और गोखरू, इन २० औष-धियोंको समभाग मिलाकर भांगरेके रसमें ७ दिन तक खरल करके आध आध रत्तीकी गोलियाँ बनालें। (श्री० डा० रामरत्नपालजी)

मात्रा—१ से २ गोलीतक दिनमें २ समय दें।

उपयोग—इस रसायनमें उत्तेजक, कोटाणुनाशक अन्त्र-शोधक, दीपन, पाचक, ज्वरहर और कफघ्न गुण अवस्थित हैं। इसमें सोमल और हरताल दो उग्रद्रव्य मिलाये हैं। इस हेतुसे इसका उपयोग अति सम्हालपूर्वक करना चाहिये। यह वातप्रधान और कफ प्रधान रोगों पर तत्काल प्रभाव दर्शाता है। वातज, कफज, आमज, द्वन्द्वज और त्रिदोषजरोगोंमें रोगानुसार अनुपान के साथ यह प्रयोजित होता है, किन्तु पित्त प्रधान रोगों पर उप-योगी नहीं होसकेगा। पित्त प्रधान प्रकृतिवालोंको या पित्तप्रधान काल (शरद् ऋतु) में इसका प्रयोग नहीं करना चाहिये, या अति सम्हालपूर्वक कम मात्रामें करना चाहिये। प्लेगकी गिल्टी, सर्पविष, विच्छूका विष, चूहेका विष आदि पर बाहर लगानेमें भी यह उपयोगी है। ऐसे रोगियोंको आवश्यकता पर खिलाया भी जाता है।

अनुपान भेद से यह रसायन विविध व्याधियों में प्रयोजित होता है। यह प्रयोग २५ वर्ष पहले आबुस्थान पर किसी महात्मा द्वारा डाक्टर साहब को मिला था। महात्माजी और डाक्टर

आने वाले ज्वर और विविध विषमज्वर सतत, एकाहिक, तृतीयक, चातुर्थिक आदि दूर होजाते हैं। बारीके तापमें दो दो घण्टे पर तीनबार औषधताप आनेके पहले दे दी जाय; तथा स्नान और भोजन न किया जाय, तो ज्वर रुक जाता है। जल गरम करके शीतल किया हुआ पीते रहना चाहिये। अति क्षुधा लगे तब दूध या चाय देवें शक्कर और गुड़का सेवन न कराया जाय तो अच्छा।

वर्षा ऋतुमें या शीतकालमें शीतल वायु लग जाने और सूर्यके तापमें घूमनेसे प्रतिश्याय हो जाता है, तथा मंदज्वर आ जाता है। उस पर यह रसायन नागरबेलके पानके रसमें देने से लाभ पहुँचाता है।

यदि इस रसायनको देकर फिर ऊपरसे काली मिर्च मिला कर उबाला हुआ निवाया दूध पिला दिया जाय और रोगी को कपड़ा ओढा कर बैठा दिया या सुला दिया जाय, तो प्रस्वेद आकर सब विष निकल जाता है, और प्रतिश्याय की तुरन्त निवृत्ति हो जाती है।

अपचन जनित विसूचिकामें यह रसायन प्याज और नीबूके रसमें देने से तुरन्त अपना गुण दर्शाता है। जब तक रोग शमन होकर अच्छी क्षुधा न लगे, तब तक कुछभी भोजन नहीं देना चाहिये।

१८. कुलवधूवटी।

विधि—शुद्धपारद, ताम्रभस्म, शीशाभस्म, शुद्धमनःशिल और नीलाथोथाका फूला, पांचों ओषधियां समभाग मिला कर इन्द्रायण के रसमें १ दिन खरल करके चनेके समान गोलियाँ बना लेवें, या लम्बी वर्त्ति बना लेवें। (र० सा० सं०)

उपयोग—इस रसायनको जलमें घिसकर सुंघानेसे भयंकर सन्निपातका त्वरित नाश होता है। वृद्धवैद्यपरम्पराके अनुसार

इस वटीका उपयोग अञ्जन करनेके लिये किया जाता है। इसके अञ्जनसे बेहोशी सत्वर दूर होती है।

१६. उन्मत्तो रस।

विधि—शुद्ध पारद और शुद्धगन्धक समभाग मिला कज्जली कर धतूरेके फलोंके स्वरसमें १ दिन खरल कर समान त्रिकटु मिला लेनेसे उन्मत्तो रस बन जाता है। (र० यो० सा०)

उपयोग—इस रसायनका उपयोग सन्निपातकी बेहोशीको दूर करनेके लिये नस्यरूपसे किया जाता है। यह रसायन तत्काल अपना प्रभाव दर्शा देता है। यदि इस रसायनको ३-३ रत्ती नागरवेलके पानके रस या अदरखके रस अथवा अष्टादशांग क्वाथ या रोगानुसार अन्य अनुपानके साथ सेवन कराया जाय, तो सन्निपातके शीताङ्ग आदि उपद्रवों को शान्त कर देता है। इस रसायनको संधिवात में महारास्नादि क्वाथके साथ प्रयोजित करने पर अच्छा लाभ पहुंचाता है।

२०. अर्धनारीनटेश्वर रस।

विधि—काला सुरमा, पीतल, कांसी, सीसा, ताम्र, जसद, खपरिया, शीतल मिर्च समुद्रफाग, मोती, सुवर्ण रौप्य और लोह, इन १३ ओषधियों को १-१ तोला तथा पीपल, सफेद मिर्च और छोटी इलायचीके बीज ६-६ माशेलें सुवर्ण रौप्य, सीसा और जसदका वर्क बनवा लेवें। ताम्र, पीतल और कांसीको बारीक रेतीसे घिसवा कर कपड़ छान चूर्ण करालेवें। मोतीकी पिष्टी लें। शेष ओषधियोंको कूट कर कपड़ छान चूर्ण करें। आठ प्रकारकी धातुओंके चूर्ण या भस्मोंको मिला सफेद पुनर्नवाके रसके साथ लोह खरल में १४ दिन तक खरल करें। चमक रहित सूक्ष्म चूर्ण बन जाने पर मोती पिष्टी, सुरमा, खपरिया, समुद्रफाग और काष्ठादि ओषधियाँ मिला कर २१ दिन तक सफेद पुनर्नवाके

उपयोग—इस वटी के सेवन से सब प्रकार के नये और पुराने बुखार दूर होते हैं। इस वटीके सेवन में चढे या उतरे हुये ज्वर का भी विचार करनेकी जरूरत नहीं है। यह बालक, युवा, वृद्ध, सगर्भा, प्रसूता, इन सबको निर्भयतापूर्वक दीजाती है। इस वटीको चढे हुये बुखारमें देनेसे उदरका शोधनकर बुखारको धीरे-धीरे कम कराती है; और बुखार आनेके पहले देनेसे बुखारको रोक देती है, आने नहीं देती। यह वटी कोष्ठबद्धता, पित्तवृद्धि, दाह, जुकाम और खांसी आदिको भी दूर करती है।

द्वितीयविधि—शुद्धपारद, शुद्धगन्धक, अभ्रकभस्म, प्रवाल-भस्म, सोहागा का फूला, गुलाबके फूलकी केसर, बीज निकाली हुई मुनक्का और बीज निकाले हुए उन्नाव, ये ६ औषधियां १-१ तोला तथा गुलबनफशा और शीरेखिस्त ४-४ तोले लेवें। इन सबको मिला सौंफके अर्कमें १२ घन्टे खरलकर २-२ रत्तीकी गोलियां बना लेवें।

मात्रा—१ से ३ गोली तक दिनमें तीन बार शर्बत बनफशा या जलके साथ देवें।

उपयोग—इस वटीसे सब प्रकारके नये ज्वर, कोष्ठबद्धता और अपचनसे आनेवाला ज्वर, श्लैष्मिक ज्वर, जुकाम, खांसी, कफप्रकोप आदि दूर होते हैं। बालक, प्रसूता वृद्ध, और निर्बलोंको भी निर्भयनापूर्वक दीजाती है।

२४. ज्वरहर योग।

(१) प्रवाल भस्म १ भाग और सोहागेके फूले २ भागको मिला सुदर्शनके पत्तोंके रसकी ७ भावना देकर सुखा चूर्ण बना लेवें। इसमेंसे आधसे १ मासा चूर्ण सुदर्शनके पत्तोंके १ तोला स्वरसके साथ देनेसे एन्टी फेब्रिन और एस्पिरिनके समान सत्वर प्रस्वेद आकर शारीरिक उत्ताप कम होजाता है।

२६. सप्तपर्णघनादि वटी

विधि—सतौनेकी ताजी छालको कूट ८ गुने जलमें उबाल अर्धावशेष क्वाथ करें। फिर नीचे उतार मसल छानकर कलईदार बर्तन में पकाकर घन बनावें। कुड़छीको लगनेलगे तब उतार कर सूर्यके तापमें सुखालें। रबड़ी जैसा बनने पर ४० तोले लेवें। एवं कुटकी चिरायता, कांटेदार करंजके भुनेहुए बीजों का चूर्ण १५-१५ तोले, कालमेघ १० तोले, शुद्धकुचिला और दालचीनी का चूर्ण २॥-२॥ तोले मिलाकर २-२ रत्तीकी गोलियां बना लेवें।

यदि सतौनेकी छाल सूखी होतो कूट चूर्णकर ४ गुने जलमें उबाल अर्धावशेष क्वाथ करें। फिर मसलकर छानलें। पुनः ४ गुना जलमिला अर्धावशेष क्वाथकर मसलकर छानलें। फिर दोनों जलको मिला उपर्युक्त विधिसे घन बनाकर उपयोग में लेवें।

मात्रा—२ से ४ गोली दिनमें ३ बार जलके साथ देवें।

उपयोग—यह गोलियाँ नये विषमज्वर, सतत, एकाहिक, चातुर्थिक आदि अपचन जनित ज्वर तथा जीर्णज्वर इत्यादि को नष्ट करती हैं। मलावरोध, अग्निमान्द्य, उदरकृमि, अरुचि और निर्बलता को दूर करके शक्ति प्रदान करती है। ज्वर होनेपर या न होने पर सब समय में दी जाती है। बढ़े हुए ज्वर को उतारती है तथा नये आने वाले ज्वरको रोकती है। ज्वरजन्य यकृत् तथा प्लीहावृद्धि को भी यह मिटाती है। यह सामान्य औषधि होते हुए अच्छी लाभदायक सिद्धहुई है।

२७. प्रतिश्यायहर कषाय

प्रथम विधि—गुलबनफ्सा, ६ तोले गांवजवां, मुलहठी, मुनक्का, रेशाखतमी, उन्नाव, ल्हिसोड़े (सपिस्तान), हंसराज, खूबकला, सौंफ, जूफा, अडूसाकेपान और कालीमिर्च १-१ तोला लेवें। सबको मिला जौकूट कर लेंवे।

राजस्थान के सुविख्यात प्राणाचार्य राजवैद्य पं० रामदयालुजी शर्मा का अनुभूत है।

२८. ग्रन्थिज्वर हर गुटिका।

विधि—फिटकरीका फूला १० तोले, नवसादर पकाया हुआ, कालीमिर्च और सोना गेरु तीनों ५-५ तोले तथा गुड़ १० तोले लें। पहले गुड़को खरलमें घोटें। नरम होने पर औषधियोंका चूर्ण थोड़ा थोड़ा मिलाकर मर्दन करते जाँय। सब चूर्ण मिलालेनेके पश्चात् गोलियां बाँधने योग्य बनने पर १-१ रत्तीकी गोलियां बना बनाकर सोनागेरुके चूर्णमें डालते जांय। गोलियोंके डालनेके लिये १०-२० तोले सोनागेरु अलग लेना चाहिये। सब गोलियां बन जाने पर गोलियोंको सोनागेरुके थालमें अच्छी तरह हिलावें। फिर बोतलमें भर लेवें। (आ० नि० मा०)

मात्रा—१ से २ गोली दो-दो या तीन-तीन घण्टेके अन्तर पर जलके साथ देते रहें। इस गोलीके उपयोगके साथ पपीता, फिलिपाइनसे आनेवाले एक प्रकारके जहरी बीज (Strychnos Ignasii) का चूर्ण २-२ रत्ती दिनमें ३ वार देना अधिक लाभदायक है।

उपयोग—इस वटी का सेवन करानेसे ग्रन्थिज्वर (प्लेग) सत्वर काबुमें आजाता है। ४-६ मात्रा देने पर ज्वर उतर जाता है। फिर दिनमें ४ वार औषधि देते रहें। रोगीको खानेके लिये कुछ भी न देवें। केवल जल पर रक्खें। अच्छी क्षुधा न लगे, तब तक दूध भी नहीं देना चाहिये। क्षुधाके मारे रोगी छटपटाने लगे तब आधा दूधमिली हुई चाय पिलावें। ज्वर उतरनेके पश्चात् भी अन्न एक सप्ताह तक नहीं देना चाहिये। श्री० त्रिलोकचन्द ताराचंद वैद्यने लिखा है कि इस औषधिके सेवनसे प्लेगके सैंकड़ों रोगी अच्छे हुए हैं; किन्तु जिन रोगियोंने दुराग्रहवश जल्दी

उसके बच्चे को उदरशूल उत्पन्न होता है। इसे अधिक मात्रामें या दीर्घकाल तक अल्प मात्रामें सेवन किया जाय तो अपचन, उदर में वेदना और अतिसार उत्पन्न होता है। अति अधिक मात्रा लेने पर अथवा निर्जल द्रावक लेनेपर प्रादाहिक और दाहक विषक्रिया उपस्थित होती है।

सीसाधातु द्वारा विपाक्त होने पर तथा सीसाधातु जनित शूलपर यह विशेष उपकार दर्शाता है। ४०-५० बूंद गन्धक द्रावक को १ पाइण्ट जल में मिलाकर रोज २-३ वार वाष्प देने (और अन्य कोई भी औषधि न देने पर) सीसाशूल जनित वेदना ३ दिन में कम होजाती है।

विसूचिका की तृषाको शमन करनेके लिये गन्धक द्रावक विशेष जलमें मिलाकर थोड़ा-थोड़ा पिलाया जाता है। एवं आमाशय और अन्त्रसे होनेवाले रक्तस्रावका रोध करने के लिये भी इसी तरह दिया जाता है। यह गर्भाशय के रक्तस्राव में भी हितकारक है। यह अतिसारमें और विसूचिका की प्रथमावस्थामें सफलतापूर्वक व्यवहृत होता है।

राजयक्ष्मा और पूय प्रधानज्वर में अति प्रस्वेद को कम करने के लिये यह उत्तम औषध है। इस तरह जीर्ण अतिसार और पैत्तिक ज्वरके अतिप्रस्वेद, क्षीणता लानेवाला अतिसार, मधुरा जनित अतिसार, ग्रीष्मकाल का विसूचिका समान अतिसार, इन सबपर भी यह द्रावक व्यवहृत होता है।

शीतला रोगमें फाले नष्ट होकर रक्तपूर्ण बनने और पेशाबमें नष्ट हुआ रक्त आनेपर गन्धक द्रावक का उपयोग किया जाता है।

विविध प्रकारके चर्मरोग, कण्डूमय पिटिकाएं, जीर्ण शीत-पित्त, रक्तविकार आदि पर यह अति लाभदायक है। व्युची, फोड़ा और जल पूर्ण फाले आदि पर इसे चारगुने वेसलिन में मिला मलहम बनाकर लगाया जाता है।

तासके गुदाके समान मृदु संशोधक औषध देकर आमानुबन्ध हो सके उतना कम कराना चाहिये। कोष्ठ शूल अत्यन्त तीव्र और उस शूलके साथ (प्रत्येक वेगके साथ) बहुत-सा आम गिरना, शूल निकलने या मरोड़ा आनेके साथ बिना प्रयत्न आमका अतिस्राव होना, मुँहमें बार-बार जल छूटना, अरुचि, उबाक, किसीभी भोजनकी इच्छा न होना आदि लक्षण होते हैं। आम बार-बार बहुत पतला केवल जल सदृश, झागदार और अति मात्रामें होता है। आममें रक्तांश हो यह नियम नहीं। यदि रक्त हो तो भी बहुत कम। आमस्राव और शूलके हेतुसे रोगी थोड़े ही समयमें अतिक्षीण हो जाता है। रोगी को किसी तरह चैन नहीं पड़ता; भ्रमित-सा भासता है। एवं क्रोधी, आग्रही और दुर्बल मन वाला बन जाता है। इस अवस्थामें ग्रहणी गजकेसरी बहुत उत्तम कार्य करता है।

इन सब संग्रहणी विकारों का पर्यवसान प्रवाहिका में होता है; या कभी-कभी प्रारम्भ से ही प्रवाहिका हो जाती है। यह विकार अति त्रासदायक है। इस विकार में अन्त्र की शिथिलता मुख्य है और उसका संग्राहकत्व और पाचन-शोषण आदि धर्म क्षीण हो जाते है। इस हेतु सेबार-बार शौच होते रहते हैं। जल भरे हुए हौद का डाट हटा लेने पर उसमें से शनैः शनैः एक समान जल प्रवाह निकलने लगता है, उस तरह कोष्ठमेंसे धीरे धीरे एक समान बुद बुदेकी आवाज सह जल स्राव होता रहता है। उदरमें मरोड़ा आता है; शूल चलता है, उदरमें दाह होता है, तृषा अधिक लगती है, जुलाब पिच्छिल जल सदृश होता है, कभी कभी उदरमें तीव्र मरोड़ा आनेसे रोगी अति व्याकुल होजाता है। शौचके वेगके समय बिल्कुल अधिकार नहीं रहता; अथवा शौचके लिये किनछनेकी बिल्कुल आवश्यकता नहीं रहती। शौच होनेमें जरा भी श्रम नहीं होता, कभी बिल्कुल मालूम भी नहीं पड़ता। इस

श्री धन्वन्तरये नमः

रसतन्त्रसार व सिद्धप्रयोग-संग्रह

द्वितीय खण्ड

१. कूपपक्व रसायन और भस्म प्रकरण

१. सुवर्ण वङ्ग।

विधि—शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, शुद्ध कलई और नौसादर चारों १२॥-१२॥ तोले तथा कल्मीशोरा ६ माशे लें। कलईको कड़ाईमें डाल रस करके पारद मिलावें। फिर गन्धक, नौसादर और शोरा मिलाकर कज्जली करें। उसे कपड़मिट्टी की हुई बड़े पेट और बड़ी नोंकवाली आतसी शीशीमें भरें। उस बोतल को नीचे छेद कीहुई हंडीमें रक्खें। नीचेका छेद १॥-१॥। इंच गोलाईका करें। बोतल रखकर हांडीमें बोतलकी नाभि तक वालुका भरें। फिर नीचे तेज अग्नि देवें। नौसादर मुँहपर लगता जाता है, जिससे मुँह बन्द होता रहता है। अतः सम्हालपूर्वक बीच-बीचमें बार-बार लोह सलाकाको चला-चलाकर परीक्षा करते रहें। ४-५ घण्टे पर लोह सलाकाकी नोकपर तेजस्वी द्रव्य चिपकने लगता है। तब समझ लें कि स्वर्ण वङ्ग तैयार होने आई है। सलाका चलानेपर स्वर्ण वङ्ग दृढ़ चिपके, सरलतासे ऊपर न उठे, तब अग्नि देना बन्द करदें। लगभग ६ घण्टेमें स्वर्ण वङ्गका पाक हो जाता है। अग्नि मंद हो, तो ८ घण्टे लगते हैं। स्वांग शीतल होने पर बोतलको विधिपूर्वक तोड़कर ऊपरसे नौसादरके पुष्प और

का पचन बराबर न होना, इनके सेवन से लक्षण अधिक बढ़ जाने, उदर में आफरा आना, सब लघुअन्त्र और बृहदन्त्र, दोनों में एक प्रकार की जड़ता और दर्द होना, उदर में कुछ चिपका है, ऐसा भासना, बार बार शौच जाने की शंका, शौच जाने पर भी उदर शुद्धि नहीं है ऐसा भासना, फिर शौच जाने की इच्छा होना, बारबार मरोड़ा आना, परन्तु वह अधिक बल पूर्वक न होना, अधिक किणछने की आवश्यकता न रहना, प्रत्येक वेग के साथ आमसह झागमय दस्त होना, यकृत के समीप कुछ दर्द होना, यकृत् कुछ बढ़ जाना, जड़ता, अरुचि और अग्निमान्द्य आदि विकार दीर्घ काल तक रहना, ये सब लक्षण प्रतीत होते हैं। एवं ग्रहणी के विकार में होने वाले लक्षण कम होने पर पुनः कुछ अंश में साँधों में दर्द होना, इस तरह चक्रनेमिवत् क्रम चलता रहता है। इस तरह के ग्रहणी रोग में गृहणी-वज्रकपाट उत्तम कार्य करने वाली औषधि है।

केवल बुद्धि से कार्य करने और बैठे रहने वाले मनुष्यों को मनोव्याघात के हेतु से या शोकादि के समान आत्यन्तिक मानसिक स्वास्थ्य नाशक प्रसंग उत्पन्न होने पर मन अस्वस्थ हो जाता है। फिर मनका असर वात वाहिनियों के केन्द्र स्थान पर होता है और उसका परिणाम वातवाहिनियों से सम्बन्ध वाले सब अवयव समूहों पर होकर ये अवयव और उनके साथ में रही हुई धातु आदि विकृत होते है। इस तरह वायु के प्रेरकत्व की कमी होने से और पचनेन्द्रिय विकृत होने से अन्न रसोत्पत्ति विकृत होने लगती है। फिर इस तरह बृहदन्त्र में दोष संगृहीत होने लगता है। यह सब-दोष दूष्य संयोग के कारण मानसिक विकृति होने से और इस रोग में वह मुख्यतः होनेसे उसका प्रतिकार करना पड़ता है। यह ग्रहणी रोग कुछ कालतक उपचार करने पर या उपचार न करने पर भी बन्द

उसके नीचेसे वङ्ग सिंदूरको अलग निकालें। पेंदेमें सुन्दर गिनी-गोल्डके समान तेजस्वी स्वर्ण वङ्ग मिलती है उसे अलग रखें।

—श्री. वैद्य नाथूरामजी देहलीवाले

मात्रा और गुणधर्म—रसतन्त्रसार प्रथम खण्डमें लिखे अनुसार।

२. मल्लसिंदूर।

विधि—शुद्ध पारद २० तोले, शुद्ध गन्धक १५ तोले और सोमल ५ तोले लें। तीनोंको मिलाकर कज्जली करें। उसे कपड़मिट्टी की हुई शरावकी २६ औंसकी लाल बोतलमें भरकर वालुकायन्त्र में रक्खें। प्रारम्भमें ३ घण्टे अग्नि तेज दें, फिर कम करें, ३-४ घण्टे बाद तपायी हुई लोहसलाका डालकर औषधिको चलावें। उस समय बोतलमें द्रव्य कीचड़ जैसा हो जानेका भास होता है। जब धुआँ नलीसे निकलना बन्द हो, तब लोहसलाकाको करीब ५-५ मिनिट पर चलाना चाहिये, बोतलकी नलीको नहीं रगड़ना चाहिये। ४-५ घण्टेमें गन्धक नलीमें ज्यादा लग जाय, तब अग्नि केवल एक लकड़ीकी रक्खें और थोड़ा-थोड़ा कल्मीशोरा डालते जाँय। ३-४ समयमें करीब ४-६ माशे सोरा डालना पड़ेगा। लगभग १० घण्टेमें सब गन्धकका जारण हो जाता है। गन्धक जब बहुत कम रहता है, तब वह बहुत जल्दी-जल्दी उठ-उठकर डाट बनने लग जाता है। डाट आ जाने पर करीब १० घण्टे के पश्चात् (गन्धक जारण हो जाय तब) शलाका चलाना बन्द करें। १ घण्टा ठहर कर अग्नि कुछ तेज करें। फिर २ घण्टे होने पर अग्नि देना बिल्कुल बन्द करें। इस तरह यह रसायन १२ घण्टेमें तैयार होता है। अग्नि मंद दी हो तो १५-१६ घण्टे लगते हैं। स्वांग शीतल होनेपर बोतलकी नलीमें गन्धकके नीचे लगा हुआ मल्ल सिंदूर निकाल लेवें। —श्री. वैद्य नाथूरामजी देहलीवाले

लक्षण प्रतीत होते हों, तो स्वच्छन्द भैरव का प्रयोग अति हितकर होता है। तुलसी का रस नागरवेलके पानका रस अनुपान रूप से देना चाहिये।

सन्निपात ज्वरमें तन्द्रा उपस्थित होने पर स्वच्छन्द भैरव अधिक उपयोगी होता है। आन्त्रिक सन्निपात (मधुरा) में उग्रतन्द्रा आने पर यह रसायन दिया जाता है। इस तरह निद्रा नाश और स्वल्प निद्रा परभी हितकारक है।

इसके सेवनसे समग्र धातुपोषण क्रम व्यवस्थित होता है। इसी हेतु से देह पुष्ट होता है। इसके प्रयोग से मन भी शान्त होता है; सेन्द्रिय विष नष्ट होता है और शरीर मोटा बनता है।

(औ० गु० ध० शा० के आधार से)

संग्रहणी रोगमें आमाशयकी पचन शक्ति अति मन्द हो जानेसे मुंह चिपाचिपापन रहता हो, भोजन कर लेने पर उदरमें घण्टों तक भारीपन रहता हो, उदरमें मन्द मन्द पीड़ा बनी रहती हो, वायु भरी रहती हो, अपान वायु जल्दी न सरती हो, तथा मलमें आम बहुत गिरता हो, ऐसे लक्षण उत्पन्न होने पर यह रसायन व्यवहृत होता है।

सूचना—*शुष्क कास हो, ऐसे रोगीको यह रसायन न दें। एवं इस रसायन का उपयोग पतले, गरम दस्त युक्त अतिसार रोगमें भी नहीं होता।*

५. राजवल्लभ रस।

विधि—जायफल, लौंग, नागर मोथा, दालचीनी, छोटी इलायची के दाने, सोहागे का फूला, घी में भूनी हुई हींग, जीरा, तेजपात, अजवायन, सोंठ, सौंधानमक, लोहभस्म, अभ्रकभस्म,

ऊपर कही विधि अनुसार मल्ल चन्द्रोदय, ताल चन्द्रोदय, तालसिंदूर, व्याधिहरणरस, शिलासिंदूर, समीर पन्नग, सुवर्ण भूपति, पंचसून आदि रसायन भी तैयार कराये हैं। शिलासिंदूर और समीर पन्नगमें मैनसिल होनेसे कलमीशोरा डालनेकी विशेष आवश्यकता नहीं मानी । २० तोले रससिंदूर समगुण गन्धक जारित में भी कलमीसोरा १॥-१॥ माशे २ वार डाला गया। रस सिंदूरका डाट १३ घण्टे वाद आने लगा। फिर ३ घण्टे वाद अग्नि देना वन्द किया । प्रयोगार्थ सिंगरफमें से भी रस सिंदूर वनाया गया । २५ तोले सिंगरफमें ५ तोले गन्धक मिलाया। शीशी ५ वजे सुवह चढायी। दोपहरको ३ वजेसे डाट आना प्रारम्भ हुआ। शामको ७ वजे शीशी उतार ली।

समीरपन्नग (नं० २) में मैनसिल न होनेसे वह सरलतासे वनता है। तलमें कुछ भी शेष नहीं रहता। पहले प्रकारमें मैनसिल होनेसे मैनसिलयुक्त पतली तह कुछ पीले रंगकी अलग भी हो जाती है। जो ग्राहकोंको भ्रममें डाल देती है।

स्वर्णसिंदूर वनानेके लिये पारदको सैंधा नमक और नींबूके रस में खरल कराया। फिर धोकर २० तोले पारद, २० तोले शुद्ध गन्धक और १ तोला सुवर्ण वर्क मिलाकर कज्जली करायी। इसकी शीशी सुवह ६ वजे चढ़ाई। अग्नि मंद दी गई। कल्मीसोरा नहीं डाला। जिससे दूसरे दिन शामको ७ वजे तक अर्थात् ३७ घण्टे तक अग्नि दी। इस तरह वैद्य नाथूरामजीने दो मासमें १५०० तोले रसायन और भस्म तैयार किये हैं। रसतन्त्रसार प्रथम खण्डके लेखकी अपेक्षा जो नया अनुभव मिला, वह पाठकोंके समक्ष रखदिया है।

कुछ रसायन कोयलेकी भट्टीपर भी वनाकर अनुभव किया। कोयले की भट्टीपर सत्वर वनते हैं। जिन रसायनोंको ३-३ दिन अग्नि देनी पड़ती है, उसके लिये लकड़ीकी भट्टी विशेष सुविधावाली रहती है।

फिर जमिकन्द के टुकड़े से खड्डे को ढक कर कपड़मिट्टी करें। सूखने पर गजपुट अग्निदेनेसे सफेद भस्म हो जाती है।

श्री० वैद्य गोपालजी कुँवरजी ठक्कुर

मात्रा—६ से १२ रत्ती दिन में २ बार मक्खन या मलाई के साथ।

उपयोग— यह भस्म अर्शके मस्सेमें से रक्त गिरता हो, उसे एक दो दिन में ही बन्द कर देता है। एवं पचन क्रिया सुधारता है और मल शुद्धि कराता है।

४. अर्शोहर गुटिका

प्रथम विधि—रीठेके वक्कल और रसोंतको समभाग मिला जलके साथ खरलकर २-२ रत्तीकी गोलियां बनावें।

मात्रा—१-१ गोली दिनमें २ बार निगल कर ऊपर गरम करके ठण्डा किया हुआ बकरीका दूध १० तोले पीवें।

उपयोग—इस वटीके सेवनसे १-२ सप्ताहमें रक्तार्श दूर हो जाते हैं।

द्वितीय विधि—शुद्ध मैनसिल और शुद्धगन्धक को समभाग मिला ७ दिन तक भांगरेके रसमें मर्दन कर २-२ रत्तीकी गोलियां बनावें।

मात्रा—१ से २ गोली मट्ठे या बकरीके दूधकेसाथ दिनमें २ बार सेवन करें।

उपयोग—इस वटीके सेवनसे अर्श और अर्शजनित मंदाग्नि, उदर पीड़ा, मलाव रोध और निर्बलता दूर होते हैं।

तृतीय विधि—मोतीकी सीपको ३ पुट मूलीके स्वरसके देकर भस्म बनावें फिर यह भस्म एलवा, रसौंत, नौसादरके फूल को समान भाग लें। मूलीके स्वरसके साथ ७ दिन तक घोट कर २-२ रत्तीकी गोलियां बनावें। (वैद्य रामचन्द्रजी)

समगुण और द्विगुण गन्धक जारित रससिंदूर सिंगरफमें से बनाकर निर्णय किया। रंग-रूपमें किसीभी प्रकारका अन्तर नहीं पड़ता। इस प्रकारसे सरलतासे बन जाता है। पारदकी हानि कम होती है, समय बच जाता है। खर्चभी कम आता है। जिन फार्मेसीवालों को रसायन कम मूल्यमें बेचकर ग्राहकोंको प्रसन्न रखना हो, उनके लिये ये सब विधि अति उपयोगी है।

रसायन विधि, जो रसतन्त्रसार प्रथम खण्डके भीतर लिखी है, उस तरह बनानेमें समय अधिक लगता है। लकड़ीभी अधिक जलानी पड़ती है। किन्तु वह अधिक गुणदायी माना जायगा। रसायन पाक जितना जल्दी कराया जाता है, वह उतना ही न्यून प्रभावशाली रहेगा। जिस तरह हाथसे चलनेवाली चक्की और यन्त्रसे चलनेवाली चक्कीसे पीसे हुए आटेमें अन्तर है, उस तरह इन रसायनोंमें अन्तर पड़ता है। दोनोंके गुण-धर्ममें कितना अन्तर रहा है यह पाश्चात्य प्रयोगविधि अनुसार कदापि अवगत नहीं हो सकेगा। सच्चे निर्णयका साधन मात्र एक ही है, कि समान रोगवाले अनेक रोगियोंपर प्रयोग करके अनुभव करना उचित है।

३. सुवर्ण भस्म

प्रथम विधि—शुद्ध सुवर्ण वर्क ४ तोले और ४ तोले सफेद सोमलको मिला, तुलसी, वन-तुलसी अथवा कुकरौंधेके रसमें ७ दिन खरलकर टिकिया बनावें। फिर सूर्यके तापमें सुखा सराव सम्पुट कर १ सेर गोबरीकी अग्नि देवें। स्वाङ्ग शीतल होनेपर निकाल १ तोला सोमल मिला पुनः १२ घण्टे उसी स्वरसमें खरल कर टिकिया बना सराव सम्पुट कर कुक्कुट पुट देवें। इस तरह ७ या अधिक समय १-१ तोला सोमल मिला-मिलाकर अग्नि देवें। सुवर्णकी चमक बिल्कुल नष्ट होजानेपर बिना सोमल मिलाये १२ घण्टे उसी स्वरसमें खरल करके कुक्कुट पुट देवें। पश्चात् गुलाब जल, कमलके फूलोंके रस तथा मोलसरी (बकुल)

थोड़े ही दिनों में मस्से जलकर गिरजाते हैं। मस्से के समीप व्रण होने पर सोहागा का फूला, सफेदा और सेलखड़ी को धोये घी में मिलाकर दिन में २-३ बार लेप करते रहने से व्रणदूर हो जाते हैं।

सूचना—*इस अर्शोहर लेपका प्रयोग करनेके पहले रोगीको ३ दिन तक अपथ्य वस्तुएं हो सके उतनी अधिक खा लेनेको कहें। जिससे भीतरके मस्से भी अच्छी तरह फूल कर बाहर आजाते हैं। फिर लेप करना प्रारम्भ करें। प्रयोग प्रारम्भ करने के पश्चात् पथ्य भोजन देवें। प्रति दिन मृदु विरेचन औषध देकर कोष्ठ शुद्धि कराते रहें।*

द्वितीय विधि—पीलेसोमल को जलमें घिसे, इसके ऊपर रेवा चीनी को घिसे। फिर मस्से पर बूंद डाले या लेप करें, मस्से के अतिरिक्त स्थान पर न लग जाय, इस लिये चारों ओर घी या वेसलीन पहले लगा लेवें। इस तरह दिन में दो बार लेप करते रहने से मस्से फूल जायंगे। फिर उसमें से जल टपकने लगेगा और थोड़े ही दिनों में मस्से सूख जायंगें।

फिर पञ्च-वल्कल (वट, पीपल, गूलर, पिलखन और बेंत की छाल) के निवाये क्वाथ से धो देवें। पश्चात् प्याज ५ तोले को कूट १० तोले घीमें भून १ तोला हल्दी डाल दें। फिर प्याजकी पोटली बांधे और उससे मस्से पर सेक करें। पोटली शीतल हो जाने पर प्याज को गरम घीमें डुबो लेवें। इसतरह सेक करते रहने पर वेदना शमन हो जाती है, मस्से गिर जाते हैं और उनके खड्डे भी भर जाते हैं। खड्डे पर शीतलताके लिये दूध की मलाई (किञ्चित् सोहागाका फूला अथवा बोरिक एसिड मिली हुई) या धोया घी या वेसलीन लगाते रहें। (आ० नि० मा०)

तृतीय विधि—कुचिले २० तोलेको १० तोले घीमें पत्थर

के फूलोंके स्वरसका एक-एक पुट देनेसे मुलायम लाल-गुलाबी रंगकी भस्म बन जाती है। वजन लगभग ६ तोले होता है। इस विधिका मूल आधार हमें गुजराती रसायनसार-संग्रहसे मिला है। अतः हम उनके आभारी हैं।

मात्रा—$\frac{1}{8}$ से $\frac{1}{4}$ रत्ती दिनमें दो बार रोगानुसार अनुपानके साथ देवें।

उपयोग—सुवर्ण भस्मका उपयोग रसतन्त्रसार प्रथम खण्डके भस्म प्रकरणमें विस्तारपूर्वक दर्शाया है।

वनौषधिसे मारित सुवर्णभस्मकी अपेक्षा यह भस्म कुछ उग्र मानी जायगी। वाताक्षेपजनित विकारों पर कहे हुए प्रयोगों—योगेन्द्र रस, बृहद् वातचिन्तामणि, रसराजरस आदिमें वनौषधि मारित भस्मकी अपेक्षा मल्लमारित भस्म मिलानेसे योग आशुफलप्रद बनता है।

इस तरह कितनेक आचार्योंके मतअनुसार राजयक्ष्माकी द्वितीयावस्था और तृतीयावस्थामें उपयोगमें लेनेके लिये मृगाङ्क-रस, राजमृगाङ्क, महामृगाङ्क, रत्नगर्भपोटलीरस, हेमगर्भ पोटली आदिमें इस भस्म को मिलाना विशेष हितकारक माना जायगा।

मल्ल मिलाये बिना केवल सुवर्णके वर्कको वनतुलसीके रसके १०–१२ पुट देकर भी हमने अनेक वार सुवर्ण भस्म बनायी है। अच्छी मुलायम बन जाती है। हम विशेषतः वनस्पतिमारित भस्ममें इसका प्रयोग करते रहते हैं।

सूचना—*शुष्क कास, पित्तप्रकोप और राजयक्ष्माकी प्रथमावस्थामें इस भस्मका उपयोग नहीं करना चाहिये। जिसस्थानपर शीतल और शामक औषधि देनीहो, वहांपर इसका उपयोग न किया जाय, तो अच्छा।*

४. भीमवटी

विधि—हिंगुल रसायन (रसतन्त्रसार प्रथम खण्ड दूसरी विधि) १ तोला, शुद्ध कुचिला ३ तोले, लोह भस्म ३ तोले, भूनी हींग ४ तोले, दालचीनी ५ तोले, एलुवा ६ तोले और शुद्ध गूगल ७ तोले लें। इन सबको मिला चित्रकमूल के क्वाथ से ३ दिन मर्दन कर २-२ रत्ती की गोलियाँ बना लेवें।

मात्रा—१-१ गोली त्रिकटु और अजवायन के ६ माशे चूर्ण के क्वाथ या निवाये जल के साथ दिन में दो या तीन बार दें।

उपयोग—यह वटी अग्निमान्द्य और उससे उत्पन्न विकारों को दूर करती है। अग्निमान्द्य, अपचन, आमवृद्धि, उदरशूल, उपान्त्र शोथ, कोष्ठबद्धता, अपचन जनित अतिसार, गुल्म, श्वास, कास, आमवात आदि पर यह निर्भयता से प्रयोजित की जाती है। आम दोषों को निकालती है एवं पचाती है।

५. अजीर्णारि रस।

विधि—शुद्धपारद और शुद्ध गन्धक ४-४ तोले, हरड ८ तोले, सोंठ, पीपल, काली मिर्च, सैंधानमक १२-१२ तोले और धोईभांग १६ तोले लें। पारद गन्धक की कज्जलीकर शेष द्रव्योंका कपड़छन चूर्ण मिला; ७ दिन तक नीबू के रस में सूर्य के ताप में खरल रखकर घोटे। फिर २-२ रत्ती की गोलियां बनालें।

(यो० र०)

मात्रा—१ से २ गोली प्रातःकाल या भोजन कर लेने पर जल के साथ दिन में १ या २ बार लें।

उपयोग—अजीर्णारि रस प्रातःकाल में सेवन करने पर नये अपचन को दूर कर दस्त साफ लादेता है। जीर्ण अजीर्ण और अग्निमान्द्य में दिनमें दोबार भोजन कर लेने के १-१॥ घण्टे

इस भस्मका यथाविधि अमृतीकरण करके व्यवहारमें लाना विशेष हितावह माना जायगा ।

दूसरी विधि—शुद्ध सुवर्ण वर्कके अथवा बारीक बुरादा १ तोला, कुक्कुटाण्डत्वक् (मुर्गीके अंडोके वे छिल्के जिनसे स्वाभाविक बच्चे पैदा हुए हों) २ तोले। दोनोंको खरलमें डाल हुलहुलके स्वरससे १ दिन निरन्तर घोटकर टिकिया बना सुखाकर कुक्कुट पुट दें। स्वांग शीतल होने पर पूर्ववत् हुलहुलके रससे घोट-घोट कर ५ बार कुक्कुट पुट देनेसे गुलाबी रंगकी मुलायम भस्म हो जाती है।

वक्तव्य—यदि स्वर्णको शोरेके तेजाब (Nitric acid) द्वारा छनवा लिया जाय तो उसका बारीक लाल मिट्टीके सदृश चूर्ण (भस्मवत्) बन जाता है; और स्वर्णका पूर्ण रूपसे शोधन भी हो जाता है। इसलिये इस विधिसे स्वर्णभस्म बनाना विशेष लाभप्रद तथा सुविधाजनक सिद्ध हुआ है।

—श्री० पं० राधाकृष्णजी द्विवेदी, आयुर्वेदभूषण

मात्रा और गुणधर्म—रसतन्त्रसार प्रथम खण्डमें लिखे-अनुसार। यह भस्म वातवाहिनियोंकी निर्बलताको नष्टकर पुंसत्व प्रदान करनेमें विशेष हितावह है, एवं स्नायुजालको निर्बलताको भी नाश करती है।

४. रौप्य भस्म।

विधि—५० तोले चांदीको शुद्ध कर पतले पतरे बनवाकर २-२ इञ्चके टुकड़े करें। फिर एक परातमें कोयलेकी अग्नि पर उन टुकड़ोंको फैला देवें। सब टुकड़े न रहें, तो थोड़े-थोड़े रक्खें। अच्छी तरह गरम होनेपर चिमटेसे एक-एक पतरेको उठाकर छोटी कटेलीके रसमें बुझाते जांय। इस तरह सब

उपस्थित होते हैं। उनके लिये यह रसायन अति लाभदायक है। आमाशयके पित्तप्रकोपको शमन कर पचन क्रियाको सुधारता है।

७. अग्निसुतरस।

विधि—कौड़ी भस्म १ तोला, शंख भस्म २ तोले, शुद्ध पारद ६ माशे, शुद्ध गन्धक ६ माशे और कालीमिर्च ३ तोले लें। पहले पारद गन्धक की कज्जली करें। फिर भस्म और अन्त में काली मिर्च का कपड़छन चूर्ण मिला नीबूके रसमें ३ दिन खरल करके २-२ रत्तीकी गोलियां बनवा लेवें। इस रसायनको अग्निसूनु और अग्निकुमार भी कहते हैं।

(यो० र०)

मात्रा—१ से २ गोली दिनमें ३ बार घी शक्करके साथ देनेसे क्षीण मनुष्य भी हाथी के समान बलवान् बन जाता है। पीपल का चूर्ण और घी के साथ सेवन कराने पर ग्रहणी विकार दूर होता है। सब प्रमेहों पर मठ्ठेके साथ देवें।

उपयोग—यह रसायन युक्ति पूर्वक प्रयुक्त करनेसे शोष, ज्वर, अरुचि, शूल, गुल्म, पाण्डु, उदररोग, अर्श ग्रहणी और प्रमेह आदि रोगोंको जीत लता है।

यह रस अग्निमान्द्य नाशक है। अग्नि मान्द्यकी उत्पत्ति कफ वृद्धिसे एवं पित्तमें द्रव आदि गुणों की वृद्धिसे भी होती है। पित्त में द्रव आदि गुणकी वृद्धि होने पर अग्निसुत घृतके साथ देना चाहिये। इस द्रवत्व गुण वृद्धिके साथ पित्तमें विस्रत्व गुण बढ़ जाने पर दुर्गन्ध मय डकार आती है; और खट्टी दुर्गन्धमय वान्ति होती है। ऐसी परिस्थतिमें इस रसका उपयोग घी शक्करके साथ किया जाता है।

अग्निमान्द्यके हेतुसे क्षीणता और कृशता आने पर घी शक्कर के साथ इस औषधका सेवन कराया जाता है। इस रसायनका

पतरेको २१ समय गरम करके बुझावें। फिर एक बड़ी हांडीके ऊपरका तीसरा हिस्सा तोड़कर उसे कंडेसे (लगभग २॥ सेर) भर देवें। कण्डेपर कटेलीका चूर्ण, जो रस निचोड़नेके समय बना है, उसकी १ इञ्च की तह करें। इसपर चाँदीके पतरे फैलावें। ऊपरमें और कटेली चूर्ण डालें। उसपर और चाँदीके टुकड़े रक्खें। इस तरह सब टुकड़े २-४ तहमें रख सबके ऊपर १ इञ्च या अधिक मोटी तह कटेली चूर्णकी रक्खें। फिर ऊपरमें लगभग २॥ सेर कण्डे जमा कर अग्नि लगा देवें। स्वांग शीतल होनेपर चांदीके पतरेको निकाल लेवें। इस तरह छोटी कटेलीके चूर्णके भीतर रखकर ५ बार अग्नि देनेसे पतरे सरलतासे टूट जाते हैं। पश्चात् पतरेको कूट कर चूर्ण करलें। उसे कटेलीके रसमें शाम तक खरल कर एक सरावमें भर लेवें। उसका साधारण संपुट कर रात्रिको २॥ सेर उपलोंकी अग्निमें रख देवें। दूसरे दिन पुनः कटेलीके रसमें घोटें। १० पुट होजानेपर उपले थोड़े-थोड़े बढ़ाते जाँय। २० पुट होनेके पश्चात् ५-१० और १५ सेर तक उपले बढ़ावें। इस तरह २८ पुट देवें। आखरीके पुटके समय छोटी-छोटी टिकियाँ बना सूर्यके तापमें सुखा सम्पुट कर अग्नि देवें। यह भस्म हल्के मैले लाल रंगकी मुलायम बनती है। ५० तोले चांदीकी ५६ तोले भस्म बनती है।

—श्री० वैद्य नाथूरामजी देहलीवाले।

सूचनाः—सुवर्ण और रौप्य जब तक कच्चे हों तब तक ज्यादा अग्नि नहीं देनी चाहिये, अन्यथा पुनः जीवित हो जाते हैं या कठोर बन जाते हैं।

५. लोह भस्म

बनावट—शुद्ध लोह चूर्ण आध सेरको एक चीनी मिट्टीके पात्रमें भर ऊपर १ सेर तक तरबूजका रस डालकर किसी

शंख और कपर्दिका-भस्म, दीपन, पाचन और स्तम्भक हैं। काली मिर्च तीक्ष्ण, उष्ण, चरपरे रस युक्त दीपन, पाचन और उस हेतु से पाचक पित्तका सम्यक् स्राव कराने वाली है। नीबू का रस पित्त स्रावी और पाचक आदि गुणों को बढाने वाला है।

(औ० गु० ध० शा० के आधार से)

८. अग्नि प्रदीपक गुटिका

बनावट—पीपरमेण्ट का फूल, हींग और सफेद मिर्च, तीनों समभाग लेवें। पहले हींग के साथ सफेद मिर्च का चूर्ण मिलावें। फिर पीपर मेण्ट का फूल मिलाकर (गीलापन उत्पन्न हो जानेपर) आध आध रत्ती की गोलियां बनालेवें।

मात्रा—१ से २ गोली दिन में ३ बार या आवश्यकता पर २-२ घण्टे पर जल, मिश्री या शहद के साथ देवें।

उपयोग—इस गुटिका के सेवन से अपचनजनित उदरपीड़ा, शूल, बारबार दस्त लगना, उबाक, वमन, आफरा, शिरदर्द आदि तत्काल शमन होजाते हैं।

९. बिड़लवणादि वटी

विधि—बिड़नमक, कालानमक और सैंधानमक १५-१५ तोले, सोंठ, कालीमिर्च, छोटीपीपल, चित्रकमूल की छाल, अजवायन, अजमोद, धनिया, डांसरिया (गिर्द समाक), सूखा पोदीना, मीठे सुहिजने की छाल, भुनी हींग, पीपलामूल और नौसादरपुष्प, ये १३ ओषधियां १०-१० तोले लें सवका कपड़छन चूर्ण मिला नीबू के रस में ३ दिन खरल करके १-१ रत्तीकी गोलियां बना लेवें। (स्व० आयुर्वेद मार्तण्ड स्वामी लक्ष्मीरामजी)

मात्रा—१-से-२ गोली जल के साथ अग्निमान्द्य में भोजन करने पर। उदरपीड़ा में आवश्यकता पर २-२ घण्टे पर ३-४ बार।

एकान्त स्थानमें रख दें। पात्रको ऐसे स्थानपर रखना चाहिये कि दिन या रात्रिको उठानेकी जरूरत न रहे। दिनमें पूर्णरूपसे जैसे कम होता जाय, वैसे-वैसे नया डालते रहना चाहिये। लगभग १ मास होनेपर पीली मिट्टीके सदृश भस्म बन जायगी। फिर इसको ३ दिन तक घीकुंवारके रसमें खरलकर २-२ तोलेकी टिकिया बना सूर्यके तापमें सुखावें, फिर छोटी हांडीमें बन्द कर मुख मुद्रा कर गजपुटमें फूंक देवें। इस तरह ३ गजपुट देनेसे लालरंगकी मुलायम भस्म बन जाती है।

सूचना:—यदि घीकुँवारके रसमें ५ तोले सिंगरफ मिला लेवें, तो भस्म विशेष लाभदायक बनती है; किन्तु रंग काला होजाता है।

मात्रा—१से २ रत्ती दिनमें दो बार देवें।

उपयोग—यह भस्म रक्तवर्धक और पाण्डुनाशक है। कब्ज नहीं करती और क्षुधाको बढ़ाती है। विशेष गुण रसतन्त्रसार व सिद्धप्रयोग-संग्रह प्रथमखण्डके भस्म-प्रकरणमें लिखे हैं।

लोहभस्म अमृतीकरण—लोह भस्मके समान गोघृत मिला लोहेकी कड़ाहीमें डाल चूल्हे पर चढावें। नीचे मंद अग्नि देवें। फिर कुछ तेज करें। घी जीर्ण हो जाने पर अग्नि देना बन्द करें। स्वाङ्ग शीतल होने पर कड़ाहीको उतार लेवें। इस भस्मकी सर्व योगोंमें योजना करनी चाहिये। इस अमृतीकरण-क्रियाके करनेसे गुणमें वृद्धि हो जाती है और वारितर भी होने लगती है।

(र० चं०)

६. अभ्रक भस्म।

विधि—वज्राभ्रकमें से किये हुए धान्याभ्रक ४० तोलेको पीले फूलवाले भांगरेके रसमें रोज १-१ घण्टे घोट कर ७ दिन तक सूर्यके तापमें रक्खें। फिर गोला बनाकर सुखा लें। फिर

विदग्धाजीर्ण के साथ उदर में वायु उत्पन्न हुई हो तथा खट्टी डकारें बारबार आती रहती हों तो इस चूर्ण के साथ सोडा बाई कार्ब मिलाकर निवाये जल के साथ दिन में ३ समय देने से अच्छा लाभ पहुंचता है।

१७. पाचन चूर्ण ।

इन्द्रायणके पक्के फलों में लवण पञ्चक (सैंधानमक, सांभर नमक, कालानमक, समुद्रनमक, कांचनमक) का चूर्ण भर सब पर अलग २ कपड़ मिट्टी करें। फिर सुखा कर गजपुट देवें। स्वाङ्ग शीतल होने पर कपड़ मिट्टी को हटाकर क्षार भस्म निकाल लेवें। फिर हरड़, बहेड़ा, आंवला, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, चव्य, चित्रकमूल, और पीपलामूलका कपड़ छान चूर्ण भस्मके समान वजनमें मिलाकर बोतलमें भर लेवें।

मात्रा——१॥ से २ माशे तक जलके साथ देवें। यदि सब फलों को मिट्टी का हांडीमें भरकर गजपुट दिया जाय तो अधिक श्रेष्ठ होगा (संशोधक)।

उपयोग——इस चूर्णके सेवनसे अग्नि प्रदीप्त होती है। कफ प्रधान और वात प्रधान व्याधियां दूर होती हैं। यह चूर्ण उत्तम पाचन है। इस चूर्णके सेवनसे अपचन, बद्धकोष्ठ और उदरशूल की निवृत्ति होती है।

१८. पिप्पल्याद्यासव

विधि——पीपल, कालीमिर्च, चव्य, हल्दी, चित्रकमूल, नागरमोथा. वायविडङ्ग, सुपारी, लोध, पाठा, आंवला, एलवालुक (अभावमें मीठा कूठ या नेत्र वाला), खस, रक्तचन्दन, मीठा कूठ लौंग, तगर, जटामांसी, दालचीनी. छोटी इलायचीके दाने, तेजपात, प्रियङ्गु, नागकेशर, ये २३ औषधियां २-२ तोले लेकर जौकूट चूर्ण करें। फिर चूर्णके साथ २०४८ तोले जल, १२०० तोले गुड़, ४०

छोटी हांडीमें रखें। चारों ओर भांगरेका कल्क डालें। फिर मुँह पर ढक्कन लगा कपड़मिट्टी कर गजपुट देवें। इस तरह ३ पुट देनेसे निश्चन्द्र उत्तम मुलायम लाल रंगकी भस्म बन जाती है। (यद्यपि भस्म निश्चन्द्र होजाती है परन्तु जबतक १०० पुट न दिये जांय तब तक विशेष गुणयुक्त नहीं होती)।

अभ्रक सेवन में अपथ्य—अभ्रक भस्म या अभ्रक-सत्वका रसायन रूपसे (बल बढ़ानेके लिये) सेवन करने वालों को चाहिए कि सज्जीखार आदि क्षार, अधिक नमक, अम्ल, द्विदल धान्य (चना, मसूर, उड़द, अरहर, मटर, सेम, लाख आदि), बेर, ककड़ी, करेला, बैंगन, करीर (करील) और तैलका त्याग करें। इनके अतिरिक्त अधिक मिर्च, धूम्रपान, शुष्क अन्न, अधिक कब्ज करनेवाले पदार्थ, अति परिश्रम, मानसिक चिन्ता और उपवास भी नहीं करना चाहिये। ब्रह्मचर्यका जितना अधिक पालन हो उतना लाभ अधिक पहुंचता है।

७. अभ्रक सत्व भस्म।

अभ्रक-सत्व-पातन विधि प्रथम प्रकार—धान्याभ्रक ४० तोले, सोहागा, गूगल, घी, शहद, चिरमी, ये सब १०-१० तोले लें। सबको कूटकर मिला लेवें। फिर मट्ठा, कांजी या इमलीका जल १० तोले डालकर छोटी-छोटी टिकिया बनाकर सुखावें। पश्चात् हांडी या वज्रमूषामें डाल कोष्ठिक यन्त्रमें रख कोयलेकी तेज अग्नि देने पर द्रवीभूत हो जाता है। तत्पश्चात् तत्काल ही समीप की साफ भूमि पर छिटकाकर छिन्नभिन्न कर दें। उसमें जो सत्व होता है वह ठंडे होनेके बाद छोटे-छोटे गोल कणवाला जो राईसे लेकर ज्वार दानेके समान धातु जैसी कान्तिवाला होता है; शेष काले रंगका कांच जैसा अधिक मात्रामें मिलता है, जिसको कांच समझना चाहिये, इसको छोड़ दें।

मात्रा—४ से ६ माशे दिनमें २ से ३ बार लेवें ।

उपयोग—इस चाटणसे कोष्ठ शुद्धि होती है; अरुचि दूर होती है; और अग्नि प्रदीप्त होती है ।

२१. कर्पूरादि गुटिका

प्रथमविधि—देशी कपूर १० तोले. हीराहींग ५ तोले और लालमिर्च बीजसह ५ तोले लेवें । पहले बीज सहित लाल मिर्चों को कूटकर बारीक चूर्ण करलें; फिर हींग मिला लेवें पश्चात् कपूर मिलाने से गोलियां बांधने योग्य गीलापन आजायगा । यदि गीलापन न होजाय, तो जल के छींटे लगा खरलकर १-१ रत्ती की गोलियां बना लेवें । (आ० नि० मा०)

मात्रा—१ से २ गोली दिन में ३ बार शीतल जलके साथ । तीव्र प्रकोपमें १-१ घण्टे पर या प्रत्येक दस्त और वमन होने पर एक एक गोली देते रहें ।

उपयोग—इस वटी के सेवनसे विसूचिका सत्वर शमन हो जाता है । जब तक रोगी को पेशाब न आवे तब तक रोग बल की अधिकता मानी जाती है । अतः मूत्रशुद्धि होने तक आध-आध घण्टे पर या दस्त वमन होने पर एक-एक गोली देते रहना चाहिये । रोगशमन होने पर मात्रा देर से देवें ।

सूचना—रोगी को अन्न, दूध, या चाय, कुछ भी नहीं देना चाहिये ।आवश्यकता अनुसार वार-वार १-१ तोला जल (गरम-करके शीतल किया हुआ) पिलाते रहना चाहिये । अथवा बर्फ का टुकड़ा मुँहमें चुंसाना चाहिये ।

दूसरी विधि—कपूर, हींग और लहशुन, तीनों को समभाग मिला लहशुन के रसमें खरल करके १-१ रत्तीकी गोलियां बनावें ।

मात्रा—१-१ गोली आध-आध घण्टे पर देते रहें ।

सत्व संग्रह करनेकी विधि—एक पक्के लोहे का कड़ा २ मुँहवाला जो विजलीद्वारा चुम्बकत्व प्राप्त किया हुआ हो उस चुम्बकसे काँचके भीतर छोटे-छोटे कण जो पृथक दिखते हैं अथवा काँचको तोड़नेपर भीतरसे निकलते हैं इनको संग्रह करलेना चाहिये। आवश्यकता हो तो पुनः उन संगृहीत छोटे कणोंको पुनः मूषामें रख तीव्राग्निमें धमानेसे और द्रव होनेपर भूमिपर पूर्ववत् डालनेसे छोटे कणोंके विशेष कान्तिवाले बड़े कण बन जाते हैं, यही असली सत्व है। इसमें लोह विशेष प्रकारका होता है, परन्तु जंग नहीं लगता। और हथौड़े की चोटसे टूटकर चूर्ण हो जाता है, यही उत्तम सत्व समझा जाता है। इसीका शोधन मारण करके भस्म बनायी जाती है।

कोष्ठिक यन्त्र—जमीनके ऊपर चौतरा बना उस पर या बिल्कुल अलग १६ अंगुल ऊंचा, एक हाथ लम्बा और एक हाथ चौड़ा कोठा बनवालें। उसकी एक दीवारके भीतर नीचेकी ओर धमानेके लिये एक छिद्र रक्खें। इस यन्त्रके भीतर सत्वपातन-योग्य धातुपूर्ण मूषाको रख चारों ओर पत्थरके कोयले भरकर अग्नि लगा देवें। फिर छिद्रमें से धौंकनीसे (मोटरवाले बिजलीके पंखेसे) खूब धमानेसे धातु का सत्व कांचके साथ द्रव होजाता है। यद्यपि अनेक ग्रन्थोंमें नीचे गढ्ढा बनाकर सत्व-पातनकी विधि लिखी है, परन्तु उपरोक्त विधि सुगम और अनुभवसिद्ध है। इसलिये सत्वपातन के लिये यन्त्रके नीचे छिद्र और जमीनमें सत्व-संग्रहके लिये पात्र रखनेकी योजना नहीं करनी चाहिये।

वज्रमूषा—कुम्हारके घड़े बनानेकी चिकनी मिट्टी या बांबीकी मिट्टी ३ भाग; सन, गोबरीकी राख, घोड़ेकी लीद, भूसेकी राख और सेलखड़ी (या सफेद पत्थर) १-१ भाग तथा लोहेका कीट आधा भाग लें। सबको मिला खूब कूट-पीसकर मूषा (हांडी) तैयार कर लेवें। यह मूषा धातु आदिके सत्व-पातनके लिये उपयोगी है।

आन्त्रिक ज्वरमें आमाशय रस स्राव का ह्रास या अभाव होने पर लवण द्रावक अधिक जल (२-४ औंस) के साथ प्रयुक्त होता है।

सब खनिज तेजावकी क्रिया जीवित और मृत तन्तु Tissue पर रासायनिक (Ehemical) होती है। ये तन्तुओं के एल्व्युमिनके ऊपर क्रिया करते हैं और उसके भीतर से समस्त जलका शोषण करके तन्तुओं को ध्वंस करते हैं। इस हेतुसे दुष्ट व्रण जो सत्वर फैलता है और तन्तु जाल को नष्ट करता है (Phagedenic ulcration and slooghing) उसपर ये विशेष उपकारक है। मुँहमें विविध दुष्ट और जीर्ण बिगड़े हुए क्षत तथा कोथ मय क्षत (Cancrumoris) पर इसका प्रयोग किया जाता है। कण्ठ में श्वेत चिन्ह (Aphthal or Thrush) होने पर जल रहित लवण द्रावक को ८ गुने शहद में मिलाकर स्थानिक लेप किया जाता है। इनके अतिरिक्त बिगड़े हुए गले हुए दांतों पर भी इसका स्थानिक प्रयोग होता है।

कण्ठ रोहिणी (डिफ्थेरिया) रोग पर इसके उग्र द्रावकको समभाग शहद के साथ मिलाकर कण्ठमें झिल्ली मय रोगग्रस्त स्थान पर लगाने पर लाभ पहुंचता है। स्वस्थ स्थान पर प्रयोग करने पर प्रबल प्रदाह उत्पन्न होता है। अतः सावधानता पूर्वक प्रयोग करना चाहिये।

सूचना—विशुद्ध द्रावक (जिसमें जल मिलाकर डाइल्युट न बनाया हो ऐसा द्रावक) त्वचापर लगने पर प्रबलदाहक असर पहुँचाता है। एवं यदि उदरमें सेवन कराया जाय, तो जिन जिन तन्तुओं को उसका स्पर्श होगा, उन सब तन्तुओं को नष्ट कर देता है; तथा विषाक्त लक्षण प्रकाशित करता है।

कण्ठ और आमाशय के प्रदाह से बचने के लिये इस द्रावक को अत्यधिक जलमें मिलाकर कांचकी नली द्वारा लेना चाहिये ताकि उसके प्रभावसे दांतों को बाधा न हो।

४० तोले अभ्रकमें से सत्व निकालनेमें २॥-३ घण्टे लग जाते हैं और १ तोलेसे २ तोलेतक अभ्रकके अनुसारबैठता है।

भस्म बनाने की विधि—उपर्युक्त सत्वको कूट कर कपड़छान चूर्ण करें। फिर १० वां हिस्सा हिंगुल मिला घीकुंवारके रसमें १२ घण्टे खरलकर टिकिया बना, धूपमें सुखा, दृढ सराव संपुटकर ५ सेर गोबरीकी आँच देवें। इस तरह २० पुट देवें। बार-बार सिंगरफ मिलाना चाहिये। अन्त में एक या दो पुट अजारक्त के दिये जांय तो क्षय रोग नाशक गुणकी विशेष वृद्धी होती है।

उपयोग विधि—अभ्रक सत्व शीतल, त्रिदोषघ्न और रसायन है। इसमें विशेषतः पुरुषत्व लाने की शक्ति है। इसके सेवनसे तरुणावस्थाकी प्राप्ति होती है; और वीर्य स्तम्भन होता है। पुरुषत्व प्राप्तिके लिये इसके समान अन्य औषध नहीं है। इसके सेवनसे आयु की भी वृद्धि हो जाती है। इस भस्ममें से १-१ रत्ती शहद पीपलके साथ सेवन करनेसे राजयक्ष्मा, शोष, कास, प्रमेह, पाण्डु, और जीर्ण रोग, सब नष्ट हो जाते हैं।

८. सत्व-प्रधान अभ्रक-भस्म

विधि—एक सेर धान्याभ्रक और आध सेर चौकिया सोहागा मिलाकर वज्रमूषा या ३ कपड़मिट्टी कीहुई हाँडीमें भर दें। हाँडीके तल भागमें एक छिद्र सत्व गिरनेके लिये करें। हाँडीपर सराव ढक मुखमुद्रा करें। फिर कषायकरी भट्टीमें पत्थरके कोयले भर नीचेसे लकड़ीकी आँच दें। कोयले जलने लगें, तब लोह सलाकासे कुछ कोयलोंको हटा बीचमें हाँडी रखने योग्य स्थान बनाकर हांडीको रक्खें। एवं हांडीको ऊपरसे भी कोयलोंसे ढक दें। भट्टीके नीचेसे सब अग्निको निकाल भट्टीके भीतर हांडीके ठीक नीचे एक लोहेका तसला रख देवें। एक घण्टेके बाद हांडीमें से अभ्रकका सत्व बह-बहकर तसलेमें गिर जायगा। इस सत्वके भीतर अभ्रकका

आशुकारी श्वासनलिका प्रदाहमें निकलने वाले कफका परिमाण अत्यधिक होने पर जलमिश्र द्रावकका सेवन कराया जाता है।

२७. जलमिश्र सोरा लवण द्रावक।

(Acidum Nitro-Hydrochloricum dilutum)

विधि—सोरा द्रावण १२ भाग, लवण द्रावक १६ भाग और वाष्प जल १०० भाग लेवें। इनको मिला कर १४ दिन तक बोतलमें रहने देवें। फिर व्यवहारमें लावें। इसका आपेक्षिक गुरुत्व १·०७ है।

मात्रा—५ से २० बूंद तक १-१ औंस जलके साथ दिनमें ३ वार।

उपयोग—यह मिश्र द्रावक बल्य, अग्निप्रदीपक, क्षार नाशक, पित्तनिःसारक और रसायन है। कुछ दिन सेवन करने पर मुँह आ जाता है।

मूत्रमें ऑक्जालिक एसिड उपस्थित होने पर यह द्रावक अन्य द्रावकों की अपेक्षा श्रेष्ठ है। पेशाबमें यूरेट क्षार उपस्थित होने पर इसका सेवन कुछ दिनके लिये बन्द करें। पुनः कुछ दिन बाद चालू करें। इस तरह वर्षमें ३-४ वार सेवन कराने और पथ्य पालन करने पर ऑक्जालिक एसिडका परिवर्तन होकर आरोग्य की प्राप्ति होती है।

जीर्ण यकृत् प्रदाह और तीव्र यकृत् (प्रदाहकी उग्रता शमन होने पर) में इसका आभ्यन्तरिक और बाह्य प्रयोग विशेष उपकारक है। यकृत्में रक्ताधिक्य होने पर सोरा लवण जल मिश्र द्रावक ८ औंसको १ गेलन जल (९८%उष्ण) में मिला कर उसमें कपड़ा भिगोकर यकृत् पर लपेटा जाता है; तथा ऊपर तैल मय रेशमी कपड़ा बांधा जाता है। इस तरह सुबह शाम दिनमें

अंश भी मिला रहता है; किन्तु वह भी चन्द्रिकारहित होता है। इसका वर्ण कांचके समान काला होता है।

इस सत्वको कूट कपड़छान चूर्ण कर आकके दूधमें ३ दिन तक खरलकर छोटी-छोटी टिकिया बना धूपमें सुखा संपुट कर गजपुटमें फूँक देनेसे एकही पुटमें उत्तम भस्म बन जाती है। अनेक चिकित्सक १०० पुटी अभ्रक भस्मके स्थानपर इसे देते रहते हैं।

(र० सा०)

इस भस्मको पुनः एक-एक दिन आकके दूधमें खरलकर ३ गजपुट दिया जाय, तो यह अधिक गुणदायक बन जाती है।

९. अभ्रक-भस्मका अमृतीकरण

प्रथम विधि—त्रिफलाका क्वाथ ६४ तोले, गोमूत्र ३२ तोले तथा अभ्रक-भस्म ४० तोलेको मिला लोहेकी कड़ाही में डाल मंदाग्निसे पचन करें। सब द्रव्य सूख जानेपर अग्नि देना बन्द कर देवें। स्वाङ्ग शीतल होने पर अभ्रक भस्मको निकाल सब रोगों पर प्रयोजित करें। यह भस्म अनुपान मिलायें बिना भी जरा, मृत्यु और रोग-समूहों का नाश करने में विशेष बलवान है। फिर अनुपान की उचित योजना की जाय तो रोगोंको जल्दी दूर कर दें, इसमें आश्चर्यही क्या है। इस तरह अमृतीकरण करने पर भस्मकी सुन्दरता नष्ट होजाती है, किन्तु गुण बढ़ जाता है।

(आ० प्र०)

द्वितीय विधि—त्रिफला क्वाथ १६ भाग, गोघृत ६ भाग और अभ्रक-भस्म १० भाग, इन तीनोंको लोहेकी कड़ाहीमें डाल मंदाग्नि से पचन करें। इसी तरह केवल गोघृत समान परिमाण में मिला कर मंदाग्नि पर शुष्क कर अमृतीकरण किया जाता है।

(आ० प्र०)

८. कृमिरोग प्रकरण।

१. कृमिशत्रु चूर्ण।

बनावट—पलाशके बीज सेके हुए ५ तोले, कपीला, अजमोद, बायविडंग और इन्द्रजौ २॥-२॥ तोले तथा भुनी हुई हींग ६ माशे लें। सबको मिला कूट कपड़ छान चूर्ण कर नीमके पत्तेके स्वरस के ५ पुट और अजमोद बायविडंगके क्वाथके दो पुट देकर सूखा चूर्ण बना लेवें।

मात्रा—२ से ४ रत्ती दिनमें तीन बार जलके साथ दें।

उपयोग—इस औषधके सेवन से सब प्रकार के कृमि नष्ट हो जाते हैं। छोटे बालकको देना हो, तो मात्रा कम देनी चाहिये।

२. कृमि कण्टको रस।

विधि—सोंठ, काली मिर्च, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, भुनी हींग, सफेदजीरा, कालाजीरा, अजवायन, खुरासानी-अजवायन, अजमोद, किरमाणी अजवायन, (खुरासानी अजमोद), हिंगुपत्री (डीकामाली), वायविड़ङ्ग, सोंफ, सैंधानमक, कालानमक, इन्द्रजौ नागरमोथा, अतीस, नीमकी शलाकाएं, कोलम्भो, (Columba) और चिरायता ये २४ ओषधियां १-१ तोला और ताम्र भस्म २ माशे लेवें सबको कूटकर कपड़ छान चूर्ण करें।

(र० यो० सा०)

मात्रा—३ माशे अवस्था अनुसार जलमें मिलाकर घोल दें। फिर २-३ ठीकरीको तपाकर उसमें डाल दें और ढक दें। बाष्प शान्त होने पर छानकर बच्चे को पिला देवें। इस तरह सुबह शाम दो बार देवें।

उपयोग—इस रसायन के सेवन से बालकोंके सब प्रकारके कृमि और कृमिसे उत्पन्न ज्वर, पाण्डु, वमन, अतिसार, अग्नि-

से.) अन्त्रमें विविध प्रकारके कृमि उत्पन्न होते हैं। फिर अति निर्बलता आजाती है। जुकाम, कास, उदरपीड़ा, उदरमें वायु भरा रहना, उदरमें भारीपन, मलावरोध, थोड़ा थोड़ा दस्त होना, उबाक आना, मंद मंद ज्वर बना रहना, नाक गुदा और सर्वाङ्गमें खुजली चलना, शीतपित्तके समान रक्तपित्तके धब्बे हो जाना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उस विकार पर मुस्तादि योगके सेवन से लाभ हो जाता है।

४ कृमिघ्नयोग

योग—कपिला, वायविडङ्ग, नागरमोथा, डिकामाली और कालानमक इन पांचोंको समभाग मिलाकर चूर्ण करें। इसमें से २-२ माशे भोजन करनेके पहले निवाये जलके साथ दिनमें २ समय लेते रहनेसे उदरकृमि तथा रक्तमें उत्पन्न कीटाणु, अरुचि अग्निमान्द्य, उदरशूल, कोष्ठबद्धता और ज्वर आदि लक्षण सब थोड़े ही दिनोंमें दूर हो जाते हैं।

अनेक बार पाण्डुरोगकी उत्पत्ति उदरकृमि की वृद्धि होने पर होती है, उसमें पाण्डुता, कृशता, उदरमें आध्मान, ज्वर रहना, प्लीहावृद्धि, (क्वचित् यकृद् वृद्धि भी,) किसीको कफवृद्धि, अग्निमान्द्य, मलावरोध आदि लक्षण प्रतीत होते हैं। उस पर यह चूर्ण देने से कृमि गिरने लगते हैं। फिर थोड़े ही दिनोंमें रोगशमन होकर सब लक्षण दूर हो जाते हैं।

५ नियमनादि कषाय

विधि—कड़वे निम्बकी अन्तरछाल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, कुड़ेकीछाल, वच, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, खैरकीछाल और निसोत, इन ११ ओषधियोंको मिलाकर जौकूट चूर्ण करें।

हुए द्रव्यके साथ खरल कर टिकिया बना सम्पुट कर १० वराह पुट दें। फिर समभाग गन्धक मिला कर घीकुंवारके रसमें खरल कर १० वराह पुट देनेसे दिव्याभ्ररसायन बन जाता है।

(र० र० स०)

मात्रा—½ से १ रत्ती तक दिन में २ बार त्रिकटु, वायविडंग और घी अथवा शहद-पीपल या अन्य रोगानुसार अनुपान के साथ देवें।

उपयोग—यह रसायन अति गुणदायक, पाचक और अग्नि-प्रदीपक है। इसके सेवन से क्षय, पाण्डु, संग्रहणी, शूल, आमवात, कुष्ठ, ऊर्ध्वश्वास, प्रमेह, अरुचि, दारुण कास, अग्निमान्द्य, उदररोग और अन्य सब बढ़े हुए रोगोंको भिन्न-भिन्न अनुपानके साथ सेवन करनेसे शीघ्र नष्ट करता है। क्षय, प्रमेह, प्रदर आदि पर सत्वर अपना प्रभाव दर्शाता है।

रसायन गुणकी प्राप्तिके लिये (बल-वृद्धिके लिये) अभ्रक भस्मकी अपेक्षा यह सत्वाभ्ररसायन अत्यधिक लाभ पहुँचाता है। यदि लक्ष्मी-विलास रसमें अभ्रक भस्मके स्थान पर इस रसायन को मिलाया जाय तो, वह शुक्रवृद्धि, शुक्रस्तम्भन और रोगनाशक आदि गुण विशेष दर्शाता है। इसी तरह अभ्रक-भस्म-प्रधान इतर औषधियाँ भी इस रसायनके मिलानेसे अत्यधिक गुणदायक बन जाती हैं।

११. वङ्ग भस्म

प्रथम विधि—कलई पाट की अशुद्ध २॥ सेर को लोहे की कढ़ाही में डाल कर चूल्हे पर चढ़ाकर तीव्र अग्नि देवें। कलई की द्रुति होने पर बड़ की जटा १ इंच मोटी का डंडा लेकर उससे कलई घोटते रहें; तथा कड़वे सुहिजने के पत्ते डालते जांय। १ सेर पत्ते डालने पर भस्म बन जाती है। फिर एक सेर आँवलों को १६

लसीका ग्रन्थिवृद्धिजन्य श्वेताणुवृद्धि (Lymphatic Leuka-emia) रोगमें मुखमण्डल निस्तेज, सफेद-सा बन जाना लसीका ग्रन्थियां बढ़जाना, अपचन, प्लीहावृद्धि, यकृद्वृद्धि, वृक्कवृद्धि, नेत्रकी पुतलियां, बड़ी होजाना, आदि लक्षण होते हैं। रोग बढने पर निद्रानाश सह शोथ उपस्थित होता है। यदि मुख, नासिका आदि स्थानोंसे रक्त स्राव न होने लगा हो, तो इस पञ्चाननवटीके सेवनसे सत्वर लाभ पहुंचने लगता है। यह ओषधि प्रातःकाल एक ही समय देनी चाहिये। दोपहरको और रात्रिको लोह या मण्डूरप्रधान ओषधिकी योजना करनी चाहिये।

इस वटीमें जमालगोटा होनेसें विषको विरेचन द्वारा बाहर निकालने का कार्य उत्तम प्रकारसे होता है। फिर शोथमें (त्वचा के नीचे) रहा हुआ रक्त रस रक्तमें आकर्षित हो जाता है। जिससे शोथका ह्रास होता है; तथा ज्वरका भी निवारण हो जाता है।

ताम्रके योगसे यकृत्पित्तकास्राव अधिक होनेसे अन्त्र में रहे हुए या आये हुए सेन्द्रिय विषके हानिकर प्रभावसे बचनेकी क्रिया होने लगती है। एवं यकृत्प्लीहामें प्रवेशित विष जल जाता है; तथा रक्ताभिसरण क्रिया बल पूर्वक होने लगती है।

पारद और गन्धक रक्तमें प्रवेशित होकर लीन विषको नष्ट करने लगता है।

अभ्रक रक्तकी न्यूनता पूर्ण करता है। हृदय और वातवाहिनियोंको सबल बनाता है; पाण्डुरोगमें उत्पन्न घबराहट, श्वास और बेचैनीको दूर करता है। उदरमें बढ़ी हुई लसीका ग्रन्थियां और रसवहन विकृतिको सुधारता है; मांसको दृढ़ और निरोगी बनाता है। इस हेतुसे पाण्डु रोग सम्पूर्ण उपद्रवों सह नष्ट हो जाता है।

गूगल वात वाहिनियोंको सबल बनाता है; सेन्द्रिय विष और दुर्गन्धको नष्ट करता है, मेदको कम करता है; हृदयको पुष्ट

से पाण्डुता दूर नहीं हो सकती। फिर भी कुछ शक्ति तो प्रदान अवश्य करता है। यदि मांसमें अधिक क्षीणता आ गई है, तो अभ्रकभस्म साथमें मिला देनी चाहिये।

सामान्यतः च्यवनप्राश या आंवलोंका मुरब्बा अनुपान रूप में देनेसे शुष्कता, पित्त प्रकोप, दाह, कोष्ठ बद्धता आदि दूर होकर सत्वर लाभ मिल जाता है।

अधिक संतानोत्पत्ति या बालकको स्तन्यदानके हेतुसे शुष्कता आई हो, तो प्रवालपिष्टी और अमृतासत्वके साथ इस रसायनका सेवन कराना चाहिये।

अति मैथुन, हस्तमैथुन, बाल्यावस्थामें ब्रह्मचर्य भङ्ग आदि कारणोंसे शुष्कता आई हो, तो च्यवनप्राश अमृतपाश अथवा शतावर्यादि चूर्ण अनुपान रूपसे मिला देना चाहिये।

त्रिदोषज पाण्डु (Progressive Pernicious Anaemia), जिसमें रक्तस्राव होता रहता है तथा हृदय मेदापक्रान्तियुक्त हो जाता है। उस पर इस रसायनसे लाभ नहीं पहुंचता। लसी का धातु या लसीका ग्रन्थियोंसे उत्पन्न पाण्डु रोगमें भी इस रसायन का उपयोग नहीं होता है। एवं स्त्रियोंके हलीमकमें भी रुग्णा शुष्क नहीं होती, मोटी ताजी प्रतीत होती है। अतः इस औषधका प्रयोग नहीं किया जाता।

इस रसायनमें मुख्यऔषधि लोह भस्म लोह भस्म और पारद गन्धक हैं। लोह भस्म रसायन, हृद्य, रक्तके रक्ताणुओंको बढ़ाने वाली, पित्तशामक और रुधिराभिसरण क्रिया वर्धक है पारद गन्धक रसायन, कीटाणुनाशक, हृद्य, और उत्तेजक हैं। लोह भस्म का संयोग होनेसे रक्तमें लाली बढ़ानेमें सहायता पहुँचाते हैं। रुमलकी जड़, त्रिफला और गिलोय पित्तशामक और पौष्टिक हैं।

की आधइञ्च मोटी तह जमा उसपर अलग-अलग टिकिया रखें। पुनः बिनौलेकी आध इञ्च मोटी तह कर टिकिया रखें। आवश्यकता अनुसार ३ तह कर सकते हैं। फिर ऊपर में १ इञ्च बिनौले की तह कर ऊपरमें चारों ओर उपले ५ सेर रखकर अग्नि लगा देवें। तीसरे दिन स्वांग शीतल होने पर सावधानीसे राखको हटा टिकियाओंको निकाल लेवें। पुनः घीकुंवारके रसमें १२ घण्टे खरलकर टिकिया बना एक हांडीमें बन्दकर गजपुट अग्नि देवें। इस प्रकारसे ७ पुट देने पर सफेद, मुलायम और निरुत्थ भस्म हो जाती है। स्व० वैद्यराज पं० हरिप्रपन्नजी

मात्रा—गुणधर्म और उपयोग—रसतन्त्रसार प्रथम खण्ड में लिखे अनुसार।

१२. यसद भस्म।

बनावट—आध सेर शुद्ध जसदको एक दलदार मजबूत मिट्टी या लोहकी कढ़ाहीमें डाल चूल्हे पर चढावें। नीचे तीव्र अग्नि देवें। द्रव होनेपर पलासके मूलके ताजे डंडेसे या केतकी के मूल से घोटते रहनेसे भस्म बन जाती है। भस्म हो जाने पर कढ़ाहीको नीचे उतार गरम-गरम भस्मके बीचमें गड्ढा कर १० तोले पारद डाल, उसपर जसद-भस्म डालकर गड्ढेको ढक दें। फिर चूल्हे पर चढाकर अतिमंद अग्नि ३ घण्टे तक देवें। ताकि पारद उड़ जायगा; और जसद-भस्म हरी-पीली-सी बन जायगी फिर भस्मको खरलमें डाल घीकुंवारके रसमें खरल कर २-२ तोलेकी टिकिया बना सरावसंपुट कर गजपुटमें फूक देवें। यह भस्म फूलती है। इस लिये नीचे के आधे संपुट में ही टिकियाएं रखनी चाहियें। गजपुट शीतल हो जाने पर सम्पुट को निकाल पुनः भस्मको घीकुंवारका पुट देवें; इस तरह २० गजपुट देने से भस्म अति मुलायम, हल्के वजन वाली, कुछ रक्तवर्णयुक्त पीले रंगकी बन जाती है। (आ० नि० मा०)

आदि रोग समूह दूर होते हैं। यह पाण्डु रोगके लिये अति लाभप्रद रसायन है।

पाण्डुरोग की सम्प्राप्तिके अनेक कारण हैं। विविधरोग कीटाणु या विषसे रक्त रचनामें विकृति, आमाशय, हृदय और यकृत्प्लीहा की निर्बलता, ये मुख्य कारण हैं। रक्तस्राव, मानसिक चिन्ता, फुफ्फुस विकार, गर्भाशय विकृत, विषप्रयोग आदि अन्य भी कितनेक हेतु हैं। इनमें से विविध रोगकीटाणु और आमाशय आदि इन्द्रियों की निर्बलता या कार्य विकृति होनेपर यह रसायन अच्छा लाभ पहुँचाता है।

पाण्डु रोगमें रक्त की न्यूनता, रक्ताणुओं की न्यूनता और केशिकाओं की विकृति, इन तीनमें से किसी भी प्रकार की विकृति हो, सब पर यह रसायन व्यवहृत होता है। इस रसायन की योजना विविधगुण युक्त द्रव्योंको मिलाकर की है।

पाण्डु रोगको दूर करनेके लिये उदरमें संगृहीत मल, आम, विष, कीटाणु आदिको कफ, मल, मूत्र-प्रस्वेद द्वारा बाहर निकाल देना चाहिये, और पचनेन्द्रिय संस्था की इन्द्रियोंको कार्यक्षम बना देना चाहिये। जिससे पुनः रोगोत्पादक दोष की उत्पत्ति न हो, इसलिये उदर संशोधनार्थ नारायण मण्डूरमें दंतीमूल, जमालगोटा, कुटकी, और इंद्रायण की योजना की है। मुँहसे कफद्वारा दोषको बाहर निकालनेके लिये वच, बेहड़ा, भारंगी आदि, तथा श्वासोच्छ्वास और प्रस्वेद द्वारा विषको बाहर निकालनेके लिये हींग, तुलसी, अजवान, लहशुन अदि मिलाये हैं। विष, आम और कीटाणुओं के नाश का कार्य भी इन हींग, लहशुन अजवायन, प्रसारणी, त्रिकटु आदि से सम्यक् प्रकार से होता है।

आमाशय आदि इन्द्रियों के लिये उपकारक त्रिकटु, त्रिफला, पीपलामूल, लहशुन, हींग, अजवायन, चव्य, गज पीपल, अजमोद आदि मिलाये हैं। वृक्कों द्वारा विष बाहर निकलनेके लिये

हरीतकी रसायनका कल्प अति गुण कारक है। श्रद्धासह एक वर्ष सेवन करने पर शरीर स्वस्थ, सबल और तेजस्वी बन जाता है।

सूचना—चेटकी जातिकी हरड़ इसमें विशेष उपयोगी है किन्तु उसके अभाव में बाजार में मिलने वाली काबुली हरड़ कमसे कम ६ माशे और तोलेके बीचमें १ हरड़ बजन वाली हो और जिसको पानी में डालनेसे डूब जाय अर्थात् तिरे नहीं उनको काम में लेनी चाहिये। मात्रा गुट्ठीरहित इसकी छालकी ३ से ६ माशे तक अतिक्षीण, सगर्भा, अति वृद्ध, और प्रसूता को इसका सेवन निषेध है। उदर रोगी, बद्धकोष्ठी और स्थूल पुरुषको यह अति-उपयोगी है।

६. लोहासव।

विधि—लोहभस्म, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, अजवायन, बायविडङ्ग, नागरमोथा, चित्रकमूल की छाल ये ११ ओषधियाँ १६-१६ तोले तथा धायके फूल ८० तोले लें। त्रिफला को छोड़ शेष सबका जौ कूट चूर्ण करें। लोहभस्मको हरड़ के चूर्ण के साथ खरल कर थोड़ा जल मिला कर ३ दिन रहने देवें। फिर उसके साथ आँवले और बहेड़ेका चूर्ण खरलकर जल मिलाकर ४ दिन रहने देवें। पश्चात् लोहमिश्रित त्रिफलाजल तथा जौकूट ओषधियोंको मिश्रितकर २०४८ तोले जल, २५६ तोले शहद और ४०० तोले गुड़ में अच्छी तरह मिला अमृतबानमें भर मुखमुद्रा कर १ मास रहने देवें। फिर देख लें। आसव परिपक्व होने पर छान कर बोतलों में भर लें। (शा० सं०)

कितनेक फार्मेसी वाले लोहेका बुरादा लेते हैं, कोई मण्डूर मिलाते हैं। एवं कितनेक कासीस (Ferri Sulph) मिलाते

१० रक्तपित्त प्रकरण ।

१. शतमूलादिलोह ।

विधि—सतावर, शक्कर, धनिया, नागकेशर, श्वेतचन्दन, हरड़, बहेड़ा, आंवला, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, बायविडङ्ग, नागरमोथा, चित्रकमूल, और सफेद तिल, ये १५ औषधियां १-१ तोला और लोहभस्म १५ तोले लें। पहले काष्ठादि ओषधियों का कपड़छान चूर्ण करें। फिर लोहभस्म मिलाकर खरल करें। (भै० र०)

मात्रा—३-३ रत्ती दिन ३ बार देवें।

अनुपान—बकरी का दूध, शहद, मक्खन, मिश्री, वासास्वरस, पेठे का रस, गूलर के मूल का जल और धमासे का क्वाथ आदि व्यवहृत होते हैं। इनमें वासास्वरस और शहद के साथ देकर ऊपर बकरी का दूध पिलाना विशेष हितकर माना जाता है। दाह और तृषा अधिक हो, तो शतमूलादि लोहके साथ मुक्तापिष्टी, प्रवालपिष्टी, वंश लोचन और गिलोय सत्वभी मिला देना हितकारक है और अनुपान रूपसे पेठेका रस देवें।

उपयोग—यह लोह रक्तपित्त अधिकारमें कहा है। तृषा, दाह, ज्वर, वमन आदि विकारों सह रक्तपित्तको नष्ट करता है। ऊर्ध्व रक्तपित्तमें इसका प्रयोग विशेष किया जाता है।

इस रसायनका सेवन करने पर पित्तवर्धक आहार-विहार, मिर्च, अधिक नमक, क्षार, हींग, गरम चाय, तेज खटाई, सिरका, राई, धूम्रपान, अग्नि और सूर्यके तापका सेवन, शराब आदि छुड़ा देना चाहिये।

२. रक्तरोधक वटी

विधि—प्रवाल पिष्टी २ तोले, रसौंत, गिलोयसत्व, सुवर्ण-

डालकर द्रव करें। उसमें इमली और पीपल वृक्ष की छाल का जौ-कूट चूर्ण थोड़ा-थोड़ा डालते जाँय और लोहे की कुड़छी से चलाते रहें। लगभग ४ सेर चूर्ण डालने पर शीशे की भस्म लाल रंग की हो जाती है। पश्चात् भस्म को तवे से ढक दें; और तीन घण्टे तक अग्नि देते रहें। स्वाँग शीतल होने पर कपड़ेसे छान लेवें फिर १२ वाँ हिस्सा मैनसिल मिला अडूसे के पानों के स्वरसमें ६ घंटे खरलकर छोटी-छोटी टिकिया बना सम्पुट बन्द कर २ सेर गोबरी की अग्नि देवें। इस तरह ३० पुट देवें। दस पुट तक मैनसिल मिलावें। १० पुट के पश्चात् अग्नि थोड़ी-थोड़ी बढ़ाते जाँय यह भस्म हल्के लाल रंग की मुलायम बनती है।

गुणधर्म—यह भस्म, मधुमेह, शुक्रस्राव, श्वेतप्रदर और उर-क्षतमें विशेष व्यवहृत होती है।

द्वितीय विधि—अगस्त्यके २सेर पानका कल्ककर आधासेर शीशे के पतरे पर लेप करके सुखावें। फिर कड़ाहीमें डालकर तीव्राग्नि देवें। द्रव होने पर वासा क्षार और अपामार्ग क्षार ५-५ तोले अलग बर्तन में मिला, उसमें से थोड़ा थोड़ा डालते जाँय, और अडूसे के डंड से चलाते रहें। ३-४ घण्टे तक घोटनेपर शीशे की भस्म हो जाती है। फिर उसपर तवा ढक कर ३ घण्टे और अग्नि देवें। स्वांग शीतल होने पर भस्म को निकाल कपड़ छान करें। फिर अडूसा के स्वरसमें ३ दिन खरल कर टिकिया बना सूर्य के ताप में सुखा सराव सम्पुट कर ५ सेर गोबरी का लघु पुटदें। फिर अडूसाके स्वरसमें १-१ दिन खरल कर टिकिया बना ७ पुट (यथार्थ में २१ पुट) देने से सिन्दूर के समान लाल रंग की भस्म बन जाती है। अंतिम समय में पूरा गजपुट देना चाहिए।

(र० स० सं०)

गुणधर्म—शुक्रमेह, मधुमेह, श्वेतप्रदर, कास, श्वास, उरः-

की योग्य पूर्ति नहीं होती। इस स्थितिमें नागवल्लभ रस देनेसे तत्काल उत्तेजना आकर कफस्राव होजाता है; और रोगीको शान्त निद्रा आजाती है।

कीटाणु जन्य क्षयमें इस रसका कितना उपयोग होता है, यह तो निर्णित नहीं हुआ; किन्तु कफप्रधान दोषसे श्वासवाहिनियां रुद्ध होकर क्षय होने पर कफका स्राव करा जल्दी विकारको दूर करदेनेका महत्वका कार्य इस रसायनसे होजाता है।

छोटे बच्चोंको क्षीरालसकनामका विकार होनेपर बालक कृश होजाता है; सर्वाङ्ग में सिलवट होजाती है; उदरमें विकृति होजानेसे बारबार वान्ति होती है; दूधभी नहीं पचता; जल मिला दस्त सफेद खड़ियाके समान होता है; उदर कठोर और बढा हुआ भासता है; छातीमेंसे घुरघुर आवाज निकलती है; थोड़ी थोड़ी वान्ति और खांसीके हेतुसे शिशु उत्साह हीन होजाता है; खांसी आने पर शारीरिक हाल चाल होती है; शेष समय सुप्तभाव से पड़ा रहता है। इस विकार और अस्थिमार्दव (मृदु अस्थि) रोगमें महत्वका यह प्रभेद है कि, अस्थि मार्दवमें पैर की हड्डी मुड़जाती है; ऐसा इस क्षीरालसकमें नहीं होता। क्षीरालसक की इस स्थितिमें नागवल्लभका अति कममात्रामें ($\frac{1}{16}$ से $\frac{1}{8}$ रत्ती) प्रयोग करने पर अच्छा लाभ पहुँच जाता है। अस्थिमार्दवमें अस्थि विकृति होनेसे इस औषधका कुछ भी उपयोग नहीं होता। प्रवाल मिश्रण प्रयोजित किया जाता है।

कफज प्रमेह-हस्तिमेह, लालामेह, अच्छमेह, पिष्टमेह आदि प्रकारोंमें रोगीको अति आलस्य, जड़ता, त्वचामेंसे दुर्गन्ध निकलना आदि लक्षण होते हैं। पेशाब बहुधा श्वेत रंगका किन्तु अधिक मात्रामें बार बार होता है। मूत्रका गुरुत्व विशिष्ट कम होजाता है। (लालामेहमें मात्र गुरुत्व विशिष्ट अधिक होता

और श्वास यन्त्रके रक्तभिसरण में प्रतिबन्ध होता हो, तो इस रसायन का उपयोग नहीं करना चाहिये।

वालकोंके धनुर्वात और शीतलाका टीका लगानेके हेतुसे आये हुए ज्वरमें इस रसायनका उपयोग अति कम मात्रामें शहद या माता के दूधके साथ किया जाता है। धनुर्वात पर एक या दो घण्टे पर पुनः दूसरी वार औषध देनेसे धनुर्वातका आक्षेप दूर हो जाता है।

इस रसायनमें मुख्य ओपधि वच्छनाग है। वह ज्वरघ्न, प्रदाह नाशक, वेदना शामक और वातवाहिनियोंके लिये शामक है।

सोहागा, आक्षेपहर, कीटाणु नाशक, दुर्गन्धहर, पाचक, कफस्रावी और श्वास-कास शामक है।

पीपल दीपन, पाचन, ज्वरहर, कफहर और रसायन है। शंखभस्म, अग्निप्रदीपक, विदाह नाशक, कफोत्पत्ति रोधक, आमाशयपित्तशोधक है।

अदरख ज्वरहर, अग्निप्रदीपक, आमपाचक, श्लेष्महर और स्वेदल है।

४. कफकेसरी रस।

विधि—गोदन्ती भस्म १० तोले और शुद्ध मनःशिल २॥ तोले मिला कर ६ घण्टे खरल कर लेवें।

(श्री० वैद्य गोपालजी कुंवरजी ठक्कुर)

मात्रा—३ से ६ रत्ती शक्कर या शहद से दिनमें २ या ३ बार।

उपयोग—यह रसायन कास और श्वासमें कफको सरलतासे अलग करके निकाल देता है। जो अधिक उत्तेजक ओषधि सहन नहीं कर सकते ऐसे निर्बल प्रकृतिके मनुष्योंके लिये और

सादक है। यह अवसादन क्रिया रक्त संचालक यन्त्र में और विशेषत: वात संस्थामें प्रकाशित होती है। एक ही समयमें अत्यधिक मात्रामें सेवन करने पर वमन और उग्र विष क्रियाके लक्षण उपस्थित होते हैं। आमाशय और अन्त्र में इसकी रासायनिक क्रिया प्रकाशित होती है; अर्थात् इसके द्वारा आमाशय और अन्त्ररसके निःसरण का ह्रास होता है। सब रक्त प्रणालियां आकुंचित होती हैं। अंत्रकी पुरः सरण क्रिया प्रतिरुद्ध होती है और उसके साथ रस का संमिलन होने पर इसका परिवर्तन एल्ब्युमिन मिश्रण (Albuminate) के रूप में हो जाता है। फिर रक्त में शोषण होकर देह के विविध विधान में प्रधानतः वात संस्था के केन्द्र विभाग में जाकर संगृहीत होता है। फिर वह देह में से शनैः शनैः बाहर निकलता है। यदि शीशा अल्प मात्रा में दीर्घकाल तक सेवन कराया जाय, तो भी भीतर संग्रह होने पर विष क्रिया दर्शाता है।

शीशा सेवन होने पर वृक्कों द्वारा रक्त में से क्षार (यूरेट्स) का प्रभेद नहीं होता। इस हेतु से शीशा के सेवन से पेशाब में यूरिक एसिड की मात्रा कम होती है और रक्त में बढ़ जाती है। परिणाम में उग्र वातरक्त के लक्षण प्रकाशित होते हैं। अतः शीशा का सेवन दीर्घकाल पर्यन्त नहीं करना चाहिए। एवं वृक्क रोग पीड़ितों को नहीं कराना चाहिये। डाक्टरीमत अनुसार वृद्धों को भी शीशा सेवन कम से कम करना चाहिये।

स्वस्थावस्था में अल्प मात्रा में शीशा का सेवन कुछ दिन तक करने पर स्रावण क्रिया का ह्रास, धमनी की पुष्टि और गति में लघुता तथा शारीरिक उष्णता का ह्रास होता है। परिणाम में सब धमनी और स्रावण प्रणाली समूह की परिधि आकुंचित होती है। चिकित्सार्थ उतने तक ही विधेय। अति योग होने पर विष क्रिया उपस्थित होती है। जब अवयव शिथिल हुए हों,

श्वास कास की पीड़ा बढजाती है; ऐसे रोगियोंको कफ कुञ्जर रस कुछ दिनों तक सेवन करानेसे कफ प्रकोप दूर होता है और आमाशय सबल होजाता है।

प्रतिश्यायमें योग्य उपचार यथा समय न होने पर वह जीर्ण होकर स्थिर होजाता है। फिर नासिकासे पीला श्लेष्म बार बार गिरता रहता है। मस्तिष्कमें भारीपन, व्याकुलता, आलस्य निद्रामें वृद्धि, नेत्रकी निर्बलता और क्षुधामान्द्य आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। ऐसी जीर्णावस्थामें यह कफ कुञ्जर रस देनेसे थोड़े ही दिनोंमें कफ प्रकोप दूर होकर स्वास्थ्यकी प्राप्ति हो जाती है।

६. बृहच्छ्रृंगाराभ्ररस।

विधि—शुद्धपारद, शुद्धगन्धक, सोहागेका फूला, नागकेशर, जावित्री, कपूर, लौंग, तेजपात और सुवर्णभस्म १-१ तोला, अभ्रक, भस्म ४ तोला, तालीसपत्र, नागरमोथा, कूठ, जटामांसी, दालचीनी धायके फूल, छोटी इलायचीके दाने, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला और गजपीपल २-२ तोले लें। पहले गन्धक की कज्जली करके भस्म मिलावें। फिर शेष ओषधियोंका कपड़ छान चूर्ण मिला पीपलके क्वाथके साथ ७ दिन खरल करके २-२ रत्तीकी गोलियां बना लेवें। (र० सा० सं०)

वक्तव्य—हम इस रसायनमें ४ तोले शृंगभस्मभी मिलाते हैं।

मात्रा—१ से २ गोली दालचीनीके चूर्ण और शहदके साथ दिनमें २ बार।

उपयोग—यह शृंगाराभ्र विशेषतः कासरोग, वातज, पित्तज, कफज और त्रिदोषज कास, हृदयशूल, पार्श्वशूल, शिरःशूल, स्वरभंग, कुष्ठ, कफप्रकोप, वातरक्त, रक्तपित्त और श्वास रोग

धमनी की दीवार प्रसारित हो गई हों, विविध अवयवों का प्रकोप होकर स्त्राव बढ़ गया हो, तब शीशा प्रयोजित होता है। शीशा धातु का देहमें प्रवेश होनेके अनेक मार्ग हैं। टाइप फाउण्डरीके कार्यकर्त्ता, कम्पोजीटर, लाल रंगका काम करने वाले तथा चित्रकार आदि जिनके व्यवहार में सीसा धातु आती हैं, ये सब अन्त्र में प्रायः इस धातु के द्वारा विपाक्त होते हैं। सीसाको गलाने पर जो धुआँ उत्पन्न होता है, वह फुफ्फुसोंमें जाने पर विषोत्पत्ति करता है। शीशा धातु सूक्ष्म रजरूपसे वायुके साथ मिलकर फुफ्फुसोंके भीतर पहुँच कर विष प्रभाव दर्शाता है। इस तरह सीसा के पात्रमें भोजन या पान करने पर भी वह देहमें प्रवेश हो जाता है। सीसा के प्यालेमें सुरापान करने वाले और सीसाके नलोंसे प्राप्त पानीका निरन्तर सेवन करने वाले अनेक विपाक्त हुए हैं। अतः शीशेके पात्रमें भोजन और पान निषेध है, एवं फूटे हुए कांसी आदिके पात्रोंको भी शीशे द्वारा नहीं जोड़ना चाहिए।

उपर्युक्त रास्तोंसे शीशा देहमें प्रवेश करता है; किन्तु त्वचा द्वारा इसका शोषण न होने से उस मार्गसे प्रवेश नहीं करता। तथापि फैले हुए गम्भीर क्षत पर सीसा (मुर्दासंग) घटित औषध प्रयोग करने पर विपाक्त होनेकी संभावना है। सीसा धातु मूत्र, पित्त, दूध, प्रस्वेद और प्रधानतः मल द्वारा अत्यन्त धीरे धीरे देह में से निर्गत होता है।

एक साथ अधिक मात्रा लेनेके हेतुसे और कच्चे सीसा द्वारा विपाक्त होने पर आमाशय और अन्त्रमें प्रदाह होकर अति तृषा, कण्ठमें शुष्कता, आमाशयमें दाह, वेदना, वमन, उदरशूल, कोष्ठ काठिन्य, यकृत् रोग, मलका रंग काला हो जाना, देह शीतल और स्वेद पूर्ण बन जाना, पैरोंमें झनझनाहट और शून्यता, आक्षेप और शक्तिपात आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। यदि मात्रा कम किन्तु दीर्घ काल तक सेवन करने पर विष संगृहीत हुआ हो, तो

शूल उपस्थित होता है। तीव्रशूल, श्वासकृच्छ्रता, नाड़ीकी तेज गति घबराहट आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उसपर इस रसायनका उपयोग होता है। अधिक वेदना होने पर ३-३ घण्टे बाद ३ समय देनेसे वेदनाका ह्रास होजाता है। साथ-साथ गरम घीमें भिगोई हुई रुई की पोटलीसे सेक करना चाहिये। अथवा हींग और अफीम को घिस निवाया करके लेप करना चाहिये।

जीर्ण प्रतिश्याय या जीर्णकासके पश्चात् कितनेक रोगियों की मस्तिष्क शक्ति कम होजाती है। विशेष विचार करना हो, तो मस्तिष्क थक जाता है; स्मरण शक्ति क्षीण होजाती है; बार बार चक्कर आता है; मन अस्थिर रहता है; रोगी निस्तेज, चिन्ता ग्रस्त और शुष्क भासता है। उनको यह शृंगाराभ्र देनेसे थोड़े ही दिनोंमें मस्तिष्कगत विकृति दूर होती है; मुख मण्डल प्रसन्न बन जाता है; और शरीरिक स्फूर्त्ति आजाती है।

सुजाकके लीन विषके हेतुसे या अन्य कारणसे वातवाहिनियाँ शिथिल होगई हों, उससे या मानसिक आघात पहुँचनेसे नपुंसकता आई हो, तो वह इस रसायनके सेवनसे दूर होती है। भोजनमेंसे रस योग्य न बननेसे रक्त आदि धातुओंका रूपान्तर सम्यक् नहीं होता। फिर उस हेतुसे शुक्र धातु की निर्बलता और नपुंसकता की प्राप्ति हुई हो, तो इस रसायनके सेवनसे रक्त आदि धातुओंका परिपोषण सम्यक् होकर विकार शमन होजाता है।

७. कास केसरी रस

विधि—शुद्ध गन्धक, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, अभ्रकभस्म, कुटकी, रसमाणिक्य (या शुद्ध हरताल), इन ७ ओषधियोंको ५-५ तोले मिला पञ्चकोल (पीपल, पिप्पलामूल, चित्रक मूल और सोंठ) के क्वाथमें ३ दिन खरल करके गोला बनावें। फिर दो सरावके भीतर रख, दृढ़ मुख मुद्राकर भूधर यन्त्रमें (गजपुटके

पहले मुँह, तालु और नासारन्ध्रमें शुष्कता, पेशाब का ह्रास, मलावरोध, पित्त और अन्त्र रसनिसरणमें न्यूनता, मलमें वर्ण वैलक्षण्य, आमाशयमें दर्द, उदरमें वेदना, क्षुधामान्द्य, उबाक और वमन आदि लक्षण प्रतीत होते हैं। मसूढ़े के अग्रभाग, ओष्ठ और गाल के भीतर नीलापन, जिह्वा पर सर्वदा मधुर-कषाय स्वाद, निःश्वास में दुर्गन्ध, मुख मण्डल पर उदासीनता, चक्षु का मलिन वर्ण, धमनियोंकी मन्द गति और संकोच तथा मानसिक व्यथा आदि भासते हैं। फिर रोग वृद्धि होने पर प्रायः नाभिके समीप उदरमें तीक्ष्ण शूल, पक्षाघात और विविध उत्कट मस्तिष्क व्याधि उत्पन्न होती है। स्त्री रुग्णा हो तो गर्भाशय प्रभावित हो जानेसे रक्त प्रदर हो जाता है; तथा स्त्रीसगर्भा हो तो, तो गर्भपात हो जाता है।

१४. कुक्कुटाण्डत्वक् भस्म

विधि—रसतन्त्रसार प्रथम खण्ड में लिखि विधि से झिल्ली रहित शुद्ध किये हुए अण्डों के छिलके १ सेर को १ घड़े में भर गजपुट अग्नि देवें। इस तरह दो बार अग्नि देवें। फिर छिलके की भस्म से चौथाई सिंगरफ मिला नीबू के रसमें १२ घण्टे खरल करके गजपुट देवें। इस तरह ३ पुट देने से मुलायम हलके वजन की सफेद भस्म तैयार होती है।—श्री-वैद्य नाथूरामजी देहलीवाले

गुणधर्म और उपयोग—रसतन्त्रसार प्रथम खण्ड में लिखे अनुसार।

१५. खर्पर विधि।

बनावट—जसद का फूला अथवा भस्म १८ तोले और नीलाथोथा २ तोले को मिला आंवले के स्वरस में खरलकर गोला बनावें फिर सराव सम्पुट कर अग्नि में फूँक दें। स्वाङ्ग शीतल होने पर पुनः २ तोले नीलाथोथा मिलाकर उपरोक्त विधि से खरल कर

नीचे खड्डाकर उसमें) रक्खें फिर ऊपर ६ इञ्च मिट्टी डाल ऊपर गजपुट में अग्नि जलावें। स्वाङ्ग शीतल होनेपर निकाल कर खरल कर लेवें। (र० यो० सा०)

वक्तव्य—*इस रसायनमें कुटकी आदि वनौषधियां हैं, वे पक जानी चाहियें किन्तु जल कर नष्ट न होनी चाहिये। अन्यथा योग्य लाभ नहीं पहुंचता। कुटकी उत्तेजक और कफस्रावी है। वह कफको पतला बना कर बाहर निकालती है। पीपल आदि भी कफ स्रावी हैं। जल जाने पर उनकी योग्य क्रिया नहीं हो सकेगी।*

मात्रा—१ से २ रत्ती नागरवेलके पान, अद्रकावलेह, बहेड़ा-शहद, या शहदके साथ दिनमें २ या ३ बार देवें।

उपयोग—कास केसरी रस कफ, कास, ऊर्ध्वश्वास, रक्त विकार, त्वग्विकार आदि को नष्ट करता है।

छातीमें कफ संगृहीत होनेपर कफ कुठार और कास केसरी, दोनों हितकारक हैं। इनमेंसे कफ कुठारमें ताम्रभस्म होनेसे वह अधिक उग्र है। जिन रोगियोंसे अधिक उग्रता सहन न होसके उनके लिये यह कास केसरी रस हितावह है।

इसके सेवनसे कफ सरलतासे बाहर निकलता है; और अग्नि प्रदीप्त होकर कफोत्पत्तिका ह्रास होता है। इस हेतुसे जब कफ गाढ़ा होजाता है, सरलतासे नहीं निकलता। अधिक खाँसने पर छातीमें वेदना हो जाती है; तब इसका उपयोग होता है।

कास रोग जीर्ण होनेपर कफ सफेद और गाढ़ा बन जाता है। फिर कुछ दिनोंके पश्चात् पककर रंग पीला होजाता है। देहमें मंद मंद ज्वर भी बना रहता है। अग्नि मंद हो जाती है।

दो सेर गोवरीमें फूँक देवें। इस तरह ६ पुट देवें। दसवीं वार विना तूतिया मिलाये आंवले के स्वरस में ३ दिन तक घोट टिकिया बनाकर पूरा गजपुट देवें। स्वाङ्ग शीतल होने पर निकाल पीस लें।

वक्तव्य—इस भस्म को १ वर्ष के पूर्व व्यवहार करने से भ्रांति, वांति, भ्रम आदि उपद्रव होते हैं। अतः भस्मको चीनी या मृतिका पात्र में डाल पृथ्वी में १हाथ गहरे गड्ढे में ऐसे स्थानपर गाड़ें, जो सूर्य, चन्द्र की राशियों से प्रभावित रहता हो ४० दिन पीछे निकाल शीशी में भरके रखलें। फिर प्रयोग में लावें। प्राचीन शास्त्रोक्त खर्पर के अभाव में नेत्रांजन में इसका प्रयोग अत्यन्त गुणकारी है; तथा इस प्रयोग को यशद भस्म से बनवाकर स्वर्ण मालिनी वसंत के प्रयोग में मिलाने पर वह चमत्कारी प्रभाव करती है। इनके अतिरिक्त कठिन और दुःसाध्य व्रणों में खाने और लगाने के लिये भी यह अति हितावह सिद्ध हुई है। (संशोधक)

नोट—एक खनिज द्रव्य विशेष जिसको अंग्रेजी में केले मेना पेप्रेटा कहते हैं। वह सच्चे खर्पर के अभाव में सुवर्ण मालिनी वसन्त आदि रसों में प्रयुक्त हो सकता है। अतः लेना चाहिये। यदि जीर्ण ज्वर, जीर्ण अतिसार और संग्रहणी का नाशक होने से युक्ति-युक्त संशोधक है।

१६. शुक्ति पिष्टी।

विधि—मोती की सीपों के भीतर सरलता से निकल सके उतने तेजस्वी भाग को निकाल मट्ठे में या जल मिले हुये नींबू के रसमें डाल मंदाग्नि पर १ घण्टा उबालें। फिर जल से धोकर सुखा लेवें। उसे इमाम दस्ते में कूटकर कपड़छान चूर्ण करें। पश्चात् चीनी मिट्टी के खरल में चन्दनादि अर्क मिला मिलाकर ७ दिन खरल करने पर जलतर पिष्टी बन जाती है।

(श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

किसी-किसीको फुफ्फुसमें कफ संगृहीत हो जानेसे बार बार खांसी चलती रहती है और कफ की गांठ निकलती रहती है। शिर में भारीपन भासता है। थोड़ा चलने या थोड़ा परिश्रम करने पर श्वास भर जाता है। पेशाब प्रायः पीला होता है। ऐसी अवस्थामें यह रसायन अति हितकारक है।

किसी किसी रोगीको पीले बँधे हुए कफके साथ रक्तभी गिरता है। उसे कफ निकालनेके लिये कफ कुठार देनेपर रक्त स्राव बढ जानेका भय रहता है। उसे कासकेसरी, सितोपलादि चूर्ण घी और शहदके साथ या वासावलेहके साथ देनेसे लाभ होजाता है।

वर्षा ऋतुमें कितनेक व्यक्तियोंको कफजकास और श्वास रोग हो जाता है। उनको कास केसरी और शृंगभस्म मिलाकर नागर बेलके पानमें दो बार देते रहनेसे उत्पन्न विकार नष्ट हो जाता है और नयी उत्पत्ति रुक जाती है।

८. भैरव रस।

विधि—शुद्धपारद, शुद्धगन्धक, शुद्धवच्छनाग, सोहागाका फूला, कालीमिर्च, चव्य और चित्रकमूल ये ७ औषधियां समभाग पहले पारद गन्धक की कज्जली करें। फिर वच्छनाग और तत्पश्चात् शेष औषधियां मिलाकर अदरखके रसमें १२ घण्टे खरल कर आधआध रत्ती की गोलिआं बना लेवें। (र० यो० सा०)

मात्रा—१ से २ गोली दिनमें २-३ बार जलके साथ।

उपयोग—भैरव रस स्वरभेद, श्वास और दुस्तर कास रोग को नष्ट करता है।

भैरव रस और आनंद भैरव रस (कास), दोनोंके द्रव्य विशेषांशमें समान है। दोनोंमें वच्छनाग प्रधान है। आनंद भैरवमें हिंगुल और भैरव रसमें पारद मिलाया है। हिंगुल

सूचना—अर्क पिलानेके पश्चात रोगीसे हो सके तो बंबूलकी छालके क्वाथके कुल्ले ५-७ करावें और पान खानेको देवें।

१०. हिंगुलादिवटी

विधि—हिंगुल, पीपल, लोंग और अपामार्गक्षार १-१ तोला बहेड़ा २ तोले, आक की चौफूली ३ तोले और अफीम ३ माशे लें। सबको मिला वासा स्वरस में १ दिन खरल करके आध आध रत्ती की गोलियाँ बना लेवें।

मात्रा—१ से २ गोली दिन में ३ बार अदरखके रस और शहदमें अथवा नागरवेल के पानमें या कटेलीके रस और शहद ३-३ माशे के साथ देवें।

उपयोग—इस रसायनके सेवन से श्वास और कफ कासमें अच्छा लाभ पहुंचता है। कफोत्पत्ति बन्द करने, कफ को बांधने और पचनक्रियाको सुधारनेके लिये अदरखके रस या नागरवेल साथ देना चाहिये। संगृहीत कफको बाहर निकालनेके लिये कटेलीका रस, हितकारक है। जीर्णश्वास कासमें कफ पीला हो जाता है, और बार-बार निकलता रहता है तथा मंद मंद ज्वरभी बना रहता है। उस पर यह वटी अच्छा लाभ पहुंचाती है।

सूचना—कफ अति कठिनता से छूटता हो ऐसी कासमें अफीम युक्त एवं उष्णवीर्य और शोषक औषधि नहीं देनी चाहिये।

११. अर्क मूल त्वगादि चूर्ण

विधि—आकके मूलकी छाल (एप्रिल मासमें निकाली हुई) ४ तोले, लौंग, अपामार्गक्षार, अभ्रकभस्म और श्रृंगभस्म, सब १-१ तोला मिलाकर खरल कर लेवें।

मात्रा—४-४ रत्ती शहद या नागरवेलके पानमें दिनमें ३-४ बार।

विशेषगुण रसतन्त्रसार व सिद्ध प्रयोगसंग्रह प्रथम खण्ड में प्रवाल भस्म पहली और तीसरी विधि केसाथ दिया है।

द्वितीय विधि—४० तोले प्रवाल शाखा को कूट कर चूर्ण करें, फिर खट्टे नींबू के रस में मिलाकर बोतल में भरें। नीवू का रस प्रवाल के ऊपर ३-४ अंगुल रहना चाहिये। बोतलको धूप में रक्खें और दिन में ३-४ वार चलाते रहें। नींबूका रस कम होनेपर और मिलाते रहें। इसतरह करनेसे लगभग २१ दिन में मुलायम सूर्यपुटी प्रवालभस्म वन जाती है।

गुण धर्म—ऊपर की विधिके अनुसार।

१८. शंख भस्म

विधि—शुद्ध शंखके १ सेर टुकड़ेंको अग्नि में तपा तपा कर बकरीके दूधमें २१ समय बुझावें। जिससे टुकड़े स्थान स्थान पर फटे से हो जाते हैं। इन टुकड़ोंको १ हाँडीमें भर मुख मुद्रा कर कर गजपुट देनेसे मुलायम सफेद भस्म वन जाती है।

नोट—इसी भांति वकरीके दूधकी अपेक्षा तपा तपा कर नीवू के रसमें बुझानेसे विशेष गुण वृद्धि होती है।

मात्रा-गुण और उपयोग—रसतन्त्रसार व सिद्धप्रयोग संग्रह के प्रथम खण्डके अनुसार है। यह भस्म उदरशूल और अपचन जनित दस्त पर हितकारक है।

१६ स्फटिकाशतमल्ल भस्म

विधि—लाल फिटकरी १६ तोले और सफेद सोमल १॥ तोला लें। फिर समान नाप वाले किनारी घिसे हुए दो वड़े सराव लें। एक सरावमें फिटकरीका आधा चूर्ण डालें। उसमें खड्डा कर सोमलका चूर्णरख, ऊपर शेष फिटकरी डालें और अंगुली से अच्छी तरह दबा देवें। जिससे उपर से फिटकरी नीचे न गिर

शुष्क कफको शिथिल करके निकालता है तथा श्लैष्मिक कलाकी उग्रता और शुष्कता को दूर कर स्निग्ध बनाता है।

१३. वासकासव।

विधि—वासापञ्चाङ्ग १० सेर को २०४८ तोले जलमेंउबालें। तृतीयांश (तीसरा हिस्सा) जल शेष रहने पर उतार मसलकर छानलें। फिर गुड़ ४०० तोले, धायके फूल ३२ तोले, दाल चीनी तेजपात, छोटी इलायचीके दाने, नाग केशर, शीतल मिर्च, सोंठ, काली मिर्च, पीपल और नेत्रवाला, ये ६ ओषधियां ४-४ तोले मिला अमृत बानमें भर मुख मुद्राकर १५ दिन रहने दें। परिपक्व होने पर छानकर वोतलोंमें भर लें। (ग० नि०)

मात्रा—१।-१। तोला जलके साथ दिनमें २ बार देवें।

उपयोग—यह अरिष्ट सब प्रकारके शोथोंको दूर करता है। इस आसवमें मुख्य वस्तु वासा है। उसका उपयोग प्राचीन आचार्यों ने श्वास यन्त्रके प्रदाह, कफ प्रकोप, कास, श्वास, रक्त-पित्त, उरःक्षत, रक्तवमन, रक्तप्रदर आदि रोगों पर लिखा है। नव्य चिकित्सकोंके मतमें वासाके सुखाये पत्तेकी बीड़ी बनाकर पिलाने से कास और श्वासरोगमें लाभ होता है। इनके मतानुसार वासा कफ निःसारक, आक्षेपहर और संशोधक है। एवं विषम ज्वर, आमवात, क्षय, तमकश्वास और चिरकारी श्वास नलिका प्रदाह और उरोगत अन्य कफ प्रधान रोगोंमें व्यवहृत होता है। इन गुणोंके अनुरूप कास रोगमें इसको प्रयोजित करने पर कफ सरलता से बाहर निकलता रहता है। जिससे रोगी की बेचैनी दूर होती है; और रोगबल सत्वर कम हो जाता है।

श्वासरोग, रक्तपित्त और क्षयरोगमें भी इस आसवसे लाभ पहुँचता है। यद्यपि वासा स्वरस को अपेक्षा इसके गुणमें कुछ

जाय और सोमल न दीखने लग जाय। फिर मुखमुद्रा कर १॥ सेर गोबरीकी अग्नि देकर फूला (भस्म) बना लेवें। स्वांग शीतलहोने पर सम्पुटको खोल फूलेको पीस लेवें। इस भस्ममेंसे संखियेका कितनाक अंश उड़ जाता है। (सि० भे० म०)

मात्रा—१ से २ रत्ती दिनमें दो बार शहद, मिश्री या नागर बेल के पान में।

उपयोग—इस भस्म का उपयोग नूतन कफज्वर, शीतप्रधान ज्वर, एकाहिक, तृतीयक और चातुर्थिक आदि विषमज्वर तथा पूय ज्वर में होता है। मलेरिया में ताप बढ़ने के ४ घण्टे पहले १ बार दें। फिर २ घण्टे पहले दूसरी बार देनेसे ताप रुक जाता है। जीर्ण विषम ज्वरमें दिनमें दो बार ४-६ दिन तक देते रहने से ज्वर निवृत होजाता है।

सूचना—कभी कभी पित्त प्रधान प्रकृतिवालों को कंठमें शुष्कता, चक्कर आना और व्याकुलता आदि लक्षण उत्पन्न होते हैं। ऐसा होने पर दूध अथवा नीबूकी सिकंजी पिलाना चाहिए।

२. मल्लशङ्ख भस्म।

बनावट—शुद्ध किये हुए बड़े शंख में सोमल का चूर्ण ५ तोले भर कर ऊपर आक का दूध भर देवे। पश्चात् छोटी हांडीमें चारों ओर आकके पत्तोंके कल्कके भीतर उस शंखको ढ़ककर दृढ़ मुख मुद्रा करें। सूखने पर गजपुट अग्नि दें। स्वाङ्ग शीतल होने पर शङ्ख को निकाल कर पीस लेवें। यदि शंख मुलायम न हुआ हो, तो आकके दूधमें ६ घण्टे खरल कर २-२ तोलेकी टिकिया बना सराव सम्पुट कर दूसरी बार गजपुट देवें।

मात्रा—१ से ४ रत्ती दिनमें २ बार गोघृतके साथ देवें।

उपयोग—यह भस्म श्वास, कास और मलेरियाको दूर

२ घण्टे बाद और १ लोगी दे सकते हैं। इस गोलीके सेवनसे कुछ नसा आ जाता है; किन्तु हिक्का शमन होजाती है।

(६) सुपारी १ नगका चूर्ण और बबूलकी ताजी पत्ती १ तोला दोनोंको मिला कूटकर गोली बनावें। फिर चिलममें रखकर धूम्रपान करानेसे तत्काल हिक्काका निवारण हो जाती है।

२०. हिक्काहर तन्त्र।

विशेष कोष्ठमें अशुद्धि न हो और निराम दोषोंसे युक्त हो और औषध योजना करनेमेंभी असुविधा हो उस दशामें एक बड़ा चमच (टेबलस स्पून) को हाथमें लेकर रोगी के गलेके अखीर भागमें जो उपजिह्वा नामक जो सर्पकी ठोडीकी तरह दिखाई देती है। उसको क्रमशः ७ या ११ बार उतरोत्तर किञ्चित् अधिक दवाव के साथ उस चमच की डांडीसे दवाया जाय तो तत्कालही हिक्का वन्द होजाय। फिर आवश्यकतानुसार औषध योजना कर सकते हैं।

हिक्का रोगी को जवतक रोगकी उग्रता न मिट जाय, तवतक अन्न आदि न देकर केवल दिनमें ३-४ बार आवश्यकता एवं रुचिके अनुसार प्रति मात्रामें १॥ १॥ माशा सोंठ का चूर्ण और बीज निकाली हुई १०-१० मुन्का और दूध आवश्यकता अनुसार मिलाकर पथ्यके स्थानमें दिया जाना आवश्यक है।

करती है। इस भस्ममेंसे सोमल अधिकांशमें उड़ जाता है। फिरभी शङ्ख भस्म कुछ उग्र बनजाती है। श्वास रोगमें कफको सरलतासे निकालने और कफकी उत्पत्तिको बन्द करनेके लिये यह निर्भयतापूर्वक प्रयोजित होती है। रुचि और पांचन शक्तिको भी यह बढ़ा देती है।

मलेरिया अथवा शीत पूर्वक ज्वर अनेक दिनोंका पुराना हो जाने पर बार बार आक्रमण करता रहता है। ऐसे रोगियोंको कुछ दिनों तक इस भस्मका सेवन करानेसे ज्वर, शूल और अन्त्रविकार दूर होजाते हैं। गुड़, शीतल जलसे स्नान, नया अन्न, भारी भोजन और सूर्यके तापमें भ्रमण बन्द कराना चाहिये।

२१. हरताल भस्म।

विधि—उत्तम वर्की हरताल २० तोले लेकर घी कुंवारके रसमें ४ दिन खरल करें। फिर अंगुली पर रगड़ कर सूर्यके ताप में देखें, अगर चमक बिल्कुल दूर न हुई हो, तो १-२ दिन और खरल करें। फिर बेर वृक्षकी राखको कपड़ छान कर समभाग मिला ३ दिन घीकुंवारके रसमें खरल कर एक एक तोलेकी टिकिया बनालें। पश्चात् एक हांडीमें कण्डोंकी और अपामार्गकी (या पीपल वृक्षकी) राख समभाग मिला आधी हांडी तक दबा-दबा कर भरें। उस पर हरतालकी टिकिया एक एक करके जमा दें। टिकियाएं परस्पर ¾ इञ्चकी दूरी पर रक्खें। इन टिकियाओं पर १ इञ्च मोटी तह राखकी करें। राख को दबा दबा कर भरें। पुनः और टिकियाएं उसी प्रकारसे रक्खें और राख से दबादें। फिर टिकियाओंकी तीसरी तह रखकर हांडीमें मुंह तक राख से दबादें। पश्चात् हांडीके मुंह पर ढक्कन लगाकर चूल्हे पर चढ़ावें। पैरोंके अंगुष्ठके समान मोटी ३ लकड़ीकी आग १२ घण्टे तक देवें। स्वाङ्ग शीतल होने पर टिकियाओंको निकाललें। सफेद कुछ मैले रंगकी मुलायम भस्म बनजाती है। टिकियाओंको तोड़

१२. राजयक्ष्मा-उरःक्षत प्रकरण।

१. अभ्रकल्प।

विधि—अभ्रकभस्म ८ तोले, लोहभस्म ६ तोले, पारद ४ तोले और शुद्ध गन्धक २ तोले लें। पहले पारद गन्धक की कज्जली करें। फिर भस्म मिला त्रिफला, भांगरा, सुहिजने की छाल, चिरायता और चित्रकमूल की छाल, इनके क्वाथ या रस की क्रमशः ७-७ भावना देकर २-२ रत्ती की गोलियां बना लेवें।

(र० यो सा०)

मात्रा—१-१ गोली दिनमें २ वार वंश लोचन ४ रत्ती, पीपल २ रत्ती केशर ½ रत्ती, कस्तूरी ¼ रत्ती और शहद ३ माशे (राजयक्ष्मा की प्रथमावस्थामें गोघृत १॥ माशा भी) के साथ मिला कर देवें। ४० दिन या अधिक समयतक देते रहें।

उपयोग—यह रसायन कल्प राजयक्ष्मा, धातुशोष, जीर्णज्वर, श्वास, कास, अग्निमान्द्य, राजयक्ष्मा जनित ज्वर, मलावरोध, अरुचि, पाण्डु, आदि को दूर करता है।

यह रसायन राजयक्ष्मा की प्रथमावस्था में और अति निस्तेज और निर्बल बने हुए जीर्ण ज्वरके रोगियों के लिये अति हितकारक है। यह कल्प रक्तधातु, वातसंस्था तथा फुफ्फुस, हृदय, आमाशय, यकृत् और अन्त्र, इन इन्द्रियों पर विशेष लाभ पहुँचाता है। ज्वर दीर्घकाल पर्यन्त रहजाने पर जब पचनेन्द्रिय संस्था अपना कार्य योग्य नहीं कर सकती, तब अन्त्र में मल सगृहीत होकर, उसमें से विष का शोषण रक्तमें होता है। फिर यकृत् वृक्क, फुफ्फुस और मस्तिष्क में विक्रिया होने लगती है। पश्चात् धातुशोष की प्राप्ति होती है। अथवा क्षयकीटाणु उत्पन्न हो जाते हैं। अतः उस उत्पत्ति को सत्वर रोक दिया जाय, तो

कर परीक्षा करें। पीलापन देखनेमें आवे तो फिरसे अग्नि देवें। कभी थोड़ी टिकिया पक जाती है, और थोड़ी कच्ची रहजाती है। जो कच्ची हों, उनको घीकुंवारके रसमें खरल करा टिकिया बनवाकर ऊपर लिखे अनुसार पकालेवें।

इस विधि अनुसार भस्म बनाने में बेरी की राख मिलायी जाती है; तथा हरताल का वजन भी कम हो जाता है; तथापि सरलता से भस्म बन जाती है और अच्छा लाभ पहुंचाती है।

(श्री० वैद्य नाथूरामजी देहलीवाले)

मात्रा—१-१ रत्ती दिन में दो बार शहद के साथ दें। उपर रक्त शोधक या ज्वरघ्न कषाय रोगानुसार देवें।

उपयोग—यह भस्म कुष्ठ, त्वचारोग, रक्तविकार, सन्निपात आदि पर प्रयुक्त होती है। विशेष गुणधर्म रसतन्त्र सार प्रथम खण्डमें लिखे अनुसार।

२२. मनःशिल भस्म।

विधि—१ तोला शुद्धमैनसिलको थूहरके पत्तोंके रसमें १२ घण्टे तक खरल कर टिकिया बनाकर सुखावें; फिर दो सरावों में कलई चूना के भीतर रखकर सम्पुटकर ३ कपड़मिट्टी करके ५ सेर गोबरीके भीतर फूंक देवें। स्वांग शीतल होनेपर सम्पुट निकाल करखोलें, चूनेका रंग पीला होजाता है; और मैनसिल भस्म सफेद हो जाती है। (आ० नि० मा०)

मात्रा—१ से २ चावल तक मिश्रीके साथ देवें।

उपयोग—यह भस्म विषमज्वर और कफ प्रधान ज्वरको दूर करती है। मैन सिलके भीतर सोमल होनेसे इस भस्मको सोमल का सौम्य कल्प कहा जायगा। जिन जिन रोगियोंको सोमल देने में भीति रहती हो; और सोमलकी आवश्यकता हो, उन रोगियोंको यह भस्म अमृत के समान हितकारक होती है। एवं वातविकार,

राजयक्ष्मा की आगे की अवस्था की संप्राप्ति नहीं होती। इस उत्पत्ति को रोकने के लिये यह कल्प अति हितकारक है।

२ हेमाभ्रसिंदूर।

प्रथम विधि—सुवर्ण भस्म, रससिंदूर और अभ्रकभस्म, तीनों को समभाग मिला अदरख के रस की ७ भावना देकर शुष्क चूर्ण बना लेवें; या आध आध रत्ती की गोलियां बना लेवें। (नि० र०)

मात्रा—१ से २ गोली तक दिनमें दो या तीन बार अदरख के रस, शहद या रोगानुसार अनुपानके साथ देवें।

उपयोग—इस रसायन का ४० दिन तक सेवन करने से क्षय, क्षयजनित पाण्डु और दारुण क्षयजकास नष्ट होते हैं। यह औषध क्षय की द्वितीयावस्थाकी प्राप्ति होने पर अति हितावह माना गया है।

यह रसायन बल्य, रसायन, क्षयहर और कफघ्न है। इस रसायनमें मुख्य गुण सुवर्ण भस्मका है। सुवर्ण भस्म सब प्रकार के कीटाणु जन्य क्षयों की प्रशस्त ओपधि है। इसका मुख्य धर्म क्षयके कीटाणुओं को नष्ट करना है। यह उसमें प्राभाविक शक्ति है। अभ्रकभस्म उरःस्थ अवयवोंको विशेषतः फुफ्फुस और श्वासनलिका को बल देता है। एवं हृद्य और रसायन है। इन दोनों के साथ रससिंदूरका संयोग कराया है। रस सिंदूरमें रसायन, कीटाणुनाशक, योगवाही और कफघ्न गुण अवस्थित हैं। इन तीनोंके संयोगसे क्षय रोगमें कीटाणुओं को नाश करनेके अतिरिक्त शारीरिक शक्तिके संरक्षक अद्वितीय गुणका आविर्भाव होजाता है। इस हेतुसे इस औषधका उपयोग राजयक्ष्मा पर उत्तम होता है।

उपदंश, शूल, कास, श्वास, क्षय ज्वर तथा कीटाणु जनित विविध व्याधियोंमें यह निर्भयतापूर्वक दी जाती है।

२३. पन्ना भस्म।

विधि—शुद्ध पन्नों के छोटे छोटे कण १० तोलेको लोह खरलमें बारीक पीसवाकर जंगली तुलसी (नगद वावची) के रसमें ३ दिन खरल करावें, फिर उसे २ सेर उपलोंकी अग्नि दें। दूसरे दिन पुनः उसी रसमें १२ घण्टे खरलकरा अग्नि देवें। इस तरह ४ पुट देनेसे भस्म तैयार हो जाती है। श्री० वैद्य नाथूरामजी देहलोवाले)

इसी विधिसे वैक्रान्त, पुखराज, माणिक्य और नीलमकी भस्म भी बनवायी गई है। वैक्रान्तको और नीलमको अग्नि ५ सेर गोबरीकी दी थी और पुट भी ७ दिये गये थे।

मात्रा—¼से १ रत्ती तक रोगानुसार अनुपान के साथ।

उपयोग—विषनाशक, शीतल, हृद्य, मधुर, रेचक, अम्लपित्त-हर्त्ता, रोचक, पुष्टिकर्त्ता, भूतबाधानाशक है ज्वर, वमन श्वास, संताप, मंदाग्नि, अर्श, पाण्डु, मधुमेह और शोथका नाश करती है।

सूचना—अधिक मात्रा में पुंस्त्व को हानि पहुंचाती।

२४. दरदसुधा भस्म।

विधि—हिंगुल और कलई का चूना विना बुझा ४ तोले लें। इनमेंसे पहले हिंगुलको सेहुंडके दूधमें ३ दिन तक खरल करें। फिर चूना मिला पुनः सेहुंडके दूधमें ३ दिन तक मर्दन कर चक्रिका (पेड़े) केसमान एक टिकिया बनावें। इसे सूर्यके तापमें सुखा समान नाप वाले, घिसी हुई किनारी वाले दो सरावके भीतर रख मुखमुद्रा करें। फिर दृढ़ कपड़ मिट्टी कर एक गड्ढेमें २॥ सेर गोबरीकी अग्नि देवें। स्वाङ्गशीतल होने पर सम्पुट खोल टिकिया निकाल कर पीस लेवें। यह भस्म मुलायम मैले सफेद रंगकी होती है। (सि० भे० म०)

माशा मिला घी शहद के साथ देने से ज्वर, शुष्क कास और अग्निमान्द्य दूर होकर सत्वर रोग शमन होजाता है। द्वितीयावस्था में इस रसायन के साथ प्रवाल पिष्टी २ रत्ती और शृंगभस्म २ रत्ती मिला देनी चाहिये। तृतीयावस्था में ज्वर कम हो उस समय इस रसायन का प्रयोग हो सकता है। किन्तु तीव्र ज्वरावस्था होने पर प्रवाल, शृंग और रौप्यभस्म देना विशेष लाभदायक माना जायगा। इस रसायनमें अदरख, चित्रकमूल और त्रिकटु की भावना होने से अग्निको प्रवल करने और विकारको शमन करने में अच्छी सहायता मिल जाती है। वच्छनाग का संयोग होने से इस रसायन से ज्वर शमन का कार्य भी होता है। राजयक्ष्मा की उत्पत्तिमें मूलहेतु पचनेन्द्रिय संस्था की विकृति और जीर्ण ज्वर होने पर यह रसायन विशेष हितकारक माना जाता है।

वक्तव्य—हृदय कमजोर हो तो मात्रा कम देनी चाहिये, तथा ज्वर कम रहता हो, तो इसका विशेष उपयोग नहीं करना चाहिये।

४. क्षयकुलान्तक रस।

बनावट—हरताल, मौक्तिक, सुवर्ण और रजत, इन सबकी भस्म तथा हिंगुल ४-४ तोले, भीमसेनी कपूर १ तोला और प्रवाल भस्म १ तोला लें। सबको मिला वासापत्रके स्वरसमें १२ घण्टे और सफेद कटलीके रसमें ६ घण्टे तक खरल कर चक्रिका बनावें। फिर सूर्यके ताप में सुखा वालुका यन्त्रमें रख शिवशक्तिकी पूजा कर ६ घण्टे तक दीपककी अग्नि देवें। पश्चात् यन्त्र स्वाङ्ग शीतल होने पर चक्रिका को निकाल कर पीस लेवें। (र० यो० सा०)

मात्रा—आध आध रत्ती दिनमें दो बार शहदके साथ ४० दिन या कम से कम २० दिन तक सेवन करावें।

उपयोग—यह रसायन प्रमेह, रक्त प्रकोप, श्वास, कास

सूचना—योग्य सम्पुट या कपड़मिट्टी न करने और अग्नि तेज लगने पर हिंगुल उड़ जाता है। फिर भस्मका गुण कम हो जाता है। एवं कम अग्नि लगने पर हिंगुलकी लाली बनी रहती है, जिससे भस्ममें उबाक, वमन और विरेचन और करानेका दोष रह जाता है। अतः सावधानता पूर्वक भस्म बनानी चाहिये।

मात्रा—१ से २ रत्तीतक लगे हुए नागरवेलके पानमें दिनमें २ या ३ बार देवें।

उपयोग—यह भस्म सुकुमार स्त्री, पुरुष और बालकोंके ज्वरको दूर करती है। इस भस्मके सेवनसे किसी व्यक्तिको जुलाब (दो तीन दस्त) लग जाता है। उदर शुद्धि न हुई हो, तो मात्रा २ रत्ती देवें। और आवश्यकतापर ३-३ घण्टे बाद दिनमें ३ बार देवें। अपचनजनित ज्वर और शीतप्रधान ज्वरको दूर करनेमें यह हितावह है। शीतज्वरमें इस भस्मको शीत लगनेके पहले दे दी जाय, तो शीत लगना और ज्वर आना दोनों रुक जाते हैं। अमीरोंके जीर्ण विषम ज्वरको दूर करनेके लिये यह भस्म कुछ दिनों तक देते रहना चाहिये। यदि क्षयज्वरमें मलावरोध हो, तो १-१ रत्ती दिनमें २ बार देते रहनेसे ज्वर शमन होजाता है। इसका विशेष गुण पित्त को उत्तेजित कर यकृत्‌की ताकतको बढाना है जैसे केलोमेल (Calomel) की भाँति।

सूचना—नूतन ज्वरमें रोगीको दूध पर रक्खें। जल गरम करके शीतल किया हुआ देवें। औषध सेवन करने पर २ घण्टे तक जल न देवें।

२५. त्रिवङ्ग भस्म।

विधि—कलई, शीशा और जसद, तीनों शुद्ध किये हुए ४०-४० तोले मिलाकर कड़ाही में द्रव करें। भस्म बनानेके लिये भांग ६ सेर लेवें, या पीपल वृक्ष की छाल, वड़की जटा कच्ची,

आदि दूर होवे हैं। यह रसायन बल्य, वृष्यों में उत्तम, मेध्य और राज रोग (दृढ घोर रोगों) का नाशक है। शास्त्र कारों ने इसका प्रयोग १ वर्ष या ६ मास तक करनेका विधान किया है। यह उत्तम कल्प है।

सूचना—इस कल्पके सेवन कालमें क्षार (सज्जीखार जवाखार आदि) और तेज खटाईका त्याग करना चाहिये।

द्वितीय विधि—गिलोय सत्व और खूब कला ४-४ तोले तथा प्रवाल पिष्टी और छोटी इलायचीके दाने २-२ तोले और श्रृंग भस्म १ तोला लेवें। सबको मिला कर मिश्रण करें।

मात्रा—१-१ माशा दिनमें ३ बार शहदके साथ देवें। ऊपर बन-फशाका अर्क पिलावें।

उपयोग—यह रसायन क्षयके बढे हुए ज्वरके विषको दूर करनेके लिये अति उपयोगी है। इसके सेवनसे क्षय ज्वर अधिक नहीं बढता, कफ सरलतासे निकल जाता है और शारीरिक शक्तिका क्षय नहीं होता। जीर्ण ज्वरमें भी इस रसायनके सेवनसे अच्छा लाभ पहुँचता है।

१३. अमृत प्राशघृत।

विधि—जीवक (लम्बा सालव) ऋषभक (अभावमें विदारीकंद), वीरा (क्षीर विदारी अर्थात् पेठा) जीवन्ती, सोंठ, कचूर, शालपर्णी, प्रश्न-पर्णी, मुग्द् पर्णी, माषपर्णी, मेदा (शाकाकल छोटी), महामेदा (शाकाकलबड़ी), काकोली (श्याम मुसली), क्षीर काकोली (श्वेत मुसली), छोटी कटेलीकी जड़, बड़ी कटेलीकी जड़, सफेद पुनर्नवा, लाल पुनर्नवा, मुलहठी, कोंचके बीज, शतावर, ऋद्धि (अभावमें खरैंटी), फालसा, भारंगी, बड़ी-द्राक्षा (मुनक्का), सिंघाड़ा, भुई आंवला, श्वेत विदारीकंद, पीपल, खरैंटी, बेर, अखरोटकी गिरी, खजूर, बादामकी गिरी और पिस्ता

इमलीके वृक्षकी छाल और हल्दी, इन चारोंको १॥-१॥ सेर मिलाकर उनमेंसे १-१ मुट्ठी त्रिवङ्ग की द्रुतिमें डालते जाय और वड़के ताजे डण्डेसे चलाते रहें। जब त्रिवङ्ग धूल (चूर्ण) सदृश बन जाय, तब कड़ाहीको उतार लेवें। शीतल होने पर घीकुंवार के रसमें १२ घण्टे घुटवा, टिकिया बनवा हांडीमें रखकर ७-८ सेर उपलोंकी आग देवें। इस तरह १० पुट देवें। यह भस्म सफेद रंगकी और मुलायम बनती है। श्री. वैद्य० नाथूरामजी देहली वाले.

गुणधर्म—रसतन्त्रसार प्रथम खण्ड में लिखे अनुसार।

२६. वङ्गाष्टक भस्म।

बनावट—शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, लोहभस्म, रौप्यभस्म, शुद्ध खपरिया (या जसदभस्म), अभ्रक भस्म, ताम्रभस्म, ये ७ ओषधियाँ ४-४ तोले और वङ्ग भस्म २८ तोले लें। पहले पारद गन्धककी कज्जली करें, फिर सब ओषधियोंको मिला त्रिफला और गिलोय के क्वाथ में ३ दिन खरलकर २-२ तोलेकी टिकिया बना दृढ़ सराव सम्पुट कर गजपुट अग्नि देवें। (भै० र०)

मात्रा—२-२ रत्ती दिनमें २ बार शहदके साथ दें। ऊपर हल्दी का चूर्ण १ माशा और शहद ६ माशे मिलाया हुआ आवलोंका रस (या फाण्ट) पिलावें।

उपयोग—यह भस्म २० प्रकारके प्रमेह, आमदोष, विसूचिका विषम ज्वर, गुल्म, अर्श, मूत्रातिसार और पित्तप्रकोपको दूर करती है; वीर्यकी वृद्धि करती है, तथा सोम रोग को नष्ट करती है; प्रमेह और सोम रोग के लिये यह उत्तम ओषधि है।

वङ्ग भस्मके साथ इतर भस्में मिल जानेसे प्रजननयन्त्र और मूत्रयन्त्रके अतिरिक्त पचनेन्द्रिय संस्थान, रससंस्थान, रक्त, मांस, वात संस्थान, फुफ्फुस आदि पर भी लाभ पहुंच जाता है। इनमें से मूत्रयन्त्र और पचनेन्द्रिय संस्थानपर अधिक असर होनेसे

१४. एलादि मंथ।

विधि—छोटी इलायचीके दाने, अजमोद, आमला, हरड़, बहेड़ा, तथा खैर, नीम असना (सालभेद) और साल (विजय सार) (इन ४ वृक्षोंके बीचकी कठोर लकड़ीका बुरादा) वाय विड़ंग, भिलावा, चित्रक मूलकी छाल, बच, सोंठ, काली-मिर्च, पीपल, नागर मोथा, और फिटकरी, इन १८ औषधियोंको १६-१६ तोले लेकर जौ कूट चूर्ण करें। फिर १६ गुने जलमें मिला चतुर्थांश क्वाथ करें। इस-क्वाथमें ६४ तोले गो घृत मिला कर सिद्ध करें। घृत शेष रहने पर निकाल मिश्री १२० तोले, वंशलोचन २४ तोले और शहद १२८ तोले मिला, मथनी से मथ कर एक जीव बना लेवें। (च० द०)

वक्तव्य—हम इस घृत में तेजपात, दालचीनी और छोटी इलायची ४-४ तोले मिलाते हैं।

मात्रा—१ से २ तोले प्रातःकाल देवें। ऊपर गौ अथवा बकरी का दूध निवाया पिलावें। इस तरह रात्री को भी सोने के आध घण्टे पहले दे सकते हैं।

उपयोग—यह मंथ अत्यन्त मेधावर्धक, बुद्धिको शुद्ध करने वाला, नेत्रके लिये हितकारक और आयु वर्धक है; तथा राजयक्ष्मा शूल, पाण्डु और भगंदर को नष्ट करता है। इस रसायनके सेवन में कुछ भी अपथ्य नहीं है।

यह राजयक्ष्मा की सब अवस्थाओं में तथा उरःक्षत, कास और कृशतामें हितकारक है। इसके सेवन से शक्ति का संरक्षण होता है। ज्वर के पश्चात् की निर्बलता, बराबर संतान होने से आई हुई कृशता, बालकों को सूखा रोग इन सब के लिये यह सफलता पूर्वक व्यवहृत होता है।

यह भस्म प्रमेह, सोमरोग, मूत्रातिसार और आमविकार पर अधिक हितावह है।

इस प्रयोगमें ताम्रभस्म होनेसे मात्रा अधिक नहींलेनी चाहिये; अन्यथा उबाक और वान्ति आदि उपद्रव उपस्थित होंगे।

२७. पञ्चामृत भस्म (बाजीभाई मात्रा)

विधि—पीला सोमल, हरताल, मनःसिल, फलई चूना, गन्धक और फिटकरी, इन सबको ५-५ तोले मिला घीकुंवारके रसमें ३ दिन खरल करके एक गोला बनावें। सूखने पर संपुट कर ३ कपड़ मिट्टी करके गजपुट अग्नि देवें। (आ० नि० मा०)

मात्रा—१/८ से १/४ रत्ती सौंठके घासेसे सन्निपातज बेहोशीमें दिनमें ३ वार या २-२ घण्टे पर। श्वासावरोधमें अदरख और पोदीनेके १-१ तोला स्वरस को निवाया कर ३ माशे शहद मिला कर उसके साथ देवें।

उपयोग—इस भस्मका उपयोग सन्निपातमें वेहोशी, कफ प्रकोप, शरीरकी शीतलता, हृदय और नाड़ीकी मंदगति, अनियमित नाड़ी आदि लक्षण होने पर किया जाता है, इसके सेवनसे हृदय उत्तेजित होता है. शीतलता दूर होती है। कण्ठमें कफ वोलता हो, वह निकल जाता है; और रोगी होशमें आजाता है।

पार्श्वशूल, श्वासावरोध एवं श्वासका दौरा होने पर यह तत्काल लाभ पहुंचाता है। एक घण्टेमें घवराहट दूर होजाती है। कफकी अधिकता हो, ऐसे रोगीको यह भस्म दी जाती है।

२८. रौप्य चतुराङ्ग भस्म

विधि—शुद्ध चांदी; शुद्ध वंग, शुद्ध शीशा, शुद्ध यशद ये चारों, १-१ तोले लेकर मूपामें रख, सोहागा डाल द्रवीभूत करें। मूपा नीचे उतार कर फिर आधसे एक मिनिट ठहर तत्काल हिंगुलोत्थ पारद १ तोला डालकर मिलादें। फिर लोहेकी मूसलीसे

कामला, ग्रहणी, पांच प्रकार के गुल्म और अर्शरोग को अति शीघ्र नष्ट करता है।

यह पौष्टिक, उत्तेजक और कीटाणुनाशक है। पित्त प्रकोप को शमन करता है। सुजाक और प्रमेह रोगी के लिये भी हितकारक है। राजयक्ष्मा में दाह, अमलपित्त और रक्त पित्त के समान लक्षण वालों की शक्ति कायम रखने के लिये प्रयोजित होता है। अन्तर्विद्रधि और बाह्य विद्रधि में विडङ्गारिष्ट के साथ देने से अच्छा लाभ पहुँचता है। थोड़ी थोड़ी मात्रा में दिन में ३-४ बार देना चाहिये। साथमें वङ्गभस्म और शृंग भस्म का सेवन कराते रहने से सत्वर गुण दर्शाता है।

१७. रसायन बिन्दु।

विधि—कौड़िया लोहवान २० तोले, कपूर, जायफल, जावित्री और लौंग २-२ तोले लें। सबको मिला पातालयन्त्रसे चुवालें। यह काले रंग का गाढ़ा सुगन्धित चोवा निकलता है।

(श्री० पं० मुरारिलालजी शर्मा वैद्यशास्त्री)

मात्रा—१ सींक भर पानमें लगाकर खिलावें। या बादामके तैल और गोंदके साथ देवें। दिनमें ३-४ समय दे सकते हैं।

उपयोग—यह बिन्दु जीर्ण श्वासनलिका प्रदाह, दुर्गन्धमय कफ संगृहीत होना, प्रतिश्याय, प्रसूताके ज्वर; शिर दर्द, कण्ठ के भीतर शोथ, दुर्गन्ध मय खट्टी डकार आना कण्ठमें जलन, निद्रा कम आना, बालकोंका शय्यामूत्र, दांत चाबना आदि रोगों पर हितकारक है।

इस रसायन बिन्दुका सेवन करनेपर यह श्वास नलिका द्वारा बाहर निकलता है। जिससे जीर्ण श्वासनलिकाके दाहशोथमें जिसमें हरा या पीला कफ बार बार निकलता रहता है, उसपर अच्छा लाभ पहुंचाता है। इसके सेवनसे श्लेष्मल त्वचाको शक्ति

कूट चूर्ण करें। बारीक होजाने पर १ तोला मूंगा चूर्ण और १ तोला लाल अकीकका चूर्ण डालकर घीकुमारीमें २ दिन तक खरल करें। टिकिया बना सुखा सराव सम्पुट कर १५ सेर गोवरीमें भस्म करलें। फिर निकाल कर ४ तोले पारद २ तोले नौसादर डालकर घोटें। इनके मिलजाने पर घीकुमारके रसमें २ दिन घोटें। टिकिया बनाकर ८ सेर कण्डोंकी अग्नि दें। शंखके समान श्वेत भस्म बनजाती है।

मात्रा—१ से २ रत्ती उचित अनुपानके साथ देनेसे समस्त वीर्यविकार, क्षीणता, स्वप्नदोष, नपुंसकता, बहुमूत्र आदि रोगोंका नाश करती है। सब प्रमेहोंमें भी लाभकारी है। हृदयकी धड़कन, हृद्दौर्बल्य, मस्तिष्कक्षीणता, प्रदर आदि रोगोंका नाश करती है।

२६. अष्टामृत भस्म।

बनावट—शुद्ध काशीश, शुद्ध मनःशिल, शुद्ध गोदंती, शुद्ध प्रवाल मूल, शुद्ध मोतीकी सीप, शुद्ध स्वर्णमाक्षिक, शुद्ध रौप्य-माक्षिक, और धान्याभ्रक इन ८ ओषधियोंको ५-५ तोले मिलाकर अर्कदुग्ध में ३ दिन तक खरल करें। फिर २-२ तोलेकी टिकिया बना सूर्यके ताप में सुखा सराव सम्पुट कर गजपुट अग्नि देवें। स्वाङ्ग शीतल होने पर निकाल पुनः ३ दिन अर्क दुग्धमें मर्दन कर गजपुट देवें। इस तरह ३ पुट देवें फिर घीकुंवारके स्वरसमें १-१ दिन घोट कर ७ पुट देनेसे श्वेत धूसर वर्णकी मुलायम भस्म बन जाती है। (राजवैद्य अमरदत्तजी मिश्र)

मात्रा—३ से ४ रत्ती दिनमें २ बार शहद, घृत, मिश्री, शर्बतबनफसा या रोगानुसार निम्न अनुपानके साथ देवें।

(१) यकृत्प्लीहावृद्धिमें हरड़ मिश्रित कुमार्यासव।

(२) प्रतिश्याय पर तथा श्लेष्माके निस्सारणार्थ मिश्री।

(३) शुष्क कास पर शर्बत बनफशा, शहद-घृत अथवा चन्द्रामृत रस १-१ रत्ती देने पर खाँसीका वेग सत्वर शमन होता है।

गुने निवाये तिल तेल या सरसों के तेलमें मिलाकर कपालपर लगाया जाता है।

यह रसायन बिन्दु १ तोला, दालचीनीका तेल २ तोले, माल कांगनीका तेल ४ तोले और चमेलीका तेल ८ तोले मिला कर नपुंसकोंके लिये उसका तिला रूपसे उपयोग किया जाता है। पं० मुरारिलालजी मिश्रने इसको अनेक बार अजमाया है।

१८. नाग शर्करा

(Plumbi Acitas Lead Acitate)

इसे डाक्टरीमें एसिटेट ऑफ लेड तथा श्युगर ऑफ लेड भी कहते हैं।

विधि—मुर्दासङ्ग (Plumbi oxidum) ३४ औंस, सिर्का (Acetic Acid) २ पिण्ट या आवश्यकतानुसार तथा वाष्प जल १ पिण्ट। जल और सिर्के को मिला लेवें। उसे मुर्दासङ्ग डालकर मंदाग्नि पर द्रव करें और फिर गाढ़ा करें। ऊपरसें मलाई आनेपर द्रव स्पष्ट अम्लगुण विशिष्ट न हुआ हो, तो थोड़ा सिर्काम्ल मिला कर रखदें। दाना तैयार होने पर शोषक पत्र (ब्लौटिंग पेपर) पर सुखा लें। यह शर्करा सफेद वर्णकी, उज्वल, दानेदार, मधुर-कषाय स्वाद वाली तथा सिर्केकी गन्ध युक्त होती है।

वर्क्तव्य—इस नागशर्कराके साथ सिर्काके अतिरिक्त द्रावक और अम्ल (खनिज तेजाब और टेनिक एसिड), उनके क्षार, आल्कलीज़, चूनेका जल, क्लोराइड, आयोडीड, अफीममें से एसिड आदिके योगसे बनी हुई कृति, बबूलका गोंद, एल्ब्युमिन युक्तजल और भारी जल (Hardwater) *को नहीं मिलाना चाहिये।*

(४) शिरदर्दपर त्रिफला अथवा हरड़के चूर्णके साथ देकर ऊपर थोड़ा दूध पिलावें।

(५) आघातजन्य शूलपर मिश्रीके साथ देवें। और ऊपर निवाया जल पिलावें।

(६) मंथर ज्वरमें कास प्रकोप हो तो शहदके साथ।

(७) बच्चोंकी काली खांसीमें आध आध रत्ती शहद या माताके दूधके साथ।

उपयोग—यह भस्म शामक, प्रदाहहर और कफघ्न है। नूतन प्रतिश्याय, प्रतिश्यायजकास, प्रतिश्यायसह गलौघ, श्वासनलिका प्रदाह, उरस्तोय (प्ल्युरिसी) अपचन और प्रतिश्यायसे होने वाली जलन, फुस्फुसोंमें प्रदाह जनित पतला श्लेष्मा भर जाना, फुस्फुसोंका जकड़ जाना, तेजवायु, शीत या सूर्यके तापके आघातसे सांधो सांधोंका और शरीरका जकड़ जाना, शुष्कास, शिरदर्द तथा यकृत्प्लीहावृद्धि होकर शुष्क कास चलना आदि विकारों को निवृत्त करती है।

(३०) मल्ल पुष्प।

विधि—पुरानी इएट के बीचमें खड्डा करें। फिर उस खड्डेके चारों ओर एक ताम्बेकी कटोरीको बैठानेके लिये गोल काप करें। जिससे कटोरीका किनारा ठीक उस कापमें बैठ जाय। पश्चात् ५ या १० तोले सोमलका टुकड़ा खड्डेमें रख, कटोरीको इएटके कापसे बैठाकर संधिपर दृढ मुद्रा लेपकरें। लेप सूखने पर इएटको चुल्हेपर चढाकर बेरकी लकड़ीकी मंदाग्नि देवें। कटोरीके ऊपर गीला कपड़ा रक्खें। कपड़े बार बार बदलते रहें। जिससे कटोरीके भीतर पुष्प लगते रहेगें। १२ घण्टे अग्नि देवें। स्वांग शीतल होने पर पुष्प निकाल लेवें। (आ० नि० मा०)

मात्रा—रत्ती सौंठके घासेके साथ। आवश्यकना पर दो घण्टे बाद पुनः देवें। या दिनमें दो बार देवें।

मिश्रित वर्त्ति (सपोज़िटरी) चढ़ाते हैं या एनिमा देते हैं। इस तरह जीर्ण प्रवाहिका रोगमेंभी इसकी वर्त्ति चढ़ाते हैं। जिन स्थानोंमें औषध चिपक कर कार्य करती हैं उन स्थानोंके रक्तस्राव में नागशर्कराकी अपेक्षा फिटकरी ही श्रेष्ठ है। किन्तु शोषण होकर दूरस्थ यन्त्रादिके रक्तस्राव दमनार्थ नागशर्करा हितकर मानी गई है। रक्तवमन, रक्तकास, रक्तातिसार, रक्तप्रदर, रक्त स्राव आदि रोगोंमें नागशर्करा आध से १ रत्ती और अफीम १/४ रत्ती मिलाकर सेवन कराना चाहिये। यदि सगर्भाको गर्भाशयमें से अधिक रजः स्राव या रक्तस्राव होने लगे और गर्भपातकी शंका होती हो तो १/४ रत्ती नागशर्करा १/३२ रत्ती अफीम (या शंखोदर रस १/४) केसाथ मिलाकर बार बार देते रहने, आमाशयमें क्षत होकर रक्तवमन होने पर यह अतिहितकारक है। यह वमनको बन्द करती है, एवं क्षत कोभी शुष्क बनाती है।

अतिसार रोगमें यदि अन्त्र प्रदाह न हो तो यह महोपकारक है। मधुराकी अन्तिम अवस्थामें अतिसार होजाने पर नाग शर्कराका अवलम्बन लिया जाता है। किन्तु इसका प्रयोग दीर्घकाल नहीं करना चाहिये। इस तरह दो दो वर्षके बालकोंके भयंकर अतिसारमें भी इसका प्रयोग होता है।

महाधमनी और अन्य बृहद् धमनीमें अर्बुद (Aneurysm) होने पर नाग शर्कराका किञ्चित् अफीमके साथ कुछ दिन तक सेवन कराया जाता है। एवं यक्ष्मारोगमें अति प्रस्वेद, अति पूयमय कफनिःसरण तथा सुजाकमें पूयस्राव आदि पर यह उपकारक है।

चक्षु प्रदाहमें इसके धावनका उपयोग होता है। १/४ रत्ती नाग शर्कराको १ औंस वाष्प जलमें मिलाकर प्रयोगमें लिया जाता है। अक्षिपल्लवके भीतर कुकूणक उत्पन्न होने पर नाग शर्करा का चूर्ण लगाया जाता है। सुजाक और श्वेत प्रदर रोगमें १-२

उपयोग—सन्निपातमें कफाधिक्य, नाड़ीकी शिथिलता, कम्प, वेहोशी आदि लक्षण होने पर इसपुष्प का उपयोग होता है। एवं यह कफाधिक्य श्वास रोगी को मलाई मिश्रीके साथ दिया जाता है। कुछ दिनों तक श्वासरोगीको सेवन करानेपर संगृहीत कफ निकलजाता है, नयी उत्पत्ति रुक जाती है। और श्वास प्रणालियां सुदृढ़ वन जाती हैं। जिससे श्वास रोग निवृत्त हो जाता है। इसके अतिरिक्त अनुपान विशेपसे जीर्ण मंदाग्नि, संग्रहणी, जीर्ण ज्वर, जीर्ण त्वचाके रोग कण्डू आदि जो वृद्धावस्थामें होने वाले हैं; उनको नाशकरती है।

---

२. विषनाशक, वामक व विरेचक द्रव्य प्रकरण।

१. विपवज्रपातरस।

प्रथम विधि—स्फटिक मणिका चूर्ण, फिटकरीका फूला, यवक्षार, लोटियासज्जी, नौसादरके फूल, सैंधानमक, गोदंती भस्म, इन ७ ओपधियों को समभाग मिला कर खरल कर लेवें।

(र० यो०)

मात्रा—१-१ तोला शीतल जल या दहीके जलके साथ।

उपयोग—यह रसायन विपशमनार्थ दिया जाता है। विप पूर्ण मात्रामें दिया हो, तो मात्रा पूरी देनी चाहिये। आवश्यकता पर १-२ घण्टे वाद पुन: देवें। विपवेग न हो, तो दंश स्थानमें चीरा देकर इस औपधको भर देवें; तथा मनःसिल, तपकिया हरताल, कुचिला, जमालगोटा, वच और हींगको जलमें पीस कर लेप करें। इस रसायनके सेवनसे सर्प, विच्छू, कुत्ते, सियार, वाघ, भेड़िया, और अन्य जहरी जानवरके विप और अफीम, गांजा,

१५. वमन प्रकरण

१. पारदादि चूर्ण।

विधि—शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, कपूर, बेरकी मींगी, लौंग, नागर मोथा, प्रियगु, धानका लावा, सफेद चन्दनका बुरादा, पीपल, दालचीनी, छोटी इलायचीके दाने और तेजपात, इन १२ औषधियोंको सम भाग लें। पहले पारद गन्धककी कज्जली करें फिर शेष औषधियोंका कपड़छान चूर्ण मिलाकर चंदनके अर्क या ४ गुने गरम जलमें भिगोये हुए चन्दनके फाण्टसे एक दिन खरल करके सूखा चूर्ण बना लेवें। (यो० र०)

मात्रा—४ से ८ रत्ती २-२ घण्टे पर दिनमें ४-६ समय कालीमिर्चके चूर्ण और शहदके साथ अथवा जल, लाजमण्ड या पोदीने के रसके साथ देवें। यदि इस रसायनके साथ जहर मोहरा पिष्टी २-२ रत्ती मिलाते रहे तो लाभ सत्वर होता है।

उपयोग—यह पारदादि चूर्ण प्रबल वमनका भी नाश करता है। इसका उपयोग अम्लपित्त और विदग्धाजीर्ण जनित वमन पर अच्छा होता है। पिताशय शूल और वृक्कशूल (वृक्काश्मरी) आदि कारणोंसे वमन होती है, एवं विसूचिका और ताम्र, सोमल, जमालगोटा, कनेर आदि के विष प्रकोपसे भी वमन होती है। इन सब पर इसका उपयोग नहीं होता। जमालगोटा और कनेर आदि के विष पर जब शामक उपचार करना हो, तब इस चूर्णका प्रयोग हो सकता है। सगर्भाके वमन में इस चूर्णके साथ एलादि चूर्ण मिलादेने पर विशेष लाभ होता है। वमनके अतिरिक्त यह हिक्का पर भी लाभ दायक है।

२. वमनान्तक योग।

(१) मोरपंख की चन्द्रिकाको जला कर की हुई राख २ रत्ती

१६. दाह प्रकरण।

१. सुधाकर रस।

विधि—रससिन्दूर, अभ्रकभस्म, सुवर्णका वर्क और मौक्तिक पिष्टी, इन ४ औषधियोंको समभाग लेवें। फिर त्रिफला क्वाथ और शतावरके क्वाथमें ७-७ दिन तक खरल करके १-१ रत्तीकी गोलियां बना लेवें। (आ० सं०)

मात्रा—१-१ गोली दिनमें २ बार शीतल जल, काली सारिवाका फाँट या पितपापड़ा, खस और नागर मोथाके क्वाथ के साथ देवें।

उपयोग—यह रसायन घोर दाह, प्रमेह और वातरक्त जनित दाह आदि को दूर करता है तथा बल्य और शुक्र वर्द्धक है। जब रक्तमें मूत्र विष, क्षार, मद्यजविष, पित्त अथवा अन्य तीक्ष्ण द्रव्योंके विषकी वृद्धि होकर दाह होता है, तब इस रसायन के सेवनसे विष शमन होकर और रक्त प्रसादन होकर दाह निवृत्त हो जाता है।

२. रसादि वटी।

विधि—शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, कपूर, श्वेत चंदनका बुरादा, जटामांसी, नेत्रवाला, नागरमोथा, खस, छोटीइलायची के दाने और दरियाई नारियल, ये १० ओषधियाँ समभाग लें। पहले पारद गन्धककी कज्जली करें। फिर शेष ओषधियोंका कपड़ छान चूर्ण मिला चन्दनादि अर्क के साथ ३ दिन खरल करके २-२रत्ती की गोलियां बना लें।

(श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्रा—१ से २ गोली गुलाब जल या चन्दनादि अर्कके साथ दिनमें ३-४ बार।

होजाता है फिर मल शुष्क होजाना, उदरमें वातसंचय, मलावरोध आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उस विकार पर इस क्वाथसे दूध सिद्ध करके दिनमें दो बार देते रहने से थोड़े ही दिनों में लाभ पहुँच जाता है। इस सिद्ध दुग्धके साथ बादामका तैल १-१ ड्राम देते रहनेसे अधिक लाभ पहुँचता है।

यकृत् प्लीहा वृद्धि और उससे उत्पन्न जलोदर, सर्प विष, कामला, कफ प्रकोप, शोथ, गण्डमाला, चूहेका विष आदि रोगों पर वमन करा कर दोषको निकालनेमें इस रसायनका उपयोग किया जाता है। यदि अतियोग होजाय तो चावलकी लाहीको जलमें पीस नींबूका रस मिलाकर पिलावें; या खसका जल पिलावें। अथवा नींबूके बीजकी मज्जा ४-४ रत्तीकी मात्रा शीतल जलके साथ पिलावें।

३. संशोधक रसकर्पूर।

प्रथम विधि—शुद्ध पारद और पांशुपटु (रेतेका नमक-कांच लवण) १०-१० तोले सेहुंडके दूधमें ७ दिन तक खरल करें। फिर लोहेके दो सरावोंमें सम्पुट कर दोनों सरावोंकी संधिको खड़िया मिट्टीसे वन्द करें। पश्चात् एक हांडीमें नमक भरें; और नमकके भीतर उस सम्पुटको रक्खें। हांडी पर दूसरी हांडीको ढक्कन रूपसे औंधी ढक, दृढ मुखमुद्रा करें। इसके बाद चूल्हे पर चढ़ा १२ घण्टे तक तीव्राग्नि देनेसे ऊपरके ढक्कनके भीतर चन्द्रमा और कुन्दके पुष्पके सदृश श्वेत भस्म लग जाती है। यन्त्र स्वाङ्ग-शीतल होने पर उसे सम्हाल पूर्वक निकाल लेवें।

(र० सा० सं०)

मात्रा—२ से ३ रत्ती तक लोंगके चूर्ण के साथ मिला कर देवें। ऊपर १-२ घूंट जल पिलावें।

उपयोग—इस रसकपूरके सेवनसे खूब वमन होती है। जिससे शरीरमें रहे हुए सर्पविष, सोमल आदि खनिज विष या सिंहकी मूंछ के बाल आदि तथा दूषी विष नया हो अथवा १ मास, ६ मास या १ वर्षका पुराना या इससे अधिक समयका पुराना क्यों न हो, सब निकल कर नष्ट हो जाता है। यह वान्ति बार बार दो प्रहर तक होती रहती है। इस पर बार बार शीतल जल पिलाते रहना चाहिये।

व्याधियाँ शमन होजाती हैं। एवं मानसिक प्रसन्नता की प्राप्ति होती है। उन्माद, हिस्टीरिया आदि में यह रसायन जटामांसी या ब्राह्मी के अर्क के साथ या शंखपुष्पी के स्वरस के साथ सेवन कराने से विशेषलाभ पहुंचता है।

यदि गर्भाशय में दोष है, तो इस रसायन के सेवन के साथ शर्बत बनफशा भी दिनमें २ बार पिलाते रहना चाहिये। हिस्टीरिया अपस्मार आदि में इस औषध के सेवन में पहले ही दिन से लाभ प्रतीत होने लगता है। रोगिणी को पहले दिन से निद्रा आने लगती है। एवं दौरा का वेग भी कम होने लगता है।

हृदय की शिथिलता, शक्तिपात, श्वासकृच्छ्रता, चेतनानाश, मूर्छा और सन्निपात में शीतांगावस्थाकी प्राप्ति होने पर अदरख के रस और शहद के साथ देने से तत्काल लाभ पहुंचता है; रोगी को होश आजाता है; देह में उष्णता आजाती है; और हृदयनियमित कार्य करने लग जाता है। एवं सूतिका रोग में आक्षेप और बालकों के धनुर्वात को दूर करने में भी यह रसायन उपकारक है।

कण्ठनलिका, आमाशय, अन्त्र, मूत्रनलिका, पित्तनलिका और महाप्राचीरा पेशी आदि स्वाधीन मांसपेशियों के आक्षेप होनेपर इस रसायन के सेवन से तत्काल लाभ पहुंचता है। हिक्कारोगमें भी यह अच्छा लाभदायक है। जटामांसी के क्वाथ के साथ देना चाहिये।

हिस्टीरिया, जीर्णपक्षाघात, अर्दित, गृध्रसी और कटिवात आदिवात विकारों पर निर्गुण्डी पत्र के स्वरस और शहद के साथ देने और ऊपर रास्नादिअर्क पिलाते रहने से रोग का निवारण सत्वर होता है। वृद्धावस्था की निर्बलता या व्याधि विशेषसे उत्पन्न गात्र कम्प, हस्तकम्प, शिरःकम्प आदि पर त्रिफला चूर्ण और शहद के साथ देना चाहिये।

विद्याध्ययन, मानसिकश्रम, चिन्ता, अधिक जागरण आदि कारणों से देह दिन प्रतिदिन सूखता जाता हो, अग्निमान्द्य, कास, मस्तिष्क में भारीपन, जीर्णज्वर, कोष्ठबद्धता, हाथपैर टूटना, किसीकार्य में उत्साह न होना, बेचैनी, नाड़ी की मंदगति, स्वप्नदोष होता रहना और वीर्य की निर्बलता आदि लक्षण प्रतीत होते हों, तो इस रसायन का सेवन त्रिफला, पीपल और शहद के साथ कराने से थोड़े ही दिनों में अग्नि प्रदीप्त होती है, मलावरोध दूर होता है; मानसिक प्रसन्नता होती है; मगज सबल बनता है; तथा रोगी बलवान, पुष्ट और नीरोगी होजाता है। यदि कोष्ठबद्धता न हो, तो ब्राह्मीघृत अथवा ब्राह्मी के अर्क के साथ सेवन कराना विशेष हितकारक है।

राजयक्ष्मा की द्वितीयावस्था में यह रसायन उपकारक है। प्रथमावस्था में जब शुष्क कास हो, तब इस रसायन का सेवन न कराया जाय, तो अच्छा माना जायगा। क्योंकि कस्तूरी के हेतु से किसी किसी रोगी के कण्ठ में शुष्कता की वृद्धि हो जाती है; और फिर श्वासनलिका पर उत्तेजना उत्पन्न होजाती है। क्षय की द्वितीयावस्था में जब शुष्ककास नहीं रहती, और कफ निकलने लगता है, तब इस रसायन का सेवन १ रत्ती वच के चूर्ण और नागरबेल के पान में कराने से क्षय कीटाणु नष्ट होते हैं; कफ सरलता से बाहर आजाता है; ज्वर का निवारण होता है; पचनक्रिया प्रबल होती है; और रोगी को शान्ति मिलने लगती है।

शराबी लोगों के उन्माद, निद्रानाश, अग्निमान्द्य आदि विकारों पर भी यह रसायन लाभदायक है। उन्माद रोगमें जब सर्वाङ्ग में दाह, असहिष्णुता, जोर जोर से चिल्लाना, नग्नरहना, बीभत्स चेष्टा करना, अथवा मानसिक विलक्षण चंचलता और बारबार जड़ सदृश बन जाना आदि लक्षण प्रतीत होते हों; तब

नाशक, लाला निःसारक, रक्त शोधक, शोषक, प्रदाह नाशक और अवसादक गुण हैं। यह रस पारदकी अन्य कृतियोंके समान दाह नहीं करता। यह आमाशय और अंत्रमेंसे रक्तके भीतर एल्ब्युमिनेट रूप से प्रवेश करता है। साथमें रहा हुआ नमक रक्तमें रहे हुए पोषक तत्त्व (Proteins) में मिल जाता है; और शरीरमेंसे बाहर निकलनेके समय क्रिया करता है। सामान्यतः लाला ग्रन्थियोंके ऊपर अधिक क्रिया करता है। इस तरह अन्य यन्त्रोंमेंसे भी पारद बाहर निकल जाता है। फिर परीक्षा करने पर वह मूत्र, मल, स्तनदुग्ध, प्रस्वेद और पित्तमें प्रतीत होता है।

परीक्षा करने पर यह भी विदित हुआ है कि, अन्त्रस्थ सब ग्रन्थियाँ पहले उत्तेजित होती हैं, यकृत् पहले उत्तेजित नहीं होता फिर भी सामान्यतः प्रयोग करने पर यकृतके पित्तका निःसरण अनुभवमें आता है। इसी हेतुसे पित्तप्रकोपज व्याधियोंमें इसके सेवनसे लाभ पहुंचता है। मलका रंग श्वेत होतो वह किञ्चित् लाल-सा बनजाता है। विशेषतः केलोमल विरेचन, पित्त निःसरण और उदर कृमिके नाशके लिये यह रेवाचीनी (रुबार्ब) कालदाना जुलाबा (जेलप) आदि विरेचक औषधोंके साथ दिया जाता है। एवं रक्तशोधन और प्रदाहके शमनार्थ अफ़ीम आदिके साथ प्रयोजित होता है। यह औषध पारद धूम्र लेनेमें विशेष उपयोगी है। अधिक मात्रामें अवसादक और विरेचक गुण दर्शाता है।

मधुरा और प्रलापक ज्वरकी प्रथमावस्थामें यदि कोष्ठ शुद्धि करनेके लिये आवश्यक समझा जावे तो केलोमल रेवाचीनी या जुलाबाके साथ व्यवहृत होता है। इसी तरह और ज्वरोंमें भी विरेचन और पित्त निःसरणके लिये आवश्यकतानुसार प्रयोजित होता है। पारद प्रयोगसे कदाच अपकार होनेका भय होता है, तो, पहले रेवाचीनी दीजाती है। इस हेतुसे अनेक रोगोंमें रेवा-चीनी मिलाकर मात्रावत् केलोमल देना विशेष उपकारक माना

धमासा या ब्राह्मी के अर्क के साथ चतुर्भुज रस दिया जाता है।

इस रसायन में सुवर्ण भस्म होने से हृदय सबल बनता है; तथा रक्त प्रसादन कार्य अच्छा होता है। कीटाणु और सेन्द्रिय विष नष्ट होते हैं। एवं त्वचागत पित्तविकार शमन होता है। एवं सुवर्ण में वृष्य गुण होने से नपुंसकता भी दूर होती है।

रससिंदूर—रसायन, उत्तेजक, कफघ्न, हृद्य और कीटाणु नाशक है।

सुवर्णभस्म—शीतवीर्य, रसायन, हृद्य, प्रज्ञावर्धक, वृष्य, बृंहण, कीटाणुनाशक और विषघ्न है।

मनःशिल और हरताल—उत्तेजक, कफवातनाशक, आक्षेपघ्न, कीटाणुनाशक और विषघ्न है।

किम्तूरा—आक्षेपहर, उत्तेजक और निद्राप्रद है।

घी कुंवार—उदरशोधक है।

चतुर्भुज रसमें रससिंदूर मनःशिल और हरताल उग्र औषधियां होनेसे इसका उपयोग सम्हालपूर्वक कम मात्रामें करना चाहिये।

जब हृदयकी गति बढ़ गई हो और मस्तिष्कमें रक्तकी वृद्धि हो, तब इस रसायनका उपयोग नहीं करना चाहिये।

२. अपस्मार हर योग।

(१) घोड़ा बच का कपड़छान चूर्ण ३ से ६ रत्ती तक दिन में २ बार शहद के साथ देते रहने और दूध भात का भोजन कराते रहने से जीर्ण अपस्मार रोग भी दूर हो जाता है। (भै० र०)

आयुर्वेद निबन्ध माला कारने बच के चूर्ण में शहद मिलाकर मटर सदृश गोलियां बनाकर ३-३ गोलियां देने को लिखा है।

कल्क द्रव्य—विदारीकंद, मुलहठी, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, मिश्री, पिण्डखजूर, मुनक्का, शतावरी, मुञ्जातक कन्द, (अभाव में ताल फल) और गोखरू तथा चैतस घृतोक्तकल्क द्रव्य (इन्द्रायण, हरड़, बहेड़ा, आंवला, रेणुकबीज, देवदारु, एलवा लुक, शालपर्णी, तगर, हल्दी, दारुहल्दी, कालीसारिवा, सफेदसारिवा, प्रियङ्गु, नीलोफर, छोटी इलायची, मजीठ, दन्तीमूल, अनारदाने, नागकेशर, तालीस पत्र, बड़ी कटेली, मालती के ताजे फूल, वायविड़ङ्ग, पृश्नपर्णी, कूठ, रक्त चन्दन और पद्मकाष्ठ (पद्माख), ये २८ औषधियां) सब मिलाकर ४० औषधियों को २-२ तोले मिला जल के साथ ८५ तोले कल्क तैयार करें। फिर क्वाथ, कल्क और ४। सेर गोघृत को मिलाकर मन्दाग्नि पर यथाविधि पाक करें। (भै० र०)

मात्रा—१ से २ तोले दिन में दो बार देवें। मात्रा प्रारंभमें ½ से १ तोला देवें। तत्पश्चात् अग्नि बल का बलाबल देखकर मात्रा बढ़ावें।

उपयोग—यह घृत अपस्मार और उन्माद रोग में अति हितावह है। सब प्रकार की मस्तिष्क की निर्बलता का नाश करता है एवं अपस्मार, दूषी विष प्रकोप, उन्माद, प्रतिश्याय, श्वास, कास, तृतीयक ज्वर, चातुर्थिक ज्वर और ग्रह पीड़ा आदि रोगों को दूर करता है। यह घृत शुक्र और आर्त्तव का विशोधन करता है। मानसिक विकृति और वात प्रकोप को दूर करता है; मस्तिष्क, मन, बुद्धि शुक्राशय और गर्भाशय को सबल बनाता है।

५ ब्राह्मीतैल।

मुख्य द्रव्य—काले तिलों का तैल, ब्राह्मी स्वरस, भृंगराज स्वरस, शंखपुष्पी स्वरस और बकरी का दूध ४-४ सेर लें।

इसी ब्राह्मीमें उत्तेजक, मूत्रल, रसायन, पौष्टिक, विषघ्न, ज्वरहर, शोथ नाशक और कफघ्न गुण अवस्थित हैं। यही मस्तिष्कगत विकृति और वातविकार पर लाभदायक है। जीर्ण उन्माद और जीर्ण अपस्मार पर यह हितावह है। यह उत्तेजक होने से तीव्र प्रकोप कालमें इसका प्रयोग नहीं किया जाता। एवं जीर्ण रोगमें भी नाड़ी मंद हो, तब यह नहीं दी जाती।

इस ब्राह्मीमें क्षुधाको मंद करनेका दोष रहा है। इस हेतुसे खानेकी औषधिमें इसके साथ दीपन पाचन औषधि मिलानी पड़ती है।

उपयोग—इसके तैलकी मालिश शिर पर करते रहने से मस्तिष्क की शक्ति बढ़ जाती है। जीर्ण उन्माद रोग और जीर्ण अपस्मार में अति हितकारक है। मानसिकश्रम अधिक करने वालों को यह मस्तिष्क को सबल बनाकर लाभ पहुँचाता है।

उपरोक्त ब्राह्मी से बने हुए तैल का अनुभव करने पर विशेष प्रभावशाली पाया है। यह उन्माद अपस्मार आदि मनो विकार और जीर्ण ज्वरादि रोगों को नष्ट कर मनुष्यों को मेधावी और कान्ति वान बनाता है। १५ वर्षों से निरन्तर इसका अनुभव कर रहा हूँ। इसके नस्य और शिरो वस्ति अप्रतिम गुणकारी सिद्ध हो चुके हैं। (श्री० पं० राधाकृष्णजी द्विवेदी)

६. चन्द्रहास अर्क।

विधि—अजमोद, खुरासानी अजवायन, भांग, धतूरे के बीज, कपूर, अफीम के डोडे और जायफल प्रत्येक को ४-४ तोले लेकर जौकूट चूर्ण कर ४०० तोले गो दुग्ध में मिला कर रात्रि को भिगो देवें। प्रातः काल भभके से अर्क निकाल लें।

श्री गोपालजी कुँवरजी ठक्कुर आयुर्वेदाचार्य।

उपयोग—यह वटी हिस्टीरिया और अपस्मार रोगी की निर्बलता, उदरवात, अग्निमान्द्य, अपचन, मलावरोध, शिरदर्द, निद्रानाश, हृदय स्पन्दन की मंदता, पाण्डुता और घबराहट आदि को दूर करती है। अन्य वातप्रकोप और अपचन रोग में भी सफलता पूर्वक व्यवहृत होती है।

८. चन्द्रावलेह।

विधि—शतावरी, विदारीकंद, पेठा और शंखाहुली, प्रत्येक का स्वरस २५६-२५६ तोले, तथा शक्कर ४०० तोले मिला कर मन्दाग्नि पर पकावें। अवलेह योग्य चाशनी बनने पर नीचे उतार लें। शीतल होने पर छोटी इलायची के दाने ६४ तोले, दाल चीनी तेजपात, नागकेशर, मुनक्का, सफेद चंदन, कमल, अनन्तमूल काला, नागरमोथा, पद्माख, खस, आंवला, जटामांसी और लोंग, ये १३ औषधियां ४-४ तोले, वंशलोचन और सर्पगन्धा १६-१६ तोले का कपड़छान चूर्ण मिला लेवें।

श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य आयुर्वेदमार्तण्ड

मात्रा—आध से १ तोला तक, चंदनादि अर्क, केवड़े का अर्क, गावजवाँ के फूलों का अर्क, बेदमुश्क का अर्क या गोदुग्ध के साथ दिन में दो बार।

उपयोग—यह अवलेह निद्रानाश, उन्माद, शिर में चक्कर आना, मूर्च्छा, हाथ पैरों का दाह आदि विकारों को दूर करता है। यह अवलेह मस्तिष्क को शान्त और पुष्ट बनाता है। उन्माद की तीव्रावस्था में विशेष व्यवहृत होता है। जीर्णावस्था में भी लाभदायक है।

९. सर्पगन्धा चूर्णयोग।

प्रथम विधि—सर्प गन्धा का कपड़छन चूर्ण ५ तोले और

निम्ब) जटामांसी और नेत्रवाला ५-५ तोले तथा छोटी इलायची १, तालीसपत्र, दाल चीनी, तेजपात, नागकेसर और काली मिर्चे २॥-२॥ तोले लें। मुनक्का को चटनी की तरह पीस लें। काष्ठादि औषधियों को जौकूट कर लें। फिर सब को मिला कर अमृतबान में भर मुख मुद्रा कर १ मास तक बन्द रक्खें। आसव परिपक्व होने पर बोतलों में भर लेवें।

वक्तव्य—१० सेर शंखावली को जल से धोकर स्वरस निकालें। लगभग २॥ सेर जल मिलाना पड़ता है। तैयार होने पर ३॥-४ बोतल आसव बनता है। पं० मदनलालजी

मात्रा—१। से २॥ तोले तक दिन में दो बार समान जल मिला कर देवें।

उपयोग—यह आसव मस्तिष्क पर शामक असर पहुंचाता है उन्माद, अपस्मार, मदात्यय जनित निद्रानाश, प्रमेह, पूयमेह और दाह आदि रोगों को दूर करता है; तथा मानसिक अस्वस्थता को शमन करता है।

इसी प्रकार (उपरोक्त विधि से) ब्राह्मी तैल में कही हुई ब्राह्मी से जलनिम्बासव बना लें, वह अपूर्व फल दाता है। मस्तिष्क सम्बन्धी प्रत्येक रोग में जलनिम्ब को अनेक प्रकार से सेवन करने पर चमत्कारी लाभ मिलता है।

शंखावली में से जो आसव बनता है वह शामक है इसहेतुसे उन्माद की तीव्रावस्था में उपयोगी है। और ब्राह्मी में से बना हुआ आसव उत्तेजक होने से चिरकारी अवस्था में लाभ पहुँचाता है। श्री० पं० राधाकृष्णजी द्विवेदी

मिट जाने पर भी रुधिरके द्वारा समस्त शरीरमें लक्ष्य या अलक्ष्य रूपमें विकार सदाके लिये छोड़ देता है। जब तक उत्तम प्रतिकार न किया जाय।

६ संशोधन वटी

बनावट—देवदाली के पक्के सूखे ३ फल लेवें। भीतरसे जाली और बीजोंको निकाल डालें। केवल कांटेदार टपर लेवें उसका चूर्ण करें। फिर लगभग १ तोला मुनक्काको धोकर भीतरसे बीज निकाल डालें। उसे चटनी की तरह पीसें। फिर देवदाली का चूर्ण मिला कर १४ गोलियां बना लेवें। मुनक्का उतनी मिलावें कि गोलियां ४-४ रत्ती की बन जायँ।

वैद्यराज किसनलालजी अग्रवाल (अमरावती)

मात्रा—१-१ गोली कच्चे गोदुग्धके साथ प्रातःकाल और रात्रिको निगल लेवें। बस्ति के लिये गोदुग्धमें ४ गोली मिला लेवें।

उपयोग—जीर्ण ज्वर, मन्द ज्वर, शिरदर्द और कामला रोगको दूर करने में यह वटी अति लाभदायक है। क्षयकी प्रथमावस्था में भी इसका उपयोग सफलतापूर्वक होता है। इस वटी का प्रयोग श्री० किशनलालजी अग्रवाल (अमरावती) अनेक वर्षों से करते रहते हैं। प्रयोग अति सामान्य होते हुए भी चमत्कारिक लाभ पहुँचाता है। जब सेन्द्रिय विष, कीटाणु प्रकोप या मल संग्रह होकर ज्वर बना रहता हो, तब इसका प्रयोग होता है। कभी-कभी आमाशय में दोष प्रकोप अधिक होनेपर किसी किसी को वान्ति और अन्त्रमें मल संग्रह अधिक होनेपर विरेचन होता है। किन्तु उससे भय नहीं मानना चाहिये। केवल ऐसा वमन, विरेचन पहले ही दिन होते हैं; फिर नहीं होते तथा ये सौम्य रूप से होते हैं।

१८. वात व्याधि प्रकरण ।

(ऊरुस्तम्भ-आमवात-हिस्टीरिया वातशूल सह)

१. रसराज रस (तृतीय)

बनावट—शुद्धपारद (रससिंदूर) ४ तोले, अभ्रकका सत्व (अभावमें अभ्रकभस्म) १ तोला और सुवर्णभस्म ६ माशे, इन तीनों को मिलाकर १२ घण्टे घी कुंवारके रसमें खरल करें। फिर लोहभस्म, रौप्यभस्म, वंगभस्म, असगन्ध, लौंग, जावित्री, और चीरकाकोली, ये ७ औषधियां ३-३ माशे मिलाकर मकोयके रसमें ३ दिन खरल करके २-२ रत्ती की गोलियां बना लेवें।

(भै० र०)

मात्रा—१ से २ गोलीतक दिनमें २ वार मिश्री मिले दूध या शक्करके शर्बतके साथ देवें।

उपयोग—इस रसायनके सेवनसे पक्षाघात, अर्दित, हनुस्तम्भ, अपतन्त्रक, धनुस्तम्भ अपतानक, बधिरता, चक्कर आना और समस्त वात विकार नष्ट होकर बल, वीर्य और वाजीकरण शक्ति की वृद्धि होती है। स्नायविक रोगोंमें भी विशेष लाभकारी है।

२. नवग्रहरस ।

बनावट—सोमल, हिंगुल, शुद्धगन्धक, शुद्धपारद, गोदंती, नीलाथोथा, हरताल, मैनसिल खर्पर (जसदकाफूल,) ये ६ औषधियां २-२ तोले लें। पहले कज्जलीकर फिर हरताल मिलावें। पश्चात् शेष ओषधियां मिलाकर अच्छी तरह मर्दन कर लेवें। फिर करेले और नीमके पत्तोंके स्वरसमें ६-६ घण्टे खरलकर सुखा आतशी शीशीमें भर मुखमुद्राबन्दकर वालुका यन्त्रमें रख २४ घण्टे मन्द अग्नि देकर तलस्थ रसायन बनालेवें।

(र० यो० सा०)

जब ज्वरकालमें अपथ्य आहार विहार का सेवन होता है या योग्य उपचार नहीं होता तब ज्वर जीर्ण रूप धारण कर लेता है। अनेकों को मलावरोध, अरुचि, क्षुधामान्द्य, शिरमें भारीपन रहना, मूत्र में पीलापन, उत्साहका अभाव, आलस्य, फुफ्फुसों में कफ भरा रहना, हाथपैर टूटना, व्याकुलता और शारीरिक उत्ताप ९९° तक बढ़ना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उस पर यह वटी उत्तम लाभ पहुँचाती है। थोड़े दिन सेवन करने पर जीर्णज्वर दूर होकर देह सबल होजाती है।

किसी किसी रोगी को जीर्णज्वर होने पर पित्त प्रकोप होकर मुखपाक, निद्रानाश, क्षुधामान्द्य, अरुचि, तृषावृद्धि, दाह, व्याकुलता, मलावरोध और कभी कभी खट्टी वान्ति होजाना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उस पर भी यह औषधि अत्युत्तम मानी गई है।

देहमें कीटाणुओं का बाहरसे प्रवेश या सेन्द्रिय विष संगृहीत होजाने पर मंद मंद ज्वर आता रहता है। विशेषतः रात्रि को ९९° तक होजाता है। सुबह ९७° डिग्री उत्ताप रहता है। हाथपैर टूटना, क्षुधामान्द्य, उत्साह का अभाव, मूत्रमें पीलापन, शीत या उष्णता सहन न होना आमाशय में घण्टों तक भारीपन बना रहना, भोजन की बार बार डकार आना, मलावरोध, तथा शौच के साथ आम निकलते रहना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। थोड़ा सा परिश्रम करने पर उत्ताप बढ़ जाता है। इस ज्वर के मूल कारण रूप कीटाणु विषको दूर करने पर ज्वर स्वयमेव शमन हो जाता है। यह कार्य इस वटी से आम प्रकार से होता है।

यदि मंद मंद ज्वर अधिक समय तक रह जाता है, योग्य उपचार नहीं होता और अपथ्य का सेवन होता रहता है, तो किसी किसी पर राजयक्ष्मा के कीटाणुओं का आक्रमण होजाता है। फिर शुष्ककास जीर्णज्वर बात बात में क्रोध उत्पन्न होना आदि

मात्रा—$\frac{१}{८}$ से $\frac{१}{४}$ रत्ती तक २॥ तोले मक्खन या मलाईके साथ दिनमें दो बार देवें।

उपयोग—यह रसायन समस्त प्रकारके वात रोग, अर्श, ग्रन्थि और फैलने वाले फौड़े को नष्ट करता है, एवं गुल्म और शूलको दूर करनेमें यह अतिहितावह है। यह औषध वातरोग पर अत्युत्तम माना गया है। कफ प्रकृति वालोंके जीर्ण वातरोगमें यह औषधि दी जाती है।

सूचना—कोष्ठ बद्धता हो, तो पहले एरण्ड तैलसे उदरकी शुद्धि करना चाहिये।

जिन रोगियोंको वृक्कों द्वारा योग्य मूत्र शुद्धि न होती हो, बारबार थोड़ा थोड़ा पेशाब होता हो, मस्तिष्कमें उष्णता रहती हो, उन रोगियोंको यह रसायन नहीं देना चाहिये।

३. बृहद् वात चिन्तामणि रस।

बनावट—सुवर्ण भस्म ३ भाग, रौप्य भस्म २ भाग, अभ्रक भस्म २ भाग, लोह भस्म ५ भाग, प्रवालभस्म ५ भाग, मौक्तिक भस्म ३ भाग तथा रससिंदूर ७ भाग लें। सबको मिला घीकुंवार के रसमें ३ दिन तक खरल कर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लेवें।
(भै० र०)

मात्रा—१ से २ गोली तक नागरवेलके पानमें दिनमें २ बार देवें। हिस्टीरिया पर जटामांसीका अर्क या हिस्टीरिया नाशक फाण्ट के साथ। सन्निपातमें तगरादि क्वाथके साथ।

उपयोग—इस रसायनके सेवनसे समस्त रोग समूह तथा पित्ताश्रित वातरोग नष्ट होते हैं। वृद्ध मनुष्यभी तरुण पुरुषके समान स्फूर्त्ति और बल वाला बन जाता है। पित्त प्रधान वात विकार में यह उत्तम औषध है। तत्काल अपना प्रभाव दर्शाती

लक्षण उपस्थित होते हैं। देह अति कृश और निस्तेज हो जाती है। ऐसी अवस्था में भी इस वटी का सेवन कराकर योग्य उदरशुद्धि कराई जाय, तो ज्वर दूर होता है और शरीर स्वस्थ होजाता है।

यकृत् या पित्ताशय की पित्तनलिका के मार्ग का अवरोध होने पर कामला उत्पन्न होता है। देह में से प्रस्वेद पीला निकलता है। आँखों से जिस पदार्थ को देखें उसमें पीलापन का भास होता है।

पेशाब पीला होता है किन्तु यकृत पित्त का स्राव अन्त्रमें कम होनेसे मलका रंग सफेद भासता है। उस रोग पर वटीका सेवन कराने और दूध भात पर रोगीको रखनेसे थोड़ेही दिनोंमें लाभ पहुँच जाता है।

कभी बृहदन्त्रमें मल संग्रह अत्यधिक हो जानेसे शिरामें भारीपन निरन्तर बना ही रहता है। फिर आलस्य आता है, स्मरण शक्तिका ह्रास हो जाता है। कितनेक रोगी बार बार जुलाब लेते रहते हैं। जिससे अन्त्र अति शिथिल हो जाता है। शरीर भाररूप भासता है। उसपर इस वटीमिश्रित गोदुग्धकी बस्ति देने से शुद्धि होती है। फिर पाचन क्रिया सबल बन जाती है।

संक्षेपमें जब मल, आम, कफ या पित्त आदि का संग्रह और पचनेन्द्रिय संस्था में कीटाणु प्रवेश होकर उसकी आबादी बढ़ जाती है, तब यह गुटिका आशीर्वाद के समान उपयोगी है।

---

३ ज्वर प्रकरण।

१. विश्वतापहरण रस।

द्वितीय विधि—(पहली विधि प्रथम खण्डमें दी है) हरड़, पीपल, ताम्र भस्म, शुद्ध कुचिला, शुद्ध जमालगोटा, कुटकी निसोत

में विकृति होजाती है। कभी बीजाशय की उग्रता उपस्थित होकर मनोवृत्ति में विकृतावस्था आजाती है। फिर अपतन्त्रक रोग उत्पन्न होजाता है। इस रोग में अति हास्य या अति रुदन, दीर्घ निःश्वास, बीच-बीच में हास्य या रुदन, घबराहट, श्वासावरोध, कण्ठावरोध, किसी किसी को आमाशयमें आध्मान आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। रुग्णा गिर जाने पर भी उसे चारों ओर के घर्त्तावका ज्ञात रहता है, किन्तु वह उस समय बोल नहीं सकती। गिर जाने पर हाथ पैरों में आक्षेप आता है। इस प्रकार के लक्षण युक्त रोग में मस्तिष्क को बल देकर विकार के कारण रूप मानसिक विकृति दूर करने के लिये यह रसायन अति हितावह है। आवश्यकता पर इस रसायन के साथ कस्तूरी या अम्बर ½ रत्ती देवें। और ऊपर हिस्टीरिया नाशक फाण्ट या जटामांसी का अर्क पिलावें।

सान्निपातिक ज्वरोंमें जब वात प्रकोप होकर मंद-मंद प्रलाप, तन्द्रा, नाड़ी में क्षीणता, हृदय में घबराहट, हाथ पैरों में कम्पन, प्रस्वेद अधिक आकर शरीर शीतल हो जाना आदि लक्षण प्रकाशित हों, तब इस रसायन का प्रयोग करने पर प्रलाप आदि सब लक्षण शमन होजाते हैं।

प्रसव होने पर आई हुई दुर्बलता को दूर करने और सूतिका रोग को नष्ट करने में यह शीघ्र लाभ पहुँचाता है। वृद्धावस्था में वात वृद्धि होने और दुर्बलता आने पर यह रसायन जादू की तरह शक्ति प्रदान करता है। बैठे बैठे कार्य करनेवाले व्यापारी वर्ग और अन्य कितनेकों को कमरमें पीड़ा बनी रहती है। उनके लिये यह रस कटि स्थानकी वात नाडियां और वात नाड़ी जाल पर कार्य कर के कटि वात को दूर कर देता है।

रक्त की न्यूनता तथा वातकेन्द्र और वात वाहिनियों की शिथिलता होने पर बार बार चक्कर आना, भ्रम, क्वचित् प्रलाप,

शुद्ध पारद और शुद्ध गन्धक इन ६ औषधियों को समभाग लेवें। प्रथम पारद गन्धककी कज्जली करें। फिर ताम्र भस्म मिलावें। पश्चात् सब औषधियों का कपड़ छान चूर्ण मिलाकर धतूरेके रस में १ दिन रात खरलकर १-१ रत्ती की गोलियां बना लेवें।

(र० यो० सा०)

सूचना—*इस रसायनको धतूरेके रसकी भावना देनेके पश्चात् हम ७ भावना भांगरेके रसकी भी देते हैं। इन भावनाओंके हेतुसे अन्त्र दाह नहीं होता।*

मात्रा—२ से ४ रत्ती दिन में २ बार अदरख के रस और शहद अथवा मिश्री मिले जल के साथ।

उपयोग—यह रसायन समस्त प्रकार के नूतन ज्वरों को दूर करता है। ज्वरमें जब विरेचन की आवश्यकता हो, तब यह दिया जाता है। यह यकृद्विकार, मलावरोध और पित्तवात-प्रकोप आदि को दूर कर ज्वर को नष्ट करता है। विषमज्वरमें भी सत्वर लाभ पहुँचाता है।

इस औषध के पाठ में मूलग्रन्थ के भीतर अभिनव ज्वरघ्न, इतनाही गुण दर्शाया है; किन्तु योग्य रूप से योजना करने पर यह रसायन अनेक रोगों की भिन्न भिन्न अवस्था में उपयोगी होता है।

विशेष विचार किया जाय, तो आमज्वर और अभिनवज्वर, इन दोनोमें भी कुछ अन्तर है। अरुचि, अपचन, उदरमें जड़ता, उदरमें आफरा, शूल, मुंहमें जल छूटना, उबाक, कोष्ठ-बद्धता आदि लक्षणोंकी वृद्धि होकर ज्वर आजाने पर आम ज्वर कहलाता है। उस पर वच्छनाग प्रधान औषधि दी जाती है।

मानसिक विकृति और स्मृति नाश आदि लक्षण उपस्थित होते हैं; उसपर इस रसायनके उपयोगसे रोगी थोड़े ही दिनोंमें स्वस्थ हो जाता है। यदि शारीरिक उत्ताप ९९ डिग्री से अधिक रहता हो, तो सूतशेखर देना चाहिये।

शराब सेवन करने वालों के चिरकारी वातरोग और जीर्ण पक्षाघात में अन्य औषधियों की अपेक्षा यह रसायन और योगेन्द्ररस विशेष अनुकूल रहते हैं। दोनों तत्काल अपना चमत्कार दर्शाते हैं। इस रसायन में रौप्य भस्म होने से यह वृक्क स्थान और मस्तिष्क पर विशेष शामक असर पहुँचाता है, और योगेन्द्र रस रक्त प्रसादन कर तथा हृदयपर बल्य असर पहुँचाकर विशेष फल दर्शाता है।

ग्रीष्म ऋतु तथा उष्णदेशों में और पित्त प्रधान प्रकृति वालों को वातप्रकोप होकर मस्तिष्क में पीड़ा होना, बेचैनी, हाथ पैरों में फड़कन होना, या झनझनाहट होना, कभी-कभी मन्द-मन्द शूल चलना, कमरमें कुछ दर्द होना, बार बार खट्टी डकार आना, मुखपाक होना, अन्त्र में वायु की गुड़गुड़ाहट होना, मलावरोध रहना, यकृत् का पित्तस्राव कम होने से दस्तमें दुर्गन्ध आना आदि लक्षण प्रतीत होनेपर यह रसायन अच्छा लाभ पहुँचाता है। उपदंश के कीटाणु या सुजाक के कीटाणुओं के विष प्रकोप से वातवाहिनियों की विकृति होकर नपुंसकता आई हो, तो इस रसायन से वात वाहिनियों का संकोच दूर होकर नपुंसकता की निवृत्ति हो जाती है।

अनेकों को शुक्रक्षय होने पर रक्तकी न्यूनता और वातप्रकोप होकर कमर, पिण्डी आदि स्थानों में नाड़ियें खिंचना, मन्द मन्द शूल चलना, सामान्य वेदना होना, मूत्रमार्ग और शुक्र मार्ग में अतिदाह होना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उनके लिये यह रसायन अमृत के सदृश उपकारक है।

इस रसायनमें वच्छनाग न होनेसे आमपचनका यथोचित कार्य इससे नहीं होता। आमप्रकोप रहित जो ज्वर हो, ऐसे नूतन ज्वरों पर इस रसायनका उपयोग होता है। इस रसायनमें कब्जको दूर करनेका गुण तो जमालगोटा, कुटकी और निसोतके हेतुसे ह; किन्तु आमको पचन करनेका गुण प्रवल नहीं है।

यह औषध यकृद्‌वल्य और विरेचक है। इसका उपयोग यकृत् के विकार से उत्पन्न ज्वरोंमें भांगरे के रस के साथ करना चाहिए। कामलायुक्त ज्वरमें इस औषध का अच्छा उपयोग होता है। तीव्र ज्वरके साथ में कोष्ठवद्धता, शौच का वेग किञ्चित् भी न होना, ऐसा लक्षण होने पर विश्वतापहरणरस देकर कुछ समय के पश्चात् मात्रा वस्ति या निरूहणवस्ति द्वारा कोष्ट की शुद्धि कर लेनी चाहिये।

एरंड तैल या ग्लिसरनिकी पिचकारी देने या १०-१५ तोले एरंड तैल और ३०-४० तोले गरम जल मिलाकर रवरकी एनिमा द्वारा गुदासे चढा देनेसे सत्वर उदर शुद्धि हो जाती है। रोगी बालक हो तो ग्लिसरीन की सपोज़िटरी (वर्ति) चढ़ानेसे भी मल शुद्धि हो जाती है।

यकृद्‌वृद्धि के विकार में यह औषधि उत्तम कोटिकी मानी गयी है। छोटे वालकों से यह रसायन अनेक वार सहन नहीं होता। इस तरह जिन देशों में वर्षा अधिक होती है। वातावरण में आर्द्रता रहती है, अर्थात् अनूप देशों में यह अधिक अनुकूल रहता है। यद्यपि इस प्रकार पर आरोग्यवर्धिनी का भी उपयोग होता है; तथापि वह केवल यकृद् विकार पर ही उपयुक्त है।

यकृत् वृद्धि के पश्चात् उत्पन्न सर्वाङ्ग शोथ और जलोदर, इन

शुक्रका दुरुपयोग होने से नपुंसकता आई हो, वह इस रसायन के सेवन से दूर होती है; और शुक्रस्राव का भी दमन होता है।

विद्यार्थी वर्ग, वकील और अन्य मस्तिष्क श्रम लेने वालोंके लिये यह महौषधि है। मानसिक अधिक श्रम पहुँचने पर ओज का क्षय होता है। फिर मस्तिष्क की निर्बलता, शिरदर्द, चक्कर आना, स्मरण रखने योग्य विषय विस्मृत हो जाना, निस्तेजता, आलस्य, अप्रसन्नता हाथ पैरों की नसें खिंचना और अग्निमान्द्य आदि लक्षण प्रकाशित होते हैं। वे सब लक्षण इस रसायन के सेवन से थोड़े ही दिनों में दूर होते हैं; मुखमण्डल प्रफुल्लित और तेजस्वी बनता है, शरीर और मन उत्साहित बनते हैं, तथा स्मरण शक्ति और विचार शक्ति सबल होती है।

इस रसायन में मिलाये हुए द्रव्यों में से सुवर्ण भस्म सेन्द्रिय विष नाशक, वात केन्द्र पोषक, हृद्य, रक्तप्रसादक और शुक्रवर्धक है। रौप्यभस्म मांस संस्था और वातवाहिनियोंकी विकृतिको दूर करती है; और हृदयको शक्ति प्रदान करती है। लोहभस्म रक्त पौष्टिक है तथा रक्ताणु और रक्ताभिसरण क्रिया दोनों को बढ़ाती है। प्रवाल और मौक्तिक विषघ्न, अस्थिबल वर्धक और पित्त प्रकोप शामक है। रस सिन्दूर रसायन, हृदय पौष्टिक, विष नाशक और वात हर है। घी कुँवार आमाशय और अन्यस्थ विषको निर्विष बनानेमें सहायता पहुँचाता है।

४. बृहद् ब्राह्मीवटी।

विधि—अभ्रक भस्म, संगे यशबकी पिष्टी, सुवर्ण के वर्क, अकीक पिष्टी, माणिक्यपिष्टी, प्रवालपिष्टी, मुक्ता पिष्टी, कहेरवा पिष्टी और चन्द्रोदय, ये ९ औषधियां ६-६ माशे, जायफल, जावित्री, वंशलोचन, लौंग, कूठ, कालाजीरा, पीपल, पीपलामूल,

दोनों रोगों में नेवारी (मराठी नेवाली सं० नेमाली) के पानके रसमें (या पुनर्नवाके रसमें) इस रसायन का प्रयोग करने से अच्छा लाभ होता है।

कभी कभी मात्रा बढ़ जाने पर और पित्तप्रधान प्रकृतिवाले को देने पर उष्णतावृद्धि, रक्तस्राव, अधिक दस्त लगना, बलक्षय आदि हानिकर लक्षण प्रकाशित होते हैं। इस हेतु से औषध प्रयोग सम्हालपूर्वक करना चाहिए सगर्भा, अतिसुकुमार और पित्तप्रकृति वालों को नहीं देना चाहिये।

(औ० गु० ध० शा० के आधार से)

२. अमृतार्णवरस।

विधि—शुद्धबच्छनाग, शुद्धपारद, शुद्धगन्धक, लोहाभस्म और अभ्रकभस्म, इन ५ औषधियोंको समभाग मिलाकर चित्रकमूलके काथकी ८ भावना देकर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लेवें। (भै० र०)

मात्रा—१ से ३ गोली तक दिनमें दोबार निवाये जल, कण्टकार्यादि काथ (नागरादिपाचन) या सुदर्शन चूर्णके अर्कके साथ देवें।

उपयोग—यह रसायन आमाशयिक विकार सह विषम ज्वरको दूर करता है। आमायशमें दोष प्रकोप होकर उस स्थान की पचन क्रिया बिगड़ती है। फिर वहां पर आमसंचय होकर ज्वर की उत्पत्ति होती है; ऐसा आयुर्वेद शास्त्रका मत है। इसी हेतु से आयुर्वेदने ज्वर चिकित्सामें दोषोंको पचन कराने वाली औषधियोंका उपयोग प्रधानता से किया है। इस रसायनमें चित्रकमूलके काथ की ७ भावना देनेका रहस्यभी यही है। आमाशयमें दोष संचय होनेका निमित्त कारण जिस तरह उत्पन्न हुआ है, उसका विचार औषध योजना करने पर अवश्य करना

दालचीनी, तेजपात, छोटी इलायचीके दाने, नागकेशर, अनीसून, सौंफ, धनिया, अक्करकरा, असगन्ध, चित्रकमूलकी छाल, कुलिजन, रूमीमस्तंगी, शंखाहुली और श्वेतचन्दनका बुरादा, ये २२ ओषधियां ४-४ माशे, कस्तूरी, अम्बर, ब्राह्मी, निसोत, अगर और केशर, ये ६ ओषधियां १॥-१॥ तोले लें। पहले केशर, कस्तूरी और अम्बर को खरल करें। फिर भस्म और पिष्टी, पश्चात् सुवर्णके एक २ वर्क मिलाकर खरल करें। तत्पश्चात् शेष ओषधियोंका कपड़छान चूर्ण मिला ब्राह्मी (जल नीम) के स्वरसमें २ दिन मर्दन कर १-१ रत्ती की गोलियां बना लें।

श्री प० यादवजी त्रिकमजी आचार्य

मात्रा—१ से ४ गोली तक दिनमें २ या ३ बार देवें।

अनुपान--सन्निपात ज्वरमें प्रलाप शमनार्थ तगरादि क्वाथ।

अपतन्त्रक (हिस्टीरिया) और आक्षेपक में मांस्यादि क्वाथ।

सतत ज्वर में शहद।

विविध वातप्रकोप पर दशमूल क्वाथ।

हृदयकी निर्बलता पर खमीरेगावजवां।

भ्रम, चक्कर पर द्राक्षादि चूर्ण।

उपयोग—इस ब्राह्मी वटीके सेवनसे मस्तिष्क, वातवाहिनियां और हृदय सबल बनते हैं। इस हेतु से सन्निपात, हिस्टीरिया, विषमज्वर और हृदय की निर्बलतापर सफलतापूर्वक व्यवहृत होती है।

हिस्टीरिया रोगिणीको यदि वारवार हिस्टीरियाका दौरा होता है, सामान्य वचनों से दुःख पहुंचने पर बेहोशी आजाती हो, हृदयमें धड़कन बढ जाती हो और निरुत्साह करने वाले विचार वारवार आते रहते हों, तब मानसकेन्द्र और हृदयको सबल बनानेके लिये इस वटीका सेवन कराया जाता है।

विषमज्वर अनेक दिनों तक रह जाने पर शारीरिक निर्बलता अधिक आई हो तब इस वटीका सेवन थोड़े दिनों तक दूधके साथ कराया जाता है।

५. पीतमृगाङ्क रस।

विधि—सफेद सोमल, हरताल, मनःशिल और फिटकरी; ये चारों औषधियां १-१ तोले लेकर जौ कूट करें। फिर हांडोमें भर ऊपर केलेके खम्भेका रस और शिवलिङ्गीका रस २०-२० तोले डालें। पश्चात् ऊपर दूसरी समान मुँह वाली हांडी रख डमरूयन्त्र बनाकर दृढ़ संधिलेप करें। सूखने पर चूल्हे पर चढा कर मंदाग्निसे रसका पचन करावें। ऊपर की हांडी पर बारबार गीलावस्त्र बदलते रहें। इस तरह १२ घण्टे अग्नि देने से पुष्प ऊपर लगजाते हैं। यन्त्र स्वाङ्ग शीतल होनेपर पीला सत्व निकाल लेवें।

नोट—हमारी रायसे उपरोक्त ४ तोले चारों ओषधियों के जो कूट चूर्णको क्रमशः केलेके कंभे एवं शिवलिङ्गीके रस २०-२० तोलेकी भावना देकर टिकिया बना कर सुखाकर डमरूयन्त्रवाली नीचे की हांडीमें भर कर दोनों हांडियों की संधि बन्द करें। फिर चूल्हेपर रखकर पचन करावें।

वक्तव्य—पीत मृगांक स्वर्ण वंगका उपनाम भी है किन्तु वह सौम्य है और यह उग्र है। (र० चं०)

मात्रा—$\frac{1}{16}$ से $\frac{1}{8}$ रत्ती, १ से २ तोले घृत मिश्री के साथ दिनमें एक बार देवें। भोजन कर लेने पर तुरन्त देना विशेष अनुकूल रहता है।

उपयोग—यह सत्व वातविकार, हिक्का, वातरक्त और कुष्ठ रोगका नाश करता है। यह औषध रसायन, उत्तेजक, सेन्द्रिय विष नाशक, कीटाणुनाशक और वात हर है।

सारस्वतारिष्ट आदि अनुपान के साथ दिया जाता है। ज्वरवेग तीव्र होने पर इस रसायन के सेवन काल में कुछ अन्तर पर (१-२ घण्टे पहले या पश्चात्) प्रवाल पिष्टी, मौक्तिक पिष्टी और गिलोयसत्व को मिलाकर देना चहिये।

विषमज्वर में दोषोंका प्रसार भिन्न भिन्न दूष्यों में होता है; और दोष दूष्योंका यह संयोग भिन्न भिन्न प्रकारके निमित्त कारणोंसे होता है। जितना दोषदूष्य संयोग तीव्र हो, उतना ही रोग तीव्र होता है। इस प्रकारके तीव्रप्रकोप काल में महाज्वरांकुश, नारायण ज्वरांकुश, मृत्युञ्जयरस आदि औषध विशेष उपयोगी होती हैं। इन सब रसायनोंमें स्थूल प्रकोपको नष्ट करनेका गुण रहा है; किन्तु धातुओंमें लीन दोषोंको प्रशमन करनेकी सामर्थ्य नहीं है; यह महत्वका कार्य अमृतार्णव रसायन कर सकता है। विषमज्वर जितना जीर्ण हो उसके साथ प्लीहावृद्धि, सर्वाङ्गमें पाण्डुता, बलहानि आदि उपद्रव अधिक रूपमें हों, उतना ही अमृतार्णव का उपयोग अधिक होता है।

आमाशयके दोषसे उत्पन्न होने वाले छोटे बच्चोंके और बड़े मनुष्योंके रोगोंमें अमृतार्णव अच्छा कार्य करता है। छोटे बच्चोंके क्षीरालसक और पारिगर्भिक विकारोंमें कारणभेद और अवस्था भेदसे आमाशयदोष ही कारण होता है। क्षीरालसकमें आमाशयस्थ कफ बढकर पक्वाशय और बृहदन्त्रमें पचन व्यापार की विकृति होकर रसरक्तवाही स्रोतरुद्ध होते हैं। फिर उसी हेतुसे शिशुक्षीण हो जाता है। उस विकारमें शिशुका उदर बढजाता है; हाथ पैर कृशहोते हैं; मस्तिष्क बड़ा होजाता है; बार-बार मुँहसे पानी निकलता है; कभी कोष्ठबद्धता तथा कभी अपक्व और श्लेष्म मिश्रित पतला दस्त होता है। इसव्याधिमें अमृतार्णवका उपयोग होता है।

पारिगर्भिक विकारमें सगर्भा माताके दूधमें अधिकस्निग्धता

यह रस श्वास, मंदाग्नि, फीरंग, क्लीवता मलेरिया ज्वरके वेग इत्यादि रोगों में उचित अनुपानसे अत्यन्त लाभदायक है। उत्तेजक और बल्य है। अनेक त्वचाके रोगोंका नाश करता है।

सूचना—*भोजनमें दूध-भात या मट्ठा-भात तथा शीतल जल पथ्य रूपसे देवें। उष्णपदार्थका त्याग करावें।*

यह सत्व वात और कफ प्रकोपज रोगों पर हितावह है। पित्तप्रधान लक्षण—दाह, नेत्रमें लाली, अति प्रस्वेद आना आदि हो तो इस रसायनका प्रयोग नहीं करना चाहिये।

यह तीक्ष्ण औषधि है अतः इसे अकेला सेवन न करावें। फिटकरी की भस्म १ रत्ती के साथ सेवन कराना चाहिये।

राधाकृष्ण वैद्य

ज्वर अधिक हो, उस समय इस औषधका सेवन नहीं कराना चाहिये। एवं इस औषधके सेवन करनेके पश्चात् ज्वर आजाय, अथवा मुँह पर शोथ उपस्थित होजाय, तो तुरन्त इसे बन्द कर देना चाहिये। केवल दूधका ही आहार करें। उष्णता प्रतीत हो तो घीकी मात्रा बढानी चाहिये।

६. स्पर्शवातारिरस।

प्रथम विधि—शुद्ध पारद ८ भाग, एरंड तेल में शुद्ध किया हुआ कुचिला १० भाग, शुद्ध गन्धक १२ भाग, कुटकी और त्रिफला (हरड, बहेड़ा, आंवला) ३-३ भाग, भिलांवां, चित्रकमूल, नागरमोथा, वच, असगन्ध, रेणुका (अभाव में निगुण्डी के बीज), शुद्ध वच्छनाग, कूठ, पीपलामूल, नागकेशर और लोहभस्म, ये ११ औषधियां १-१ भाग तथा गुड़ २४ भाग लें। पहले पारद

गुरुता और विकृति होनेसे उसका योग्य पचन नहीं होता। इस हेतु से आमाशयस्थ कफ दोष की वृद्धि होती है। फिर पचन क्रिया विगड़ कर स्रोतसोंका अवरोध होकर बालक सूखता जाता है। यह विकृति माता की सगर्भावस्था के हेतुसे होती है। इसमें भी विशेषतः चीरालसकके समान लक्षण होते हैं। इनके अतिरिक्त आमाशय विकृति के हेतु से बालक सारा दिन रोता ही रहता है. किसी भी स्थिति में उसे चैन नहीं पड़ता; मस्तिष्क और गाल शुष्क से भासते हैं; क्षुधामंद, अतिथकावट, वार-वार हरेदस्त और मुख मण्डल उदास और निस्तेज भासना आदि लक्षण प्रतीत होते हैं। ऐसी परिस्थितिमें पहले वमन (वच प्रधान ओषधि) देकर आमाशयका संशोधन करना चाहिये; फिर अमृतार्णव रस देना चाहिये।

आमाशयस्थ विकारसे वालकोंको वालग्रह रोग उपस्थित होते हैं। उन विकारोंमें कुछ अंशमें विकृत दूधभी हेतु होता है। माता का दूध विकृत होजाने पर या माता के अतिरिक्त गो दुग्ध आदि सेवन होता हो, तो उसका सम्हाल न रहने से उसमें विकृति हो जाती है। फिर उसके सेवन से आमाशय में कफ दुष्टि होती है; पश्चात् सम्पूर्ण कोष्ट विगड़कर उस स्थानकी दोष विकृति होकर वालकको वालग्रह आदि (धनुर्वात) के से आक्षेप आने लगते हैं। पक्वाशय यह वातस्थान होने से उस स्थान में वातविकृति होती है। उदरमें वेदना, अफरा, ज्वर, मलावरोध या वार वार दुर्गन्ध युक्त, काला, योग्य रचना रहित, थोड़ा थोड़ा दस्त होता रहना, वार-वार आक्षेप (दौरा) आना, आक्षेप तीव्र वेगपूर्वक आना। प्रत्येक दौरेके साथ वालककी शक्तिका ह्रास होना आदि लक्षण होते हैं। उस विकार पर या उस स्थिति में अमृतार्णव का उपयोग होता है।

शिशुके कीटाणु जन्य अतिसारमें दुग्धविकृति ही कारण

गन्धक की कज्जली करें। फिर लोह भस्म, वच्छनाग, कुचिला, और शेष ओषधियों का कपड़छान चूर्ण क्रमशः मिला कर मर्दन करें। तत्पश्चात् गुड़ के साथ खरल करके १-१ रत्ती की गोलियां बना लें। (र० र० सं०)

वक्तव्य—इसे महा योगराज गुग्गुल के समान काष्ठ मूसली से कूट कर तैयार करना चाहिये।

मात्रा—१ गोली से प्रारम्भ कर प्रकृति के अनुकूल रहे, उतने तक (१२ गोली या न्यूनाधिक) बढावें। दिन में दो समय निवाये जल से या मलावरोध होने पर त्रिफला चूर्ण से दें।

उपयोग—यह रसायन २-३ मास तक शान्ति से सेवन करने पर स्पर्शवात को नष्ट करता है। शरीर के भीतर बहुधा तोड़ने के समान पीड़ा और दाह हो, बाह्यत्वचा पर स्पर्शका बोध न होता हो, तथा स्थान स्थान पर रक्त विकार के धब्बे देखने में आते हों, तब स्पर्शवात रोग कहलाता है। इस विकार पर यह रसायन प्रयोजित होता है। इस विकार में शनैः शनैः बढ़ाने पर मात्रा अधिक सहन हो जाती है।

इस रसमें लोहभस्मके स्थान पर कितनेक चिकित्सकों ने इन्द्रायणका मूल मिलाया है। इन्द्रायणका मूल रक्त शोधन में हितावह है; और लोह भस्मका पारदके साथ संयोग होनेसे कीटाणुनाश, रक्ताणु वृद्धि और रक्ताभिसरण क्रिया वृद्धि इन तीन कार्यों में अच्छी सहायता मिल जाती है। इस हेतु से हमने लोहभस्म मिलाना विशेष हितावह माना है। आवश्यकता पर इन्द्रायण मूलका उपयोग अनुपान रूपसे हो सकता है।

द्वितीय विधि—३ दिन तक कांजी में दोलायन्त्र विधिसे शुद्ध करके जिव्ही निकाला हुआ कुचिला ४ तोले, रससिंदूर ४ तोले, गन्धक ७ तोले और पलाशबीज ३२ तोले लें। सबको

होता है। ग्रीष्म ऋतुमें दूध जल्दी खराव हो जाता है। ऐसा खराव दूध ही बच्चेको पिला देनेसे अतिसार हो जाता है। इस विकारकी तीव्रावस्थामें बाल अतिसार हर चूर्ण और सर्वाङ्ग सुन्दर रस प्रयोजित होते हैं; किन्तु तीव्रावस्थाका वेग मन्द होने पर (या तीव्रावस्थामें वात प्रधान लक्षण अधिक प्रबल होने पर) अर्थात् बच्चेको धनुर्वातके आक्षेप, कम्प, अपतानक आदि विकार उपस्थित होने पर और साथ साथ ज्वर, ग्लानि और शक्तिपात होनेपर अमृतार्णवरसका उपयोग किया जाता है।

बड़े मनुष्यको अपचन और फिर बद्धकोष्ठ, ये विकार आमाशयकी कफ दुष्टिसे उत्पन्न होते हैं। इस विकारमें अग्निमान्द्य मुँहमें वार वार मीठा जल आते रहना, उदरमें जड़ता, भोजनकी इच्छा कम रहना, अरुचि और विशेषतः स्निग्ध और जड़ अन्नकी चाह न होना आदि लक्षण होने पर और उसके साथ बलका ह्रास होने पर अमृतार्णव रसका अच्छा उपयोग हुआ है।

इस प्रकारकी आमाशय विकृतिके हेतुसे आमाशयमें कफकी वृद्धि होकर वारवार तमक श्वासका दौरा होता रहता है। इस विकारमें कफ प्रधान विकृतिके हेतुसे महा प्राचीरा पेशी (Dia phragm) पर दवाव पड़नेसे तमकश्वास उत्पन्न होता है। इस स्थितिमें आरोग्यवर्धिनी और अमृतार्णव, दोनों औषधि उपयोगी हैं। पक्वाशय और बृहदन्त्रमें मलसंचय अधिक होने और वात दोषका प्राधान्य होने पर आरोग्यवर्धिनी देनी चाहिये। विकार केवल आमाशयमें ही हो और कफकी प्रधानता हो, तो अमृतार्णवका उपयोग करना चाहिये। यह औषधि दौराशमन हो जाने पर जीर्ण विकारमें उपयोगी होती है। तीव्रवेगके समय दोष दूष्यादिके अनुरोधसे श्वास कुठार, समीर पन्नग, रस कर्पूरभस्म सोमवल्लीका फाण्ट आदि वातघ्न और श्वासहर औषधियोंको प्रयोजित करनी चाहिये।

के पदार्थों का सेवन अधिक अनुकूल रहता है। खटाई, शक्कर और घी वाला पदार्थ और दूध प्रतिकूल रहते हैं। सुजाक आदि रोग से संधि जकड़ जाते हैं। उस पर भी यह वटी लाभ पहुंचाती है। मलावरोध रहता हो तो त्रिफला का फाण्ट अनुपान रूप से देना चाहिये।

सूचना—*छौंक देने में राई का उपयोग नहीं करना चाहिये। अन्यथा सारे शरीर में राई के समान फुन्सियां निकल आती हैं।*

१०. वातनाशक गूगल

प्रथम विधि बनावट—शुद्ध गूगल १० तोले, बीजाबोल ५ तोले, पीपलामूल ५ तोले और शुद्ध हिंगूल १। तोले लेवें। सब को मिला घी लगा २ कूट कर २-२ रत्ती की गोलियां बना लेवें।

मात्रा—१ से ४ गोली तक दिन में ३ बार अदरख के रस और शहद अथवा रास्नादि अर्क के साथ देवें।

उपयोग—इस गूगल के सेवन से थोड़े ही दिनों में कमर की वायु दूर हो जाती है। स्त्रियों के मासिक धर्म की शुद्धि न होती हो तो उसमें भी लाभ हो जाता है। एवं समस्त शरीर के वात रोगों का शमन हो जाता है। जीर्ण रोगों में शान्तिपूर्वक पथ्य पालन कर २-३ मास तक सेवन कराना चाहिये।

११. रसोनादि गूगल

द्वितीय विधि—शुद्ध गूगल १० तोले, लहशुन साफ किया हुआ, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, रास्ना और एरंड के बीजों का मगज, ये ६ ओषधियाँ २॥-२॥ तोले लें। इन सब को मिला कूट घी के साथ २-२ रत्ती की गोलियां बनावें।

नष्ट होजाते हैं; शरीरमें बल और रक्तकी वृद्धि होती है, अन्त्रकी परिचालन क्रियामें वृद्धि होनेसे मलशुद्धि नियमित होती है, पतले दस्त होते हों, तो मलबंध जाता है, क्षुधा प्रदीप्त होती है, मन्दाग्नि, अजीर्ण, ग्रहणी और वीर्यविकार शमन होते हैं, तथा हाथ-पैर और कमर का दर्द दूर होता है। यदि मांसपेशियां सूखती जाती हो तो वह विकृति जन्य होती है। अर्दितवात, अर्धांगवात, संधिवात, शिरोगतवात और उदरवातके शमनमें यह ओषधि अति हितावह है। देहके किसी भी भागमें वातवाहिनियोंकी विकृति होने पर यह वटी उसे सत्वर दूर करती है। संज्ञावह वातनाड़ियों की विकृति पर इसका प्रयोग नहीं होता। चेष्टा नाड़ियोंकी विकृतिमें यह लाभदायक है।

इस वटीके उपयोगसे उदरवात दूर होते हैं। जीर्ण कोष्ठबद्धता अग्निमान्द्य, उदरकृमि और अपचन आदि विकार दूर होते हैं। पचन क्रिया सबल बनती है। आलस्य, अधिक निद्रा और मस्तिष्ककी निर्बलता दूर होकर उत्साह की वृद्धि होती है।

पौष्टिक ओषधिके साथ प्रयोग करने पर बल्य और कामोत्तेजक गुण दर्शाती है। स्वप्नदोष दूर होता है। स्मरणशक्ति और वीर्य की वृद्धि होती है। पुष्टि के लिये यह गुटिका प्रातःकाल और रात्रिको मिश्री मिले दूधके साथ सेवन करनी चाहिये।

१५. नागरादि गुटिका

विधि—सोंठ, कालीमिर्च, पीपल और पीपलामूल चारों को समभाग मिला कपड़छान चूर्ण करें। फिर शहद में मर्दन कर २-२ रत्ती की गोलियां बनावें; और सोंठ के चूर्ण में डालते जाँय। यह सोंठ का चूर्ण अलग ले लेवें।

उपयोग—२ से ४ गोली दिन में दो या तीन बार सेवन कराने से हाथ पैरों की नसें खिंचना, बांयटे आना, निद्रा न

अभ्रकभस्म बढाकर इस चिन्तामणि रसको तैयार किया है। ज्वरकेसरीमें विशेषतः भांगराकी भावना दीजाती है। भांगराकी भावनासे जमालगोटेकी उग्रताका शमन होता है; किन्तु निघण्टु रत्नाकरकारने ज्वरकेसरीको भी द्रोणपुष्पीकी भावना देनेको लिखा है। एवं इस रसायन को भी द्रोणपुष्पीरसकी भावना दीगई है। द्रोण पुष्पीमें कीटाणुओंको नष्ट कर विषमज्वरको दूर करनेका अद्भुतगुण रहा है। इस दृष्टिसे द्रोणपुष्पीकी भावना विशेष हितावह मानी जायगी।

इस चिन्तामणिरसका मुख्य उपयोग अजीर्ण ज्वरपर होता है। ऐसा मूल ग्रन्थकारका लेख है। ज्वरकी आमावस्था कम होने पर, आमज्वरके लक्षण मंद होजाने पर इस रसायनका उपयोग करना चाहिये। ज्वरके साथ शूल होनेपर उसे भी यह रसायन दूर कर देता है। कफपित्तज ज्वर और एक दोषजज्वर पर इस रसायनका उत्तम उपयोग होता है।

ज्वर आने के साथ पहले एक दो दिन तकतो उपवास करना चाहिये, या फलोंके रसपर रोगीको रखना चाहिये। सन्निपातज्वर और केवल वात ज्वर तथा इतर सेन्द्रिय विषसे उत्पन्न ज्वरमें आमानुबन्ध न होने पर रोगी को प्रारम्भ में उपवास कराने की उतनी आवश्यकता नहीं है। मुँह में जल छूटना, उबाक बनी रहना, उदर में वायु भरा रहना, क्षुधानष्ट होजाना, किसी भी अन्न पर रुचि न होना, नेत्र पर भारीपन, किसी भी कार्य करने की इच्छा न होना। मुँह का बेस्वादुपन, भोजन किया हुआ अन्न उदर में जैसा का वैसा रहा है ऐसा भासना, कभी कभी उदर पीड़ा होना, जड़ता और कोष्ठबद्धता इत्यादि साम लक्षणों युक्त होने पर ज्वर आने के १-२ दिनके पश्चात् चिन्तामणि रसकी योजना करनी चाहिये।

ज्वरवेग अत्यधिक न हो; नाड़ी का वेग सामान्य हो और

किया है। यह रसायन अत्यन्त अग्नि प्रदीपक और आमवातको सम्पूर्ण उपद्रव सह नष्ट करने वाला है। स्थूल (मेद वृद्धिवाले) मनुष्योंको कृश और कृश मनुष्योंको स्थूल (मोटा और सबल) बनाता है। उचित अनुपानों के साथ योजना करनेपर यह रसायन समस्त व्याधियों को नष्ट कर देता है। यह रस साध्य और असाध्य, तीव्र और जीर्ण दारुण आमवातको बहुत जल्दी नाश करता है।

इस रसायन के सेवन करनेवालों को (जीर्ण रोग में ज्वर न होने पर) गुरु और कामोत्तेजक अन्नपान, दूध, मांसरस आदि हित कारक हैं। भोजन खूब पेटभर करना चाहिये। चरपरे, खट्टे और कडुवे रसको छोड़कर भोजन करें। (विशेषतः मधुरपदार्थ का त्याग करना चाहिये, भोजन किया हुआ सत्वर पचन होजाता है। अग्निको प्रदीप्त करनेके लिये इसके समान दूसरी औषधि नहीं है। एवं यह गुल्म, अर्श, ग्रहणी, शोथ, पाण्डु और उदर रोग आदि का निवारण करता है।

यह रसायन क्षार-लवण प्रधान होने से आमाशयरसका स्राव बहुत कराता है। एवं ताम्र पारद योग से यकृत्पित्त का स्रावभी अधिक कराता है। इस हेतु से अग्निप्रदीप्त होती है; तथा मंदाग्नि, आमवृद्धि, सेन्द्रियविष और कीटाणु आदिसे उत्पन्न समस्त रोग समूह जलकर नष्ट होजाते हैं।

आयुर्वेदके मतानुसार विरुद्ध आहार-विहार आदि से उत्पन्न आमविष जब धमनियों में चारों ओर फैलता है, तब आमवातकी उत्पत्ति होती है। डाक्टरी मतानुसार आमवात कीटाणु जन्य है। कीटाणुजन्य होने पर भी एक प्रकारके विषकी उत्पत्ति तो माननी ही पड़ती है। उस विषको आयुर्वेदने आमविष संज्ञादी है। इस आमविषको जलाने का कार्य इस रसायन द्वारा उत्तम रूप से होता है।

ज्वर में दाह आदि सब लक्षण मर्यादित हों, देह में गीलापन, संधिस्थानों में फूटने के समान वेदना, अंग में भारीपन, मस्तिष्क जकड़ने के समान भासना, वार वार प्रतिश्याय, कास, प्रस्वेद न आना, मुँहमें कड़वापन और अरुचि आदि लक्षण युक्त कफपित्त-प्रधान ज्वर में मलावरोध होनेपर चिन्तामणि रसका उपयोग करना चाहिये।

वातज्वरमें ज्वरका वेग स्थिर नहीं रहता, सहसा ज्वर बढ़ता है, और सहसा उतरता है। कम्प, कण्ठ ओष्ठ और मुखमें अति शोष निद्रानाश, वारवार छींके आना, अंग जकड़ जाना, मस्तिष्क छाती और सर्वाङ्गमें एक प्रकारकी रूक्षता आ जाना और दर्द होना, कभी कभी इन स्थानोंमें शूल चलना, मुँहमें बेस्वादुपन, शौच शुद्धि न होना, मल शुष्क काला-सा हो जाना, हाथ पैर शून्य होजाना, पैरोंमें ऐंठन आना, कर्णगुञ्ज होना, दांत मींचने, शूल, उदरमें वायु भरजाना, वारवार उवासी आना आदि लक्षणोंके साथ मलावरोध होने पर और मल का रंग काला-सा होने पर यह चिन्तामणि रस चिन्तामणिके तुल्य ही है।

विषम ज्वरके समान ज्वर अधिक दिन आते रहने और फिर बद्धकोष्ठकी आदत होनेसे शौच शुद्धि न होना, मल चिकना, गांठदार और झाग युक्त होना, दस्त होनेकी इच्छा बनी रहना, अग्निमान्द्य, जड़ता, और सामान्य किन्तु त्रासदायक कोष्ठशूल आदि लक्षण होने पर चिन्तामणि रस अच्छा कार्य करता है। ऐसी कोष्ठबद्धतासे उत्पन्न तीव्रशूल भी इस चिन्तामणि रसके सेवनसे नष्ट हो जाता है।

आमाशयमें पाचक रस योग्य प्रकारका उत्पन्न न होने या आमाशय आदि पचनेन्द्रियमें शिथिलता आजाने पर वारवार अजीर्ण उत्पन्न होता है। इस अपचनकी आदत वालोंके लिये चिन्तामणि रसका उपयोग अच्छा होता है।

आमवात के अतिरिक्त आमवृद्धि सह उत्पन्न वातरोग की नूतनावस्था में महावातविध्वंसन रस जिनको न देसके; उन रोगियों को वातगजेन्द्रसिंह रास्ना अर्क या अन्य वात शामक अनुपान के साथ दिया जाता है।

जीर्ण आमवात में आमवातेश्वर उपयोगी है। परन्तु उसमें क्षार अधिक है; तथा पंचकोल के क्वाथ की २० भावना देने से वह आमाशय पित्त को अति बढाने वाला बना है।

आमाशय और अन्त्रमें पचनक्रिया बढाना और संधिस्थानों में संचित दोष को जलाना इन क्रियाओं की जहाँ आवश्यकता हो, वहाँ आमवातेश्वर हितावह है। किन्तु देहकी शक्ति बढ़ाना, पचन क्रिया का संरक्षण करना, दोष की उत्पत्ति को रोकना, उत्पन्न दोष को अधिक पित्त न बढ़ाते हुए जलाना इष्ट हो, अथवा पित्त प्रधान प्रकृतिवालों की चिकित्सा करनी हो वहाँ वातगजेन्द्रसिंह प्रयुक्त किया जाता है। अनेक रोगियों से तीव्र क्षार प्रधान औषध सहन नहीं होता। क्षारकी तीव्रता के हेतु से रक्तस्राव होने लगता है, उनके लिये यह वातगजेन्द्रसिंह अधिक हितकारक है। रक्तमें रक्ताणु वृद्धि, मांस और वातसंस्था को बलकी वृद्धि, ये सब कार्य आमवातेश्वर की अपेक्षा वातगजेन्द्रसिंह से विशेषतर होते हैं।

यदि अन्त्र विष, कृमि, आम और मलसे पूर्ण हो, कोष्ठ बद्धता हो, तो अनुपान दूध नहीं देना चाहिये। एरण्ड तैल या निसोत का क्वाथ आदि संशोधक अनुपान देना चाहिये। वात-प्रकोप में कोष्ठ शुद्ध हो और तीव्र प्रकोप हो, तो रास्नादि अर्क या निर्गुण्डी स्वरस अनुपान रूप से देना चाहिये।

इस रसायनमें वच्छनाग मिला है। वच्छनाग मूत्र और प्रस्वेद द्वारा विषको बाहर निकालता है, तथा ज्वर का शमन

चिन्तामणि रसमें पाचक, विरेचक तथा पचनेन्द्रियको किञ्चित शक्तिदायक गुण है। एवं मध्यमकोष्ठकी श्लैष्मिक कला पर संचित हुए श्लैष्मिक रसका स्राव कराना और पाचक धर्मके हेतुसे मलको दूर कर शूलको शमन करना आदि गुण भी रहे हैं।

इसमें कज्जली जन्तुघ्न, रसायन और उत्तेजक है। ताम्रभस्म तीव्र पाचक और यकृतका पित्तस्राव कराने वाली होनेसे कोष्ठके पिच्छिल और दुर्गन्धयुक्त स्रावको नष्ट करती है। अभ्रकभस्म बल्य, रसायन और वातवाहिनियों पर शामक असर पहुँचाती है। त्रिफला किञ्चित् सारक रसायन और शूलघ्न है। त्रिकटु तीव्र-पाचक, उष्णवीर्य, उष्णरसात्मक और दीपक हैं। जमालगोटा तीव्र सारक और विस्फोटकारक तथा द्रोणपुष्पी ज्वर नाशक, शूलहर और पाचक है।

सूचना—इस चिन्तामणि रसका उपयोग सगर्भा बालक, वृद्ध, और अतिशय कृश रोगियोंके लिये नहीं करना चाहिये। यदि करना पड़े तो अति सम्हाल पूर्वक सौम्य अनुपानके साथ करना चाहिये। (औ० गु० ध० शा० के आधार से)

४. ज्वरारिरस।

विधि—शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, ताम्र भस्म, अभ्रक भस्म, शुद्ध वच्छनाग, पांचों ओषधियां १-१ तोला, धतूराके शुद्ध बीज २ तोले तथा सोंठ, काली मिर्च और पीपल, तीनों मिलाकर ५ तोले लें। पहले कज्जली करें फिर भस्म और विष मिलावें। पश्चात् शेष ओषधियोंका कपड़छान चूर्ण मिला कर अदरखके रसमें १२ घण्टे खरल कर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लेवें। (भै० र०)

मात्रा—१-१ गोली दिनमें तीनबार निवाये जल या रोगानुसार अनुपान के साथ देवें।

उपयोग—यह ज्वरारिरस सर्वज्वरों का नाश करता है।

यह 'बाम' रसतन्त्रसार प्रथम खण्डमें दिये हुए शिरःशूलान्तक बामकी अपेक्षा अधिक तेज है। इस बाम वाला हाथ आंखको लगजाने पर जलन होती है। एवं कोमल त्वचा पर लगानेसे वह लाल होजाती है। अतः सम्हालना चाहिये।

इस बाममें वेसलीनके स्थान पर ऊनकी चर्बी (लेनोलीन) मिला लेने पर औषधद्रव्यका प्रवेश त्वचाके भीतर सत्वर होता है और उस भागको अधिक मुलायम रखता है।

वातिक ज्वर, पैत्तिक ज्वर, श्लैष्मिक ज्वर, सन्निपातिक ज्वर, विषमज्वर, द्वन्द्वजज्वर और धातुगत विषमज्वर आदिको नष्ट करता है। एवं प्लीहा वृद्धि, यकृद् विकार, गुल्म, मांसवृद्धि, अग्निमान्द्य शोथ, कास, श्वास, हिक्का, तृषा, कम्प, दाह, शीतल वमन, चक्कर आना और अरुचि आदि का भी विनाश करता है।

यह ज्वरारिरस अतिव्यापक कार्यकारी है। दोषदूष्यों का संयोग होकर वह लीन होने पर जो वस्तु स्थिति निर्माण होती है, उसमें इस औषध का कार्य होता है। त्रिभुवन कीर्तिरस महाज्वराङ्कुश, मृत्युञ्जय रस आदिका कार्य उत्क्लिष्ट दोष पर उत्तम होता है। इन सबका कार्य लीन दोष पर नहीं होता। अर्थात् इनका कार्य उत्तान स्वरूप का है। ज्वर मुरारि (गद मुरारि) और इस ज्वरारिरस का कार्य उत्तान दोष की अपेक्षा लीन और तिर्यग्गत दोषों पर भली प्रकार से होता है अर्थात् ज्वर बिल्कुल नूतन हो और दोष दूष्य स्वच्छ और स्पष्टलक्षित होने पर त्रिभुवनकीर्ति आदि औषध और वही ज्वर जीर्ण होकर दोष दूष्यादि के संयोग के लक्षण विविध प्रकार के भिन्न भिन्न लक्षित होने पर ज्वरमुरारि रस और ज्वरारिरस का उपयोग होता है। इस तरह नागकल्प (वच्छनाग प्रधान औषध) का कार्य भिन्न-भिन्न प्रकारका होता है।

स्त्रीविषयक शृंगार चेष्टा का निदिध्यास और उसकी परिपूर्ति न होने या उस सम्बन्ध में अत्यन्त निराशा उत्पन्न होने पर मनोव्याघात होकर ज्वरोत्पत्ति होजाती है। इस ज्वर में किन्हीं को दाह, ज्वरका तीव्रवेग और तृषा आदि लक्षण होते हैं। कइयों को प्रलाप, कम्प, कण्ठ में शुष्कता, निद्रानाश, सब अंगों में पीड़ा और शरीर अकड़जाना आदि लक्षण प्रकाशित होते हैं। इस प्रकार के मानसिकव्याघात जन्य ज्वर में वातदोष का प्रकोप होता है। इसपर त्रिभुवन कीर्ति के समान उत्तान विकार नाशक औषधों का उपयोग नहीं होता। लीन दोषपाचक ज्वरारिरस ही प्रयोजित

२० वातरक्त प्रकरण

१. बृहद् वातरक्तान्तक लोह

बनावट—लोह भस्म (सिंगरफ मारित) २ तोले, शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, मुक्तापिष्टी, अभ्रक भस्म, शुद्ध खपरिया (अभावमें जसद भस्म) और सुवर्णकी भस्म १-१ तोला, तथा रसमाणिक्य (या शुद्ध हरताल) ६ माशे लें। पहले पारद गन्धककी कज्जली करें। फिर हरतालका चूर्ण मिलावें। पश्चात् अन्य औषधियां मिला, कुपीलु (लघुपीलु-खारीपीलु) मण्डूकपर्णी (यू० पी०में जिसे ब्राह्मी कहते हैं) और द्रोण पुष्पीके रसोंके मिश्रणकी ३ भावना देकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनावें।
(भै० र०)

मात्रा—१से २ रत्ती दिनमें दो बार। हरड़के फांट या हिमके साथ देवें। या दूर्वाद्या सिद्ध घृतके साथ देवें। आवश्यकता हो तो आध घण्टे पर शिलाजीतका सेवन कराते रहें।

उपयोग—इस लोहके सेवनसे निश्चय पूर्वक उपद्रव सह दारुण वातरक्त रोग नष्ट होता है। यह लोह गम्भीर और उत्तान वातरक्त, उपदंश, उग्र प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र तथा कपाल, उदुम्बर, ऋष्यजिह्व, सिध्म, मण्डल-पुण्डरीक आदि कुष्ठ रोगोंका नाश कर रक्तको विशुद्ध बनाता है। यह रसायन वर्णको सुधारता है; तथा बल, वर्ण और अग्निको बढ़ाता है।

यह रसायन नये और पुराने वातरक्तके लिये अति लाभदायक है। इस रोगमें संधि-स्थान कठिन और सूजनयुक्त होजाते हैं। प्रातःकाल लक्षण कम और रात्रि होनेपर वेदना और लक्षण बढ़ जाते हैं। क्षुधा वृद्धि, आफरा, अपचन, उदर शूल, किसीको वमन होना, तृषा वृद्धि, कोष्ठ बद्धता, फिर अतिसार, मूत्रका

होता है। दाह आदि लक्षण प्रबलहोने पर चन्द्रकला रस हितकारक माना जाता है, तथा कम्प, प्रलाप आदि पर ज्वरारिरस ही उपयोगी होता है।

शोक जन्य आये हुए ज्वरमें गतवस्तुका निदिध्यास बना रहता है; इस हेतुसे वात प्रकुपित होती है। इसके अतिरिक्त खानपान आदिमें अनियमितता, देहकी योग्य सम्हाल न होना, रूक्ष और अल्प अन्नसेवन आदि हेतु उसमें समाविष्ट होते हैं। शोकका सबल आघात पहले मनपर होता है। जिससे सब शरीर विशेषतः वात वाहिनियां और वातवह केन्द्र शिथिल होते हैं। फिर दोष प्रकोप होकर ज्वर उपस्थित होजाता है। इस प्रकारमें रोगी गतवस्तुके नाम लेकर प्रलाप करता रहता है। मनमें अति अव्यवस्थित होजाता है, सब पदार्थोंसे उदासीनता आजाती है, सब बातोंका त्याग, यह नहीं और वह नहीं, इस तरह रोगी बिना विचार किये बोलता रहता है। इनके अतिरिक्त तृषा लगने पर जल न मांगना, क्षुधा लगने पर भोजन न मांगना अथवा क्षुधा तृषा का भान कम होजाना, रोगी संज्ञा रहित, दीन, दुर्बल, व्याकुल, अतिहतास और शेष आयु किसी तरह पूरी करना ऐसी इच्छासे पड़े रहना आदि लक्षण प्रतीत होते हैं। इस तरहके जीवनसे हतास रोगी ज्वरारिरसके सेवनसे धीरे-धीरे सुधरने लग जाते हैं।

बालक और नाजुक प्रकृतिकी स्त्रियोंके संध्याकाल या अपसमयमें अपरिचित अथवा भयप्रद स्थानमें जानेका प्रसंग आने पर पूर्व ग्रहदुष्ट मनके भीतर अनेक प्रकारकी भीति उत्पन्न होकर विलक्षण मानसिक आघात पहुँच जाताहै! इसका परिणाम मन, वातवाहिनियां और वातवहकेन्द्र पर होता है। फिर वातप्रकुपित होकर ज्वरोत्पत्ति होजाती है। इस ज्वरमें रोगीको कम्प बना रहता है, बार-बार मनमें भय उपस्थित होजाता है, मनही मनमें

६. अमृतादि घृत

विधि—गिलोय, मुलहठी, मुनक्का, हरड़, बहेड़ा, आँवला, सोंठ खरैंटी, वासाके पान, अमलतासका गूदा, पुनर्नवा, देवदारु, गोखरू, कुटकी, हरड़, पीपल, गंभारीके फल, रास्ना, तालमखाना, एरण्डमूल, देवदारु, खरैंटी, नीलोफर, इन २३ ओषधियोंको २-२ तोले ले कर कल्क करें। फिर कल्क, १२८ तोले गोघृत, १२८ तोले आंवलोंका रस, ३८४ तोले दूध मिलाकर मंदाग्नि से घृत सिद्ध करें। (नि० र०)

मात्रा—१-१ तोला भोजनके साथ दिनमें दो वार।

उपयोग—इस घृतके सेवनसे त्रिविधदोष प्रकोपसे उत्पन्न और रक्तमें वात मिश्रित या प्रकुपित वातरक्त, उत्तान वातरक्त, गम्भीरवातरक्त, त्रिक, जंघा, उरु और जानुमें पीड़ा करनेवाला वातरक्त, क्रोष्टुशीर्ष, महाशूल, दारुण आमवात, महारोगसे पीड़ितकी अतिशय दुस्तर वेदना, मूत्रकृच्छ्र, उदावर्त, प्रमेह और विषम ज्वर आदि रोग जो वात, पित्त और कफ प्रकोपसे उत्पन्न हुए हों, सब शमन होजाते हैं। इसका उपयोग सब समयमें प्रातः काल, रात्रिको भोजनके प्रारम्भ, बीच या अन्तमें होता है। इसका उपयोग सर्वदा करते रहनेसे वर्ण आयु और वलकी वृद्धि होती है।

यह घृत सब प्रकारके वातरक्त पर हितकारक है। नये रोग और पुराने रोगमें भी गुणदायक है। दही, मूली, शराब, क्षार, लवण, अम्लरस, अग्निसेवन, अधिक मिर्च, सूर्यके तापका अधिक सेवन, दिनमें निद्रा आदिका त्यागकरें तो लाभसत्वर मिलता है। मधुर, वातशामक और कड़वे द्रव्य गुणदायक है। इस तरह पथ्य पालन सह इस घृतका सेवन अन्य मुख्य ओषधिके साथ सहायकरूपसे कराया जाता है। कदाचित् रोगीने अनेक तेज ओषधि लेकर रोगको बढ़ा लिया हो, ऐसी अवस्थामें केवल इस घृतका ही सेवन कराया जाता है। इसके योगसे रोगविष

बड़बड़ाट करता रहता है, बीच-बीचमें जोर से चिल्ला उठता है; व्याकुलता, तन्द्रा, विचारमें अस्थिरता अच्छी निन्द्रा न आना और किञ्चित् नेत्र लगने पर थोड़े ही समय में जागकर चूम मारना आदि लक्षण होने पर ज्वरारि रस देना चाहिये।

ऐसे ज्वरमें पहले वातदोषकी विकृतिका प्रारम्भ होता है, तो भी रोगियोंकी मूल प्रकृतिके अनुसार पित्तदोष या कफ दोष के लक्षण होते हैं। दाह वृद्धि, तृषा, प्रलाप, मोह, चक्कर आना, वमन, उदरमें जलन, मूत्रमें दाह तथा पीला, पतला और जलन सह दस्त होना आदि लक्षण होते हैं। इस स्थितिमें ज्वरारिरस खस, पित्तपापड़ा, रक्तचंदन, धनिया, कमल और मुलहठीके क्वाथके साथ देना चाहिये।

देहमें जड़ता, ज्वरका वेग मर्यादित, आलस्य, मुँहमें मीठापन कास, श्वास, शीत बनी रहना, कम्प, वारंवार हिक्का आना अन्नपर तिरस्कार, कुछ खानेकी इच्छा न होना, मुँहमें बेस्वादुपन, अरुचि, भोजन सामने आने पर मुँहमें जल छूटना और उवाक आने लगना आदि लक्षण हों; तथा ज्वर अनेक दिनोंसे बना रहा हो, तो ज्वरारिरस का उपयोग अदरखके रस और शहदके साथ करना चाहिये।

सान्निपातिक ज्वरमें मुख्य कारण मनोव्याघात हो और मिश्रित लक्षण हों, तो इस रसायन का प्रयोग किया जाता है। इस प्रकारसे सान्निपातिक ज्वरमें और इतर सान्निपातिक ज्वरमें कितनेक अंशमें साधर्म्य और कितनेक अंश में वैधर्म्य होता है। सन्निपातके सब लक्षण इन दोनों में समान हों, उनको तो साधर्म्य कहेंगे, किन्तु इतर सन्निपातमें एक एक अवयव समूह में पहले दोष सन्निपातका परिणाम होकर फिर उनका परिणाम वात वाहिनियां वातवहकेन्द्र, और मन पर क्रमशः होता है; तथा इस प्रकारके सन्निपातमें प्रथम परिणाम मन पर होता है। फिर

७—हृद्यचूर्ण ।

प्रथमविधि—डिजिटेलिसके पान, प्रवालपिष्टी और अकीक भस्म, तीनों समभाग मिलाकर खरल कर लें। इसमेंसे १-१ रत्ती शहदके साथ २-२ घण्टे पर दिनमें २-३ बार देनेसे हृदयकी धड़कन शान्त होजाती है।

द्वितीय विधि—डिजिटेलिस पत्र चूर्ण १ भाग और शृंग-भस्म २ भाग मिलाकर ३ घण्टे खरल कर लेवें। इसमेंसे १-१ रत्ती शहदके साथ देनेसे हृदयकी दुर्बलता धड़क तथा नाड़ीका वेगाधिक्य दूर होते हैं। हृद्रोगोंमें उपद्रवरूप सर्वांग शोथ हो, तब आरोग्यवर्धनीके साथ मिलाकर इसका प्रयोग करनेसे विशेष लाभ होता है।

जीर्णकासमें कफ चिकना और अधिक गिरता हो साथमें हृदयकी दुर्बलता होतो इसमें सूखी जंगली प्याज (वन-पलाण्डु) काचूर्ण १-१ रत्ती मिलाकर प्रयोग करें। यदि रोगीको हृल्लास और वमन्ति भी हों, तो इसका प्रयोग कुछ दिनके लिये बन्द करें। श्री० पं यादवजी त्रिकमजी आचार्य

सूचना—डिजिटेलिस एक एलोपेथिककोषमें एक क्षुपजातिका पौधा लिखा है। इसके चूर्ण, एसट्रैक्ट और टिञ्चर आदिके रूप में व्यवहृत होता है। यह मूत्रल, हृद्य, विशेषकर हृदयरोगजन्य शोथ जलोदर आदि रोगोंकी अवस्थामें चमत्कारी गुण दिखता है। किन्तु जिसरोगीकी हृदयगति पहले ही न्यून हो उनको देना निषेध लिखा है। यदि देना ही आवश्यक हो तो कुचिलेके साथ देना चाहिये। दूसरी बात यह है कि इसका विशेष गुण देखने पर भी दीर्घकाल तक इसका सतत सेवन कदापि नहीं करना चाहिये। आवश्यकतानुसार २ या ४ सप्ताह प्रारंभ रक्खा और १ सप्ताहके लिये बन्द कर देना चाहिये। इस विधिसे अधिक

मस्तिष्क, वातवह केन्द्र और वातवाहिनियां विकृत होकर अवयव समूह दुष्ट होते हैं। यथाहि आन्त्रिक ज्वरमें अन्त्रविकृत होकर उसमें दोष प्रकोप होता है, और वहाँसे उसका प्रसर होकर आगे आगे उसका परिणाम समस्त शरीर पर होता है, तथा उन उन अवयव समूहोंकी विकृति सूचक लक्षण दृग्गोचर होते हैं। श्लैष्मिक सन्निपातमें श्लेष्मका स्थानजो उर है, वह पहले दुष्ट होता है; फिर उस स्थानका दोष संचय सब अवयवोंको दुष्ट करता है। इस हेतु से आन्त्रिक और श्लेष्मक सन्निपातकी चिकित्सा तथा मनोव्याघात जन्य सन्निपात की चिकित्सामें सहज प्रभेद हो जाता है। मनोव्याघातज प्रकारमें इस ज्वरारिरसका उपयोग होता है।

विषमज्वर और धातुगत ज्वरमें ज्वर मुरारि (गदमुरारि) उपयोगी होता है। उस रसका गुणधर्म रसतन्त्रसार व सिद्ध प्रयोग संग्रह प्रथम खण्ड में दिया है। वह जीर्ण अनियमित विषमज्वर और जीर्णसन्निपातमें उपयोगी होता है। उसमें जमालगोटा आता है; जहाँ जमालगोटेका कार्य इष्ट हो वहाँ ज्वर मुरारि दिया जाता है। जमालगोटाकी आवश्यकता न हो और वात प्रकोप की प्रधानता हो, वहां पर इस ज्वरारिसका उपयोग किया जाता है।

श्वासरोगमें श्वासके आवेगको शमन करनेके लिये इस औषध का उपयोग किया जाता है। तीव्र दौरान हो, कण्ठ और उरस्थान जकड़े हुए भासते हों, मनमें अतिशय व्याकुलता, जीभका अति भीतर खिंचना, किसी तरह रोगीको चैन न होना सोतेहुए बारबार करवट बदलना, हाथ पैर पटकना आदि लक्षण प्रतीत होते हों, तो श्वासकुठारकी अपेक्षा यह ज्वरारिरस विशेष लाभ पहुँचाता है। इस रसायन का उपयोग विशेषतः मनोव्याघातज वात दुष्टि प्रधान ज्वरमें होता है। इस

समय तक भी प्रयोग कर सकते हैं। ऐसा इस औषधकी गुणा-गुणोंं लिखा है।

१ सूर्यावर्त्तक्षार।

बनावट—२॥ सेर जल रहे उतनी बड़ी १ मिट्टीकी हांडी लेकर उसमें हाथी दांतका चूर्ण आधा दबाकर भरें। फिर आध सेर कलमी सोरा रक्खें। पश्चात् ऊपर हाथी दांतका चूर्ण भरकर ढक्कन लगा खुले मैदानमें जलती हुई अंगीठी पर रक्खें। शनैः शनैः हाथी दाँत जलने लगेगा, जिससे उसमें से दुर्गन्धयुक्त धुंआ निकलने लगेगा। साथ साथ सोरा फूलने लगता है; जिससे बड़ी २ आवाज होती रहती है। उस समय ऐसा भास होता है कि हांडी फूट गई; किन्तु हाँडी नहीं फूटती; और सोरा भी नहीं उड़ता। इस तरह हाथी दांत पूर्णांशमें जलजाने पर धुँआ निकलना बन्द होजाता है। फिर हांडीको उतार लेवें; ऊपरसे हाथी दांतकी भस्मको अलग निकाल लेवें; और तलेमें बैठे हुए सोरेको निकाल कर पीस लेवें। (आ० नि० मा०)

वक्तव्य—हाथी दांतकी भस्मको पृथक रखकर प्रदर (सोम) अस्थि स्रावमें काम लेवें। वह पूयमेहमें लाभकारी है; तथा लोमनाशनमें भी अपूर्वकाम करती है। राधाकृष्ण वैद्य

मात्रा—२से४ रत्ती जलके साथ देवें।

उपयोग—यह क्षार मूत्र दाहको दूर करता है। एवं उरःक्षत आदिमें दाह सहकासको दूर करनेमें उपयोगी है।

इस क्षारको ताजा गोभीके पत्ते स्वरस २ तोलेमें मिलाकर पिलानेसे मूत्र कृच्छ्रता दूर होजाती है। उतनेसे सत्वर लाभ न हो. तो एक बैंतके ४-५ इञ्चके टुकड़ेको एक सिरेसे जला दूसरे सिरे से सिगरेटके समान धूम्रपान कराने पर तुरन्त पेशाब आजाता है।

प्रकारके दोषदूष्यसंयोगसे उत्पन्न विषमज्वर, धातुगत ज्वर और सान्निपातिक ज्वर तथा अन्य अर्थात् पित्त और कफप्रधान लक्षणवाले ज्वरोंमें भी यह ज्वरारि रस उपयोगी है।

इस रसायनमें धतूरा, वच्छनाग और अभ्रक भस्म, इन द्रव्योंका संयोगजन्य गुण वेदनाशामक और मनः पीड़ाहारक है। इसमें कज्जली जन्तुघ्न, रसायन और योगवाही है। अभ्रक-भस्म, मनः पीड़ाहर, धातुपरिपोषक क्रम को व्यवस्थित करनेवाली, रसायन और शामक है। ताम्रभस्म पाचक, यकृत्पित्तस्रावक, कोष्ठगत दोषनाशक, यकृत् प्लीहावृद्धिनाशक और चरणकारक है। वच्छनाग, वेदनाशामक, शोथहर, स्वेदल, मूत्रल, ज्वरनाशक और नाड़ीके वेग को मन्द करनेवाला है। धतूरा, मनः पीड़ाहारक, वेदनाशामक, उत्तेजक तथा पीड़ा सहन करनेकी पात्रता उत्पन्न करनेवाला है। त्रिकटु पाचक, दीपक और योगवाही है। अदरखका रस पाचक और ज्वरघ्न है।

(औ० गु० ध० शा० के आधार से)

५. चन्द्रशेखररस।

विधि—शुद्ध पारद १ तोला, शुद्ध गन्धक २ तोले, कालीमिर्च १ तोला, सोहागाका फूला १ तोला तथा मिश्री ५ तोले लें। पहले कज्जली करें। फिर शेष ओषधियोंका कपड़छान चूर्ण मिला अच्छी तरह मर्दन कर ३ दिन तक मत्स्यपित्तके साथ खरल करें। फिर आध-आध रत्तीकी गोलियां बनाकर सुखा लेवें। (भै० र०)

यदि इस रसायनको मत्स्यपित्तके साथ खरलकर लेनेके पश्चात् नीबू और अदरखके रसकी ३-३ भावना देवें, तो रस विशेष गुणदायक बनता है।

मात्रा—१ से २ गोली तक अदरखके रसके साथ दिनमें २ बार देवें; फिर ऊपर शीतल जल पिलावें।

घण्टे पर दो या तीन बार देवें। इस क्वाथके साथ हजरूलयहूद की भस्म मूलीके साथकी हुई देनेसे विशेष लाभ होता है।

उपयोग—यह कषाय अश्मरी, शर्करा (कंकड़ी), सिकता (रेती) तथा उससे होनेवाले वृक्कशूल और उदरशूलमें व्यवहृत होता है।

वक्तव्य—वृक्कशूल एवं अन्यशूल और अश्मरीके रोगीको यवमण्ड (२ तोलेजौ को ६४ तोले जलमें मिला चतुर्थांश जल शेष रहने पर छाना हुआ जल), कच्चे नारियलका जल, ईखका तुरन्त निकाला हुआ रस, तथा लौकी, पेठा, ककड़ो, मकोयकी पत्ती पुनर्नवाके पान, कासनीके पाने आदि मूत्रल द्रव्योंका शाक एवं गरम जलमें कमर तक का भाग डूबा रहे इस तरह बैठना (अवगाह स्वेद) आदि हितकारक हैं।

द्विदलधान्य, मांस, कंदशाक और स्नेहपक्व अन्न (घी लमें पकाये हुए भोजन) अपथ्य हैं।

६. अश्मरी नाशक योग।

(१) नारियलके फूल (सूखे) ३ माशेको चटनोकी तरह जलके साथ मिलाकर पीसें। फिर यह चटनी और १ माशा जवाखार या केलेके क्षारको २० तोले शीतल जलमें मिला छानकर पिला देने से वृक्क और बस्तिमें रहे हुए अश्मरी कण जल्दी निकलकर तीव्र वेदना और वमन आदि उपद्रव का शमन होजाता है। यह अतिसफल और निर्भय प्रयोग है। (भै० र०)

सूचना – *नारियेलके वृक्षके मस्तकमें चारों ओर लम्बी लम्बी जेल निकलती हैं। उनमें दो प्रकारके फूल लगते हैं। स्त्री पुष्प और पुं पुष्प। स्त्री पुष्प आकारमें बड़े होते हैं; और वही फल रूप बन जाते हैं। पुंपुष्प अनेक लगते हैं;*

उपयोग—यह रसायन श्लेष्मपित्त प्रधान अति उग्र ज्वरको मात्र ३ दिनमें ही दूर कर देता है। इस रसायनके सेवन करने वालोंको ताप उतर जानेपर मट्ठाके साथ भात और बैंगनका शाक खानेको देवें;

चन्द्रशेखर श्लेष्मपित्तज ज्वरमें लाभदायक है। इस प्रकारके ज्वरमें मुँहके भीतर चिकनापन और कड़वापन, तन्द्रा, विचारोंमें अस्थिरता, कास, अरुचि तथा कभी दाह और कभी शीत लगना आदि लक्षण होते हैं। इसमें कफकी जड़ता, चिकनापन और शीतलता धर्म तथा पित्तका द्रवत्वधर्म इन सबकी वृद्धि होती है। इसी हेतु से आमाशय और उसके समीपमें रही हुई स्रोतसें रुद्ध होजाती हैं। परिणाममें ज्वर उपस्थित होता है। ऐसे समय पर स्रोतसोंका रोध कम करने वाली, पाचक और उत्तेजक ओषधि देनी चाहिये। चन्द्रशेखररस ये सब कार्य करता है। चन्द्रशेखर मत्स्यपित्त, कालीमिर्च, सोहागा और अदरखके योगसे श्लैष्मिक विकृतिको दूर करता है। फिर आमाशयस्थ पाचक पित्त अच्छी तरह अपना कार्य करने लगता है।

इस औषध सेवनसे प्रस्वेद अधिक आकर स्रोत और रक्तमें रहा हुआ विप निकल जाता है; जिससे शरीर हलका बन जाता है; नाड़ीका वेग मर्यादित होता है; तथा पेशाबकी शुद्धि होती है इस तरह श्लेष्म और पित्त दोष दुष्टिका नाश होकर साम्यता स्थापित होती है।

इस रसायनमें कज्जली जन्तुघ्न, रसायन और विकासी है। कालीमिर्च तीव्र, पाचक और उत्तेजक है। सोहागा, आक्षेपहर, कीटाणुनाशक, दुर्गन्धहर, पाचक तथा कफको पतला करनेवाला है। मिश्री हृद्य, प्रसादन और मत्स्यपित्तके स्वादको दबाने वाली है। मत्स्यपित्त पित्तोंमें तीक्ष्णत्व, उष्णत्व और अम्लत्व धर्म बढ़ानेवाला, विकासी, व्यवायी और स्वेदल है। अदरख श्लेष्मघ्न

चतुर्थांश क्वाथ करें। फिर क्वाथको छान २ सेर गौ या बकरी का घी तथा उपर (रे. मिट्टी), सैंधानमक, हींग, लाल कासीस, हरी कासीस और तुत्थक (खपरिया) इन ७ वस्तुओंका ४-४ तोलेका कल्क मिला कर घृत सिद्ध करें। (अ० हृ०)

मात्रा—६ माशेसे २ तोले तक भोजनके प्रारम्भमें (दो तीन ग्रासके साथ) दिनमें दो बार।

उपयोग—इस घृतके सेवनसे वात प्रकोपज अश्मरी, वस्ति स्थानमें शूल, पेशाबमें रेती जाना आदि विकार १-२ मासमें दूर होते हैं। रोग अति पुराना होने पर अश्मरी सुपारीसे बड़ा होने पर औषधि का सत्वर उपयोग नहीं हो सकता।

सूचना—इस घृतके सेवन कालमें हजरूलयहूदादि चूर्ण या हजरूल यहूदकी पिष्टी, शिलाजीत और कलमी सोरा ६-६ रत्ती प्रातः सायं देते रहना चाहिये। तथा भोजनमें द्विदल धान्य बिल्कुल नहीं देना चाहिये।

भोजनमें कुसुम, पुनर्नवा, चौलाई, ककड़ी, मूली, इनमेंसे किसीका शाक दिया जाय तो विशेष हितकारक है। तीव्र प्रकोपमें केवल दूधपर रखना चाहिये।

ज्वरहर, पाचक, अग्निदीपक और स्वेदल है। नींबू पाचक, दीपन, सूक्ष्म स्रोतोगामी, रसोंकी सम्यक् उत्पत्ति करनेवाला और रुचिकर है। (औ० गु० ध० शा०)

६ वृहत् कस्तूरी भैरवरस

विधि—कस्तूरी, कपूर, ताम्रभस्म, धायके फूल, कौंचके बीज, रौप्यभस्म, सुवर्ण भस्म, मोतीपिष्टी, प्रवालपिष्टी, लोहभस्म पाठा, वायविडंग, नागर मोथा, सोंठ, खस, शुद्ध हरताल, अभ्रकभस्म और आँवले, इन १८ ओषधियोंको समभाग लें। पहले कस्तूरी और कपूर को आक के पक्के पानों के स्वरस में ३ घण्टे खरल करलें। फिर शेष ओषधियोंका कपड़ छान चूर्ण मिला ३ दिन खरल करके १-१ रत्तीकी गोलियां बना लेवें।

सूचना—रोज रात्रिको खरल पर ढक्कन दृढ रखदें। जिससे कस्तूरी और कपूर अधिक उड़ न जाँय।

मात्रा—१-२ गोली अदरखके रस, नागर वेलके पानके रस, अर्कादि क्वाथ, ग्रन्थादिक्वाथ, तगरादि कषाय या देवदार्वादि क्वाथके साथ देवें।

उपयोग—वृहत् कस्तूरी भैरव सन्निपात ज्वरमें अधिक प्रस्वेद आना, शीतांग, प्रलाप, तन्द्रा, नाड़ीकी अतिक्षीणता, शक्तिपात आदि लक्षण होनेपर दिया जाता है सूतिका ज्वरमें देवदार्वादि क्वाथके साथ देनेसे अच्छा लाभ पहुँचाता है। प्रलापक सन्निपातमें अनुपान रूपसे तगरादि कषाय विशेष हितावह है। तगरादि कषायका पाठ चिकित्सातत्त्व प्रदीप प्रथमखण्डमें दियागया है।

स्वल्पकस्तूरी भैरवरसमें वच्छनाग मिला है। अतः वह हृदय क्षीणतामें अनेक बार या पुनः पुनः नहीं दिया जाता। ऐसे स्थान पर यह वृहत् कस्तूरी भैरव निर्भयता पूर्वक दिया जाता है।

उपयोग—इस रसायनकी १ से २ गोली तक शहद तथा त्रिफला, देवदारु, दारुहल्दी और नागरमोथा इन ६ औषधियों के क्वाथके साथ अथवा मक्खन, मिश्रीके साथ दिनमें दो वार देनेसे सब प्रकारके पुराने प्रमेह रोग नष्ट होजाते हैं। रोगानुसार अनुपानके साथ इस रसायनका सेवन करानेसे सब रोगोंको यह दूर करता है; शरीर पुष्ट होता है; बल की वृद्धि होती है; कान्ति दिव्य होती है; और अनेक स्त्रियों से रमण करने का सामर्थ्य आजाता है।

३. विलासिनी वल्लभरस।

विधि—शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक १-१ तोला तथा धतूराके शुद्धबीज २ तोले लें। सबको मिला खरल कर पाताल यन्त्र से निकाले हुए धतूरे के फलों के रस (तैल) के साथ ६ घण्टे खरल कर १-१ रत्तीकी गोलियां बनावें। (र० च०)

वक्तव्य—*रसयोग सागर, रस चण्डांशु और भैषज्य रत्नावली ग्रन्थम इस रसायनका नाम कामिनी मदविधूननो रस रखा है। इस तरह इस रसायनको कामिनीदर्पघ्न और कामदेवरस नामभी दिये हैं।*

मात्रा—१ से २ गोली दिनमें २ बार दूध या शक्करके शर्बत के साथ देवें।

उपयोग—इस रसायनके सेवनसे जीर्ण प्रमेह रोग, पेशाब में वीर्य जाना, स्वप्नदोष और शीघ्रपतन आदि दूर होते हैं। वीर्य और स्तम्भन शक्ति की वृद्धि होती।

सूचना—*अति शुष्क देहवालोंको एवं अति मन्द अग्नि-*

यह रसायन आम, विष आदिमलका पचन कराता है; हृदयको सबल बनाता है; तथा मस्तिष्क को शान्त करता है। इस रसायनसे कण्ठ और छातीमें कफभरा हो, तो वह बाहर निकल कर श्वासोच्छ्वासका मार्ग मुक्त होता है, यह कार्य कस्तूरी, कपूर और ताम्रभस्म द्वारा और अर्क पत्र स्वरसकी भावनाके हेतुसे सरलतापूर्वक होता है। सुवर्ण, मुक्ता, प्रवाल, बढ़े हुए पित्तकोपका शमन करते हैं और मस्तिष्क को शान्त बनाते हैं। हरताल ज्वरविष और कीटाणुओंको दूर करती है रौप्य और अभ्रक वात वाहिनियों को बल देती है। लोह रक्तप्रवाह पर शामक असर पहुंचाता है, शेष द्रव्य सहायक हैं।

७. पर्पटीरस।

विधि—शुद्धपारद और शुद्धगन्धक १-१ तोला लें। दोनों की कज्जलीकर अतीस के क्वाथ में खरल कर गोली बनावें फिर सूर्य के ताप में सुखा मिट्टी की नयी हांडी में रख ऊपर ताम्बे की कटोरी ढक संधियों को उत्तम प्रकार से बन्द करें। सन्धिस्थान सूखने पर हांडी को चूल्हे पर चढ़ा कर अग्नि देवें। ताम्रपात्र पर शालिधान रक्खें। लगभग १ घण्टे में धान फूटने लगने पर अग्नि देना बन्द करें। फिर यन्त्र स्वांग शीतल होने पर रस को निकाल कर पीस लेवें। इस रसायन को पर्पटीरस और नव ज्वरारि रस भी कहते हैं। कितनेक ग्रन्थकारों ने त्रैलोक्य सुन्दर और ज्वरांकुश संज्ञा भी दी है। (र० र० स०)

मात्रा—पहले अदरख के रस में जीरा और सैंधानमक मिला कर जिह्वा को पोत लेवें। फिर अदरख के रस में २ से ३ रत्ती पर्पटीरस मिलाकर सेवन करावें; और गरम कपड़ा अच्छी तरह ओढा देवें। जिससे प्रस्वेद आकर ज्वर उतर जाता है।

उपयोग—यह रसायन नूतन ज्वरों, पर इनमें भी वातज्वर

के प्रमेह दूर होते हैं। रात्रिको सोनेके समय हरड़का क्वाथ शहद मिलाकर पिलाते रहना चाहिये; और पथ्यका पालन करना चाहिये। अति जीर्ण प्रमेह रोगको भी यह रसायन जड़ मूल से नष्ट कर देता है। सब प्रकारके प्रमेहों पर लाभ पहुंचता है।

अश्मरीमें इस रसायनके सेवनके साथ बिजौरेका जड़ गरम करके शीतल किये हुए जलमें घिसकर पिलाते रहें। एवं यह रसायन मूत्र कृच्छ्र तथा गर्भिणीके शूल, विष्टम्भ, ज्वर और अतिसारमें वायविडङ्ग और पाषाणभेदके चूर्णके साथ देना चाहिये।

सूचना—*यदि इस रसके उपरोक्त विधिसे गिलोय, लोध्र की भी भावना दीजाय, तो प्रमेहके लिये वहुत गुणकारी हो सकता है।*

६. मेहमुद्गररस।

बनावट—रसौंत, बिडनमक, देवदारु, बेलगिरी, गोखरू, अनारकी छाल, चिरायता, पीपलामूल, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, हरड़, वहेड़ा, आंवला और निसोत, ये १५ औषधियां १-१ तोला लोहभस्म १५ तोले और शुद्ध गूगल ४ तोले लें। गूगलको छोड़ शेष काष्ठादि औषधियोंका कपड़ छान चूर्ण करें। गूगलको घी मिलाकर कूटें। फिर उसमें कूट कूटकर भस्म और चूर्ण सब मिला २-२ रत्तीकी गोलियां बना लेवें। यदि आंवला और गोखरू को समभाग मिला क्वाथ कर ३ भावना देकर गोलियां बांधे तो विशेष लाभ पहुंचता है। (र० च०)

मात्रा—१ से ४ गोली तक दिनमें दोबार बकरीके दूध से या त्रिफला, दारुहल्दी, देवदारु और नागर मोथाके क्वाथसे देवें।

उपयोग—यह रसायन २० प्रकारके प्रमेह, हलीमक, अश्मरी

में विशेष हितकारक है। ३ दिन तक इस रसका सेवन कराते रहने से फिर से ज्वर आने की शंका भी नहीं रहती।

वर्षा के जल में भीगने, शीत लग जाने, अपथ्य भोजन का सेवन या असमयपर भोजन करने से ज्वर आगया हो; और सामान्य कब्ज हो, अधिक कब्ज न हो, तब इस रसायन के सेवन से तत्काल लाभ पहुंच जाता है। अपचन के हेतु से बारबार थोड़ा थोड़ा दस्त होता हो, वह भी दूर हो जाता है।

यदि इस रसायन सेवनके साथ अतीसका चूर्ण ६ रत्तीको ५ तोले गरम जल में डाल ढक दें। फिर जल निवाया रहने पर छान कर पिला देवें (कपड़े पर अतीस का जो चूर्ण रहा है उसे दबा कर न निचोड़ें) तो प्रस्वेद बहुत जल्दी आकर ज्वर उतर जाता है। केवल अतीस से भी प्रस्वेद बहुत जल्दी आकर ज्वर उतर जाता है। किन्तु सेन्द्रिय विष और कीटाणुओं का नाश करना, हृदयबल की वृद्धि करना, आमाशय और अन्त्रको सबल बनाना, ये सब कार्य पर्पटीरस और अतीस के संयोगसे अधिक होता है। अतीस सह पर्पटीरस का सेवन कराने पर विषमज्वर भी दूर हो जाता है।

सूचना—ज्वर उतरजाने पर अन्नकी इच्छा न हो, तो नहीं देना चाहिये। क्षुधा लगी हो, तो मट्ठेके साथ भात देवें।

अधिक कब्ज होतो पहले आरग्वधादि क्वाथका सेवन कराना चाहिये या उस क्वाथके साथ पर्पटी रस देना चाहिये।

८. ज्वरसहार रस

विधि—रससिंदूर अथवा हिंगूल १३ तोले, सोंठ, काली मिर्च, पीपल, कुटकी, नीमकी अन्तर छाल, कड़वा कूठ, नागरमोथा, सफेद सरसों, सेका हुआ इन्द्रजौ, सोहागे का फूला,

कामला, पाण्डु, मूत्राघात, अरुचि, अर्श, व्रण, कुष्ठ, वातरक्त और भगंदर आदि रोगोंको दूर करता है। प्रमेह रोग वालेको पाण्डु और अर्श विकार हो, तब यह रसायन अच्छा लाभ पहुंचाता है।

७. मधुमेह प्रयोग।

विधि—शुद्ध अफीम १॥ तोले तथा धतूरेके शुद्ध बीज और मकर ध्वज ६-६ माशे लें। तीनों को मिलाकर खरल करें। इसमें से आध आध रत्ती दिनमें दो बार गोदुग्ध या गुड़मारके अर्कके साथ सेवन कराते रहने से मधुमेह दूर होजाता है। यदि इसकी गोलियां बनाना हो. तो धतूरा के रसमें ३ दिन खरल करके आध आध रत्तीकी गोलियां बना लेने से विशेष लाभ पहुंचता है।

८. मधुमेह दर्पहारी

विधि—अफीम और शुद्ध शिलाजीतको समभाग मिला अदरखके रसकी २१ भावना देकर, छाया शुष्क आध आध रत्ती की गोलियां बनावें। (औ० गु० ध० शा०).

मात्रा—१-१ गोली दिनमें २ बार गुड़मार अर्क, धारोष्ण गोदुग्ध या जलके साथ देवें।

गुडमार अर्क—गुड़मार ६० तोले, जटामांसी १० तोले और नागर मोथा १० तोले मिला ८ सेर जलमें रात्रिको भिगोदें। फिर दूसरे दिन अर्क खिंच लेवें।

उपयोग—यह औषध मधुमेह पर तत्काल लाभ पहुंचाता है। अफीम और शिलाजीतके संयोगसे इक्षुमेह में उत्तम लाभ पहुंचता है। अफीम कड़वा रस प्रधान और वात-शामक ओषधि है; तथा वह स्तम्भक, प्रारम्भमें उत्तेजक, फिर अवसादक या ग्लानि उत्पादक, वेदनाशामक, मदोत्पादक, निद्राप्रद, वाजीकरण

रक्त चंदन, अतीस और ममीरी (या गुलजलील-त्रायमाणा) इन १४ ओषधियों का कपड़छन चूर्ण २-२ तोले लें। सबको मिला अदरख, तुलसी, निगुण्डी के पान इन तीनों के स्वरस के साथ ३-३ दिन खरल कर २-२ रत्ती की गोलियां बनावें।

(श्री प० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्रा—२-२ रत्ती दिन में २ बार जल या ज्वरघ्न कषाय के साथ दें।

उपयोग—यह रसायन सब प्रकार के ज्वरों में—विशेषतः कफ और वात प्रधान ज्वर में प्रयुक्त होता है। यह तरुण और जीर्ण दोनों प्रकार के ज्वरों में लाभ पहुंचाता है। कफ, आम और विष को पकाता है। प्रस्वेद लाकर दोष को निकालता है। उदर को शुद्ध करता है। हृदय को बल देता है और शक्ति का संरक्षण करता है। शुष्ककास, नेत्र में लाली या पित्त प्रकोप हो तो इस रसायन का प्रयोग नहीं करना चाहिये।

अनुपान—श्लेष्म प्रधान ज्वर और प्रतिश्यायसहज्वर में गोजिह्वादि कषाय के साथ। (यह कषाय आगे लिखा जायेगा) न्यूमोनिया या पार्श्वशूल सह ज्वर हो तो इस रसायन के साथ अभ्रक भस्म १ रत्ती और शृंगभस्म ४ रत्ती मिला कर शहद के साथ। फिर ऊपर गोजिह्वादि कषाय नौसादर और यवक्षार १-१ रत्ती मिला कर पिला दें। सामान्य नूतन ज्वरमें जलके साथ देवें।

६. संताप शामक मिश्रण

विधि—गोदन्तीभस्म ८ तोले, प्रवालपिष्टी ४ तोले, जहर-मोहरा खताईपिष्टी २ तोले, शुद्ध पारद और शुद्ध गन्धककी कज्जली २ तोले, जटामांसी, छोटी इलायचीके दाने और खस इनका कपड़छान चूर्ण १-१ तोला तथा कपूर ६ माशे लें। सबको मिलाकर अच्छी तरह खरल कर लेवें।

कम मात्रामें ही इसका प्रयोग करना चाहिये। दूसरी बात यह है कि, इसका व्यसन होजाने की भीति है।

अधिक मात्राकी आवश्यकता हो, तो रसतन्त्रसारमें लिखी हुई मधुमेह, नाशक जातिफलादि वटी या महावातराज रस लेना चाहिये; अथवा मधुमेह दर्पहारीकेसा थ चन्द्रोदय का भी सेवन करते रहना चाहिये।

मधुमेह दर्पहारी देने पर थोड़े ही दिनोंमें तृषाका ह्रास होता है। जिससे मूत्रका परिमाण कम होजाता है; और मूत्रत्यागकी संख्याका ह्रास होजाता है। इनके अतिरिक्त मूत्रमें से मधु (शक्कर) की मात्राभी न्यून होजाती है।

मूत्रातिसार, बहुमूत्र आदि लक्षण होने पर यह मधु मेह-दर्पहारी उत्तम कार्य करता है। मधुमेह दर्पहारी देनेका प्रारम्भ होने पर कुछ कुछ प्रस्वेद आने लगता है। जिससे मूत्र द्वारा निकलने वाले विषका कुछ अंश प्रस्वेद द्वारा निकल जाता है। इस हेतुसे भी मूत्रमें मधुका परिमाण कम भासता है।

सहस्रार (मगज) और वात वाहिनियाँ, इन पर इस औषध का कार्य एक विशिष्ट प्रकारका होता है; अर्थात् पहले किञ्चित् उत्तेजना आती है। फिर एक प्रकारकी प्रसन्नता और शान्तिका अनुभव आता है। यह शान्ति अफीम रहित औषधसे नहीं मिलती। इस हेतुसे मधुमेह या इतर प्रमेहमें सहसा भीतिलगना, छातीमें आघात पहुँचनेके सदृश भासना, हाथ पैर गल जाना, हाथ पैरोंमें कम्प होना, कुछ विचार करनेका प्रसंग आने पर मानसिक व्याकुलता होना, स्वस्थ निद्रा न मिलना, बीच-बीच में कितनीक बार मानसिक धक्का लगकर जाग जाना आदि लक्षण होने पर अफीम प्रधान औषध अति हितावह माना जाता है।

मात्रा—१-१ माशा शहदके साथ ३-३ घण्टे पर ३-४ वार देवें। ऊपर अमृताष्टक क्वाथ (गिलोय, नीमकी अन्तर छाल, कुटकी, नागरमोथा, इन्द्रजौ, सोंठ, पटोलपत्र और रक्तचन्दनका क्वाथ) पिलावें।

उपयोग—सतापशामक मिश्रण ज्वरवेग, अधिक हो तब व्यवहृत होता है। ज्वरमें दाह, तृषा, वमन, शिरदर्द, व्याकुलता आदि लक्षण उपस्थित होने पर उन सबको यह शान्त करता है; और ज्वरवेग को भी कम करता है। पित्त प्रधान ज्वर, मोतीझरा और विषमज्वरमें जब शारीरिक उत्ताप १०२° डिग्रीसे अधिक होता है, तब इस मिश्रणका सेवन करानेसे मस्तिष्क का रक्षण होता है; सताप दूर होता है और ज्वरविष जल कर ज्वर कम हो जाता है।

१०. निर्वेदन मिश्रण (चूर्ण)

विधि—नौसादर के फूल १ तोला, फिटकरीका फूला १ तोला सोहागे की खील १ तोला, गोदन्ती भस्म १ तोला, स्वर्णगैरिक शुद्ध १ तोला, मीठे सोभाञ्जनको छाल १ तोला, गेहूँकी भस्म २ तोले, खुरासानी अजवायन १ तोला, इन सबका कपड़ छन चूर्ण करें।

मात्रा—१-१ माशा निवाये जल के साथ दें।

उपयोग— शिर आदि अनेक अंगोंका दर्द अर्थात् वेदना (इङ्गलिश एस्पिरिनकी तरह) कम करती है और निद्रा लाती है।

श्री० पं० रामचन्द्रजी वैद्य

११. ज्वरान्तक रसायन।

विधि—सोमल १ तोला, कलीका चूना, सोहागेका फूला, सोरा और कच्ची लाल फिटकरी ५-५ तोले लें। सबको मिला नीबूके रसमें ३ घण्टे खरल कर पेड़ा बना कर सुखा लेवें। फिर

भी नहीं देनी चाहिये। (औ० गु० ध०शा० के आधार से)।

जिसके रुधिर में भी शक्कर अधिक बढ़ गई हो, मूत्र की पहलेसे ही मात्रा न्यून हो उस रोगी को भी नहीं दिया जाय तो अच्छा। (संशोधक)।

९. शिलाजत्वादि वटी

प्रथम विधि-शुद्ध शिलाजीत ५ तोले, अभ्रक भस्म, लोह भस्म, सुवर्ण माक्षिक भस्म, वङ्गभस्म १-१ तोला तथा अम्बर ३ माशे लें। सबको मिला त्रिजात के क्वाथ में ३ दिन खरल कर २-२ रत्ती की गोलियां बनावें।

मात्रा-१-१ गोली रात्रिको कपूर २ रत्ती और खुरासानी अजवायन ४ रत्ती के साथ देवें। ऊपर दूध पिलावें।

उपयोग-यह वटी शुक्रस्राव और स्वप्न दोष को दूर करती है। पेशाब में धातु जाती हो तो उसे रोक देती है। हृदय को सबल बनाती है। स्मरणशक्ति बढ़ाती है। पाण्डु, कफवृद्धि, स्वप्नदोष हृदय निर्बलता, रक्त न्यूनता आदि में लाभ पहुँचाती है।

दूसरी विधि-शुद्ध शिलाजीत, अभ्रक भस्म, स्वर्ण भस्म, लोह भस्म, शुद्ध गूगल और सोहागे का फूला इन सबको समभाग मिला कर काले भांगरे के रसमें ३ दिन खरल कर १-१ रत्ती की गोलियाँ बना लेवें। (भै० र०)

मात्रा-१-१ गोली दिन में दो बार सेवालके जल के साथ।

उपयोग-यह वटी शुक्रस्राव और स्वप्नदोष के लिये अतिहितकारक है। पित्त प्रधान प्रकृति वाले तथा अति स्त्री समागम और शराब आदि के सेवन से जिनके शरीर में अधिक

सरावसंपुट कर ५ सेर गोबरीकी आंच देवें। स्वांगशीतल होने पर निकाल कर भस्मके समान अतीसका चूर्ण, चौथाई नौसादर और चौथाई प्रवाल पिष्टी मिला लेवें।

मात्रा—२ से ४ रत्ती दिनमें ३ बार शक्कर और निवाये जल चाय या शहदके साथ।

उपयोग—यह रसायन बढ़े हुए ज्वरमें देनेसे घबराहट दूर करता है तथा प्रस्वेद लाकर ज्वरको उतारता है। एव अपचन, उदरपीड़ा, कफवृद्धि आदिको दूर करता है। ज्वर न हो तब देनेसे ज्वरविष, आम आदिको जला कर ज्वरको रोक देता है। शीतसह आने वाले ज्वरमें यह उपयोगी है।

१२. शीतांशुरस

विधि—शुद्ध मनः शिल और शुद्ध हरताल १-१ तोला तथा त्रिकटुचूर्ण २ तोलेको अच्छी तरह मिला ६ घण्टे नींबूके रसमें खरल कर १-१ रत्तीकी गोलियाँ बना लेवें।

(नीवू के स्थान पर द्रोणपुष्पीके रसमें खरल करें, तो अधिक लाभ पहुंचता है।) (डा० लक्ष्मीपतिजी)

मात्रा—१-१ गोली दिनमें दो बार शहद के साथ देवें। ऊपर चिरायता या सुदर्शन चूर्णका क्वाथ पिलावें।

उपयोग—यह सब प्रकारके शीत लगकर आनेवाले मलेरिया ज्वरोंको रोकता है। एक दो दिन तक देनेसे मलेरिया चला जाता है। एकाँतरा और तिजारी बुखारमें ताप आनेवाला हो, उस दिन ज्वर आनेके ४ (या ६) घण्टे पहले १ बार और २ (या ४) घण्टे पहले दूसरी बार ओषधि ले लेनेसे ज्वर रुक जाता है। किनाइनके सेवनसे जिस तरह लाभके साथ हानिभी पहुंचती है, जीवनीय शक्ति निर्बल बनती है। वैसा इस रससे नहीं होता

फली ५ तोले का कपड़छन चूर्ण मिलाकर २-२ रत्ती की गोलियाँ बना लेवें। (हकीम उत्तमचन्दजी) ।

उपयोग—२ से ४ गोली दिन में २ बार मिश्री मिले दूध के साथ देते रहने से वीर्य की उष्णता, पेशाब में धातु जाना स्वप्न दोष वीर्य का पतलापन और मूत्र विकार आदि दोष निवृत्त होकर वीर्य निर्दोष और गाढ़ा बनता है।

(७) सोमल, अफीम और हिंगुल, तीनों समभाग मिलाकर बड़ के दूध में ६ घण्टे खरल कर सरसों के समान गोलियाँ बना लेवें। इसमें से दो दो गोलियाँ दिन में दो बार एक तोला घी या गोदुग्ध के साथ सेवन करते रहने से १ मास में कफ प्रधान प्रमेह दूर हो जाते हैं। एवं वातप्रकोपजनित विकार पर भी यह औषध अति हितकारक है। उदर वात, संधिवात, वातवहिनियों की निर्बलता, पक्षाघात आदि पर भी अच्छा असर पहुँचाता है। इनके अतिरिक्त शीघ्र पतन और स्वप्नदोष को दूर कर वीर्य को सबल बनाता है, और देह को पुष्ट बनाता है। इस रसायन की मात्रा २ से ४ गोली तक धीरे धीरे बढ़ावें। १५ दिन सेवन करके एक सप्ताह के लिये बन्द कर दें। फिर सेवन करना प्रारम्भ करें। यदि उष्णता अधिक प्रतीत हो, तो घी और दूध का सेवन बढ़ावें; और मात्रा कुछ कम करें। इस रसायनका प्रयोग पित्त प्रधान प्रकृति वालों को हित कर नहीं है। फिर भी सेवन कराना हो, तो प्रवाल पिष्टी और अमृतासत्व के साथ सेवन कराना चाहिये।

१४. प्रमेह मिहिरतैल

विधि—सोया, देवदारू, नागरमोथा, हल्दी, दारू हल्दी, मूर्वा कूठ, असगन्ध सफेदचन्दन, लालचन्दन, रेणुका, कुटकी, मुलहठी,

२-२ तोले लेवें। इन सबको कूट कपड़छान चूर्ण कर गुड़मार और गूलर के क्वाथ की ७-७ भावना देवें।

मात्रा-४ से ८ रत्ती दिन में दो बार गुड़मार के क्वाथके साथ।

उपयोग-पित्तज एवं कफज प्रमेह, मधुमेह, और तज्जन्य प्रमेहपिटिका आदि में रामबाण है।

(राजवैद्य पं० रामचन्द्र जी)

साहब इस रसायन को वारवार प्रयोजित करते रहते हैं। डाक्टर साहब इसका उपयोग वारवार करते हैं। महात्माजी ने प्रयोग देनेके समय निम्न अनुपानोंसे उपयोग करने को लिखवाया था।

अनुपान

(१) शीतज्वर—अदरखका रस।
(२) वातज्वर—भांगरे का रस।
(३) जीर्णज्वर—सम्हालू की राख या शहद पीपल।
(४) अजीर्णज्वर—त्रिफला काथ या घृत।
(५) वातपित्तज्वर—जीरा और शक्कर या आंवले का चूर्ण और शक्कर।
(६) विषमज्वर—तुलसी या द्रोणपुष्पी का स्वरस अथवा नीम के पत्ते।
(७) अजीर्ण—नागरवेलका पान या मस्तु (दहीके जलके साथ)
(८) संग्रहणी—छाछ, चित्रकमूल का काथ, भूनी हींग या अनारदाना का रस।
(९) अतिसार—मट्ठा या हरड़ का फाण्ट।
(१०) तीक्ष्ण आमवात—एरंड तैल।
(११) अजीर्णजन्य अतिसार—अजवायन।
(१२) उदरवात—घी।
(१३) आमप्रकोपजनित कटिपीड़ा—अजवायन और वचका चूर्ण।
(१४) सर्पदंश—जिस जगह सांप काटा हो, उस स्थान पर प्याज के रसमें घिसकर लगादें और सुहिंजने की छाल के रसमें मिलाकर पिलावें। अथवा सिरसके रसके साथ सेवन करावें।
(१५) कफयुक्त कासश्वास—अदरख का रस।
(१६) विच्छू का दंश—प्याज़ के रसके साथ घिस कर लगावें।

को आयुर्वैदिक सभा के समक्ष पढ़कर सुनाया था। मांस के भीतर दर्द, अवयव मुड़ जाना, मूढ़मार, व्रणक्षत, रक्तवाहिनी कटकर रक्त स्राव होना, क्षयज ग्रन्थियां, श्लीपद, दुष्टक्षत, न भरने वाले व्रण, नेत्ररोग, नाड़ी-व्रण विद्रधि, भगन्दर, कण्ठ में क्षत, सुजाक, जिव्हा का मांसक्षय, कर्णपाक, नासिका व्रण, अग्निदग्ध व्रण और शीत आदिसे हाथ पैर फट जाना आदि व्याधियों में बाह्योपचार रूप से प्रयोजित किया है। जीर्ण आमातिसार, पेचिश और अजीर्ण में खिलाने के लिये उपयोग में लिया है, सब पर अच्छा लाभ मिला है। इनके अतिरिक्त सुजाक, मधुमेह, पित्त-प्रकोप और जीर्ण ज्वर आदि पर भी पत्रसार खिलाकर परीक्षा की गई है।

बेल की जड़ रसायन, बुद्धिवर्धक ऐन्द्रिय विषघ्न और प्रदाहशामक है। सुश्रुताचार्यने मेधायुष्कामीय अध्यायमें कल्प रूप से बिल्वमूल के क्वाथ का सेवन सुवर्ण भस्म के साथ एक वर्ष तक करने का विधान किया है।

चमेली के फूल कफ पित्तजित, व्रणरोपक, कीटाणुनाशक, विषहर और रक्तशोधक है।

२. बहुमूत्रघ्न रस

विधि- बीजबन्द, तालमखाना, मुलहठीका सत्व, वंशलोचन, शुद्ध विरोजा, सालम मिश्री, शुक्ति भस्म, प्रवाल भस्म, बहेड़े की गिरी हरड़कीगिरी, शुद्धशिलाजीत, छोटी इलायची के दाने और वङ्गभस्म, इन १३ ओषधियों को समभाग लेवें। काष्ठादि ओषधियों का कपड़छान चूर्ण करें। फिर सब को मिला शहद के साथ ३ घण्टे खरल कर २-२ रत्ती की गोलियां बना लेवें। (सि० भे० म०)

(१७) बलवृद्धिके लिये—मालकांगणी या गोखरूके चूर्णके साथ।
(१८) स्त्री को वश करनेके लिये—मुर्गे के अंडे की जर्दी के साथ घिस कर शिश्न पर लेप करके स्त्री समागम करें।
(१९) जलोदर—ब्रह्मदण्डी का रस।
(२०) अग्निमान्द्य—कलौंजी, कालाजीरा अथवा चित्रकमूल या सोहागा का फूला।
(२१) वीर्यस्तंभन के लिये—मधु।
(२२) कटिवात—सिरसके फूलोंके रस या सिरसकी छालके क्वाथके साथ।
(२३) वातजशूल—शहद-पीपल या खसखसका क्वाथ।
(२४) वृक्कशूल—मूलका रस या कुलथीका क्वाथ।
(२५) अस्थिवात—बच, देवदारू और कूठका चूर्ण।
(२६) नाड़ीव्रण (नासूर) पर—बिल्लीकी हड्डीके साथ। गोली पीस कर लगावें। या पुराने गुड़ और मकड़ीके जालेमें मिला बत्ती बना कर नासूरमें डालें।
(२७) देह दुर्गन्ध—सफेद चन्दनके साथ घिसकर लगावें, और नेत्रवालाके क्वाथके साथ खिलावें।
(२८) उदरमें रक्त जम जाना—सुहिंजनाके गोंद ६ माशेके साथ।
(२९) कर्णमलजनित पीड़ा—शहद या खजूरके रसके साथ मिला कर कान में डालें।
(३०) दंत दर्द—अलसीके तैल या नींबूके रसके साथ लगावें।
(३१) कफज उन्माद—धतूरेके १ पत्तेके रसके साथ।
(३२) पित्तज उन्माद—शक्कर या शंखाहुलीके स्वरसके साथ।

अजवायन के बीज या पान १ भाग मिलाकर उपयोग करना चाहिये। साथ में हजरुल यहुद की भस्म ४-८ रत्ती देवें। तो विशेष लाभ होता है।

वृद्धि श्लीपद प्रकरण

१ वृद्धिनाशन रस।

विधि—शुद्ध पारद और शुद्ध गन्धक ५-५ तोले तथा सुवर्णमाक्षिक भस्म १० तोले लें। पहले पारद गन्धक की कज्जली करके माक्षिक मिलावें। फिर हरड़ के क्वाथ से ३ दिन और एरण्ड तैल से १ दिन खरल कर २-२ रत्ती की गोलियां बनावें। हरड़ की भावना पहले देने की अपेक्षा एरण्ड तैल की भावना पहले देने से एरण्ड तैल का शोषण हो जाता है, और गोलियां अच्छी बन सकती हैं। (र० यो० सा०)

मात्रा—१ से २ गोली तक दिन में दो बार देवें।

[१] अनुपान—कर्ण स्फोटा (कनफुटी कान फोड़ी) का रस, मलातैल, चने का क्वाथ, यवक्षार मिलाहुआ हरड़ का क्वाथ, या एरण्ड तैल मिला हुआ हरड़ का क्वाथ।

कर्ण स्फोटा को मराठी में कनफुटी, कपालफोड़ी, गुजराती में करोलियो, काठियावाड़ में कागडोलियो; बंगाल में लताफटकी, नयाफटकी, तामिलमें कोटावन, मुद्कोटन, तेलगु में ज्योतिष्मति तिगे और लेटिन में कार्डियोस्पर्मम हेलिके कलम कहते हैं। यह वर्षायु और बहुवर्षायु वनस्पति

(३३) ध्वजभंग—छोटी कटेलीके फलोंके रसके साथ खरल करके लेप करें।

(३४) मुँह, नाक या गुदासे रक्त स्राव—१॥ माशे धनियां और गुलकंद।

(३५) पीनस—काली मिर्चके साथ।

(३६) आध्मान—सोंठ और शहद।

(३७) पित्त प्रकोपसे मूत्रावरोध—सेव फलके रसके साथ दें; या छोटी दूधी १ माशाको जलके साथ पीस छान कर ऊपरसे पिलावें।

(३८) प्लीहोदर—गोमूत्र या निगुण्डी का रस।

(३९) शोथ और गांठ—सम्हालू (निगुण्डी) की जड़ या पत्ते के रस के साथ घिस कर लेप करें।

(४०) शिरदर्द—सन्तरा का रस।

(४१) उदर शूल—लौंग के क्वाथ या सुहिंजने के रस या घी के साथ। अथवा तुलसी और अनारदानों के रस या गुड़ के साथ।

(४२) अरुचि—नीबू के रसके साथ या इलायची, मिर्च और लौंग के साथ।

(४३) मुखदुर्गन्ध—द्राक्षा के साथ या चौथाई रत्ती कपूर और इलायची के साथ।

(४४) वातज शिरदर्द—असगंधके चूर्ण के साथ खिलावें और लेप करें।

(४५) पलकों के अंदर बाल आना—दारू हल्दी के घासे के साथ अंजन करें।

(४६) शिर पर की खुजली—गोमूत्र में मिलाकर लेप करें।

(४७) कण्ठमाला—पुनर्नवाके मूलके क्वाथ के साथ।

कान में पूय होने पर जल्दी योग्य सम्भालनली जायतो रोग दृढ़ हो जाता है। फिर वर्षों तक नहीं जाता ऐसे पुराने कर्ण रोग पर इस तैल का प्रयोग करने से १-२ मास में नाड़ी व्रण दूर हो जाता है।

वातरोग पर इस की मालिश करायी जाती है। कम्प वात सांधों की पीड़ा वातज शूल आदि में इस तैल को निवाया कर मालिश करने, तथा १-१ माशा दिन में २ बार पिलाते रहने से थोड़े ही दिनों में वात विकार दूर हो जाता है।

पुष्फुसशोथ, फुफ्फुसावरणशोथ, उदर्या कला का शोथ तीव्र आमवात में संधिशोथ सुजाक जनित वृषणशोथ, इन सब स्थानों के शोथ में निर्गुण्डी के क्वाथ का पान और इस तैल को निवाया कर वाह्य उपयोग में लेते रहने से सब प्रकार के शोथ दूर होते हैं।

अनुभव—यह तैल वात के अनेक रोगों को दूर करता है, वंध्यास्त्री को गर्भ धारण करता है, तथा वात प्रकोप के कारण जिन इन्द्रियों की शक्ति नष्ट हुई हो, उनका व्यापार पुनः संचालन कराता है। यह वैद्य के दक्षिण हाथ में रहने योग्य सफलयोग है। जिस तरह डाक्टरी में टिंचर आयोडिन से विविध कार्य सम्पादन होते हैं। उस तरह इस तैल का उपयोग अति व्यापक रूप से अनेक रोगों पर होता है। यह तैल स्थावर जंगम कीट विष, (जो विशेष उग्र न हो) दूषी विष, कौटिल्य विष और वैकृत विषों का शमन कर मनुष्य में नव जीवन का संचार करता है। यह सहस्रानुभूत सिद्ध और दिव्य प्रयोग है।

(श्री पं० राधाकृष्णजी द्विवेदी

(४८) वमन बंद करने के लिये—शर्बत नींबू या शर्बत सन्तरा के साथ।

(४९) अर्श—बथुआके रस या जायफल के साथ। अथवा हींग और पीपल के चूर्ण के साथ।

(५०) ग्रहबाधा—भूत बाधा-त्रिफला चूर्ण और घृत के साथ।

(५१) वात प्रकोप—भांगरे का रस।

(५२) त्वचारोग, खुजली दाद—गंधक।

(५३) प्रसूताका सन्निपात—जीयापोता या तुलसीका रस और शहद।

(५४) वातज गुल्म—निर्गुण्डीके पत्तों का रस।

(५५) कफजगुल्म—शहद या काला नमक।

(५६) पाण्डु—त्रिफला और पीपलका चूर्ण या पुनर्नवाका रस।

(५७) कफ वृद्धि—नागर वेल के पात या अदरखका रस अथवा शहद या पीपल।

(५८) मूत्रदाह—छोटी इलायची।

(५९) श्वेतकुष्ठ, चित्री—निम्बके साथ घिस कर लेप करें, और खदिर छालके क्वाथके साथ खिलावें।

(६०) अपस्मार—४ रत्ती वचके चूर्ण और शहदके साथ दें और काली मिर्चके चूर्ण के साथ सुंघावें।

(६१) प्लेग की गांठ—सत्यानाशी के रसके साथ सेवन करें; और उसी रसमें घिस कर लेप करें।

(६२) कर्णपाक—पुरुषके मूत्रके साथ, वा हींगके साथ, वा धतूराके पत्तेके रसके साथ मिलाकर कानमें डालें; और जायफलके चूर्णके साथ खिलावें।

(६३) मुखपाक—६ माशे त्रिफलाके साथ खिलावें।

जल में मिला कलईदार बरतन में डाल कर मंदाग्नि पर पकावें चतुर्थांश जल शेष रहने पर उसे छान लेवें। फिर ५ तोले सोहागे का फूला मिलाकर मंदाग्नि पर पकावें और गूलर के दण्डे से चलाते रहें। जब दण्डे पर रस चिपकने लगे तब कड़ाही को उतार सारे को कलईदार थाल में डाल दें। ऊपर मलहम का टुकड़ा बांध कर धूप में सुखा लें। लेह जैसा होने पर अमृतबान में भर लें।

(स्व० महा० पं० गणनाथ सेन सरस्वती)

उपयोग—यह सार उत्तम शोथ विम्लापन (कच्चे व्रण-शोथ को बैठाने वाला), व्रणशोधन, व्रणरोपण, रक्तस्रावरोधक है। व्रण शोथ की प्रारम्भावस्था में इस सार को चौगुने जल में मिला, उसमें कपड़ा भिगो कर बांधने और थोड़े थोड़े समय पर उस जल को डाल कर पट्टी को तर रखने से वेदना दूर हो जाती है। और शोथ शमन हो जाता है। दुष्ट व्रण और न भरने वाले व्रण पर भी यह लाभ पहुँचाता है। पूय वाले व्रणों को धोने के लिये उबलते हुए जल में सार मिलाकर उपयोग किया जाता है। स्त्रियों के स्तन पर शोथ आ जाय तो इसकी पट्टी बांधने से शोथ फैल जाता है। इस तरह श्लीपद और वृषण वृद्धि पर भी इस का लेप किया जाता है। मूढमार, अवयव मुड जाने और रक्त वाहिनी कटकर रक्त स्राव होने पर इसके प्रयोग से सत्वर लाभ हो जाता है।

मुखपाक में कुल्ले कराने के लिये तथा सुजाक, स्त्रियों के योनि मार्ग के व्रण और प्रदर में उत्तर वस्ति देने के लिये यह सार उपयोगी है। ६४ गुने जल में मिला कर व्यवहृत होता है। इस तरह नेत्राभिष्यंद में इसके द्रव्य के बूंद नेत्र में डालने और

(६४) मूत्राघात—त्रिफला का क्वाथ या शिलाजीत सह तृणपञ्च मूल का क्वाथ।

(६५) अश्मरी—गोखरू और पाषाणभेदका या अकलकराका चूर्ण।

(६६) मूत्रावरोध—छोटी दूधी १ माशा या गोदुग्ध या पेठेके रस के साथ।

(६७) आमाशयदाह— घी।

(६८) वातरक्त, कुष्ठ, रक्त विकार, पामा, व्युची—पुंवाड़ बीज या खदिर छाल के क्वाथ के साथ खिलावें। और गोमूत्रमें घिस लेप करें।

(६९) सन्निपातमें शीत और प्रस्वेद बन्द करनेके लिये—वच्छनाग या भूनी कुलथांके आटेके साथ मालिश करें।

(७०) वात, आम, और मेद वृद्धि—अकलकरा और शहद।

(७१) धनुर्वात—२ रत्ती सोहागे का फूला या गोकर्णी के क्वाथ के साथ।

(७२) उदरमें तीक्ष्ण शूल—सैंधानमक।

(७३) भगंदर—नीबूके रसके साथ लगावें।

(७४) संपूर्ण वातरोग—निंगुण्डी के पत्ते का रस।

(७५) रतौंधी—केलेके रसके साथ खिलावें और स्त्रीके दूध या तुलसीके रसमें घिस कर अंजन करें।

(७६) रक्तपित्त—१ माशे सोना गेरुके साथ खिलावें।

(७७) कटिरोग—इमलीके पत्ते या तेजपात के साथ।

(७८) पामा—आंवला या त्रिफला का चूर्ण।

(७९) खुजली—भांगरेके रसके साथ सेवन करें, और सरसों के तेल के साथ मालिश करें।

इस औषध के सेवन से नूतन रोग में थोड़े ही दिनों में लाभ होजाता है, परन्तु जीर्ण रोगों पर कभी कभी ४-६ मास तक सेवन कराया जाता है।

६ वंग योग

विधि-शुद्ध वङ्ग और शुद्ध शहद २-२ तोले, इनको मिट्टी के पात्र में डालकर अग्नि पर गला लें। जब द्रव होजाय तब २ तोले शुद्ध हिंगुलोत्थ पारद तत्काल ही खरल में डालकर ४ प्रहर तक सतत घोटें। जब भले प्रकार मिश्रण हो जाय ८ तोले टॉनिक एसिड पाउडर (मांजू का सूखा सत्व) ८ तोले उसमें डालकर पुनः ४ प्रहर तक घोटें। एक जिगर होजाय तब शीशी में भरलें।

मात्रा—२-२ रत्ती प्रातः सायं मक्खन के साथ दें।

पथ्य-गाय अथवा बकरी का दूध, जौ की धानी का दलिया या मात्र चावल देवें। एक सप्ताह से २ सप्ताह पर्यन्त इसका सेवन करें। फिर इसको बंद कर २ सप्ताह तक निम्नलिखित चंदनादि तेल योग २०-२० बूंद प्रातः सायं जल के साथ देवें।

चन्दनादि तेल योग—असली चन्दन का तेल १ तोला, तेल बायसन कूपेवा १ तोला, क्युबबऑइल १ तोला इन तीनों को चीनी के खरल में डालकर फिर लाइकर पोटास थोड़ा थोड़ा डालते जाँय और घोटते जांय घुटते घुटते सफेद रंग का इमलसन बन जाय तब पोटास डालना बंद करें। तत्पश्चात् शीशी में भर कर रक्खें।

उपयोग—ये उपरोक्त दोनों प्रयोग अजमेर के यशस्वी चिकित्सक स्वामी गणेशानन्दजी के अनुभूत है। इनके द्वारा पुराने सुजाक के कुर्रे से उत्पन्न मूत्राघात और मूत्रकृच्छ्र विना कैथीटर के लाभ होते देखा गया है।

(८०) कान्तिवृद्धि—शंखाहुलीकी जड़के फांट या नागरवेल के पानके साथ।
(८१) वशीकरण—गृद्धका खून, गोलोचन और काकजंघाके मूल के घासेके साथ तिलक करें।
(८२) पित्तवृद्धिशमनके लिये—आंवलेके रस या इमलीके साथ।
(८३) आंखमें फूला—पुनर्नवा की जड़के साथ घिसकर अञ्जन करें। अथवा सफेद चिरमीके साथ जलमें घिसकर आँजें।
(८४) कर्णशूल—सौंठके साथ स्त्री दुग्धमें घिसकर कानोंमें डालें।
(८५) ऊर्ध्ववायु—जीरा।
(८६) अर्धाङ्गवात और गृध्रसी—घृत।
(८७) गलितकुष्ठ—४१ दिन तक मूसलीके रसके साथ।
(८८) आमवृद्धि—काला नमक से दें या अमलतास की फलीके गूदाके साथ विरेचन रूपसे देवें।
(८९) मूत्रातिसार—काबुली अनार का रस।
(९०) श्वानविष—चूने के पानी या पाठाके क्वाथके साथ देवें और जल में घिसकर लेप करें।
(९१) मंदाग्नि, जीर्णकास—त्रिकटु।
(९२) मूर्च्छा—घी कुंवारके गांदल के साथ दें और गूगल, अगर और बंबूल की कोंपलके साथ कपालपर लेप करें।
(९३) बद्धकोष्ठ में विरेचन—एरंड तैल या कालीद्राक्षा के क्वाथ या अदरख के रस के साथ।
(९४) कृमि—पित्तपापड़ा या वायविडङ्ग के साथ।
(९५) वलीपलितनाशार्थ—शहद।
(९६) वन्ध्याको सन्तान प्राप्तिके लिये—जीयापोताकारस। या रजस्वला होने के पश्चात् स्त्री पुरुष, दोनों जल

पश्चात् १६ तोले लोह भस्म (सोमल और हरतालमारित) तथा सब औषधियों के वजन का ३० वाँ हिस्सा शुद्ध वच्छनाग मिला नीम के पत्तों के स्वरस में ३ दिन खरल कर १-१ रत्ती की गोलियाँ बना लेवें। (वै० सा० सं०)

मात्रा—१ से २ गोली भैंस के घी के साथ देवें। अथवा बावची का चूर्ण १ तोला, घृत १ तोला तथा शहद २ तोले मिला कर उसके साथ देवें।

उपयोग—इस रसायन के सेवन से सब प्रकार के कुष्ठ दूर होते हैं। यह रसायन शून्य कुष्ठ और गलत्कुष्ठ में भी अपना प्रभाव सत्वर दर्शाता है।

५. बाकुच्यादि चूर्ण।

विधि—बड़ी बावची और त्रिफला (हरड़, बेहड़ा आँवला तीनों मिलकर) ४०-४० तोले, वायविडङ्ग के तण्डुल (गिरी) ८ तोले, शुद्ध शिलाजीत १४ तोले, शुद्ध पक्के मिलावें १०० नग, पुष्करमूल ४ तोले, लोहभस्म १२ तोले, फिटकरी का फूला २ तोले तथा तेजपात, नागर मोथा, पीपल, मुलहठी, चित्रक-मूल, पीपलामूल, नागकेसर, बड़की छाल, काली मिर्च और केसर ये १० औषधियाँ १-१ तोला लें। सबको कूट कपड़ छान चूर्ण करें। फिर सब के समान मिश्री मिला लेवें (मिश्री सेवन काल में मिला ने में सुविधा अधिक रहती है। इसलिये हम पहले मिश्री नहीं मिलाते।) (ग० नि०)

मात्रा—मिश्री सहित ६ माशे से १ तोला तक जल के साथ देवें।

उपयोग—यह चूर्ण समस्त कुष्ठ के नाश के लिये कहा है। इसके सेवन से सब प्रकार के कुष्ठ, ६ प्रकार के बढे हुए

या छुहारे की गुठली के चूर्ण अथवा जावित्री के साथ सेवन करें।

(६७) शिरदर्द, पीनस और आधाशीशी—जायफल का चूर्ण।
(६८) स्मृति वृद्धि के लिये—शंखाहुली का स्वरस।
(६६) अंतर्विद्रधि—सुहिंजने की छाल का क्वाथ।
(१००) सर्वरोगनाशार्थ—४० दिन तक मिश्री के साथ।
(१०१) इन्द्रलुप्त—सफेद चिरमी के साथ मिला कर मट्ठे में खरल कर शिर पर लेप करें।
(१०२) मकड़ीका विष—भांगरेके रसके साथ खिलावें और लेप करें।
(१०३) पागल कुत्तेका विष—कुचिलेके चूर्णके साथ सेवन करावें।

इनके अतिरिक्त दोष दूष्यका विवेक करके इतर रोगों पर नूतन अनुपानोंकी योजना कर लेनी चाहिये। हमें इस रसायनको प्रयोग में लानेका अवकाश नहीं मिला। यह रस अधिक प्रवास करने वालोंके लिये उपयोगी है। प्रवासमें जहाँ अधिक साधन नहीं मिलता, वहाँ पर एक औषधिसे निविध कार्य हो सकते हैं। प्रवास करने वालेके लिये विशेष उपयोगी समझकर इस ग्रन्थ में इसे स्थान दिया है।

१४. विषम ज्वरान्तक लोह।

विधि—समान पारद गन्धककी रसपर्पटी, लोह भस्म, ताम्र-भस्म और अभ्रक भस्म ८-८ तोले, सोहागाका फूला, सोनागेरू, वंगभस्म और प्रवालभस्म २-२ तोले, सुवर्ण भस्म, मोती पिष्टी, शंखभस्म और शुक्तिभस्म १-१ तोला लें। सबको मिला निगुण्डी के पान, धतूरे के पान और कालमेघ के स्वरससें १-१ दिन खरल कर दो मोतीकी सीपोंके भीतर लेप करके सुखा देवें। फिर उन सीपोंका संपुट बना कर कपड़ मिट्टी लगावें। मिट्टी का लेप १

के सफेद, पीले-लाल-गुलाबी नीबुआ रंग के फूल वाली होती है) की छाल १ तोला ताज़ा लेकर ११-१५ काली मिर्च मिला खूब बारीक ठंडाई की तरह सिल पर पीस ८-१० तोले जल में घोल छानकर प्रातः पिलावें। इसके सेवन से किञ्चत् हल्लास (मच लाहट) प्रतीत होता है पुनः वमन विरेचन होते हैं। वेग कम होने पर गेहूँ-चने की रोटी या हरीरा अथवा कोमल प्रकृति के रोगी को मूंग की दाल और पुराने चावल की खिचड़ी दें। घी अधिक से अधिक मिलावें। इसी प्रकार सायंकाल को भोजन करें। इसके अतिरिक्त सर्व पदार्थ वर्जित है। औषधि एक ही समय प्रातः देना उचित है। इस औषधि के सेवन से क्षुधा अति प्रदीप्त होती है तथा पाचन क्रिया भी बहुत बढ़ जाती है। घृत १५ तोले से ४० तोले तक दैनिक पच जाता है। घृत की बाहुल्यता से औषधि का तेज बढ़ता है। एवं इसी से शरीर शुद्ध होकर कान्तिवान तेजस्वी बन जाता है।

वक्तव्य—शरीर के ऊर्ध्व भागमें यदि दोषों का प्राबल्य है, तो इसकी छाल (जड़ की ओर से ऊपर की ओर को छील कर उतारें) विशेषतया इसके सेवन से वमन होती हैं। ऐसा करने पर विशेषतः वमन होकर विकार निकलता रहता है। यदि शरीर के अधोभाग में दोषों का प्राबल्य है, तो ऊपर की ओर से जड़ की ओर छाल को काट कर ग्रहण करें। जिससे विरेचन अधिक होते हैं। यदि सर्वांग में दोष प्राबल्य हो, तो ऊर्ध्व और अधो, दोनों प्रकार से ग्रहण किये हुए का सेवन करें, इससे वमन विरेचन, दोनों होते हैं।

पञ्चाङ्ग से तैल सिद्ध कर व्रणों पर लगाने से शीघ्र लाभ होता है। इससे बनाई हुई रौप्यभस्म अत्यंत गुणकारी होती है। यह शतशोनुभूत प्रयोग है। (श्री पं० राधाकृष्णजी द्विवेदी)

इञ्च मोटा करें। उस पर राख लगा देवें। जिससे लेपके जलका कुछ शोषण हो जाय। फिर निर्धूम कंडोंकी आँचमें रखकर पकावें। मिट्टी लाल होने या गन्धक के जलनेकी वास आने लगे तब संपुट को निकाल स्वांगशीतल होने दें। फिर संपुट खोल सीपमें से ओषधिको निकाल कर खरल कर लेवें।

श्री० पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य

मात्रा—१ से २ रत्ती भूने जीरेका चूर्ण १ माशा और ४ माशे शहदके साथ या २ तोले ताजी गिलोयके क्वाथके साथ दिन में २ या ३ वार।

उपयोग—विषमज्वरान्तक लोहका उपयोग जीर्णज्वर, जिसमें यकृत्प्लीहा वृद्धि हो गई हो, उस पर अच्छा होता है। जो ज्वर महिनों से नहीं छोड़ता मंद मंद वना रहता है और थोड़े थोड़े दिन पर घृतादिस्निग्ध एवं मधुर पदार्थ खाने आदि हेतुओंसे वढ जाता है। जिसमें प्लीहा नाभि तक पहुंच गई हो, यकृत पर भी शोथ आगया हो शरीर अति कृश और निस्तेज हो गया हो, अग्नि अति-मन्द हो कब्ज वना रहता हो, कार्य करनेका उत्साह न रहा हो, ऐसी स्थितिमें जीरा-शहदके साथ इस रसायन के सेवनसे धीरे-धीरे प्लीहा वृद्धिका ह्रास होता जाता है; वल वृद्धि होती है और ज्वर दूर होजाता है। आम अधिक गिरता हो और अपचन जनित पतले दस्त वार वार लगते हों, तो वे भी दूर होकर शरीर नीरोगी वन जाता है।

राजयक्ष्मामें ज्वरको शान्त करनेके लिये यह गिलोयके क्वाथ या गिलोय, कटैलीकी जड़, एरंडकी जड़ और अदरखके क्वाथके साथ दिया जाता है। इस तरह पाण्डुरोग, मूत्रकृच्छ्र और पित्तप्रमेह पर भी गिलोयके क्वाथके साथ देनेसे अच्छा लाभ पहुँचाता है।

बना लेवें। (अ० ह०)

वक्तव्य—भिलावेका तैल हाथ को न लग जाय, इसलिये हाथ पर नारियल का तैल लगाकर कूटे।

मात्रा—१-१ मोदक भोजन के बीच में थोड़ा घी मिलाकर दिन में दो बार दें।

उपयोग—यह मोदक तीक्ष्ण, उष्णवीर्य, दीपन पाचन स्वेदल, सारक, यकृदुत्तेजक, वातवाहिनियों को उत्तेजक, रक्ताभिसरण वर्द्धक और रसायन है। कुष्ठ, व्रण, विद्रधि गण्डमाला, अर्श, मलावरोध, आध्मान, उदर कृमि, उदरशूल, आमवृद्धि, अपचन, वातरोग, गृध्रसी, नया पक्षवध, अर्दित, आमवात, कफ प्रकोप, मेदवृद्धि, ग्रहणी, प्लीहावृद्धि, यकृद् वृद्धि, श्वासरोग और हृदय की शिथिलता आदिविकारों को दूर करता है।

सबप्रकार के कुष्ठरोगों की उत्पत्ति विशेषतः मलावरोध और फिर उदरकृमि की वृद्धि होने पर होती है। पहले विष अन्त्रमें से रक्त में प्रवेश करता है। फिर त्वचा और अन्य धातुओं में पहुँचकर कुष्ठ की उत्पत्ति करता है। कुष्ठ रोग में वातप्रधान, पित्तप्रधान, कफप्रधान आदि भेद होते हैं। इनमें से वातप्रधान, कफप्रधान या द्वन्द्वज कुष्ठ हो, दोनों वृक्क अपना कार्य अच्छी तरह करते हों, मज्जाधातु में विशेष विकृति न हुई हो, तो इस मोदकका सेवन पथ्यपालनसह २-४ मास तक कराने पर व्याधि शमन होजाती है यदि रोग पित्तप्रधानहो यकृत्, पित्त का स्राव अत्यधिक होता हो, उसपर इस मोदक का सेवन नहीं कराना चाहिये।

यह मोदक पुराने त्वचारोगों (उपकुष्ठ) पर अति लाभदायक सिद्ध हुआ है। दाद रोग पुराना होने पर उसके कीटाणु

पित्तप्रकोप सह कास और श्वास रोग पर यह रसायन लाभ पहुँचाता है। अडूसेका स्वरस १ तोला और ६ माशे शहदके साथ दिनमें दो बार देते रहनेसे सरलतासे कफ शुद्धि होकर और कफोत्पत्ति बन्द होकर कास और श्वास दूर हो जाते हैं।

पुराना मोतीझरा, सततज्वर, एकाहिकज्वर या चातुर्थिक ज्वर, जो दिनोंसे आता रहता हो, क्विनाइन लेने पर भी न गया हो, विपरीत संताप होता हो, वैसे ज्वरों पर जीरा शहदके साथ इस रसायनका प्रयोग करने पर ज्वर शमन हो जाता है।

रुधिरके रक्ताणु कम होजाने से (एनीमिया) आदिके कारण जो ज्वर न छूटता हो वह भी इसके द्वारा समूल नष्ट होते देखा गया है।

१५. हिंगुकर्पूर वटिका।

विधि—उत्तम शुद्ध हींग और उत्तम कपूर ८-८ तोले तथा कस्तूरी १ तोला लें। पहले हींग और कपूरको मिलावें (हींग-कपूर संयोगसे गोली बांधने योग्य गीलापन आजाता है) फिर कस्तूरी मिलाकर १-१ रत्ती की गोलियां बना लेवें। कदाचित् गोलियां न बन सके तो १०-२० बूंद शहद मिलाकर गोलियां बना लें।

(स्व० डा० वामन गणेशदेसाई)

मात्रा—१-१ गोली जल या २-४ तोले दूध अथवा, अदरख के रस और शहदके साथदें। रोगी न निगल सकेतो गोलीको अदरखके रस और शहदमें घिस जिह्वा पर लगादेवें।

उपयोग—ज्वरमें सन्निपातके लक्षण बुद्धिभ्रम मंदमंद प्रलाप, वस्त्र फेंकना, हाथ पैरोंमें कम्प होना, वारम्वार उठना, योषापस्मार (हिस्टीरिया) आदि उपस्थित होने पर यह वटी दी जाती है। आवश्यकता पर ३-३ घण्टे पर देते रहे हैं।

श्वसनक ज्वर (न्युमोनिया) में इसके प्रयोगसे कीटाणु नष्ट

साथ होने से त्वचा में शुष्कता नहीं आती। गुड़ के संयोग से भिलावे की दाहक शक्ति का दमन होता है, स्रोतावरोध दूर होता है; उदर के कृमियों में भिलावे का तैल सरलता-पूर्वक पहुँचकर उनको नष्ट कर सकता है; इस तरह हरड़ का संयोग होने से रस रक्तादिधातुओं के भीतर दीपन पाचन क्रिया सरलतासे होती है, आम के पचन में सुविधा मिल जाती है। इस तरह कुष्ठविष और कुष्ठ कीटाणुओं को दूर करने में इन चारों द्रव्यों का संयोग अति गुणवर्द्धक होता है।

इस मोदक में प्रधान औषध भिलावा होने से इसकी विशेष क्रिया आमाशय, यकृत् और गुदनलिका पर होती है। यकृत् में रक्ताभिसरण की वृद्धि होजाने से गुदनलिकामें रक्त का दबाव कम होजाता है; जिससे गुदा में फूली हुई शिराएँ (अर्श के मस्से) आकुंचित होजाते हैं। एवं इस औषधि में दीपन, आम पाचन और सारक गुण होने से मलावरोध दूर होताहै। परिणाम में अर्श रोग निर्मूल हो जाता है। वातज अर्श के लिये यह योग विशेष हितावह माना जाता है।

मुखपर बाहर से शीतल वायु का आघात लग जाने पर अनेक बार अकस्मात् अर्दितरोग की उत्पत्ति हो जाती है। फिर मुख टेढ़ा हो जाता है। वातवाहिनियां खिच जाती हैं। नेत्र की पुतला स्थान भ्रष्ट हो जाने से दृष्टि टेढी हो जाती है। कितने का मुख ठीक नहीं खुल सकता। नाक की घ्राण शक्ति तथा जिह्वा के एक ओर के स्वाद में विलक्षणता आजाती है, मांसपेशियां आक्रान्त हो जाती है। कभी कण्ठ में भी आघात पहुँच जाता है। शिर दर्द, स्मरणशक्ति का लोप, मानसिक विकृति, चक्कर आना आदि लक्षण भी प्रतीत होते हैं। यदि इस विकार में मस्तिष्कस्थ केन्द्र स्थान की विकृति न हुई हो,

होते हैं, कफकी दुर्गन्ध दूर होती है, तथा कफ पतला और शिथिल होकर सरलतासे बाहर निकलने लगता है। विसूचिकाकी उस दशामें जबकि रोगी बहुत निर्बल होगया हो, नाड़ी मंदगति हो, हाथ पैर ऐंठते हों, उस दशामें भी यह चमत्कारी गुण दर्शाती है।

यह वटी प्रस्वेद लाती है और शारीरिक उत्तापका ह्रास करती है। श्वास केन्द्र पर उत्तेजना पहुंचाकर श्वास क्रियाको सबल, गम्भीर और नियमित बनाती है। इस हेतुसे श्वासरोगमें भी लाभ पहुंचाती है।

हृदय रोगमें हृदयकम्प, हृदयमें वेदना, घबराहट, चक्कर आना आदि लक्षण प्रतीत हों, तो इस वटीका सेवन करानेसे लाभ पहुंचता है।

शीत ज्वरमें इस वटीका सेवन करानेसे शीत, कम्प आदि सरलतासे दूर होजाते हैं।

सूचना—*उदर रोगोंमें हींग मिलानी हो वहां पर घीमें भुनी हुई और उत्तेजनार्थ या फुफ्फुस विकार पर हींग देनी हो वहाँ पर कच्ची हींग विशेष लाभ पहुंचाती है। अतः इस वटीमें कच्ची हींग मिलाना विशेष हितकर माना जायगा।*

१६. सर्वज्वरहर लोह

विधि—चित्रकमूल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, वायविड़ङ्ग, नागरमोथा, पीपलामूल, खस, देवदारु, चिरायता, पाठा, कुटकी, छोटी कटेली, सुहिंजने के बीज, मुलहटी और इन्द्रजव, ये २० ओषधियां १-१ तोला तथा लोहभस्म २० तोले लें। सबको मिला खरलकर तुलसीके रसके साथ ३ दिन खरलकरके २-२ रत्तीकी गोलियाँ बनालेवें। (भै० र०)

मात्रा—१ से ४ गोली दिनमें २बार जल या लक्षण अनुरूप अनुपान के साथ देवें।

केवल वात वाहिनियां प्रभावित हुई हों और नूतनावस्था में ही योग्य उपचार हो, तो लाभ हो जाता है। यदि रोग अति प्रबल वेगयुक्त न हो, तो इस मोदक का सेवन छोटी मात्रा में दिन में ४ वार कराने, तथा निवाये माषादि तैल का मर्दन और शेक करानेसे थोड़े ही दिनों में मांसपेशियों का गतिभ्रंश दूर हो कर व्याधि नष्ट हो जाती है। इस विकार वाले को शराब आदि उत्तेजक आहार नहीं देना चाहिये। तथा शीत से भली-भांति संरक्षण करना चाहिये। इस मोदक के साथ नवजीवन रस या मल्लसिंदूर (नं० २) का सेवन कराना विशेष हित कारक है।

आमवात का रोग नया हो, ज्वर मर्यादित हो, वेदना विशेष न हो, मूत्र में अधिक लाली न हो, रोगी युवा और सबल हो, तो इस मोदक का सेवन कुछ समय तक कराने से आमवात शमन हो जाता है और लीन विष भी नष्ट हो जाता है। इस विकार का विष रहजाने से शक्कर गुड़ खाने या शीत लगने पर आजीवन वार वार त्रास पहुंचता रहता है। अतः शान्ति-पूर्वक पथ्य पालन सह कुछ काल तक इसका सेवन कराने से भावि भय दूर हो जाता है।

सूचना मांसाहारियों से भिलावा बहुधा सहन नहीं होता। अतः उनको सम्हालपूर्वक देवें।

पेशाब लाल हो जाय और परिमाण अति कम हो जाय तो इस मोदक को ४ दिन बन्द करदें। नारियल का जल पिलावें। फिर कम मात्रा में प्रारम्भ करें।

१७. श्वेतकरवीराद्य तैल।

विधि—सफेद कनेर की जड़ की छाल और बच्छनाग

उपयोग—यह रसायन वातज, पित्तज, कफज, त्रिदोषज और द्वन्द्वज, विषमज्वर तथा धातुओं में लीन ज्वरोंको दूर करता है। एवं शीत, कम्प, तृषा दाह, अतिस्वेद आना, वमन, भ्रम, रक्तपित्त अतिसार, अग्निमान्द्य, कास, प्लीहावृद्धि, यकृद्वृद्धि, गुल्म, दारुणआममयवात, अर्श, घोर उदररोग, मूर्च्छा, निर्बलता, पाण्डु, हलीमक, अजीर्ण, ग्रहणीदोष, राजयक्ष्मा और शोथ आदि रोगों को नष्ट करता है। संक्षेप में यह सर्वज्वर हर लोह बल्य, वृष्य, पुष्टिकर और सब रोगोंका नाशक है। क्रमशः रक्तकणों की वृद्धि करता है।

इसलोह का उपयोग श्रीवैद्यराज पं० रामचन्द्रजी शर्मा कितनेक वर्षो से सफलता पूर्वक करते रहते हैं। जीर्ण मलेरिया जो क्विनाइन आदि ओषधियां दीर्घकाल पर्यन्त लेने पर भी शमन न हो, जिन रोगियोंके रक्तमें रक्ताणु अतिकम होगये हों, अन्य ओषधियां देनेपर ज्वरप्रकुपित होता हो, उनको यह लोह दार्व्यादि क्वाथ निम्बादि चूर्ण वा सुदर्शन चूर्ण के साथ सेवन स्थिरता पूर्वक कम से कम १ मास और अधिक आवश्यकता हो तो २-३ मास पर्यन्त देनेसे सब लक्षणोंके साथ ज्वर शमन होजाता है और शरीर सबल बन जाता है। बार २ आक्रमण से बचाता है।

प्लीहावृद्धि यदि अधिक हुई हो, फिर उस हेतु से थोड़ा सा अपथ्य होने पर ज्वर आजाता हो। इस तरह ज्वरजीर्ण होने से अति कृशता आगई हो, शीत और उष्ण उपचार सहन न होता हो, बाहर की ठण्डी या गर्मी लगने पर ज्वर आजाता है, थोड़ा सा परिश्रम होने पर भी स्वास्थ्य गिर जाता हो, थोड़ेसे चलने पर श्वासभरजाता हो, मस्तिष्कमें घड़ीके लोलिकके समान आवाज आती हो। कुछ कब्ज बना रहता हो, ऐसी अति शिथिल अवस्था में भी यह सर्वज्वरहर लोह प्रख्यात सुदर्शन के साथ सेवन कराने पर अपना चमत्कार दर्शा देता है। क्षुधा बढ़ाता है।

१६-१६ तोले मिला गोमूत्र में पीस कर कल्क करें। फिर कल्क, १२८ तोले सरसों का तैल और गोमूत्र ५१२ तोले मिला मंदाग्नि पर पाक करें। पाक होने पर कड़ाही को नीचे उतार तुरन्त तैल निकाल लें।

उपयोग—इस तैल का मर्दन करने से चर्मदल, सिध्म, पामा, विस्फोटक, कृमि और किट्टिम कुष्ठ का नाश होता है।

१८. बृहन्मरिचादि तैल।

विधि—कालीमिर्च, निसोत दन्तीमूल, आकका दूध, गोबर का रस, देवदारु, हल्दी, दारुहल्दी, जटामांसी, कूठ, रक्त चंदन, इन्द्रायण की जड़, कनेर की छाल, हरताल, मैनसिल, चित्रकमूल, कलिहारी, लज्य, वायविडंग, पंवाड के बीज, सिरस की छाल, कूड़े की छाल, नीम की अन्तर छाल, सतौने की छाल, थूहर का दूध, गिलोय, अमलतास की छाल, करञ्ज की छाल, नागर मोथा, खैर की छाल, पीपल, वच और मालकांगनी, ये ३३ औषधियां ४-४ तोले और वच्छनाग ७ तोले लें। सबको गोमूत्रमें पीसकर कल्क करें, फिर कल्क ५१२ तोले, सरसों का तैल और जल २०४८-२०४८ तोले मिलाकर मंदाग्नि से तैल सिद्ध करें। (यो० र०)

उपयोग—इस तैल को कुष्ठ के व्रण, पामा, विचर्चिका, दाद, कण्डू, विस्फोटक, वलीपलित, छाया, नीली और व्यङ्ग आदि व्याधियों पर लगाने और मर्दन कराने से नष्ट हो जाती हैं, तथा सुकुमारता की प्राप्ति हो जाती है। जिस कन्या को इस तैल का नस्य कराया जाता है, वह अत्यन्त वृद्धा होजाने पर भी उसके स्तन शिथिल नहीं होते। यदि बैल, घोड़ा और हाथी वातरोग से पीड़ित होजायँ, तो मर्दन कराने से नीरोग हो जाते हैं।

पाण्डु, उदर में कृमि होने से उत्पन्न हलीमक, अपचन होकर बारबार दस्त लगना, अग्निमान्द्य और कास रहती हो या मंद मंद ज्वर रात्रिको आजाता हो उसपर इस सर्वज्वरहर लोह का सेवन कराने से सब उपद्रवों सह ज्वर दूर होजाता है। फिर थोड़ेही दिनों में शरीर लाल बन जाता है। विशेषता यह है कि, स्वर्ण आदि बहुमूल्य पदार्थों के मिश्रण बिना भी तद्वत् गुणकारी है।

१७. स्वच्छन्द भैरवरस (ज्वरघ्न)

बनावट—शुद्ध पारद, शुद्ध बच्छनाग और शुद्धगन्धक, तीनों ४-४ तोले, जायफल २ तोले और पीपलका चूर्ण ७ तोले लेवें। पारद गन्धककी कज्जली कर बच्छनाग मिलावें। फिर जायफल और पीपल क्रमशः मिला द्रोणपुष्पीके रसमें १ दिन खरल कर १-१ रत्तीकी गोलियाँ बना लेवें। (भै० र०)

मात्रा—१ से २ रत्ती नागरवेलके पान, अदरखका रस या द्रोणपुष्पीके रसके साथ दिनमें २ बार देवें।

उपयोग—इस रसायनके उपयोगसे शीतज्वर, सन्निपात, विसूचिका, विषमज्वर, पीनस, प्रतिश्याय, ज्वर, अपचन, अग्निमान्द्य, वमन और दारुण शिरोरोग, ये सब दूर हो जाते हैं। इस रसायनके सेवनमें दोषोंका बलाबल देखकर दही भात पथ्य रूपसे दिया जाता है। इस रसायनमें ज्वरघ्न, कीटाणु नाशक, आमपाचक अग्निप्रदीपक, कुछ ग्राही और कफघ्न गुण रहे हैं। इस हेतुसे अनुपानभेदसे अनेक रोगोंको नष्ट करता है।

अपचनसे उत्पन्न ज्वर, जिसमें २-४ बार दस्त होते हैं। मुँहमें चिकनापन, आलस्य, शिरदर्द, उबाक, अरुचि, प्रतिश्याय, सांधों सांधोंमें वेदना आदि लक्षण होते हैं। उस अजीर्ण ज्वरमें यह रसायन अदरखके रसके साथ देने से तत्काल लाभ पहुँचाता है।

इस रसायन को द्रोणपुष्पीके रसके साथ देनेसे शीतसह

१९. महासिन्दूराद्य तैल ।

विधि—सिन्दूर, रक्तचन्दन, जटामांसी, वायविडंग, हल्दी, दारुहल्दी, प्रियङ्गु, पद्माख, कूठ, मजीठ, खैर की छाल, वच, चमेली, आक की जड़, निसोत, नीम की अन्तर छाल, बड़े करञ्ज के फल, वच्छनाग, कृष्णवेत्रक (काले वेंत की जड़), लोध, पंवाड़ के बीज, इन २१ औषधियों को ५-५ तोले मिला जल से पीस कर कल्क करें। फिर कल्क, कल्क से चार गुना सरसों का तैल और तैल से चार गुना जल मिला कर मंदाग्नि पर पाक करें। (च० द०)

उपयोग—इस तैल की मालिश से रक्त और पित्त प्रकोप से उत्पन्न समस्त कुष्ठ, पामा, विचर्चिका, कण्डू, विसर्प आदि व्याधियां नष्ट हो जाती हैं।

२० चर्मदलारि तैल।

बनावट—सीसम की लकड़ी, जो भीतर से काली हो. उसका बुरादा ३ सेर, नारियल कपाल, (खोपरे के ऊपर का छिलका) बावची के बीज, भिलावा, ये तीनों १-१ सेर, चित्रकमूल की छाल, नौसादर, चोक सत्यानाशी की जड़), ये तीनों ४०-४० तोले, तथा गन्धक और मैनसिल २०-२० तोले लेवें। इन सब औषधियों को कूट जौकूट चूर्ण कर पाताल यन्त्र विधि से तैल निकाल लेवें। इसतरह निकाला हुआ १ सेर तैल लेवें। फिर संखिया, नीलाथोथा, रालचिकना, ये दोनों ५-५ तोले को पीस उक्त १० तोले तैल में मिलाकर मर्दन करें। पश्चात् शेष ७० तोले तैल में मिला लेवें।

(कविराज पं० हरदयालजी वैद्य वाचस्पति)

उपयोग—इस तैलका प्रयोग करने के समय बोतल को

३० पीतमलहम।

(अंगवेन्टम हाइड्रार्जिरी ऑक्साइड फ्लेवा)

पीत पारद भस्म (यलो मर्क्युरिक ऑक्साइड) १० ग्रेन और मोम मृदु पीला (Soft paraffin yellow) ४० ग्रेन लें। इन दोनों को मिलाकर मलहम बना लेवें। उपयोग यह मलहम पुराना व्युचीं, दाद, उपदंशज क्षत और इतर त्वचाके रोगों पर लाभ पहुँचाता है।

यदि यह मलहम कीटाणु रहित किये हुए (स्टेरिलाइज) वेसलीन के साथ मिलाकर तैयार किया जाय, तो नेत्र में शुक्ल मंडल संधि (Corneosclera) के क्षत और श्लैष्मिक कला-प्रदाह (Conjunctivitis) आदि पर भी प्रयोजित होता है।

अथवा यलो मर्क्युरिक ऑक्साइड १ भाग ऊनकी चर्वी (Lanolin) १० भाग और सोफ्ट पेरेफिन ६ भाग मिलाकर मलहम बनाकर नेत्र में काजल की तरह अञ्जन किया जाता है।

३१ द्रदुगज केसरी

क्राइसारोबिन	Chrysarobin	३ औंस
सोहागा	Borex	३ औंस
गन्धक ऊर्ध्वपतित	Sublim. Sulphur.	२ औंस
वेसिलीन	Vaseline	१६ औंस

वेसिलीन को कुछ गरम कर सब औषधियों को अच्छी तरह मिलाकर मलहम बना लेवें। दाद पर ३-४ दिन लगाने पर निर्मूल हो जाती है। इस मलहम से कपड़े पर लाल दाग होते हैं। वे नीबू का सत्व (Citric Acid) से या चूने के जलसे धोने से निकल जाते हैं।

३२ खर्जू नाशक

रेसर्सिनल	Resorcinol	० २० ग्रेन

उपयोग—यह उद्वर्त्तन चर्म रोगों की एक चमत्कारिक दवा है। इसके लेप से किसी भी प्रकार का दाह या जलन नहीं होती। एवं इससे सूखी व तर, दोनों प्रकार की खुजलियाँ त्वचाकी खुश्की, फटन व चुनचुनाहट सत्वर आराम होजाते हैं। इससे शीत पित्त के फफोलों पर भी लाभ होता है (शीत पित्त के रोगी को एक एक छटांक चिरौंजी भी खिलाते रहना चाहिये) इनके अतिरिक्त त्वचा के भीतर रहने वाले तथा लसीका से पोषित कुछ कीटाणु तथा अन्यान्य चर्म रोगों के कीटाणु भी नष्ट होजाते हैं।

क्षुद्र कुष्ठों में से, जिनमें देह के विविध अंगों पर श्वेत दाग, रक्त दाग या श्याम दाग उपस्थित होते हैं। या व्युची, पामा, दाद के समान विकृति होती है, इन सबका अन्तर्भाव डाक्टरी में चर्म रोगों के भीतर किया है। ये रोग बहुधा संस्पर्शज हैं। इन रोगों की संप्राप्ति डाक्टरी मत अनुसार विविध कीटाणुओं के संक्रमण से होती है। रेल, मोटर आदि के प्रवास में बैठने के स्थान पर रहे हुए कीटाणुओं द्वारा, दूसरों के दूषित वस्त्रों के स्पर्श से तथा होटल आदि में विना साफ किये हुए पात्रों में भोजन या पेय पदार्थ का सेवन करने पर होती है। यदि चर्म रोग भोजन आदि पदार्थों में मिले हुए कीटाणुओं से प्राप्त हुआ हो या बाहर से प्रवेशित कीटाणु अन्तस्त्वचा के निम्नस्तर में प्रवेशित हो गये हों या रोग जीर्ण हो गया हो और दृढ़ मलावरोध भी रहता हो, तो इस उद्वर्तन के प्रयोग के साथ साथ आरोग्यवर्धनी या मंजिष्ठादि तालसिंदूर आदि कीटाणुनाशक ओषधि का भी उदर सेवन करना चाहिये।

अधिक अग्निसेवन, अति गरम गरम जल से बार बार स्नान करना, सूर्य के ताप में अधिक दिनों तक भ्रमण करना, घृत-तैल

रसमें पत्थरकी खरलमें मर्दन कर सूखा चूर्ण बना कर बोतल में भरलेवें। (र० यो० सा०)

उपयोग—इस रसायनका उपयोग अञ्जन करनेके लिये होता है। मुद्दती (मियादी) ज्वरको छोड़ शेष ज्वरोंमें उदर शुद्धि करा एक नेत्रमें करेलेके रस, बकरीके दूध, सफेद पुनर्नवाका रस या जलके साथ अथवा सूखा अञ्जन कर दें, और गरम कपड़े ओढा देवें; जिससे थोड़े ही समयमें प्रस्वेद आकर ज्वर दूर हो जाता है। कदाचित् आम दोषसे पुनः ज्वर आजाय, तो फिर दूसरे नेत्रमें अञ्जन कर देनेसे ज्वरको निःशेष निवृत्ति हो जाती है। यह रस रसयोग सागरकारका बहुत ही बारका अनुभूत है। इसका प्रयोग शङ्कारहित होकर करें।

सूचना—इसके अञ्जन करने पर भी ज्वर न उतरे तो समझना चाहियेकि यह मुद्दती है, अथवा अभिचार आदि बलवत् कारणसे उपस्थित हुआ है।

२१. सौभाग्यवटी।

विधि—सोहागाकाफूला, शुद्धवच्छनाग, जीरा, सैंधानमक, सांभरनमक, समुद्रनमक, कालानमक, काचलवण, सोंठ, काली-मिर्च, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आँवला, निश्चन्द्र अभ्रकभस्म, शुद्ध गन्धक, शुद्ध पारद, ये १७ ओषधियाँ १-१ तोला लेवें। पहले पारद, गन्धक की कज्जली करें। फिर भस्म विष और शेष ओष-धियों का कपड़छान चूर्ण क्रमशः मिला अच्छी तरह मर्दनकर, निर्गुण्डी काली, निर्गुण्डी सफेद, भांगरा, वासा और अपामार्ग, इन ५ ओषधियों के स्वरस या क्वाथ के साथ पृथक् पृथक् १-१ दिन तक खरलकर २-२ रत्तीकी गोलियाँ बनालेवें। इस रसायन को सौभाग्य चिन्तामणि संज्ञा भी दी है। (र० सा० सं०)

मात्रा—१-१ गोली रोगोचित अनुपान, भांगरेका रस या शहद के साथ देवें।

सूचना—शीतपित्त आदि रोगियों को चाहिये कि शीतल जल से स्नान, शीतल वायु का सेवन, जागरण, गुरु अन्न, कब्ज करने वाले पदार्थ, अम्ल रस, और विदाही भोजन से आग्रहपूर्वक बचते रहें।

२. आर्द्रक खण्ड।

विधि-अदरख ६४ तोले, गोघृत ३२ तोले, गोदुग्ध २५६ तोले, शक्कर १२८ तोले, पीपल, पीपलामूल, काली मिर्च, सोंठ, चित्रक मूल की छाल, वायविडङ्ग, नागरमोथा, नाग केशर, दालचीनी, छोटी इलायची के दाने, तेजपात और शठी, (मेदा कचूर) प्रत्येक ४-४ तोले लेवें। पहले अदरख के कल्क को घी में भूनें। फिर दूध का खोवा करके मिलावें। फिर शक्कर की चाशनी कर उसमें खोवा और शेष औषधियों का कपड़ छन चूर्ण मिलाकर पाक बनालेवें। (भै० र०)

मात्रा—६-६ माशे दिन में १ या २ वार।

उपयोग—यह खण्ड शीतपित्त, उदर्द, कोठ, उत्कोठ, राजयक्ष्मा, रक्तपित, कास-श्वास, अरुचि, वातगुल्म, उदावर्त, शोथ, कण्डू, कृमि आदि रोगों को नष्ट करता है; अग्नि को प्रदीप्त करता है; बल वीर्य की वृद्धि करता है तथा शरीर को पुष्ट बनाता है। यह खण्ड कफ़ प्रधान और मेद प्रधान प्रकृति वालों के लिये अति हितकारक है। यह आमको जल्दी जला डालता है। आम प्रधान जीर्ण ग्रहणी रोगी और अग्निमान्द्य वाले रोगी को शीत काल में सेवन करने पर पचन क्रिया को वहुत वढ़ा देता है।

३. बृहद् हरिद्रा खण्ड

विधि—हल्दी का चूर्ण, निसोत की छाल का चूर्ण, हरड़ का चूर्ण १६-१६ तोले, मिश्री २ सेर तथा दारु हल्दी, नागर-मोथा, अजवायन, अजमोद, चित्रक मूल की छाल, कुटकी, जीरा

उपयोग—यह रसायन त्रिदोषनाशक है। सन्निपात में अति शीत हो, सारे शरीरमें दाह हो और अति प्रस्वेद आकर शरीर भीगाजाता हो, घोरतरनिद्रा, समस्त इन्द्रियां और मन आदि करण अति मोहमुग्ध हो गये हों, अथवा रोगी शूल, श्वास, कफप्रकोप और काससह मूर्च्छा, अरुचि तृषा और ज्वर विकारसे पीड़ित हों; अथवा रोगी मृत्युके मुँहमें पड़ाहो, ऐसे समय परभी इस रसायन का सेवन कराने से सब लक्षण तत्काल शमन होजाते हैं; गई हुई चेतना आजाती है, और रोगी को नवीन जीवनकी प्राप्ति होजाती है। यदि बालकों को यह रसायन देना हो तो मात्रा चौथाई रत्ती या शक्ति अनुसार विचार करके देनी चाहिये।

२२. अपूर्वमालिनीवसन्त।

विधि—वैक्रान्तभस्म, अभ्रकभस्म, ताम्रभस्म, सुवर्णमाक्षिक भस्म, रौप्यभस्म, वङ्गभस्म, प्रवालभस्म, पारदभस्म (रससिन्दूर), लोहभस्म, सोहागेका फूला और शंखभस्म इन ११ ओषधियोंको समभाग मिलाकर खरल करें। पश्चात् सतावर और हल्दीके रस अथवा क्वाथकी ७-७ भावना और कस्तूरी तथा कपूरके जलकी (६४ गुने जलमें मिलाकर तैयार किए हुए जलकी) १-१ भावना देकर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लेवें। इस रसायनको रस-चण्डांशुकारने "बृहन्मालिनी वसन्त" नाम दिया है। (नि० र०)

मात्रा—१ से २ गोली तक दिनमें २ समय दें।

अनुपान—जीर्णज्वरमें शहद पीपल। सब प्रकारके प्रमेह में सतगिलोय और मिश्री। मूत्रकृच्छ्र और अश्मरी (पथरी) में बिजौरेकी जड़का कल्क या रस अथवा अदरखका रस ऐसे ही और रोगों पर समयानुकूल अनुपानकी योजना करें।

उपयोग—यह रसायन, रस, रक्त, मांस आदि धातुके लिये पौष्टिक है। जीर्णज्वर, धातुगत ज्वर, धातुक्षीणता, ज्ञानतन्तुओं

४० अम्लपित्त प्रकरण।

१. अम्लपित्तान्तक चूर्ण।

प्रथम विधि—अरणी की राख और काली मिर्च ५-५ तोले और देशी शक्कर १० तोले को मिला लेवें।

(वैद्यनिधि अर्जुनसिंह जी वर्मा)

मात्रा—२ से ४ माशे दिन में २ बार जल से देवें।

उपयोग—यह प्रयोग अम्लपित्त के लिये अति उपकारक है। जीर्ण रोग में भी लाभ पहुंचाता है। प्रयोग देने वालों ने सैकड़ों रोगियों पर अनुभव किया है।

द्वितीय विधि काला अनन्तमूल, आँवले, छोटी इलायची के दाने, खस, सफेद चन्दन, मुलहठी, कमल के फूल, धनियां, पीपल, प्रियंगु, जटामांसी और नागर मोथा, इन १२ औषधियों को सम भाग मिलावें। फिर सब के समान मिश्री मिला लेवें।

मात्रा—३ से ६ माशे दिन में दो बार जल के साथ।

उपयोग—यह चूर्ण अम्लपित्त, दाह, खट्टी डकार आना, मुखपाक, वान्ति आदि पर हित कारक है।

तृतीय विधि—गोरख इमली के गर्भ (बीज रहित) का चूर्ण १० तोले, जीरा, २॥ तोले और मिश्री १२॥ तोले लेवें।

मात्रा—३-३ माशे दिन में दो बार सुबह शाम जल के साथ देवें।

की निर्बलता, सब प्रकारके प्रमेह, प्रदर, वातप्रकोप, उष्णता, पित्तवृद्धि, यकृत् और प्लीहाके दोष, मूत्रकृच्छ्र और अश्मरी आदि रोगोंको दूर करनेमें अति लाभदायक है। वात, पित्त और कफ, तीनों प्रकृतिके लिये हितकर है।

सुवर्ण मालिनी वसन्तसे इस अपूर्व वसन्तकी कृति और कार्यमें अति अन्तर है। सुवर्ण मालिनीवसन्तमें सुवर्ण, मौक्तिक और खर्पर प्रधान है; तथा नीबूके रसकी भावना दी है। इस वसन्तमें ये तीनों ओषधियाँ नहीं है। एवं भावनाभी शतावर, हल्दी, कस्तूरी और कपूरकी दी है।

सुवर्ण मालिनीका कार्य रस संस्था, रक्त और पचन संस्था पर प्रबल होता है। इस रसायन का कार्य रक्ताणु, रक्तवाहिनियां, वातवाहिनियां और मांससंस्था पर अधिक होता है। जब त्रिदोषज ज्वर तीव्रतर रूपसे आकर थोड़ेही समयमें निवृत्त हो जाता है; तब अनेक स्थानोंमें वातवाहिनियोंको अति आघात पहुंच जाता है; रक्ताणुओंका अति ह्रास हो जाता है; मांसपेशियां सब शिथिल हो जाती हैं; वातप्रकोप होकर शुष्कता, कम्प, हाथ पैर भड़कना हड़फूटन, स्थान स्थान पर मंद मंद शूल चलना, शून्यता आजाना, नाडियां खिंचना, रोमाञ्च होजाना, प्रलाप, भ्रम, चक्कर, मूर्च्छा, शुक्रपात, स्मरणशक्तिकी निर्बलता, बात सुनते सुनते भी दुर्लक्ष्य होजाना, मलावरोध और उदरवात आदि लक्षण उपस्थित होते हैं, रक्तमें रक्ताणुओंका अति ह्रास होनेसे मुखमण्डल पर निस्तेजता हृदयमें धड़कन, नेत्र और नाखून आदि सफेद भासना आदि लक्षण प्रतीत होते हैं। मांस की शिथिलता हो जाने से किञ्चित श्रम होने पर थकावट आजाना, श्वास भर जाना, थकावटके हेतु से प्रस्वेद आकर देह गीली हो जाना, संधिपीड़ा, गाल और होठ आदिमें शुष्कता, कमर में दर्द होना, मांसभक्षी जीवों के मांस खानेकी इच्छा होना आदि चिन्ह प्रकाशित होते हैं। ऐसे लक्षण

द्वितीय विधि—नीम की निम्बौली का तेल २-२ बून्द केपसुलमें भरकर निगलवा देने से तथा उसी तेल को विसर्प पर लगाने से तत्काल लाभ हो जाता है।

४२—मसूरिका प्रकरण।

१. वसन्तसुन्दर रस।

विधि—सुवर्णमाक्षिक भस्म, रौप्यभस्म, अभ्रकभस्म, वंशलोचन और सौंठ, इन ५ ओषधियों को समभाग मिला ३ दिन सिरस के क्वाथ की भावना देकर आध आधरत्ती की गोलियां बना लेवें। (र० यो० सा०)

मात्रा—१-१ गोली दिन में २ या ३ बार दूध के साथ देवें।

उपयोग—इस रस के सेवन से सब प्रकार के उपद्रवों सह मसूरिका रोग नष्ट हो जाता है। शीतला पीड़ित रोगियों के लिये वसन्त सुन्दर अति हितावह औषध है। जिस तरह शीतल वायु से पीड़ित वृक्ष वसन्त ऋतु का आगमन होने पर प्रफुल्लित हो जाते हैं। उस तरह वसन्त सुन्दर के रस का प्रयोग होने पर मसूरिका से पीड़ित रोगी नवजीवन को प्राप्त कर लेता है।

सूचना - दिन में निद्रा, सुरापान, तैल और मछली का आग्रह पूर्वक त्याग करना चाहिये। नमक. मिर्च, खटाई, आदि भी हानिकर है। नमक खाने पर अधिक कण्डू उत्पन्न होती है। फिर खुजाने से फाले फूट जाते हैं; और वहाँ पर दाग रह जाता है। अतः नमक का त्याग करा देना चाहिये। ज्वर अधिक हो और मसूरिका में विविध उपद्रव उत्पन्न हुए हों, तो रोगी को केवल दूध पर रखना विशेष हितकारक माना जाता है।

होनेपर सुवर्णमालिनीवसन्त की अपेक्षा यह अपूर्व मालिनीवसन्त विशेष लाभ पहुँचाती है।

रक्त और मांस की शिथिलता होने पर पचनसंस्थाके अवयव, आमाशय, अन्त्र, यकृत, अग्न्याशय आदि (मांसमय होने से) अपना कार्य योग्य नहीं कर सकते हैं। यकृत् पित्तका स्राव कम परिमाण में होता है। यकृत् से आहार संशोधन कार्य भी योग्य नहीं होता। परिणाममें प्रमेहकी उत्पत्ति होजाती है। फिर मूत्र विकृति होकर विविध प्रकार के वर्णवाले पित्तज प्रमेह होजाते हैं। उन सब पर यह वसन्त लाभदायक है।

यकृत् का आहार संशोधन कार्य सुचारुरूप से न होने से अश्मरीकणों की उत्पत्ति होजाती है। तथा मूत्रकृच्छ्र होजाता है। उसके मूलहेतु को यह वसन्त दूर करती है। एवं उत्पन्न कणों को भी बिजौरे के मूल के संयोग से दूर कर देती है।।

इस रसायन में आई हुई ओषधियों में निम्नानुसार गुण हैं।

वैक्रान्त-रसायन—सब धातुओं के लिये बलवर्धक, कीटाणु नाशक, सेन्द्रिय विषघ्न और रक्त प्रसादक है।

अभ्रकभस्म—रसायन, मांससंस्था और वात संस्थाके लिये बलवर्धक है।

ताम्रभस्म—यकृत्‌बलवर्धक, अन्त्रशोधक, आमपाचक और अग्निदीपक।

सुवर्णमाक्षिक—रक्ताणुवर्धक, पित्तशामक, रक्तप्रसादक और आमाशय बलवर्धक है।

रौप्य भस्म—वातप्रकोपशामक, बृंहण, वातसंस्थापोषक और वृक्क दोषनाशक।

वङ्ग भस्म—शुक्र स्थान पोषक, सेन्द्रियविष नाशक, कफदोषहर, परम्परागत अग्नि दीपक और प्रमेहघ्न।

उपयोग—यह रसायन सब प्रकार के अति बढ़े हुए मसूरिका को दूर करता है। यदि शीतला के आरंभ से ही इसका सेवन कराया जाय, तो विष शमन होकर रोग सत्वर शमन हो जाता है। यह रसायन अनेक बार का परीक्षित है।

श्री पं० राधाकृष्णजी द्विवेदी।

५. मसूरिकान्तक वटिका

(१) रुद्राक्ष, नगजुंनी (छोटी दूधेली), करेला, हुलहुल, हल्दी, निम्बकी निम्बोई की गिरि, बेलवृक्ष के कांटे, इन ७ द्रव्यों का मसूरिका की चिकित्सा में सैंकड़ों बार प्रयोग करके सफलता प्राप्त की है। इन में से किसी ३ द्रव्यों को अष्टमांश काली मिर्च के साथ जल में पीस कर २-२ रत्ती की गोलियां बना लेवें।

मात्रा——१-१ गोली जल या मूल द्रव्यों के स्वरस से दिन में ३ बार सेवन करावें।

उपयोग——यह वटी मसूरिका में शीघ्र लाभ दर्शाती है। एवं ऋतु दोष से जब मसूरिका फैलता है या मसूरिका जनपद व्यापी भयंकर रूप धारण कर लेता है, या कुटुम्ब या घर में किसी को शीतला निकला हो, उस समय घर के सब छोटे, बड़े बालकों के संरक्षणार्थ एक सप्ताह तक पथ्य पूर्वक सेवन कराया जाय, तो इसका प्रभाव ६ मास तक रहता है। अर्थात् रक्त में रोग निरोधक शक्ति उत्पन्न हो जाने से उतने समय तक शीतला निकलने का भय नहीं रहता। पुनः सेवन कराया जाय तो सेवन करने वाले मसूरिका के आक्रमण से बच जाते हैं। कदाच संसर्ग दोष से रोग आजाय, तो भी विशेष कष्ट नहीं होता। सरलता से विष शमन हो कर रोग निवृत हो जाता है।

ऋतु, आयु, प्रकृति, रोगबल आदि के अनुरूप चिकित्सा काल में अनुपान, पथ्य और जलपान आदि की व्यवस्था करनी

प्रवाल भस्म—शामक, सेन्द्रिय विषनाशक, ज्वर विषपाचक और पित्तविकारहर।

रससिन्दूर—रसायन, कीटाणुनाशक, विषघ्न और रक्त-रञ्जकवर्धक।

लोहभस्म—रसायन, रक्ताणुवर्धक, रुधिराभिसरण-संस्था-पोषक, पित्तज और कफज प्रमेहकीनाशक तथा विषहर।

सोहागा—दुर्गन्धनाशक, विषघ्न और वातदोषहर।

शंखभस्म—आमाशयपित्तशोधक, यकृद्‌बलवर्धक, अग्नि-प्रदीपक और वातहर।

शतावर—शीतल रसायन, वातहर, पौष्टिक, वातपित्तज-मेहहर और पित्तशामक।

हल्दी—रक्तशोधक, विषघ्न, प्रमेहहर, कृमिनाशक, और वातशामक।

कस्तूरी—उत्तेजक, मस्तिष्कबलवर्धक, वातघ्न और मनको प्रफुल्लित करती है।

कपूर—कीटाणुनाशक, मस्तिष्कउत्तेजक, पीड़ाशामक, धमनीपोषक और प्रस्वेदकारक।

२३ सर्वज्वरहरिगुटिका

प्रथम विधि—शुद्ध हिंगुल, अभ्रकभस्म और प्रवाल भस्म १-१ तोला, गिलोय सत्व, वंशलोचन, गुलबनफशा, गुलाब के फूल, बीज निकाली हुई मुनक्का, बीज निकाले हुए उन्नाब, छोटी इलायची के दाने, गावजबां के फूल और शीरोखिस्त (Manna), ये ६ ओषधियां ४-४ तोले लें। इन सबको मिला गुलाब जल के साथ १२ घण्टे खरल कर २-२ रत्ती की गोलियाँ बना लेवें।

मात्रा—१ से ३ गोली तक दिन में दो बार जलके साथ देवें।

कर चतुर्थांश क्वाथ करें। फिर छान १६ तोले तिल तैल, बकरी का दूध ३२ तोले तथा मजीठ, मुलहठी, लाख, पतंग और केशर १-१ तोले का कल्क मिला मंदाग्नि पर तैल सिद्ध करें। [श्री० पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य]

उपयोग इस तैल की मालिश मुँह पर करते रहने से मुँह पर की फुन्सियां, काले दाग आदि दूर होकर मुखमण्डल तेजस्वी बन जाता है।

---

४४ मुख रोग प्रकरण।

१. दन्तरक्षक मंजन

विधि—तेजपात ४८ तोले, अकरकरा, काली मिर्च, लौंग, सोंठ, और फिटकरी का फूला २-२ तोले, वादाम के छिलके और बबूल की छाल १६-१६ तोले, नीलाथोथा भूना, सैंधव, कत्था, कबाबचीनी, और साँभर नमक, १-१ तोला, चाकमिट्टी धोयी हुई ४८ तोले, लवङ्ग का तैल, केम्फारेडीन, पीपरमेण्ट का तेल और सत अजवायन १-१ माशा तथा नीलगिरी तैल (यू० के० लिप्टिस ऑइल) १॥ माशो लेवें। तेजपात, वादाम के छिलके बबूल की छाल, इन को जो कूट कर कड़ाही में डालकर अग्नि देवें; सेक सेककर कूटते रहें और छानते जॉय। इस प्रकार खूब तपाकर वारीक कपड़े में छानें। इस तरह चाक मिट्टी और अन्य द्रव्यों को छान कर मिला दें। फिर द्रव द्रव्यों को मिला खरल कर शीशी में वंद करलें।

उपयोग—यह दन्त मंजन दांत, डाढ और मसूढों के दर्द को दूर करता है। रोज उपयोग करते रहने से दांत दृढ उज्वल और स्वच्छ बने रहते हैं। श्री० पं० राधाकृष्णजी द्विवेदी।

जाना, मुख पाक, दाढ़ में वेदना आदि मुख रोग दूर होते हैं। लार टपक जाने पर जल से कुल्ले कर लेवें।

३. दन्त शूलहर चूर्ण।

बनावट—कपूर, हींग, बच और दाल चीनी, चारों को सम भाग मिला कर कपड़ छान चूर्ण बना लेवें।

उपयोग—थोड़ा-सा चूर्ण कपड़े में बांध दांतों के बीच में दवा लेने से कृमि नष्ट हो कर दाढ़ और दांतों का शूल उसी समय शमन हो जाता है।

४. त्रिफलादि मंजन।

बनावट—हरड़, बहेड़ा, आंवला, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, बड़की छाल, पीपल वृक्ष की छाल, पाकर वृक्ष की छाल सोहागे का फूला, सैंधानमक और माजुफल, इन १२ औषधियों को समभाग मिला कूट कर कपड़ छन चूर्ण करें।

उपयोग—इस चूर्ण का प्रयोग दतौन के ब्रुश के साथ नित्य प्रति करते रहने से हिलते हुए दांत भी मजबूत और तेजस्वी बन जाते हैं।

५. दन्त शूलान्तक बिन्दु।

प्रथमविधि—कपूर, पीपर मेण्ट का फूल और क्लोरल हाईड्रेट (Chloral Hydate), तीनों १-१ औंस तथा कार्बोलिक एसिड ३० बूंद लें। सबको मिला लेने से जल के सदृश प्रवाही हो जायगा। इसमें से फुरेरी भिगोकर डाढ़ या दांतके पास रखने से तत्काल वेदना शान्त हो जाती है।

द्वितीय विधि—कपूर, २॥ तोले को रेक्टीफाइड स्पिरिट १० तोले में डालें। गल जाने पर १ औंस टिञ्चर सिनामोम (दाल चीनी का अर्क) मिला लेवें। इसमें से फुरेरी डुबो कर पीड़ित डाढ़ या दांत के पास दबा देने से लालास्राव होकर त्वरित पीड़ा का निवारण हो जाता है।

सूचना—मात्रा अधिक होने पर पसीना अधिक निकलता है; और शीताङ्ग होजाता है। अतः रोगीकी शक्तिको देखकर आवश्यकता पर योग्य मात्रामें इस औषधिका प्रयोग करना चाहिये।

शारीरिक उत्ताप स्वभाविक होजाने पर १ रत्ती रस सिंदूर शहदके साथ देदेनेसे शक्तिका संरक्षण होता है; और शीताङ्गका भय निवृत्त होजाता है।

(२) सोरा, फिटकरीका फूला और अतीस ५-५ तोले तथा आकके मूलकी छाल २॥ तोले लें। सबको मिलाकर खरल कर लेवें। इस मिश्रण मेंसे १–१॥ माशा निवाये जल, चाय या शहद के साथ दो दो घण्टे पर ३-४ वार देनेसे बढ़ा हुआ ज्वर कम हो जाता है। विविध प्रकारके विषम ज्वर, तीव्र आमवातिक ज्वर, आम ज्वर, कफप्रधान ज्वर आदिमें विषको जलाकर प्रस्वेद और पेशाव द्वारा वाहर निकालने और ज्वरको शान्त करनेके लिये यह प्रयोग अति उपयोगी है। छोटे वालकोंको भी यह चूर्ण दिया जाता है।

२५. विषम ज्वरान्तकयोग।

(१) सफेद फिटकरीको मिट्टीके वर्तनके भीतर १६ गुने जल में भिगोकर १ दिन रहने दें। दूसरे दिन जलको छान लोहेकी कड़ाहीमें डाल पकाकर जलको सुखा फिर बोतलमें भरलेंवे। इसमेंसे ३ से ६ रत्ती गुड़के साथ मिला कर देनेसे शीत लगकर आनेवाला विषमज्वर तत्काल रुक जाता है। ताप आनेके ४-६ घण्टे पहले पहली मात्रा और दूसरी मात्रा २ घण्टे बाद देवें। एवं ताप न आया हो, तो पुनः तीसरी बार दो घण्टे बाद एक मात्रा देदेनेसे ताप रुक जाता है। जिन दिनोंमें ताप न हो उन दिनोंमें दिनमें २ बार प्रातःसायं औषधि देनी चाहिये।

विजयसार का बुरादा २० तोले तथा तिल तैल ऽ१ सेर लेवें। पहली २ औषधियों का कल्क करें। शेष ओपधियों का यथा विधि कपाय करें। फिर सबको मिलाकर तैल सिद्ध करें।

उपयोग—इस तैल को फुरेरी से रात्रि के समय लगावें। बढ़े हुए दोषों में इस तैल ५ तोले को गरम करके शीतल किये हुए उत्तम सरसों के तैल ३५ तोले में मिला कर प्रातः काल गंडूष करने से अनेक दंत रोगों (दंतपूय पायोरिया, कराल रोग, दंत पुप्पुट) को नाश करता है। दंतपूय (पोयोरिया) रोग बढ़ने पर ऐलोपेथी पद्धति के अनुसार असाध्य माना जाता है, उसरोग को नष्ट करने में यह अद्वितीय योग है। २० वर्षों का अनुभूत है। पायोरिया की चिकित्सा में पथ्यपेय होना चाहिये। तथा भोजनोत्तर भृंगराजासव पिलाना चाहिये। इस रोग में मंजन, दन्त घर्षण और दतौन नहीं करना चाहिये।

—(श्री० पं० राधाकृष्णजी द्विवेदी)

सूचना—ओपधि कृति में तिल तेल के स्थान पर सरसों का तैल लिया जाय तो विशेष लाभ प्रद होता है।

(संशोधक)

८. सौभाग्य प्रवाही।

विधि—फिटकरी का फूला और मुलहठी १।-१। तोला सोहागे का फूला २॥ तोले और मिश्री २० तोले लेवें। मिश्री का शर्बत बना शीतल होने पर तीनों ओषधियों का कपड़ छान चूर्ण मिला लेवें। —(श्री० वैद्य रविकान्तजी)

वक्तव्य—सोहागे के फूला के स्थान पर एसिड बोरिक और मिश्री के बदले ग्लिसरीन लेने पर योग विशेष लाभदायक बनाता है।

(२) सत्यानाशीके बीज १।। माशेको जलके साथ पीसकर ४ तोले जल मिलावें। फिर आधेनीबूका रस निचोड़ कर ज्वर आनेके तीनचार घण्टे पहले पिला देनेसे सतत एकाहिक, तृतीयक और चातुर्थिक ज्वर रुक जाते हैं। कितनेक चिकित्सक नींबूके रसके बदले ३ रत्ती फिटकरीका फूला मिला लेते हैं। इससे भी ज्वरका शमन होजाता है।

सूचना—*कभी कभी इस प्रयोगसे किसी किसीको एक वमन या एक दस्त होजाता है; परन्तु इससे कोई हानि नहीं होती; भीतरका रहा हुआ दोष निकल जाता है।*

(३) अतीस, सोरा, फिटकरीका फूला और कालीमिर्च, ये चारों १-१ तोला और हिंगुल ३ माशे मिला खरल करलें।

चढ़े हुए तापमें इस चूर्णमेंसे २ से ४ रत्ती निवाये जल या अदरख, पोदीना और दालचीनी मिली हुई चायके साथ देनेसे प्रस्वेद आकर थोड़े ही समयमें ताप उतर जाता है।

जब ज्वर न हो तब ज्वरको रोकने के लिये ३-३ रत्ती ओषधि ३-३ माशे शक्करके भीतर रखकर दिन में २ बार जलके साथ १-२ दिन तक देते रहना चाहिये।

(४) अंकोल के मूलकी अंतरछालका चूर्ण २-४ रत्ती तक निवाये जल या चायके साथ देनेसे पसीना आकर ज्वर निवृत्त होजाता है। किसी किसीको इससे वमन होकर विष निकल जाता है। रोगीको औषध देकर सुला देवें; और रजाई या कम्बल ओढ़ा देने से अत्यन्त प्रस्वेद आजाता है।

(५) हुलहुल का पान १ तोला और कालीमिर्च १।। माशे को मिला जलके साथपीस जलमिला कपड़छानकर पिलानेसे, सुँघाने और नेत्रमें अंजन करनेसे सब प्रकारके विषमज्वर, शीत लगकर आनेवाले एकाहिक, तृतीयक और चातुर्थिक ज्वर दूर हो जाते हैं।

बाद १०-२० कुल्ले करें। इस तरह दिन में २ या ३ समय करने से मुंह के छाले मिट जाते हैं।

सूचना--थूंकको गलेके नीचे न जानेदें, अन्यथा वमन हो जायगी।

(३) उदुम्बर पत्र सार को जल में मिलाकर कुल्ले करने और खदिर तैल लगाने से लाभ होता है।

(४) माजूफल का सत्व २ रत्ती शहद १ तोला में मिलाकर लगावें। --श्री पं० राधाकृष्णजी द्विवेदी

(५) साबूदाना २॥ तोले को दूध ऽ। पानी ऽ। में डालकर खूब उबालें। पश्चात् ठंडा होने पर कुल्ले करें।

(६) वंशलोचन का चूर्ण ४ रत्ती नवनीत (मक्खन) १ तोले में मिलाकर प्रातःसायं चाटें। श्री पं० राधाकृष्णजी द्विवेदी

सेलखड़ी और सोनागेरू १-१ सेर तथा नीलाथोथे का फूला १ तोला मिलाकर खरल कर लेवें। इसे कितनेक चिकित्सकों ने लाल औषध संज्ञा दी है। यह चूर्ण उपलेपक, कीटाणुनाशक, पित्तशामक और रोपण है। इसमें से १-१ रत्ती चूर्ण दिन में ३-४ बार लगा लेने से मुखपाक दूर हो जाता है।

१०. दन्तपीड़ा नाशक योग।

(१) एक नग ताजेया सूखे लालमिर्चमें सेबीज निकाल,जल मिलाकर पीस उसके रस को छान लें। किञ्चित् निवायाकर जिस ओर की दाढ में दर्द हो, उस ओर के कान में चार पांच बूंद डालने से तत्काल डाढ का दर्द शमन हो जाता है। यदि कान में दाह हो, तो लाल खांड एक दो रत्ती डाल देवें।

(२) छोटी कटेली के फल का चूर्ण कर बीड़ी में डाल कर पिलाने से दन्त कृमि तत्काल मर जाते हैं। हिलते हुए दांत की पीड़ा, मसूढे फूलना और सूजन आना, ये सब विकार शमन हो जाते हैं।

११ शिरोर्तिहर नस्य

प्रथम विधि—सोंठ, कालीमिर्च, पीपल ६-६ माशे, वच्छनाग ३ माशे और पीपल की छाल की राख १॥ तोले लें। सब को मिलाकर अच्छी तरह खरल करके मिला लेवें। इसमें से एक एक रत्ती चूर्ण दोनों नासापुटों द्वारा सुंघाने से शिर दर्द (कपाल में वेदना होना), तुरन्त बन्द हो जाता है।
(र० च०)

यदि पित्ताधिक्य शिरःशूल हो तो उपरोक्त नस्य में से वच्छनाग के स्थान पर गुल बनफशा छिल्केसह छोटीइलायची और कपूर मिला देवें। (संशोधक)

द्वितीय विधि—जमाल गोटा जिभ्भी और छिलके रहित २० तोले और कपूर ४० तोले मिलाकर खरल करें। फिर बोतल में भर बालुका पाताल यंत्र से तेल निकाल लेवें। इस तेल को अच्छे डाट वाली शीशी में भर लेवें। बालुका पाताल यन्त्र की विधि रसतन्त्रसार व सिद्ध प्रयोग संग्रह प्रथम खण्ड के परिभाषा प्रकरण में लिखी है। इस शीशी के डाट को हटा कर सुंघाने पर शिर दर्द तत्काल दूर होजाता है।

तृतीय विधि—छोटी पीपल और सैंधा नमक को सम भाग मिला आक के दूध के साथ ३ दिन तक खरल कर सूखा चूर्ण बना लेवें। इसमें से ¼ या ½ रत्ती दोनों नासाछिद्रोंसे सूंघने से ५-१० छींकें आकर और कफ निकल कर शिर दर्द शमन हो जाता है।

सूचना—बहुत छींके आने से वेदना हो जाय तो घृत सुंघावें।

मात्रा—१-१ तोले को ८ तोले जलमें मिला अर्धावशेष क्वाथ कर ३ माशे मिश्री मिलाकर सुबह शाम देवें।

उपयोग—यह कषाय नूतन प्रतिश्याय (जुकाम) और उससे उत्पन्न ज्वर में लाभदायक है। २-३ दिन तक वत्सनाग प्रधान औषधि नागगुटिका, आनंद भैरवरस या त्रिभुवन कीर्तिरस के साथ देने से प्रतिश्याय और ज्वर दूर होजाता है।

श्लेष्म प्रधान ज्वर कफकास और श्वास जिसमें कफ संगृहीत होकर गाढ़ा होगया हो और सरलता से न निकलता हो, ऐसे रोगों पर कफकुठार रसके साथ यह कषाय नौसादर और यवक्षार ४-४ रत्ती मिलाकर देनेसे सत्वर लाभ पहुँचाता है।

द्वितीय विधि— वनफशा, गुलबनफशा, अडूसा, मुलहटी, सपिस्ता (लिह्सोड़े), मुनक्का ये प्रत्येक १-१ तोला कालीमिर्च ६ माशे, इन सबको जौ कूटकर चूर्ण करें। इसकी ६ मात्रा बनावें १ मात्रामें एक तोला शक्कर मिलाकर २० तोले जलमें कलईदार वर्तन अथवा मिट्टी के वर्तन में औटावें। चतुर्थांश शेष रहने पर उतार छानकर पीलेवें। इसी प्रकार शाम और सुबह १-१ मात्रा लेवें। रोग की अवस्था अनुसार कम से कम ३ दिन अधिक से अधिक ७ दिन सेवन करने से नवीन जुखाम एवं तज्जन्य ज्वर, खांसी श्वास (इन्फ्लुएन्ज़ा) आदि रोग नष्ट होते हैं। रोगीको दस्त कब्ज हो गलेमें दर्द होतो ३ माशे हरड़ और ३ माशे मकोय भी मिला देना चाहिये। बिगड़े हुए प्रतिश्याय जन्य दीर्घकालीन कास एवं श्वास हो तो इसके साथ २-२ माशे रेशा खतमी, खब्बाजी, कोयाआब रेशम साफ (कतरे) किये हुए परिवर्द्धित कर जल ३० तोले का चतुर्थांश एवं शक्कर दुगुनी का प्रयोग करने से आश्चर्य जनक लाभ होता है। यह योग हमारे यहाँ का परम्परागत अनु, भूत और रामबाण है। कभी निष्फल नहीं जाता। यह प्रयोग

१५. विश्वविलास तेल।

विधी—काले तिल का तेल ७ सेर, तथा नख, खस, छरीला, सफेद चन्दन, तगर, अगर और जटामांसी, ये ७ औषधियां ५-५ तोले लेवें। पहले तेल को खूब गरम करें। झाग रहित होने पर उतार कर २-२॥ तोले साभर नमक डाल देवें, शीतल होने पर गाद नीचे जम जायगी और ऊपर का तेल स्वच्छ जल सदृश पतला हो जायगा। उसे नितारकर, अमृतबान या टीन के बर्तन में भर कर, उपरोक्त वस्तुओं का जौ कूट चूर्ण डाले पश्चात् मुख मुद्रा करके ७ रोज तक धूप में रक्खें। रोज २-४ बार हिला लेवें। आठवें दिन तेल को निकाल कर छान लें। बाद में हरा रंग (Leipzig) १ तोला तथा विशेष सुगन्ध के लिये जेसमिन (Jasmine) ½ औंस मिला कर बोतलों में भर लेवें।

उपयोग—यह तेल मस्तिष्क पर मर्दन करने के लिये अति हितकारक है। इस तेल में चिपचिपापन या गाढ़ापन न रहने से त्वचा के छिद्र और बालों में जल्दी प्रवेश कर जाता है। यह विद्यार्थी वर्ग और मस्तिष्क से श्रम लेने वालों के लिये अतिहितावह है। यह मस्तिष्क की उष्णता को शान्त कर मगज को सबल और मन को प्रसन्न बनाता है। कितनी क स्त्रियों के बाल उष्णता के हेतु से गिरते रहते हैं, और अधिक नहीं बढ़ते एवं मुख निस्तेज रहता है। ऐसी अनेक स्त्रियों को इस तेल के उपयोग से लाभ हो गया है। इसका उपयोग नित्य करते रहने से मगज सबल रहता है, असमय पर बाल सफेद नहीं होते तथा मुखमंडल तेजस्वी रहता है। इस तरह सारे शरीर पर मालिश करने से त्वचा मुलायम और तेजस्वी बनती है। इस तेल का अनेक वर्षों से इस औषधालय में प्रयोग किया जाता है।

उपयोग—यह लोह स्त्रियों के गर्भाशय की विकृति को नष्ट करता है। गर्भाशय प्रदाह, मासिक धर्म समय पर न आना, मासिक धर्म आने के समय कष्ट होना मासिक धर्म बहुत कम आना, मासिक धर्म में रक्त न ला, काला, पीला या दुर्गन्ध युक्त होना, गर्भाशय में शूल चलना, गर्भाशय में भारीपन बना रहना आदि विकार दूर होकर गर्भाशय शुद्धबन जाता है तथा गर्भाशय विकार से उत्पन्न पांडुता, नेत्र मांद्य, शिर दर्द, कटि पीड़ा आदि भी निवृत्त होकर शरीर सबल और सुन्दर बन जाता है। और संतानोत्पत्तिकारक है।

२ शोणितार्गल रस

विधि—लोह भस्म, अभ्रक भस्म, जसद भस्म, रसौंत, फिटकरी का फूला, प्रत्येक १-१ तोला, रस सिंदूर, रक्तचंदन सोना गेरू और पीपल की लाख २-२ तोले लें। रसौंत के अतिरिक्त सब औषधियों को खरल में मिला रसौंत के जल के साथ खरल कर २-२ रत्ती की गोलियां बना लेवें।

श्री वैद्य गोपालजी कुंवरजी ठक्कुर।

मात्रा—१ से २ गोली उसीरासव या जल के साथ दिन में दो बार देवें।

उपयोग—यह रसायन रक्तार्श, रक्त प्रदर, रक्तातिसार आदि विकारों में रक्तस्राव को बन्द करने और शक्ति का संरक्षण करने के लिए उपयोगी है। इस रसायन के सेवन से रक्तवाहिनियां अन्त्र और गर्भाशय आदि स्थानों की उष्णता शमन होकर रक्तस्राव बन्द होता है। इस हेतु से इसके प्रयोग में दूषित रक्त रुककर भविष्य में हानि पहुँचने की भीति नहीं रहती। यह निर्भय औषधि है।

अति रजस्राव होने पर शोणितार्गल बबूल की कच्ची फली के चूर्ण और मिश्री के साथ दिन में ३ बार देवें और ऊपर लोध्रासव पिलाने से सत्वर लाभ पहुँच जाता है।

अन्न खालिया उनके शरीर में रहे हुए विषने प्रकुपित होकर उनका प्राण हरण कर लिया है।

सूचना—*किसी रोगीको इस वटीके सेवन कालमें पतले दस्त होने लगें तो भय न माने। विकार होगा वह निकल कर स्वयमेव दस्त बंद होजायगा। रोगी को जल गरम करके शीतल किया हुआ देना चाहिये।*

२९. हिमरत्नाकर चूर्ण।

विधि—सफेद चन्दनका बुरादा, गुलाब की कली सूखी, सेवती गुलाब, काहू, कुलफा, ताजा खस, धनिया, कासनी, नीलोफर नया, सौंफ, छोटी इलायचीके दाने, खीराके बीज, ककड़ीके बीज, कालीमिर्च, इन १४ द्रव्योंको १-१ तोला मिलाकर मोटा मोटा कूट लें। चूर्ण समाप्त होने पर फिर नया बना लेवें। तैलीय द्रव्य कूटे हुए अधिक काल तक पड़े रहने पर दूषित होजाते हैं। श्री० पं० मुरारीलालजी वैद्य शास्त्री

मात्रा—६ माशे से २ तोले तक सुबह १ समय। रात्रिको नये मिट्टीके बर्तनमें २० तोले जल मिलाकर भिगोवें। सुबह जलको अलग निकाल औषधको शिला पर चटनीकी तरह पीसें। फिर उस जलमें घोल, कपड़े से छान, २ तोले मिश्री मिलाकर पिला देवें। यदि शिला पर न पीस सकें, तो अच्छी तरह मलकर छान लें और मिश्री मिलाकर पिला देवें।

उपयोग—हिमरत्नाकर चूर्ण ग्रीष्मऋतुमें अति उपकारक है। सूर्यके तापमें फिरनेसे लूलगना, चक्कर आना, व्याकुलता होना, नकसीर चलना, कण्ठावरोध होना, मंद मंद जुकाम होना, फिर उस हेतु से निद्रा न आना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। ऐसे समय पर हिमरत्नाकर का हिम बना कर प्रातःकाल पीते रहनेसे

के मूल ४० तोले मिला, जौकुट कर चौगुने जल में पकावें। चौथाई जल शेष रहने पर कपड़े से छानकर पुनः मंदाग्नि पर पकावें। कल्छी को लगने लगे तब नीचे उतार कर धूप में सुखावें। गोली बनने योग्य हो जावे तब उसमें कूठ का चूर्ण २ तोले, आबशीर २ तोले और जुन्देबेदस्तर १ तोला मिला २-२ रत्ती की गोलियाँ बना लेवें।

मात्रा—४-४ गोली प्रातः सायं जल से देवें। रजोदर्शन के समय में निम्न क्वाथ से देवें।

क्वाथ—अजवायन, मुश्कतरामशी, अनीसून, अबहल, ककड़ी का मग्ज़, गोखरू, और हंसराज, सब ६-६ माशे लें, २० तोले जल में पका ५ तोले शेष रहने पर कपड़े से छान १ तोला गुड़ मिलाकर पिलावें।

उपयोग—यह वटी स्त्रियों के मासिक धर्म की विकृति, रज स्राव योग्य न होना; उस समय भयंकर शूल चलना, रक्त थोड़ा काला-पीला, झाग वाला गिरना, और इस विकार हेतु से नेत्र की निर्बलता, मस्तिष्क में वेदना, शारीरिक अशक्ति, आलस्य, मानसिक अस्वास्थ्य आदि को दूर करती है।

श्री पं. यादवजी त्रिकमजी आचार्य

सूचना—इसमें खुरासानी अजवायन १ मात्रा में १ से २ रत्ती तक क्वाथ या चूर्ण के रूप में देने से वेदनाशामक गुण विशेष बढ़ जाते हैं। यह अनुभुत है। (संशोधक)

५ बोलभद्र वटी

विधि—बीजाबोल (मुरमकी) १० तोले, सोहागे का फूला, विलायती कासीस और एलुवा, ५-५ तोले, और भुनी हींग २॥ तोले लें। सबको मिला जटामांसी के फांट में १२ घंटे खरलकर २-२ रत्ती की गोलियां बना लेवें।

श्री० पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य

लू लगने और अन्य विकार होनेकी भीति दूर होती है। यह चूर्ण ग्रीष्मकालके लिये हित कारक है। अन्य ऋतुमें इसका उपयोग विचार पूर्वक करना चाहिये।

ग्रीष्म ऋतुमें रात्रिको उष्णता अधिक रहती है। जिससे योग्य निद्रा नहीं आती। फिर अन्न पचन नहीं होता। दिनमें भी उष्णता के हेतुसे रक्तमें मूत्र विष बढ जाता है। उसे पूर्ण रूपसे वृक्क बाहर नहीं निकाल सकता। जिससे पेशाब पीला हो जाता है। मूत्र विष कितनेक अंशमें रक्तके भीतर शेष रह ही जाता है। इस हेतुसे मस्तिष्क निर्बल बनता है। अतः हिमरत्नाकरका सेवन कराने से पेशाब साफ आता है। और मूत्र विष बाहर निकल जाता है, फिर निद्रा शान्त आने लगती है, व्याकुलता नहीं होती और पाचन शक्ति योग्य कार्य करने लगती है।

गर्मीके दिनोंमें अपचन होकर पीले पतले १-२ दस्त या कै अथवा दस्त और कै हो जाते हैं। विशेषतः यह प्रकोप दिनमें भोजनके बाद होता है। बेचैनी होती है। किन्तु अधिक निर्बलता नहीं आती। शरीर शीतल नहीं होता; दस्त के समय पेशाब होता रहता है। उस पर हिमरत्नाकरके हिममें नींबू या सन्तरेका शर्बत १ तोला और ½ रत्ती कपूर मिला कर पिला देने से वमन और दस्त, दोनों बन्द होजाते हैं। कितनेको दूषित पदार्थ खानेमें आनेसे कीटाणु सह विसूचिका (हैजा) हो जाता है, उसमें दस्त और कै थोड़े-थोड़े समय में होने लगते हैं, शरीर शीतल होजाता है, पेशाब नहीं होता, हाथ पैर में बांयटे आतेहैं, उस पर इस हिमरत्नाकरका उपयोग नहीं करना चाहिये।

वृक्क कार्य योग्य न होनेसे पेशाबकी उत्पत्ति योग्य नहीं होती। फिर रक्तमें विष संगृहीत होता रहता है। इसी हेतुसे रात्रिको देह और मस्तिष्कमें उष्णता रहती है। तथा नेत्रमें कमजोरी, नेत्रमें जलन, आलस्य बना रहना, पचन क्रिया मंद होजाना, शरीर

बेल के (बंगला) पान के स्वरस में १२ घण्टे खरल कर १-१ रत्ती की गोलियां बना लेवें।

मात्रा – १-१ गोली दिन में २ से ४ वार अदरख के रस और शहद के साथ देवें।

उपयोग—यह गुटिका सूतिका ज्वर, कफकास, हृदय की शिथिलता, वातप्रकोपज उपद्रव, इन सबको दूर करती है।

इस गुटिका में उत्तेजक, स्वेदल, ज्वरघ्न, आमपाचन, कीटाणुनाशक, कफघ्न, और वातहर गुण अवस्थित है। यह गुटिका प्रसूता के वातप्रकोपज ज्वर और कफ प्रकोप पर चमत्कारी लाभ पहुंचाती है। जिस तरह आनन्द भैरव रस का उपयोग सामान्य बोधवाले चिकित्सक विविध स्थानों पर करते रहते हैं, उसी तरह यह रसायन सूतिका ज्वर की विविध अवस्थाओं में निर्भयता पूर्वक प्रयोजित हो सकता है।

प्रसवावस्था में योग्य सम्हाल न रहने पर योनि मार्ग से कीटाणुओं का प्रवेश होजता है। इन कीटाणुओं में से कितनीक जाति के कीटाणुओं के विष का संचय होने पर वातनाड़ियों की विकृति होती है फिर त्रिदोषज ज्वर उपस्थित होता है। वात प्रकोप के लक्षण व्याकुलता, हाथ पैर टूटना, कभी दांत भिंचना प्रलाप आदि प्रकाशित होते हैं। किसी किसी को कफ बढ़ जाता है। शीत लगना, अरुचि, मलावरोध, किसी किसी को अपचनजनित पतले दस्त होना, शिर दर्द बना रहना और उदर शूल आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। इस विकार पर यह रसायन लाभदायक है। यदि गर्भाशय में दुर्गन्ध युक्त स्राव होता रहता हो, तो वस्तिद्वारा गर्भाशय को शुद्ध कर लेना चाहिये। गर्भाशय की शुद्धि होने पर सत्वर गुण दर्शाता है।

शुष्क और श्याम हो जाना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उस पर हिम रत्नाकर चूर्ण और ताजी गिलोय २ तोलेका हिम बना, फिर शर्बत उन्नाव २ तोले मिलाकर पिलानेसे प्रकृति स्वस्थ हो जाती है।

कितनीक स्त्रियों को रक्तमें मूत्र विष वृद्धि हो जाने पर पेशाब पीला जलता हुआ होता है, शाम के समय नशा सा मालूम होता है। जैसे भांग पिया हो, इनके अतिरिक्त हृदय का धड़कना, कण्ठ, मुखका सूखना, तृषा अधिक लगना, दाह होना, शिरमें भारीपन रहना, मासिक धर्ममें रजः काला पीला, जमा हुआ थोड़े परिमाणमें और दर्द सह गिरना और उसी हेतुसे नेत्रमें निर्बलता आना आदि लक्षण होते हैं। उस पर हिमरत्नाकर चूर्ण १ तोला ताजी गिलोय ६ माशे, जीरा २ माशे और काली सारिवा ६ मासे मिला हिम बनाकर पिलाना चाहिये।

३०. कमलादि फाण्ट।

विधि—कमलके फूल, सफेदचन्दन, लालचन्दन, खस, मुलहठी, नागरमोथा, सारिवा और मिश्री ये ८ ओषधियां २-२ तोले लेकर अधकचरा करें। फिर ६४ तोले उबलते हुए जलमें डालकर ढक देवें। शीतल होने पर कपड़ेमें छान कर थोड़ा-थोड़ा (८-१० तोले) पिलाते रहें।

श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य

उपयोग—इस फाण्टका सेवन कराने से हृदयका संरक्षण होता है; पेशाब साफ़ आता है; दाह शमन होता है; पित्त जन्य दस्तों को मिटाता है। एवं हृदय की धड़कन और नाड़ीकी गति का बढ़ा हुआ वेग फिर कम होजाता है। तीव्रज्वर (१०२ डिग्री से अधिक) अनेक दिनों तक रहजाने पर हृदयेन्द्रिय विकृत और शिथिल होजाती है। ऐसे ज्वरोंमें यदि प्रारम्भसेही इस फाण्ट

उपयोग—यह वटी बालकों के बालशोष को दूर करती है। जीर्ण ज्वर, बालकों का कृश होजाना, पाण्डुरोग, अपचन, आफरा, वान्ति या दस्त हो कर दूध निकल जाना, खांसी, स्फूर्ति का अभाव, मुखपाक, पेशाब गाढ़ा होना आदि विकार इस वटी के सेवन से दूर होकर बालक नीरोगी और सबल होजाता है।

इस वटी के साथ अरविंदासव देते रहने से लाभ जल्दी पहुँचता है।

नोट—क्षुद्र शंखभस्म भी मिलायी जाय तो विशेष गुणकर है। (संशोधक)

२. मालती चूर्ण।

बनावट—खपरेल के टुकड़े जैसा खपरिया बाजार में जो मिलता है, वह छोड़ कर असली खर्पर या पेप्रेटा अथवा जसद के फूले में से बनाया हुआ खपरिया १ सेर लेकर हांडी में डाल १ सेर नींबू के रस में मिला कर मंदाग्नि पर उबालें। रस जल जाने पर हांडी को उतार लेवें। शीतल होजाने पर यह शुद्ध खर्पर १ सेर, बड़ी हरड़ १ सेर और छिलके सहित छोटी इलायची आधा सेर मिला कूट कपड़ छान चूर्ण कर बोतल में भर लेवें। (आ० नि० मा०)

मात्रा—१ से ३ रत्ती तक दिन में दो बार देवें।

उपयोग—बालकों के बालशोष, जीर्ण अतिसार, जीर्ण-ज्वर, वमन, मुखपाक, गुदापाक, अस्थि मार्दव, निर्बलता, अग्निमान्द्य आदि रोग तथा प्रसूता के जीर्ण ज्वर को दूर करता है। यह चूर्ण रस धातु और रसायनियों को पुष्ट बनाता है। इस हेतु से शेष रक्त आदि धातुएं भी सबल बन जाती है।

का सेवन कराया जाय तो हृदय पर ये दोनों घातक परिणाम नहीं होते।

यह फाण्ट पित्तज्वर, विविध प्रकारके विषम ज्वर (मलेरिया) मोतीझरा, और पित्तप्रधान रक्तष्ठीवी आदि में हितकारक है।

३१. सुदर्शन मिश्रण।

विधि—महा सुदर्शन चूर्ण १० तोले, सोडा बाईकार्ब (सज्जीखार) २॥ तोले, एरंड तैलमें भुने हुए कुचलेका चूर्ण ½ तोला और फिटकरी का फूला १॥ तोला लें सबको मिलाकर खरल करलें। *श्री० पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य*

मात्रा—३-३ माशे दिनमें २ या ३ बार जल के साथ।

उपयोग—यह मिश्रण वर्षा ऋतु और शरद् ऋतुमें आने आने वाले बुखार, अपचनसे आने वाले बुखार, ठण्डी लगकर आने वाले बुखार (मलेरिया), बार-बार थोड़े-थोड़े दिनों पर आने वाले बुखार, जुकामके साथ बुखार पर लाभदायक है। यह मलावरोध, अग्निमान्द्य, शिर दर्द, अरुचि, आलस्य, आम और कफप्रकोप आदि लक्षणों सह ज्वरको दूर करता है। ज्वर न हो तब तथा ज्वरावस्थामें भी निर्भयता पूर्वक यह व्यवहृत होता है।

३२ संज्ञा प्रबोध प्रधमन (नस्य)

प्रथम विधि—वच, लहशुन, कुटकी, सैंधानमक, बड़ी कटेली के फल, रुद्राक्ष, मोम और समुद्र फल, इन सबको समभाग लें। मोमको अलग रखकर सबको कूट कपड़ छान चूर्ण करें। फिर मोम मिला आकके दूधकी ३ भावना देवें। पश्चात् मयूर पित्तकी ३ भावना देकर चूर्ण बना लेवें। (वै० सा० सं०)

उपयोग—इस चूर्ण में से १ रत्ती नाकके भीतर फूँक देनेसे सन्निपातमें बेहोशी दूर होजाती है। एवं कफाधिक वायु, अपस्मार,

हैं। जुकाम, अतिसार, वान्ति कास आदि का प्रकोप हुआ हो तो दूर होजाता है।

४. सुधाषट्क योग

विधि—प्रवाल भस्म १ तोला, शुक्ति भस्म २ तोले, शंख भस्म ३ तोले, वराटिका भस्म ४ तोले, कछुए की पीठ की भस्म ५तोले और गोदन्ती भस्म ६ तोले मिला नींबू के रस में ३ दिन खरल कर लेवें। (श्री पं० यादवजी त्रिकमजी अचार्य)

मात्रा—१ से ४ रत्ती दूध के साथ दिन में ३ बार।

उपयोग—यह सुधाकल्प अस्थिमार्दव, बालशोष (सूखा) पर अच्छा लाभ पहुँचाता है। सगर्भावस्था में माता निर्बल होने पर या बाल्यावस्थामें माता रुग्ण हो जाने या अन्य किसी कारण से बालकका योग्य पोषण नहीं होता। माताकी अस्थियां निर्बल होने पर दुग्ध (स्तन्य) में अस्थिपोषक सत्व कम होता है। इस हेतु से बालक को बालशोष (अस्थिमर्दव-rickets) रोग हो जाता है। इस रोगमें विशेषतः पैर की हड्डी मुड़ जाती है। छाती और हाथ आदि की हड्डियां भी अति कमजोर होती हैं। नितम्ब पर सिकुड़न हो जाती है। किसी किसी बच्चे को ज्वर भी रहता है; बार बार थोड़ा थोड़ा दस्त होता रहता है या कब्ज रहती है। इस रोग में हड्डियों में सुधा (चूना) का परिमाण कम हो जाता है। इस हेतु से इस सुधाकल्प का सेवन कराने पर हड्डी सबल बन जाती है; ज्वर शमन हो जाता है। पचन क्रिया सुधर जाती है और शरीर बलवान और नीरोगी बन जाता है।

५. बालशोषहर गुटिका।

विधि—प्रवाल पिष्टी, और लघुमालिनी वसन्त (प्रथम-विधि) को समभाग मिलागूलर के दूध में १२ घण्टे खरल कर आध आध रत्ती की गोलियां बनावें।

हलीमक, शिरोरोग, कर्णरोग, मूर्च्छा आदिमें भी यह प्रधमन (नसा) सत्वर लाभ पहुंचा देता है।

द्वितीय विधि--शुद्ध पारद, शुद्धगन्धक, कायफलकी छाल, नयी पीपल छोटी, सफेद मिर्च और तमाखु, सब समभाग लेवें। पहले पारद गन्धक की कज्जली करें। फिर शेष ओषधियों का कपड़छान चूर्ण मिलाकर दो तीन दिन खरल कर लेवें।

उपयोग---इस नस्य मेंसे १ रत्ती जितना सुँघानेपर सन्निपात आदि रोगोंमें तत्काल मूर्च्छा दूर होकर चेतना आजाती है।

३३. किरातादि कषाय।

विधि---चिरायता, कुटकी, गिलोय, पित्तपापड़ा, सोंठ और नागर मोथा, इन ६ ओषधियों को समभाग मिला, जौ कूट चूर्ण कर २-२ तोले का क्वाथकर दिनमें २ बार पिलाते रहनेसे सब प्रकारके नये ज्वर ३-४ दिनमें दूर होजाते हैं। मलावरोध, पित्त प्रकोप और उदर में वायु भरा रहना, आदि विकार भी शमन होजाते हैं।

३४. पञ्च तिक्त कषाय।

विधि—छोटी कटेलीकी जड़, नीम-गिलोय, सोंठ, पुष्कर-मूल और चिरायता इन ५ ओषधियों को समभाग मिला जौ कूटकर २-२ तोलेका क्वाथकर दिनमें दो बार पिलाते रहें। पिलानेके समय १-१ तोला शहद मिलादेवें (च० द०)

उपयोग—इस कषाय के सेवन से सामान्य ज्वर, अपचन से उत्पन्न ज्वर, कफ प्रकोपज ज्वर, शीत ज्वर, बढने घटनेवाले सब प्रकारके मलेरिया ज्वर और दिनों तक बने रहने वाले जीर्ण ज्वर आदि सबका नाश होता है। सामान्य ओषधि होते हुए भी अच्छा लाभ पहुँचाती है।

छाल, नीमकी अन्तर छाल, नागरमोथा, इन्द्रजौ, कूठ, सिरसके बीज, अजवायन, मुलहठी, कोयल (गिरिकर्णिका), दन्तीमूल, चित्रक मूलकी छाल और बेलकी छाल, इन ४१ ओषधियों को २-२ तोले लेकर कल्क करें। फिर कल्क, ४ सेर गोघृत और मूत्राष्टक (भैंस, बकरा, भेड़, गौ, घोड़ी, गधी, ऊँटनी, और हथिनी का मूत्र) १६ सेर मिला कर मंदाग्नि से घृत सिद्ध करें। (अ० हृ०)

मात्रा—२ से ४ माशे दिनमें २ बार देवें।

उपयोग—इस घृत का सेवन कराने से बालकों के उन्माद, बालग्रह, अपस्मार, कुष्ठ, ज्वर आदि रोग दूर होते हैं। उदर सेवन के अतिरिक्त नस्य, अभ्यंग और अञ्जन रूपसे भी उपयोग होता है। यह घृत भीतर संगृहीत दोष को बाहर निकालता है, पचनक्रिया को सुधारता है तथा वातसंस्था को सबल बनाता है। अन्त्रविकृति और वात संस्थान की विकृति या शिथिलता से उत्पन्न रोगों को नष्ट करने में हितकारक है। यह घृत बालक और बड़े मनुष्य सबके लिये हितावह है।

१४. कुमार कल्याण घृत।

विधि—शंखाहुली, वच, ब्राह्मी, कूठ, हरड़, बहेड़ा, आंवला, मुनक्का, मिश्री, सोंठ, जीवन्ती (गुजराती डोडीशाक), जीवक, खरैंटी, कचूर, धमासा, बेलछाल, अनार की छाल, तुलसी के पत्ते, शालपर्णी, नागरमोथा, पुष्करमूल, छोटी इलायची, पीपल, खस, गोखरू, अतीस, पाठा, वायविडङ्ग, देवदारू, चमेली के फूल, महुए के फूल, पिण्ड खजूर, मीठे बेर और वंश लोचन, ये ३४ ओषधियां १-१ तोला मिला कर कल्क करें। फिर कल्क, कल्क से चौगुना गोघृत, घी से चौगुने चौगुने गोदुग्ध और छोटी कटेरी के क्वाथ को मिला मंदाग्नि से घृत सिद्ध करें। (श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

सूचना—इस क्वाथसे उबाक या बेचैनी होने लगे, तो मात्रा कम कर देनी चाहिये।

अति मलावरोध हो तो इस क्वाथमें कुटकी मिला लेनी चाहिये।

३५. सन्निपातिक क्वाथ।

प्रथम विधि—पीपलामूल, देवदारु, इन्द्रजव, बायविडंग, ब्राह्मी, भांगरा, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, चित्रकमूल, कायफल, कमलका कंद, इन १२ ओषधियों को समभाग मिलाकर जौ कूट चूर्ण करें। (वै० सा० सं०)

मात्रा—२-२ तोलेका क्वाथकर दिनमें ३ समय (आवश्यकता पर २-२ घण्टे पर) १-१ माशा गूगल मिलाकर देवें।

उपयोग—यह क्वाथ वातप्रकोपशामक है। इसके सेवनसे सन्निपातके उपद्रव शीत, प्रलाप, अति प्रस्वेद, शूल और कफ आदि (विशेपकर संधिक सन्निपात के) सत्वर दूर होकर रोग निवृत्त हो जाता है। सूतिका ज्वरमें भी यह अति हितकारक है।

दूसरी विधि—रास्ना, हरड़, छोटी कटेली, बड़ी कटेली, निर्गुण्डी, पाठा, वच और चव्य, इन आठ ओषधियों को समभाग मिलाकर जौ कूट चूर्ण करें। (वै० सा० सं०)

मात्रा—२-२ तोलेका काथकर ३ समय १-१ माशा गूगल मिलाकर देवें।

उपयोग—इस काथके सेवनसे सन्निपातमें वात और कफ प्रकोप का सत्वर शमन होजाता है। अति प्रस्वेद आकर शरीर शीतल होजाना, प्रलाप, उदरशूल, कण्ठमें से कफ की आवाज आना, श्वास का वेग बढ़ जाना और सूतिका रोग, आमज्वर ये सब दूर होते हैं।

मात्रा—१ से ३ माशे दिन में दो बार मिश्री मिला कर चटावें या निवाये दूध में मिलाकर पिलावें।

उपयोग—यह घृत एक वर्ष से बड़ी आयु वाले बालक के लिये लाभदायक है। इस घृत के सेवन से दांत आने के समय में कष्ट नहीं पहुँचता। एवं यह बल, वर्ण, पुष्टि, रुचि, जठराग्नि, बुद्धि और आयु को बढ़ाता, है। बालग्रह, कृमि आदि समस्त बाल रोगों को दूर करता है।

वक्तव्य—यदि यकृत् निर्दोष हो, बढा न हो, तो इस घृत का सेवन कराना चाहिये।

१५. श्वासान्तक योग

योग—मोरके अण्डोंके छिल्टे की भस्म २ से ४ चावल तक माता का दूध या शहद के साथ देने से श्वास प्रकोप और डब्बा रोग में तत्काल लाभ होजाता है। आवश्यकता पर ३ घण्टे बाद दूसरी मात्रा देवें।

१६ बाल अतिसार हर योग

योग--मक्कईकी डोंडियों (दाने निकाल लेनेके पश्चात्) को जलाकर कोयले करें। इसमें से २-४ रत्ती मट्ठे के साथ पिलाने से दांत आने के समय के दस्त जो हरे-पीले होते हैं, जिनमें दही के कण जैसे कण भासते हैं; वे तुरन्त बन्द हो जाते हैं। यह औषधि बड़े मनुष्य के पेचिश पर भी लाभ पहुँचाती है। और बच्चों की कूकर खांसी को भी दूर करती है।

१७. धनुर्वात हर योग।

(१) सोहागा का फूला २-३ रत्ती माता के दूध या शहद के साथ १-१ घण्टे पर देते रहने से १-२ या ३ घण्टे के भीतर बालकके धनुर्वात का दौरा शमन हो जाता है। धनुर्वात के समय हाथ की मुट्ठियां बन्द हो जाती हैं; हाथ पैर सिकुड़ते हैं;

३६. दार्व्यादि क्वाथ

विधि—दारू हल्दी, देवदारू, इन्द्रजौ, मजीठ, अमलतास और पाढ ३-३ तोले, कपूर कचरी, खस, पीपल, चिरायता, गजपीपल, बनफसा, तगर, पद्माख, काकडासिंगी, धनिया, सोंठ, नागरमोथा, निशोथ, वज्रदन्ती (पियाबांसा), हरड, छोटी कटेली, नाव, कुटकी, जवासा, नीमगिलोय और पुष्करमूल ये २१ ओषधियां १-१ तोला खूबकला, त्रायमाण, सप्तपर्ण की छाल और कालमेघ ५-५ तोले लें। सबको मिलाकर जौकूट चूर्ण करें

श्री वैद्यराज पं० रामचन्द्र जी शर्मा।

मात्रा—१-१ तोले का क्वाथ कर दिनमें २ बार पिलावें।

उपयोग—यह क्वाथ विषम ज्वरके लिये अति लाभदायक सिद्ध है। हजारों रोगियों को दिया गया है, कभी निष्फल नहीं हुआ। साम ज्वरमें आम विष और कीटाणुओंको जलाकर नूतन ज्वरको दूर कर देता है। जीर्ण ज्वरमें यह सर्व ज्वरहर लोह के साथ अनुपान रूपसे दिया जाता है।

३७. मृतसंजीवनी सुरा।

बनावट—एक वर्ष से अधिक पुराना गुड़ १०२४ तोले, बबूल की छाल ८० तोले, अनारके फलकी छाल, अड्डूसे की छाल मोचरस, लजवंती, अतीस, असगन्ध, देवदारु, बेलकी छाल, श्योनाककी छाल, पाटलाकी छाल, शालपर्णी, पृष्ठपर्णी, बड़ी कटेली, छोटी कटेली, गोखरू, बड़े बेरकी जड़, इन्द्रायणकी जड़, चित्रकमूल, कौंच और पुनर्नवा, इन २० ओषधिओं को ४०-४० तोले लेवें। फिर ओषधियों का जौकूट चूर्णकर गुड़से आठ गुने जलमें मिला मिट्टीकी नांदमें भर मुँह बन्द कर देवें। १६ दिनके पश्चात् चिकनी सुपारीका मोटा चूर्ण १२८ तोले, धतूराकी जड़, लौंग, पद्माख, खस, लालचन्दन, सोया, अजवायन, कालीमिर्च, जीरा,

आंखों की पुतली ऊपर चढ़ जाती है; कभी दाँत भिच जाते हैं; मुँह में झाग आ जाते हैं; एवं कभी कभी मूत्रावरोध आदि लक्षण उपस्थित होते हैं वे आक्षेप बार बार आते रहते हैं। वे सोहागा का फूला देने से बन्द होजाते हैं, और बालक प्रसन्न रहता है। साथ साथ आक्षेप काल में प्याज को काट छोटे छोटे टुकड़े बारबार सूंघाते रहने से सत्वर लाभ पहुँचता है। सूंघाने के समय ही टुकड़ा काटना चाहिये।

कितनेक चिकित्सक सोहागे के साथ आध से एक रत्ती वच मिला देते हैं। कफ वृद्धि होने पर वच मिला देने से अधिक लाभ पहुँचता है। वचसे वमन होकर सत्वर कफ निकल जाता है। मूत्र शुद्धि होती है। फिर आक्षेप दूर होकर शान्त निद्रा आजाती है। आक्षेप शमन होने पर मूल कारण को दूर करने के लिये लक्ष्मीनारायण रस देवें। या हेतु अनुरूप चिकित्सा करते रहें।

(२) बालकोंके धनुर्वात पर सोहागे का फूला २ रत्ती अफीम आधी रत्ती मिलाकर जलके साथ देनेसे लाभ हो जाता है।

१८. पारदादि चूर्ण।

(हाइड्रार्जिरम् कम क्रिटा-मर्क्युरी विथ चॉक-ग्रे पाउडर)

विधि — शुद्ध पारद १ औंस और विशुद्ध खटिका (चाक-Prepared Chalk) २ औंस मिलाकर खरल करें। जब तक पारद अदृश्य न हो, और चूर्ण भूरा रंग का न हो जाय, तब तक घोटना चाहिये।

मात्रा—आध से २॥ रत्ती दिनमें दोबार जल के साथ दें।

उपयोग— शिशुओं को अतिसार और यकृद् विकार होने पर इस चूर्ण का उपयोग किया जाता है।

कामला और ज्वर रोग में आमाशय और अन्त्र का विकार होनेपर यह चूर्ण बहुत लाभ पहुँचाता है। इन दोनों विकारों में

कालाजीरा, शठी, जटामांसी, दालचीनी, छोटी इलायचीके दाने, जायफल, नागरमोथा, गठिवन (पीपलामूल), सोंठ, मेथी, मेष-शृङ्गी और सफेद चन्दन, इन २१ ओषधियों का मोटा-मोटा चूर्ण ८-८ तोले डालकर मुँह बन्द करें। फिर ४ दिनके बाद भबका यन्त्र से सुरा चुआ लेवें।

मात्रा—आधसे १ तोला तक जल मिलाकर सेवन करें।

उपयोग—यह सुरा धातु, आयु और शक्ति अनुसार नित्य पीते रहनेसे शरीरको सुदृढ बनाती है। पुष्टि, बल, कान्ति और अग्नि को बढ़ाती है। एवं घोर सन्निपात, ज्वर और विपूचिका आदि नाना प्रकारके रोगों की बढ़ी हुई अवस्था में (शीताङ्ग अवस्था में) तत्काल अपना प्रभाव दर्शाती है।

सूचनाः—इसकी विधिमें नांदमें भरकर १६ दिनतक रखनेका लिखा है किन्तु इतनेक दिनोंमें खमीर नहीं उठता। अतः ग्रीष्म ऋतुमें कमसेकम १६ से तीस दिनतक एवं शीतकालमें १ से १॥ मास तक अवश्य रखना चाहिये, अर्थात् जब तक इसमें मद्यकिण्व उत्पन्न न हो तबतक रखना नितान्त आवश्यक है तत्पश्चात् यन्त्र द्वारा खेंचलें। यदि जल्दी मद्य किण्वकी उत्पत्ति करानी हो तो द्राक्षासव आदि आसव-अरिष्ट उत्तम प्रकारके बने हुए हों उनके बर्त्तनोंमेंसे गाद डाल देनी चाहिये। गाद डालने के बाद मद्य किण्व उत्पन्न होजाय, तब खेंच लेना चाहिये। मद्यकिण्व उत्पन्न होजाने की परीक्षा यह है कि जब खमीर उठने लगता है तब बर्त्तनमेंसे एक प्रकार की आवाज बाष्प निकलने की हुआ करती है; मद्यकिण्व उत्पन्न हो जाने पर वह आवाज बन्द होजाती है। और खोलकर देखने पर झाग वगैरह न दीखकर स्वच्छ नितरा हुआ जल दिखाई देता है। इत्यादि ?

३८ मृगमदासव।

बनावट—सिद्ध मृतसंजीवनीसुरा ५० तोले, कस्तूरी ४ तोले,

अग्नि के पास इस तैल की शीशी को नहीं रखना चाहिये। उष्ण काल में इस औषधि को कम मात्रा में प्रयोजित कर।

२ अर्कादि वटी

विधि—आककी जड़ की छाल (एप्रिल और मय मास में निकाल कर छाया में सुखायी हुई) धतूरे के पान और मिश्री, सबको सम भाग मिला आकके पानों के रस में ६ घण्टे खरल कर १-१ रत्ती की गोलियां बना लेवें।

मात्रा—२ से ४ गोली दिन में दो बार निगलवा देवें (जल १ घंटे तक न पिलावें) और २-४ तोले भूने चने खिलावे।

उपयोग—इस औषधके सेवन से पागल कुत्ते और सियार का जहर जल जाता है और रक्त निर्विष हो जाता है। ४-६ मास तक दवा देते रहना चाहिये। यह औषधि वमन कराती है इस हेतु से चना खिलाया जाता है और जल का निषेध किया है। चना खा लेने पर वान्तिकर असर कम हो जाता है।

३. जैपालाञ्जन।

विधि—एक नीबू के फल के ऊपर की छाल काटकर उसमें छिलके और जिह्वी निकाली हुई जमालगोटे की ७ गिरी भर फिर कटी हुई छाल रख नीबू को सूतसे बांध कर मकान में एक ओर रहने देवें। ७ वें दिन जमालगोटे की गिरी को निकाल कर सूर्य के तापमें सुखालेवें। फिर उनको दूसरे नीबू में भर कर रखदेवें; और ७ वें दिन निकाल कर सुखा लेवे। इस तरह ७ नीबू ओं में भर कर सुखा लेवें। (भा० भै० र०)

उपयोग—इस गिरी को नीबू के रस या मनुष्य के थूंक में घिसकर नेत्रमें अञ्जन करने से सर्पदंश से उत्पन्न मूर्च्छा दूर होती है। सांप के विष से बहुधा बेहोशी आजाती है। फिर विष सरलता से नहीं उतरता। यह अञ्जन कर देने पर तन्द्रा, निद्रा या मूर्च्छा नहीं होती।

कालीमिर्च, लौंग, जायफल, पीपल और दालचीनी, प्रत्येक २-२ तोले लें। इन सबको मिला बोतलमें भर मुँह बन्दकर एक सप्ताहतक रहने दें। फिर छान लेवें। (भै० र०)

सूचना—*मूल ग्रन्थमें इस आसवमें शहद और जल २५-२५ तोले मिलाने और एक मास तक बन्द रखनेको लिखा है।*

कस्तूरीको शरावमें खरल करके मिलानी चाहिये। फिर सब ओषधियां मिलाकर बोतलको अच्छी तरह हिलावें। एवं रोज दो तीन बार बोतलको हिलाते रहना चाहिये।

मात्रा—५ से १० बूंद जल मिलाकर १-१ या आध आध घण्टे पर रोग शमन होने तक देते रहें।

उपयोग—यह आसव उत्तेजक, उष्णतावर्धक, सेन्द्रिय विषघ्न, कीटाणुनाशक और बल्य है। इस आसवके उपयोगसे विसूचिका, हिक्का और सान्निपातिक ज्वरमें बेहोशी आदि तत्काल दूर होते हैं। न्युमोनिया, इन्फ्ल्युएञ्जा और कफ प्रधान सन्निपातोंमें यह अच्छा लाभ पहुँचा देता है। विसूचिकामें शीतांग होगया हो, ऐसे समय पर १५-१५ मिनट पर १-१ मात्रा ३-४ बार देनेसे देहमें उत्तेजना आजाती है। श्वासका दौरा होने पर १०-१० बूंद १५-१५ मिनट बाद २-३ मात्रा देदेनेसे श्वासवेग शमन होजाते हैं। यदि हृदय और फुफ्फुसकी गति शिथिल होगई हो तो १५ से ३० बूंद जलके साथ मिलाकर देनेसे तत्काल हृदय और फुफ्फुस नियमित कार्य करने लगते हैं।

३६ मधुकादि कषाय।

प्रथम विधि—मुलहठी, अमलतासका गूदा, मुनक्का, कुटकी, हरड़, बहेड़ा, आंवला, परवलके पत्ते इन ८ ओषधियोंको समभाग मिलाकर क्वाथकरें। (वं० से०)

बढ़ावें। इसका सेवन पंच कर्म से शुद्ध होकर मकर संक्रांति से होली के भीतर कुटी में रहकर ४० दिन तक करना चाहिये।

उपयोग—इस ब्राह्म रसायन के सेवन से समस्त रोग निवृत्त होकर दीर्घायुकी प्राप्ति होती है। देह सुदृढ़ होती है। शरीर बल, स्फूर्त्ति, कान्ति, वीर्य धारण शक्ति और ओज की अति वृद्धि होती है। देह में किसी संयोग विरुद्ध पदार्थों के सेवन जनित विष या अन्य क्षुद्र विषका प्रवेश होने पर वह कुछ भी बाधा नहीं पहुँचा सकता।

शास्त्रकारों ने विविध प्रकार के रसायन प्रयोग लिखे हैं। इनमें यह उत्तम प्रकार है। यह रसायन हृदय, मस्तिष्क, फुफ्फुस आमाशय, यकृत्, प्लीहा, वृक्कस्थान आदि सब इन्द्रियों (अवयवों) को सबल बना कर देह को सुदृढ़ बनाता है। अति स्त्री समागम और अधिक चिन्ता से जिनके वीर्य और देह निर्बल हो गये हों, उनके लिये यह अति हितावह है।

वक्तव्य—प्राचीन आचार्यों के मतानुसार ग्राम से बाहर खुली वायु वाले विशुद्धस्थान में त्रिगर्भा कुटी बनायी जाती है। अर्थात् एक कुटी के भीतर दूसरी और उसके भीतर तीसरी कुटी बनवाकर उसके भीतर रहने का विधान किया है।

२. आमलकी रसायन।

विधि—पलाश वृक्ष के स्कंध को, जो ताजा और पुष्ट हो, कीड़े लगकर दूषित न हुआ हो, उसको १॥-२हाथ ऊपरसे कटवा देवें फिर उसके भीतर ग्लासके समान गढ्ढा करें। चारों ओर २-२ इञ्च किनारा रह जाय, उस तरह खड्डा कर उसमें नये ताजे पुष्ट परिक्व आंवले भरें। पश्चात् शीशी पर डाट लगाने के समान पलाश का ढक्कन बनवा कर उसे बन्द करें, उस वृक्ष के चारों ओर दर्भ लपेटें, और उस पर कमल के नीचेके कीचड़ का लेप

मात्रा—१-१ तोलेका क्वाथ दिनमें २ बार देवें। या केवल रात्रिको सोनेके समय देवें।

उपयोग—यह कषाय मलावरोध सह जीर्ण ज्वर को दूर करता है। वातज, पित्तज और कफज, तीनों प्रकृति वालोंके लिये यह हितावह है। ज्वर जीर्ण होने पर बहुधा मलावरोध रहता है; और मलावरोध रहने पर ज्वर जल्दी नहीं छोड़ता। फिर कफप्रकोप अग्निमान्द्य, मूत्रमें पीलापन, जिह्वा पर मलकी तहजमना, किसी को अपचन, अरुचि, उदरवात, नेत्रदाह, आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उस अवस्थामें यह कषाय अति हितकारक है।

द्वितीयविधि—मुलहठी, गिलोय, कुटकी, छोटी इलायची और पितपापड़ा, ये ५ ओषधियां ३-३ माशे कुटकी (दूसरी बार) १॥ माशे और सनाय १॥ तोले मिलाकर क्वाथ करें। क्वाथ तैयार होने पर प्रातःकालको १ तोला शक्कर मिलाकर पिला देवें। (भै० र०)

उपयोग—यह कषाय वातपितज ज्वरको नष्ट करता है। जो ज्वर विविध प्रकारके रसायन प्रयोगोंसे दूर न हुआ हो, या क्विनाइनके सेवनसे प्रकुपित हुआ हो, तथा जिसमें अन्त्र निर्बल होनेसे मलावरोध बना रहता हो, तथा तृषा, कण्ठशोष, उबाक, अरुचि, जम्भाई आना, रोंगटे खड़े होना, हाड हाडमें दर्द होना, बेचैनी, हृदयमें धड़कन, चक्कर आना, शिर दर्द, निद्रानाश, मूत्रमें पीलापन, उदरमें भारीपन और आफरा आदि लक्षण प्रतीत होतेहों, उसपर यह क्वाथ व्यवहृत होता है।

वक्तव्य—*यदि रोगी अतिकृश और निर्बल होगया हो, तो क्वाथका ३ हिस्सा कर दिनमें ३ बार पिलावें। कदाच १ या २ हिस्सा देनेसे विरेचन अधिक हो जाय तो शेष भाग न देवें।*

उपयोग—यह रसायन, दीपन-पाचन ग्राही, मादक और वृष्य है। यह विदेश के जलवायु लगने, वर्षाऋतु में जलविकार होने, वातविकार, कफरोग, मंद-मंद ज्वर बना रहना, और अपचन होकर बार बार दस्त लगना आदि को नष्ट करता है; तथा काम वृद्धि करता है। हिस्टीरिया, अतिसार या ग्रहणी रोग वालों को शक्ति बढ़ाने के लिये बहुत लाभदायक है। जिनकी ग्रहणी (duodenum) निर्बल हो, उनको यह चूर्ण दीर्घकाल तक सेवन कराना चाहिये।

७. वीर्य शोधक चूर्ण।

विधि—वंगभस्म ६ माशे, हल्दी का कपड़ छान चूर्ण १२ तोले, शीतल मिर्च ६ तोले, कपूर और गिलोय सत्व १-१ तोला और अफीम ३ माशे लें।

मात्रा—२ से ४ माशे रात्रि को सोने के समय जल के साथ सेवन करें।

उपयोग—इस चूर्ण के सेवन से वीर्य की उष्णता और विकृति दूर होती है; स्वप्न दोष का निवारण होता है; मूत्र साफ आता है, मूत्राशय की उष्णता शमन होती है, तथा वीर्य शुद्ध और सबल बनता है। कुछ दिनों तक सेवन करते रहने से स्वप्न दोष होना बन्द हो जाता है।

वक्तव्य—स्वप्न दोष के रोगी को रात्रि को हलका भोजन करना चाहिये; तथा कब्ज न हो यह सम्हालना चाहिये। उदर में वात संग्रह होता है, तो रात्रि को स्वप्न दोष हो जाता है, अतः वातवर्द्धक पदार्थ का सेवन कम करना चाहिये।

८. चन्द्रोदय वटी।

प्रथमविधि—चन्द्रोदय और कपूर ४-४ तोले, वङ्ग भस्म, वाजी करण लोह भस्म, लौंग, जायफल, जावित्री, केशर और

और फिर दूसरे दिनके लिये मात्रा कम कर देवें। इस कषायमें कुटकी और सनाय विशेष मात्रामें हैं। दोनों विरेचन कराती हैं। अतः अति कृश रोगीको मात्रा कम देनी चाहिये। मात्रा कम (पूर्ण मात्राका ½ हिस्सा) देने पर पचन क्रियाका सुधार कर दस्त को साफ लाता है। और मात्रा अधिक होने पर पतले दस्त कराता है।

४०. पञ्चतिक्तघन वटी।

विधि—सप्तपर्ण की ताजी अन्तर छाल, कांटे वाले करंज के ताजे पान, गिलोय ताजी, चिरायता और कुटकी, इन ५ द्रव्यों को १-१ सेर लेवें। सप्तपर्ण छाल, करंजपत्र और गिलोयको जलसे धोकर मोटा मोटा कूट लें। चिरायता और कुटकीका जौ कूट चूर्ण करें। सबको मिला १ मन जलके साथ कलईदार वर्तन या मिट्टीके वर्तनमें अष्टमांश क्वाथ करें। फिर मसलकर छान लें। शीतल होने पर पुनः छान कलईदार वर्तनमें डालकर मंदाग्निसे पकावें। जब क्वाथ कुर्छीको लगे; इतना गाढा हो तब वर्तनको धूपमें रखकर सुखा लेवें। गोली वनने योग्य हो तब अतीस का चूर्ण १० तोले मिलाकर २-२ रत्तीकी गोलियां बना लेवें। श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य

मात्रा—२ से ४ गोली ३-३ घण्टे पर जल से देवें।

उपयोग—इस वटीके उपयोग से सब प्रकारके विषम ज्वर रुक जाते हैं। पारीके बुखारमें बुखार आनेके ४ घण्टेके पहले और २ घण्टे पहले दो मात्रा (बड़े मनुष्यको ४-४ गोली) दे देवें। तीसरी मात्रा समय निकल जाने पर देवें। और दिनोंमें दिनमें ३ वार देवें।

यदि कब्ज हो तो पहले उदरशुद्धि कर लेनी चाहिये।

चाहिये। किन्तु इन सब प्रकार और सब अवस्थाओं में इस घृत का सेवन कराते ही रहना चाहिये।

वैवर्ण्य पाण्डु रोग के लिये दूध और घृत भेड़ का लेकर घृत सिद्ध करें, तो विशेष अच्छा। एवं इस घृत के सेवन काल में प्रातः काल और रात्रि को प्रवाल पंचामृत १-१ रत्ती रक्त चंदन, पद्माख, धनिया, गिलोय, दारु हल्दी की छाल और निम्बकी अन्तर छाल इन ६ ओषधियों को मिला जोकूट किये हुए ६-६ माशे के क्वाथ के साथ देवें। अधिक जम्भाई और हृदय की शिथिलता हो, तो १-१ रत्ती शुद्ध कुचिला या नवजीवन रस देते रहें। अतिसार हो तो साथ में सुवर्ण सर्वाङ्ग सुन्दर का सेवन करावें।

वक्तव्य --दिन में निद्रा, धूम्रपान, भारी भोजन, मांसाहार अण्डे तथा व्यायाम निषेध है। भोजन में क्षार प्रधान अर्थात् नमक, सोडा आदि अधिक मात्रा में लेवें। डाक्टरी मत अनुसार शक्कर भी हितकारक है। पुनर्नवा, चोलाई, सोवा, पालक, वथुआ, आलू आदि का शाक तथा दूध हितकारक है। मूत्र में विकृति न हो तो मट्ठा लेवें।

मस्तिष्क में रहे हुए उत्ताप नियामक और उत्पादक केन्द्र उत्तेजित होने से शारीरिक उष्णता अधिक बनी रहती है। इस हेतु से शारीरिक कृशता, मांस शोष, प्रस्वेद अधिक आना, प्रस्वेद में दुर्गन्ध, ओष्ठ के भीतर क्षत होना, ओष्ठ परसे त्वचा के टुकड़े निकलते रहना, शुक्र का पतलापन, गाढ निद्रा कम आना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उस पर कामदूधा, गोदंतीभस्म और अकीक पिष्टी के साथ इस घृत का सेवन कराना चाहिये।

२२ नामर्दीनाशकतिला।

बनावट—शुद्धपारद, शुद्धगन्धक, हरताल तबकी, सफेद, सोमल, कुचिला, बच्छनाग, सफेद कनेर की छाल, मालकांगनी, जायफल, जावित्री, सफेदचिरमी, कौडिया लोहबान, अकरकरा,

चिरायता और कुटकी ४-४ माशे हरड़ और बहेड़ा २-२ माशे मिला क्वाथ कर पिला देवें। आवश्यकता अनुसार यह क्वाथ दिनमें ३ बार देसकते हैं। उक्त वटीके साथ भी यह क्वाथ देसकते हैं। इस क्वाथके संयोग से सत्वर गुण दर्शाती है।

४१. स्वदेल मिश्रण।

(चढ़े हुए तापमें प्रस्वेद लानेके लिये)

पोटास एसिटास	Pot. Acetas	१५ ग्रेन
स्पिरिट इथर नाइट्रोसी	Spt. Aether Nit.	२० बूंद
लाइकर एमोनिया एसिटास	Liq. Ammon Acet.	२ ड्राम
शर्बत संतरा	Syruh Aurantii	१ ड्राम
एक्वा केम्फर	Aqua Camphore ad	१ औंस तक

सबको मिलाकर पिला देवें। इस तरह ३-३ घण्टे पर २ या ३ बार ताप उतरे तब तक देते रहना चाहिये। इससे प्रस्वेद आकर ज्वर निवृत्त हो जाता है। डॉक्टर कपूरसिंह

सूचना—इस मिश्रण का प्रयोग मुद्दती तापों में नहीं करना चाहिये।

४२. वान्तिशामक मिश्रण।

(मलेरिया में बारबार वमन होने पर)

एसिड साइट्रिक	Acid Citric	१७ ग्रेन
एसिड हाइड्रोस्येनिक डिल०	Acid Hydrocyan. dil.	१ बूंद
शर्बत संतरा	Syrup Aurantii	½ ड्राम
जल	Aqua ad	½ औंस तक

इन सबको मिलाकर तैयार करें। एवं निम्न मिश्रण तैयार करें।

सोडा बाई कार्ब	Soda bicarb	२० ग्रेन
शर्बत नीबू	Syruh Lamou	½ ड्राम
जल	Agua	½ औंस

इन दोनों मिश्रणों को मिलने पर उफाण (Effervescence) आने पर पिला देनेसे वमन और उबाकका निवारण हो जाता है।

४३. विपघ्न मिश्रण।

क्विनाइन हाइड्रोक्लोराइड	Quinine Hydrochlor	३ ग्रेन
टिञ्चर फेरी	Tinct Ferri	३० बूंद
शर्बत संतरा	Syruh Aurantic	½ ड्राम
जल	Aqua	१ औंस

इन सबको मिलाकर पिलादें। इस तरह २४ घंटे में ४-४ घंटे पर ४-५ बार दे देने से ज्वरकी तीव्र वेदना शमन हो जाती है।

यह मिश्रण पूयमयरक्त (Pyemia), प्रमेह पिटिका (Carbuncle), कीटाणु प्रकोपजज्वर (Septiceamia), संयोजक तन्तु प्रदाह (Cellulitis), आदि रोगों में विपशमनार्थ प्रयोजित होता है।

४४. आल्बा विरेचन।

(मिश्चुरा आल्बा—Mist. Alba)

मेग सल्फ	Mag. Sulph.	१ ड्राम
मेग कार्ब	Mag. Carb	१० ग्रेन
शर्बत सोंठ	Syrup zingibersis	१ ड्राम
एक्वामेन्थ पिप	Aqua Menth Pip ad	१ औंसतक

इन सबको मिलाकर प्रातःकाल पिला देनेसे कोष्ट शुद्धि हो जाती है।

यह मिश्रण स्वादु बन जाता है। इसका प्रयोग होस्पिटलोंमें विशेप रूप से होताहै।

अपचन, कण्ठ रोहिणी, मोतीभरा, शोणित ज्वर, विसर्प, सूतिका ज्वर, विराम विपमज्वर, अन्य विपमज्वर, आदि रोगोंमें उदर शुद्धिके लिये यह मिश्रण प्रयोजित होता है।

विशेषतः यह मिश्रण ज्वर और प्रदाह युक्त रोगोंकी तरुणावस्थामें दिया जाता है।

इस मिश्रणमें विरेचन औषधि मुख्य मेगनेशिया सल्फास है। वह अन्त्र (ग्रहणी—Duodenum) के भीतर अत्यधिक परिमाणमें जल निःसरण कराता है; और उस जलका शोषण नहीं होने देता। यह जल प्रदाह जन्य नहीं है; किन्तु आन्त्रिकरस (Succus entericus) है। इस हेतुसे अन्त्रको इस विरेचनसे अन्य विरेचनीय औषधोंके समान प्रदाह जन्य हानि होनेकी भीति भी नहीं है।

विविध विरेचन औषधोंकी रासायनिक क्रिया, उपयोग, अधिकारीफल आदिका विशेष विवेचन वैज्ञानिक विचारणामें पृष्ठ ७१ से ७८ तक किया गया है।

४५. सेलाईन विरेचन।

(मिक्सचर सेलाइन—Mist Saline)

मेग सल्फ	Mag. Sulph.	३ ड्राम
पौटास नाइट्राम	Pot. Nitras	१ ड्राम
स्पिरिट इथर नाइट्रोसी	Spt. Aether Nit.	१ ड्राम
लाइकर एमोनिया एसेटिस	Liq Ammon. Acet.	६ ड्राम
एक्वा केम्फर	Aqua Camphore ad	३ औंस तक

इन सबको मिला लेवें। इसमेंसे १-१ औंस दिन में १-२ या ३ वार देवें। ज्वरमें कोष्टबद्धता, शोथ, जलोदर और मूत्र रोगोंमें जब मल और मूत्र दोनों का विरेचन कराना हो तब यह व्यवहृत होता है।

४६. गन्धक द्रावक

(*Acidum Sulphiuricum*)

विधि—गन्धकको जलाने पर जो उसमेंसे गेस उत्पन्न होता

है, उसे सोरा और जलीय वाष्प द्वारा प्राणवायु (आक्सिजन) संयुक्त और जलमिश्र करने पर यह द्रावक तैयार होता है। इसके भीतर १५ प्रतिशत विशुद्ध गन्धकद्रावक रहता है।

ब्रिटिश फार्माकोपियाके मतानुसार उक्त अपरिशुद्ध द्रावक १२ औंस और सल्फेट ऑफएमोनिया ¼ औंसको मिलाकर यन्त्रद्वारा पुनः यथाविधि खैंच लेने पर विशुद्ध बनता है। यह द्रावक वर्णहीन, तैलाकार दाहक, खट्टे स्वादवाला, गन्ध रहित और अत्यन्त जलशोषक है। जलमें मिलाने पर जलको गरम कर देता है। आपेक्षिक गुरुत्व १०८४ है।

सूचना—क्षार और उसके कार्बोनेट, सीसा (नाग शर्करा) रजत बेरियम और चूने (Calcium) के साथ यह नहीं मिलाया जाता।

मात्रा—गन्धक द्रावक उसके वजनसे ६ गुने वाष्प जलमें डालदेने पर जल मिश्रगन्धक द्रावक (Acid Sulpluric did) बनता है। एक कांचकी बोतलमें आधा वाष्प जलभर उसपर गन्धक द्रावक डालदें। फिर शीतल होने पर आवश्यक शेषवाष्प जल मिला लेवें। इसका आपेक्षिक गुरुत्व १.०६४ से १.०७६ होता है। इसकी मात्रा ५ से ६० बूंद दिन में ३ बार १-१ औंस जलके साथ।

उपयोग—यह प्रबल स्थानिक दाहक है। जिस स्थान पर यह लगता है, वह पहले सफेद होजाता है। फिर मलिन कृष्ण वर्ण होजाता है। अल्प मात्रामें योग्य जल मिलाकर सेवन करने पर बल्य, ग्राही, शैत्यकारक और क्षार नाशक है। कुछ दिन तक सेवन करनेपर क्षुधाको प्रदीप्त करता है। पचन शक्ति और पोषण क्रिया में वृद्धि होती है; तथा मलावरोध होजाता है। इसके सेवनसे शारीरिक उष्णता का ह्रास होता है। नाड़ी दृढ़ होती है और उसकी तेजी में कमी होती है। छोटे बच्चे की माता को यह देनेपर

रसकपूर, हिंगुल आदिके धूम्रपान सेवनसे मुँह आजानेपर इसका उदर सेवन कराया जाता है तथा बबूल और बेरकी छाल तथा चमेली के पत्ते के क्वाथ से कुल्लें कराये जाते हैं।

जहरी कीड़ेके काटनेपर दंशस्थान पर जलरहित गंधकद्रावक को लगाने से दाहक क्रिया करके लाभ पहुंचाता है।

नेत्रपुटके नीचे अथवा ऊपर उलट जाने (Intropion or ectropion) पर निर्जल गन्धक द्रावकको स्थानिक प्रयोग करने पर क्षत होजाता है फिर क्षत शुष्क होनेपर त्वचा खिंचनेसे अक्षि पुट समान होजाता है। जीर्ण सधिवातज वेदना और जीर्ण पक्षाघात में ८ गुनी वराह वसामें इसे मिलाकर स्थानिक मर्दन कराया जाता है।

---

४. ज्वरातिसार प्रकरण।

१. प्राणेश्वर रस।

विधि—शुद्धपारद, शुद्धगन्धक, अभ्रकभस्म सोहागाका फूला, सौंफ, अजवायन और जीरा, ये ७ ओपधियां २-२ तोले यवक्षार, हींग, सेंधानमक, कालानमक, सांभरनमक, समुद्रनमक, काचनमक, वायविडंग, इंद्रजव, राल और चित्रक मूल, ये ११ ओपधियाँ १-१ तोला लें। पहले पारद गन्धककी कज्जली करें। फिर अभ्रक भस्म और सोहागा मिलावें। पश्चात् शेष ओपधियों का कपड़छान चूर्ण मिलाकर ३ घण्टे जलके साथ खरलकर २-२ रत्तीकी गोलियां बना लेवें। (र० च०)

प्राचीन आचार्योंने इस प्राणेश्वर रसके अतिरिक्त एक सिद्ध प्राणेश्वर रस लिखा है। दोनोंमें ओपधियाँ लगभग समान हैं। प्राणेश्वर रसके प्रयोग में किञ्चित भेद करके सिद्ध प्राणेश्वर की

योजना की है। सिद्ध प्राणेश्वरका पाठ चिकित्सा तत्वप्रदीप प्रथमखण्ड में दिया है। दोनोंके गुणमें विशेष अन्तर नहीं है।

मात्रा—२-२ रत्तीकी गोली दिनमें ३ बार जल या मट्ठे के साथ देवें।

उपयोग—यह रसायन ज्वरातिसार नाशक है। इस रसायनमें ग्राही, दीपन, पाचन, वातहर, शूलघ्न, और जीर्ण ज्वरनाशक, गुण अवस्थित हैं। उदरमें काटने के समान वेदना होकर बार-बार सफेद, दुर्गन्धयुक्त, पतले और आटेके घोल के समान दस्तलगना, उदरमें वायु भरी रहना, आफरा, मलिन जिह्वा, मुँह बेस्वाद बना रहना, बार२ जल छूटना, अरुचि, मंद मंदज्वर बना रहना, क्षीणनाड़ी, थोड़ेसे परिश्रमसे श्वास भर जाना, बार बार प्रस्वेद आते रहना, शरीरगीला सा भासना, देहमें भारीपन, तन्द्रा, निद्रा वृद्धि और किसी भी कार्यकरनेका उत्साह न होना आदि लक्षण होने पर इस प्राणेश्वररसकी योजना करनी चाहिये। इस रसायनके सेवनसे यकृत्-पित्तका स्राव बढ़ जाता है; फलतः आम, कफ और कीटाणु नष्ट होते हैं; हींगकेयोगसे उदर वात शमन होता है तथा आमाशय और अन्त्रकी वात वाहिनियां सबल बनती हैं। फिर बढ़ी हुई कृमिवत् गति (पुरः सरण क्रिया) शान्त होती है; अन्त्र की धारण शक्तिमें वृद्धि होती है; लघु अन्त्रमें पचनक्रिया योग्य होने लगती है; परिणाममें अतिसार और ज्वर, दोनों दूर होजाते हैं।

इस रसायन में कज्जली योगवाही, रसायन, यकृत्-पित्तके स्रावकी वर्धक, अन्त्रस्थ सेन्द्रिय विषनाशक और दुर्गन्ध हर है। अभ्रकभस्म रसायन, धातु परिपोषण क्रम व्यवस्थापक और शक्ति वर्धक है। सोहागा आक्षेपघ्न, शूलहर, दुर्गन्धनाशक, कफघ्न और अन्त्रविषघ्न है।

सौंफ और अजवायन आमपाचक और वातहर हैं। जीरा पाचक

और ग्राही है। यवक्षार और पञ्चलवण पाचक और यकृत्के लिये शक्तिवर्धक है। हींग और वायविडंग, कीटाणुनाशक, वातहर और शूलघ्न हैं। इन्द्रजौ अन्त्रशक्ति वर्धक, ग्राही, यकृत् पित्तस्राववर्धक कीटाणुनाशक और आम पाचक है। राल ग्राही, वातहर, कीटाणु-नाशक और व्रणरोपण है; तथा चित्रकमूल दीपन, पाचन और उदरवातघ्न है।

२. गगनसुन्दर रस।

विधि—सोहागेका फूल, शुद्ध हिंगुल, शुद्ध गन्धक, अभ्रक भस्म, इन चारों ओषधियोंको ४-४ तोले लेकर छोटी दूधीके स्वरसमें ३ दिन तक खरल कर १-१ रत्ती की गोलियां बना लेवें।

(र० रा सुं०)

मात्रा—१-१ गोली दिनमें ३-४ बार २-२ रत्ती सफेद राल के चूर्ण के साथ देवें।

उपयोग—यह रसायन विविध प्रकारके रक्तस्राव, अति उग्र ज्वरातिसार और आमशूलको नष्ट करता है, तथा जठराग्निको बढाता है, जब अतिसार बढ़जानेके हेतुसे ज्वर उपस्थित होता है, तब इस रसायनका सेवन अति हितकारक है।

जब कीटाणुओंके प्रकोपसे अन्त्रप्रदाह होकर अतिसार हो जाता है, तब उदर पर थोड़ा दबानेसे भी दर्द होता है। इस अन्त्रप्रदाह के हेतुसे ज्वर भी उपस्थित होता है। ऐसे समय पर कीटाणुनाशक, ग्राही, ज्वरहर और संगृहीत विकारको पचन कराने वाली ओषधि देनी चाहिये। ये सब गुण इस रसायनमें होंनेसे इस रसायनके सेवनसे कीटाणु नष्ट होकर ज्वरातिसार और रक्तातिसार शमन हो जाते हैं।

सूचना—इस रसायनके सेवन करने वालोंको पथ्यमें मट्ठा या बकरीका दूध देना चाहिये।

५. अतिसार प्रवाहिका प्रकरण।

१. त्रिविक्रमरस।

विधि—शुद्ध हिंगुल, अफीम, सोहागा का फूल, और बीजाबोल, इन चारोंको समभाग मिलाकर चूर्ण कर लें, या शहद के साथ मर्दन कर १-१ रत्ती की गोलियाँ बनालें। (र० यो० सा०)

मात्रा—१-१ गोली दिनमें ३-३ घण्टे पर ४ समय दें। या चूर्ण शहदके साथ चटावें।

उपयोग—यह रसायन पक्व आम और शूलसह रक्तातिसार का नाश करता है। यह रसायन स्तम्भक और संग्राही होनेसे रक्तातिसार और आम सग्रहणीकी आमावस्था दूर होने पर अच्छा कार्य करता है।

अपचन होकर अतिसार (संग्रहणी) में बल पूर्वक दस्त होना दिनमें ५०-१०० दस्त लग जाना, बार बार थोड़ा थोड़ा मल गिरना अतिशय बलपूर्वक मरोड़ा आना, किनछने पर थोड़ी आम गिरना, आम कुछ रक्त मिश्रित होना, उदरमें वेदनाका अति प्रबल वेग होनेसे रोगी अति घबरा जाना, बेहोशी आजाना, मुँहसे पानी छूटना, उबाक आती रहना, शुष्क वान्तिके हेतुसे उदरमें दर्द होजाना, साथ साथ मंदज्वर भी रहना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। इस स्थितिमें त्रिविक्रम रसका उत्तम उपयोग होता है।

इतर समयमें उत्पन्न होने वाले ग्रहणीमें उदरके भीतर वेदना होना, मलके साथ अधिकांशमें जल रहना, आंव और रक्त गिरना, बारबार शौच होना, विशेषतः मरोड़ा आ आकर और उदरमें प्रबल पीड़ा होकर दस्त होना आदि लक्षण होने पर यह त्रिविक्रम रस प्रयोजित होता है।

रक्तातिसारमें उदरपीड़ा होकर मलमिश्रित रक्त गिरता है,

गुदभ्रंश होता है; तथा गुदमार्गमें दर्द होनेके हेतुसे गुदद्वार और सब अवयव ठिठरा जाते हैं। ऐसी स्थितिमें इस रसका अच्छा उपयोग होता है।

इस रसायनमें हिंगुल जन्तुघ्न, रसायन, अन्त्रके संचित आमको निर्विषकर रूपान्तरित करने वाला और अन्त्रकी दुर्गन्धका नाशक है। अफीम वेदनाशामक और स्तम्भक है। सोहागा-आक्षेपघ्न, दुर्गन्धहर, कीटाणुनाशक और पाचक है। बीजाबोल ग्राही, रक्तस्तम्भक और विशेषत: केशिकाओंके रक्तकी रोधक है। (औ० गु० ध० शा० के आधारसे)

२. प्रमदानन्दरस।

विधि—पीपल, शुद्धहिंगुल, कौड़ीभस्म, धतूरेके शुद्ध बीज, जायफल, सोहागाकाफूल, शुद्धवच्छनाग और सोंठ, इन ८ ओषधियोंको समभाग मिला नीबूके रस, धतूरेकेपत्तेके स्वरस और भांगके क्वाथके साथ १-१ दिन खरलकर आध आधरत्तीकी गोलियाँ बनावें। (वै० सा० सं०)

मात्रा—१ से २ गोली दिनमें ३ बार जल या मट्ठेके साथ देवें।

उपयोग—यह रसायन योग्य अनुपानके साथ प्रयोजित करनेसे ज्वर, ग्रहणी, कफवृद्धि और उदर शूलको नष्ट करता है। एवं यह वाजीकरण रूपसे भी व्यवहृत होता है।

यह औषध पाचक, दीपक, किञ्चित् स्तम्भक, शूलघ्न, और किञ्चित् उत्तजक है। इसका परिणाम कोष्ठ और स्त्रियोंके प्रजनन यन्त्र पर उत्तम होता है।

इस रसायनका उपयोग पक्वातिसार में अच्छा होता है। अतिसार और उसके साथ ज्वर और शूल होने पर इसका अवश्य उपयोग करना चाहिये। विष्टब्धाजीर्ण या विदग्धाजीर्णके बाद

अतिसार होने पर प्रमदानन्द उत्तम कार्यकारी है। अतिसार रोग निवृत्त होने पर पुनः कुछ अपथ्य सेवन करने पर ग्रहणी, लघु अन्त्र और वृहदन्त्रमें विकृति होने पर यह प्रमदानन्द उपयोगी होता है। शूल-सह झागमय मल गिरना, साथमें कुछ रक्त भी जाना, ज्वर, तृषा तथा शौच होने पर गुदा और उदर में जलन होना, आदि लक्षण युक्त ग्रहणीमें प्रमदानन्द व्यवहृत होता है।

इस रसायनका उपयोग स्त्रियोंके कोष्ठ शूलपर भी होता है। कष्टार्त्तव (पीड़ितार्तव) आदि ऋतुदोष होने पर यह अशोकारिष्टके साथ देनेसे बहुत अच्छा कार्य करता है।

वाजीकरण रूपसे उपयोग लिखा है; परन्तु यह गुण अनुभव में नहीं आया।

३. शतपुष्पादि चूर्ण।

प्रथम विधि—सौंफ ६ तोले, बेलगिरी, मोचरस, सोंठ, आम की गुठली, जीरा और धोई भांग ३-३ तोले तथा धायके फूल, धनिया, छोटी इलायची, सोहागेका फूला, शंख भस्म, गिलोयसत्व १॥-१॥ तोले लें। सबको कूट कर कपड़छन चूर्ण करलें।

मात्रा—२-२ माशे दिनमें ३-४ बार मट्ठे या जलके साथ। प्रवाहिकामें भूनी हुई छोटी हरड़के चूर्णके साथ देकर, ऊपर सौंफ का अर्क पिलावें। ग्रहणी रोगमें पर्पटीके साथ।

उपयोग—यह चूर्ण उत्तम दीपन-पाचन और ग्राही है। आमातिसार, पक्वातिसार, पित्तातिसार, रक्तातिसार, प्रवाहिका और ग्रहणी आदि रोगोंमें हितकारक है।

दूसरी विधि—सौंफ सेकी हुई ४ तोले, सौंठ १ तोला, छोटी हरड़ ४ तोले, जीरा सेका हुआ १ तोला, आमकी गुठलीकी

गिरी १ तोला, बेलकी गिरी १ तोला, पोस्तकी भूसी २ तोले, छोटी इलायची के बीज १ तोला, मरोड़फली ४ तोले और मुनक्का के बीज सेके हुए १ तोला लें।

मात्रा—२ से ४ माशे दिनमें २ से ४ बार तक जल या मट्ठे के साथ देवें।

उपयोग—इस चूर्णके सेवनसे आमातिसार, पेचिश और संग्रहणी दूर होते हैं। यह चूर्ण आमका पचन कराता है, और अन्त्र प्रदाहको शमन कराता है। अतिसारके लिये यह प्रयोग अतिहितावह है। अतिसार चाहे जैसा बढ़ा हुआ हो या जीर्ण होगया हो, यह सत्वर लाभ पहुंचा देता है। संग्रहणीमें इस चूर्णके साथ पञ्चामृत पर्पटीका सेवनकरानेसे प्रकृति जल्दी स्वस्थ हो जाती है। छोटे बच्चे, सगर्भा, प्रसूता और वयोवृद्ध सबको यह चूर्ण निर्भय रूपसे दिया जाता है। उपयोग करने पर यह अति लाभ दायक सिद्ध हुआ है।

४. खदिरादि चूर्ण।

विधि—सफेद कत्था (Catechu Pallidum) ४ भाग, हीरादोखी गोंद (Kino) २ भाग, क्रमेरियाका मूल (Krameria root अभावमें मोलसरीकी छाल) २ भाग तथा दालचीनी और जायफल १-१ भाग लें। इन सबको मिला खरल कर लें। डाक्टरी में इस चूर्णको पल्विस केटेच्यु कम्पोझिटस (Puluis Catechu-Compositus) कहते हैं।

मात्रा—२ रत्तीसे १ माशे दिनमें ३ बार जल के साथ दें।

उपयोग—यह चूर्ण प्रबल ग्राही है। हीरादोखी गोंदकी अपेक्षा कत्थेमें ग्राही गुण अधिकतर है। अन्त्रस्थ श्लैष्मिक कलाकी शिथिलता और क्षीणतायुक्त अतिसार रोगमें यह चूर्ण प्रयोजित

होता है; किन्तु अन्त्रमें प्रदाह हो, तथा यकृत्‌की क्रियामें वैषम्य हो, तो इस चूर्णका प्रयोग नहीं किया जाता।

सूचना—फिटकरी, चूनेका जल, धातव लवण, यवक्षार, अफीमक्षार (मोर्फिया) और इतरक्षारके साथ इसका प्रयोग नहीं किया जाता। आवश्यकता पर खड़िया मिट्टी और अफीमका मिश्रण कर दिया जाता है।

५. प्रवाहिका हर योग।

विधि—एरंड तैल २॥ तोले और चूनेका जल १२ तोलेलें। दोनोंको खरलमें मर्दन करनेसे श्वेत मिश्रण (Emulsion) तैयार होजाता है। फिर इलायची मिश्रणका अर्क (Tinct Cardamom Co.) ३० बूंद मिला लेवें। पश्चात् तीन विभाग करके दिनमें ३ समय पिला देने से प्रवाहिका की निवृत्ति होती है।

एरंड तैल विरेचक औषध है, किन्तु इसकीक्रिया मृदुभावसे और सत्वर प्रकाशित होतीहै। अतः बालक, वृद्ध, दुर्बल, सगर्भा, प्रसूता, आदि सबको यह निर्भयतापूर्वक दिया जाता है। कोष्ठबद्धता, उदरशूल, अतिसार, प्रवाहिका, अर्श और गुदनलिकासंकोच आदि रोगोंमें अन्त्रस्थमल, आम और विषका निर्गमन करानेके लिये यह व्यवहृत होता है। यदि विरेचन रूपसे एरंड तैलकी पूर्ण-मात्रा दीजाय; तो बहुधा ३-४ घण्टेमें यह विरेचन कराता है। इसके विरेचनसे कोई कष्ट नहीं होता। आमाशय पर इसकी कोई क्रिया प्रतीत नहीं होती। एरंड तैलका प्रभाव विशेषतः अन्त्रकी श्लैष्मिककला पर होता है।

इस विरेचक गुणके अतिरिक्त इसमें यह विशेषता है कि चूनेके जलके साथ मिश्रण बनाकर देनेसे अन्त्रकी श्लैष्मिक कलाके प्रदाहजन्य उग्रताका शमन कराता है। जिससे प्रवाहिका रोगमें जब १०-१० या २०-२० मिनट पर शौच जाना पड़ता हो, उदर

वेदना सामान्य बनी रहती हो; थोड़े थोड़े समयमें तीव्र मरोड़ा आकर दस्त होता रहता हो; दस्त में आम जाती हो; कभी कभी किञ्चित् रक्त भी जाता हो, दिन रात क्रम चालू ही रहता हो तथा रोगी को निद्रा न मिलती हो, ऐसे समय पर अफीम युक्त औषध देने के पहिले अन्त्र संशोधन कर लेना चाहिये। यह इमलशन चौथाई चौथाई मात्रा में आध आध घण्टे पर चटाते रहने से एक ही दिन में अन्त्र की शुद्धि और प्रदाह की निवृत्ति होकर रोगी को शान्ति मिल जाती है। दुर्गन्धियुक्त मल के रोगाणुओं को यह औषध अति शीघ्र नाश करती है।

इस इमलशन का उपयोग आमाशय के मुद्रिका द्वार और अग्न्याशय में रक्ताधिक्य होकर उग्रता आने से उत्पन्न अजीर्ण रोग में भी किया जाता है। एक दिन में ही उपकार दर्शाता है।

६. बीजकनिर्यासादिचूर्ण।

विधि—हीरादोखी गोंद (दमुलख बैन), ७५ तोले, अफीम ५ तोले और दालचीनी का कपड़छान चूर्ण २० तोले को मिला खरलकर बोतल में भर लें। इस चूर्ण में ५ प्रतिशत अफीम मिलाया है। इसे डाक्टरी में पल्विसकाइनोकम्पोज़िटिस (Pulvis Kino Compositis) संज्ञा दी है।

मात्रा—२ से ११ रत्ती (५ से २० ग्रेन) दिन में ३ समय जल या मट्ठे के साथ दें।

उपयोग—यह चूर्ण रक्तातिसार और पेचिश के नाशके लिये अति हितावह है। अतिसार में जब अन्त्र की श्लैष्मिककला की ग्रन्थियां पीड़ित हो जाती हैं। तब यह चूर्ण महोपकारक है। हीरादोखी गोंद में यह विशेष गुण है कि अतिसार न होने पर यह संकोचन क्रिया नहीं करता। बालक और नाजुक प्रकृति की स्त्रियों को भी यह निर्भयता से दिया जाता है। आमाशयमें

दाह (Pyrosis) अर्थात् अपचनके हेतु से आमाशयके भीतर अधिक परिमाण में श्लेष्मस्राव होने पर इस चूर्णका अच्छा उपयोग होता है। दिन में ३ बार ५-५ रत्ती देने से शीघ्र प्रतिकार होजाता है। साथ में मृदुविरेचन औषध की योजना करनी चाहिए। एवं इस चूर्ण के योग से राजयक्ष्मा रोग में रात्रि को आनेवाले अति प्रस्वेद अतिसार और कास, तीनों का दमन हो जाता है।

सूचना—इस चूर्ण के साथ क्षार, तिजाब, कसीस, रसकपूर रौप्यक्षार (Angenti Nitras) और सुरमाका क्षार (Antimonium Tartaratum) का संयोग नहीं कराना चाहिये। नागशर्करा (Suger of Lea) का संयोग लाभप्रद विदित हुआ है।

७. बिल्वादि चूर्ण।

विधि—बेलगिरि, इसबगोलकी भूसी, कतीरा, बबूलका गोंद, ल्हिसोड़ा, बिहीदाना, रूमीमस्तगी और सोंठ ये ओषधियां ५-५ तोले और मिश्री सबके वजन से आधी (२० तोले) लेवें।

श्री पं० मुरारीलाल जी वैद्य शास्त्री

मात्रा—आधे मासे सुबह शाम बकरी के दूध के साथ और दोपहर को जल के साथ।

उपयोग—इस चूर्ण के सेवन से रक्तातिसार, पितातिसार और प्रवाहिका सत्वर दूर होते हैं। यदि खांसी में कफके साथ रक्त आता हो तो उसे भी यह चूर्ण दूर करता है।

स्वादिष्ट गंगाधर चूर्ण।

विधि—शुद्ध खड़िया मिट्टी ५ तोले, दालचीनी ७ तोले, बेलगिरी, जायफल, जावित्री और लौंग ३-३ तोले, कपूर, नीलगिरी का तैल और छोटी इलायची के दाने २-२ तोले और

मिश्री ५० तोले लें। सबको मिला कर अच्छी तरह खरल कर लेवें।

मात्रा—३-३ माशे दिन में ३-४ बार जल के साथ। बालकों को २ या ४ रत्ती देवें।

उपयोग—यह चूर्ण छोटे बालकों और बड़े मनुष्यों के अतिसार पर अच्छा लाभ पहुंचाता है। अपचन जनित दुर्गन्धयुक्त दस्त उदर में वायु संग्रहीत रहना, मुखपाक, उदर पीड़ा आदि दूर होते हैं। बालकों के हरे-पीले दस्त, दांत आने के समय के दस्त और अपचन जनित दस्त पर भी लाभ पहुंचाता है।

९. भुवनेश्वर वटी

विधि— शुद्धहिंगुल, दमुलख वैन, मोचरस, बेख अंजबार, रालसफेद, गुलाब के फूल, कपूर, अफीम, हींग, घी में भूना हुआ सोना गेरु इन सबको समान भाग लेकर बिहदाना के लुआब में घोट कर चने के बराबर गोलियां बनावें।

श्री० वैद्य रामचन्द्र जी

मात्रा -१ से २ गोली। २ से ३ बार। अनार के रस या छाछ के साथ।

उपयोग—अतिसार, रक्तातिसार और प्रवाहिका में अति लाभदायक है।

१० सिंहास्यादिवटी।

बनावट—वासास्वरस घन ८ तोले, कपूर १ तोला, आकके मूलकीछाल और अफीम २-२ तोले लें। इन सबको मिला खरलकर आध आध रत्तीकी गोलियां बनालेवें।

वासास्वरस घन बनानेके लिये अडूसाके पत्तेके रसको कड़ाहीमें डाल मन्दाग्निपर पकावें और वारवार सम्हाल पूर्वक चलाते रहें। रबड़ी जैसा गाढा हो जाने पर उतार लेवें।

मात्रा—१-१ गोली दिनमें १ या २ बार बकरीका दूध या जलके साथ देते रहें। विशेषतः रात्रिको सोनेके समय एक बार ही दी जाती है।

उपयोग—यह वटी प्रवाहिकामें आम सह रक्तस्राव और अधिक कुन्थन, रक्तातिसार, कासरोगमें कफके साथ रक्त आना तथा राजयक्ष्मा रोगमें उरःक्षत होकर रक्तमिश्रित कफ निकलना आदि विकारोंको जल्दी दूर करती है।

पेचिशके अतितीक्ष्ण प्रकोपमें यह वटी जलके साथ देकर आध घण्टे बाद रालका चूर्ण २ माशे पक्के केलेके साथ देनेसे सत्वर लाभ पहुँचता है।

११ प्रवाहिकानाशक गुटिका।

प्रथम विधि—अफीम १ तोला, लोबान २ तोले और जावित्री ३ तोलेको मिलाकर आध आध रत्तीकी गोलियां बनावें।

मात्रा—१-१ गोली दिनमें ३ वार जल या मट्ठेके साथ दें।

उपयोग—इस गुटिका के सेवन से भयंकर बढ़ा हुआ पेचिश, रक्तातिसार, संग्रहणी आदि रोग दूर होते हैं। पेचिश की भयंकर पीड़ा एक ही दिनमें शमन हो जाती है।

द्वितीय विधि—नीलाथोथा फूला १ तोला, अफीम २ तोले, सोहागे का फूला ४ तोले, अमृतासत्व ८ तोले, बीजाबोल ८ तोले लें। सबको मिला जलके साथ खरलकर आध आध रत्ती की गोलियां बना लेवें।

मात्रा—१ से २ गोली दिन में ३ वार जल, मट्ठे या बकरी के दूध के साथ देवें।

उपयोग—जीर्ण प्रवाहिका रोग, जिसमें आंतोंके भीतर क्षत हो जाने से रक्त और पूयमय वार वार दस्त होते रहते हैं उसे दूर

करनेके लिये यह गुटिका अति हितकारक है। एवं क्षयरोगके अतिसार पर भी यह वटी दी जाती है।

तृतीयविधि—लालमिर्च (बीज निकाली हुई) तवे पर डाल मन्दाग्नि से सेकें। फिर पीस कर कपड़छान चूर्ण करलें। जल न जाय इसबात का सम्हाल रखना चाहिये।

उपयोग—१ से २ माशे तक भूना जीरा, सैंधा नमक और सोंठ मिले हुए मट्ठेके साथ दिन में तीन बार देने से रक्तातिसार तथा रक्त और पूयमय पेचिश ३ दिनमें शमन हो जाते हैं।

सूचना—केवल मट्ठे पर रोगी को रखें; या भात और दही खाने को देवें। ज्वर हो तो इस औषध का प्रयोग नहीं करना चाहिये।

---

६ ग्रहणी रोग प्रकरण

१. ग्रहणी गज केसरी।

विधि—शुद्धपारद, शुद्ध गन्धक, अभ्रकभस्म, शुद्धहिंगुल, लोहभस्म, जायफल, बेलगिरी, मोचरस, शुद्धवच्छनाग, अतिविष, त्रिकटु (सोंठ, कालीमिर्च, पीपल), धायके फूल, भांग, हरड़, कैथकागूदा, नागर मोथा, अजवायन, चित्रकमूल, अनारदाने, सोहागाकाफूला, इन्द्रजौ और धतूराके शुद्धबीज, ये २२ औषधियां १-१ तोला तथा अफीम ५॥ तोले लें। पहले पारद गन्धककी कज्जली करें। फिर हिंगुल, दो प्रकार की भस्में, विष अफीम धतूरा और सोहागाका फूला क्रमशः मिलावें पश्चात् शेष औषधियोंका कपड़छान चूर्ण मिलाकर मर्दन करें। तत्पश्चात् धतूरे के पत्तोंका स्वरस मिलाकर २ दिन खरलकर आध-आध रत्तीकी गोलियां बनावें। (यो० र०)

इस रसायनके पाठमें 'पक्षेक्षण' के स्थान पर कितनेक ग्रन्थ-कारोंने 'यक्षेक्षण' मान कर लताकरंजके बीज और कितनोंने सर्जरस-राल अर्थ किया है। योगरत्नाकरके संशोधकने पक्षेक्षण अर्थात् २२ ओषधियां लिखा है। वह योग्य प्रतीत होता है। कितनेक ग्रन्थकारोंने पक्षेक्षणका अर्थ तालमखाना कह कर एक ओषधि बढ़ा दी है।

इस प्रयोगमें २२ या २३ ओषधियां मान कर अफीम ८८ या ९२ तोले (चारगुना) लेनेका भ्रम होता है। एक ग्रन्थकारने २३ ओषधियां १-१ तोला और अफीम ४ तोले लेनेको लिखा है। किन्तु वृद्धव्यवहारानुरोध से हमने अफीम चतुर्थांश अर्थात् ५॥ तोले मिलायी है।

धतूरेके पत्तेको कूट स्वरस निकाल छान कर २-३ घण्टे रहने देवें। फिर ऊपर ऊपर से नितरे हुए रसको उपयोगमें लेवें। बारबार थोड़ा थोड़ा स्वरस मिला मिला कर खरल करते रहें।

मात्रा—१ से ३ गोली दिनमें ३ बार जल, मट्ठे या रोगानुसार अनुपानके साथ देवें।

उपयोग—यह रसायन योग्य अनुपान के साथ देने से ग्रहणीरोग, रक्तग्रहणी, आमग्रहणी, शूलसहजीर्ण अतिसार, तीव्रवेदना सह विसूचिका और असाध्य प्रवाहिकाको नष्ट करता है।

यह रस तीव्र विकारमें उपयोगी है। संग्रहणीके विकारमें तीव्र वेदना सह बार-बार अति परिणाममें झागमय मल गिरता है; साथ-साथ रक्त और आम जाते हैं; तथा उदरमें तीव्र शूल भी

रहता है। उदरमें शूल चलनेके साथ कुछ आम और रक्त मिश्रित जलमय मल गिरता है। पसलियां, उदर, कण्ठ और पैरोंके घुटनोंमें दर्द होता है या ऐंठन सी वेदना होती है। सर्वाङ्ग में शूल चुभाने सदृश पीड़ा होती है। कौड़ी प्रदेश और आमाशयमें बार-बार खूब भींचने का भास होता है लघु अन्त्र और बृहदन्त्रके भीतर काटनेके समान पीड़ा होती है। कुछ खालिया तो अच्छा लगता है। किन्तु खाया हुआ अन्न पच जानेके (आमाशयमेंसे आगे जाने के)साथ उदरमें आफरा आता है; या उदरमें गोले उठते हैं। रोगी थोड़े ही समयमें बिल्कुल दीन, कृश और निर्बल होजाता है। सब प्रकारके भोजन करनेकी इच्छा तो होती है; किन्तु कोई भी भोजन में स्वाद नहीं आता। मनमें किसी प्रकारसे स्थिरता नहीं रहती। पीड़ा थोड़ी बढ़नेके साथ धैर्य मारा जाता है। देह गल जाता है। कभी-कभी मनकी निर्बलता के हेतुसे रोगी जहाँ बैठा हो वहाँ ही उदरमें बलपूर्वक मरोड़ा आकर दस्त होने लगता है उसे रोकनेकी शक्ति नहीं रहती। इस तरहकी वात प्रधान ग्रहणी पर इस रसायनका सत्वर प्रभाव पड़ता है।

इस रसायन में धतूरा है, उसका महत्वका धर्म बृहदन्त्र की श्लैष्मिककलामें से होने वाले रसस्रावको नियमित बनाने का है। बड़े-बड़े दस्त और उसके साथ पिच्छिल आमकास्राव होता है। यह दस्त अनिच्छा पूर्वक या रोकने के असामर्थ्यके हेतुसे बैठे हुए स्थानमें हो जाता है। किसी किसी रोगी को ये दस्त उतने जल्दी २ और अधिक होते हैं कि, एक घण्टेमें कम से कम २०-२५ बार शौच हो जाने के उदाहरण मिले हैं। ऐसे अत्यन्त त्रास-दायक विकारमें यह रसायन पहले शूल को कम करता है; फिर अवधातु का नियमन करके दस्तों की संख्या को घटाता है। यदि केवल अफीम के समान स्तम्भक औषध दिया जाय, तो उतना इष्ट परिणाम नहीं आता।

तीव्र ग्रहणीमें शूलकेसाथ रक्त अधिक वार जाता है। यह रक्त जानेके समय उदरमें मरोड़ा आता है। उदरको दबाकर रखना चाहिये, ऐसा रोगीको लगता है। उदरमें गुड़गुड़ आवाज होकर गोले उठनेके समान भासता है। रक्त गिरने और शौच होने पर शरीरको सम्हालनेकी शक्ति नहीं रहती। लघुअन्त्र और बृहदन्त्र दोनों रूईके समान नरम होजाते हैं! दोनों अतिशिथिल भासते हैं। किसी किसी रोगीको यह शिथिलता उतने तक बढ जाती है कि किनछनेके साथ उसका दबाव गुदमार्गपर पड़कर गुदाके भीतरका भाग बाहर निकल जाता है, जिसे गुदभ्रंश कहते हैं। साथ २ रक्त भी गिरता है। कितनेकको केवल रक्त गिरता है; तब कइयोंको रक्तमिश्रित जल गिरता है; अथवा मांसके धोवन सदृशलाल दुर्गन्ध युक्त काला-नीला या अरुण वर्णका और उस पर तैलके अणु अणु फैले हो ऐसा जुलाब लगता है। रोगी अति व्याकुल होगया है, ऐसा विदित होता है। रोगीको रोगकी भीषणता वास्तविक स्थिति की अपेक्षा अत्यधिक भासती है। उसके मनमें बड़ी भारी भीति घुस जाती है। इस स्थितिमें कूड़ेके छालके अर्कके साथ या इतर योग्य अनुपानके साथ ग्रहणीगज केसरी देनेसे उत्तम लाभ होजाता है।

आमातिसार या आमसंग्रहणीमें पहले लङ्घन कराना चाहिये परन्तु कितनेक रोगियोंसे उपवास बिल्कुल सहन नहीं होता। उसे शोधन रूप लङ्घन कराना चाहिये। यह शोधन देनेमें स्नेह विरेचन (एरण्ड तैल) को यथार्थमें आयुर्वेदने मान्य नहीं किया। स्नेह विरेचनसे आम गिर तो जाती है; किन्तु आमका पचन नहीं होता। इस हेतुसे आमोत्पत्ति कम नहीं होती। यह स्नेह विरेचन में बड़ा दोष है। इस हेतुसे इस विकारमें दीपन-पाचन ओषधिके साथ विरेचन देना चाहिये। पहले इन्द्रजौ, नागर मोथा, बिजौरा अतीस आदि औषधिके साथ या कूड़ेकी छालके साथ अमल-

तरहकी स्थिति रहने से रोगी अत्यंत जजरित होजाता है। इस विकार पर उदरमें औषध देनेके साथ पिच्छा बस्तिकाभी उपयोग करना पड़ता है। संग्रहणी रोगमें पिच्छा वस्तिका उपयोग अधिक होता है। प्रवाहिकाकी इस अवस्थामें ग्रहणीगज केसरी कोकम (आम चूर) के तैल या मक्खन को पतला बना उसके साथ प्रयोजित करना चाहिये।

पिच्छा वस्ति—जवासा, कुश और काँस, सवकी जड़, शेमलका फूल, वड़के पत्राङ्कुर, गूलरके कोमल पत्त, पीपल वृक्षके कोमल पत्ते, ये ७ ओषधियां ८-८ तोले लें। इन सबको कूट ३८४ तोले जल और १२८ तोले दूध मिला कर पाक करें। दूध मात्र शेष रहने पर उसे छान, उसमें सेमलका गोंद, लाजवन्ती, लालचन्दन, नीलोफर, इन्द्रजौ, प्रियंगु, और कमलकी केसरका कल्क, घी, शहद और शक्कर मिलावें। दूध, कल्क, घी, शहद, शक्कर आदिकी मात्रा प्रकृति और शक्ति अनुसार निर्णित करें। इस वास्तिका प्रयोग करनेसे प्रवाहिका, गुदभ्रंश रक्तस्राव और ज्वरकी निवृत्ति होती है।

परिणाम शूलके विकारमें वात दोषकी दुष्टि अधिक होनेपर शूल, विबंध और आध्मान विकार उपस्थित होते हैं; साथमें वान्ति होती हो, वह शूल सह, दुर्गन्धयुक्त, कसैली, या कुछ कड़वी और खड़ी हो, वान्ति होनेमें त्रास अधिक होता हो, तो ग्रहणी गजकेसरी का उपयोग करना चाहिये।

मध्यम कोष्ठमें उत्पन्न शूल, विशेषतः लघुअन्त्र और बृहदन्त्र की शिथिलता से और उनके भीतर पिच्छिलता कम होजानेसे होता है। इस प्रकारका शूल होनेपर या वात वाहिनियोंके क्षोभ

होने पर शूल उपस्थित हुआ हो, तो ग्रहणीगज केसरी उत्तम कार्य करता है।

उपर्युक्त विकारों में रोगी अति क्षीण हो जाता है। बलक्षय, मांस में क्षीणता और मानसिक निर्बलता आदि होते हैं। ऐसी परिस्थिति में उसे अपना जीवन भाररूप भासता है। ग्रहणी, अतिसार आदि व्याधिक्रम होजानेके पश्चात् भी इस प्रकार की शारीरिक और मानसिक निर्बल स्थिति को नष्ट कर पुनः शरीर को सम स्थितिमें लानेका और धातुसाम्य प्रस्थापित करनेका उत्तम गुण इस ग्रहणी गजकेसरीमें अवस्थित है। इस रसायनमें रहे हुए अभ्रकभस्म और लोहभस्मका उपयोग इस शक्तिपात वाली अवस्था में बहुत अच्छा होता है। इस ओषधि में द्रव्य संयोगका परिणाम विशेषतः लघुअन्त्र और बृहदन्त्र आदि पचन संस्था पर और शोषणेन्द्रिय पर होकर ऊपर लिखे हुए विशेष फल की सम्प्राप्ति होती है। यह कज्जली दरद कल्प (रसायन) आमाशय और अन्य दोनों स्थानों पर कार्य करता है।

कज्जली-जन्तुघ्न, योगवाही और रसायन है। हिंगुल-जन्तुघ्न, आमाशय दोषका नाशक, विशेषतः आमाशयस्थ कफका नियमन करने वाला है।

अभ्रक भस्म—बल्य, रसायन, सूक्ष्म स्रोतोगामी मनोदोषको नष्ट कर धातु साम्य प्रस्थापित करने वाली है।

लोह भस्म—स्तम्भक, संग्राही, बल्य, रसायन, योगवाही और रक्तकी निबलता को नष्ट कर रक्त को सबल बनाने वाली है।

जायफल—वेदनाहर, स्तम्भक और संग्राही है।

बेलगिरी—आमदोषघ्न, आमपाचक, और उपलेपघ्न है।

मोचरस—उपलेपक और स्तम्भक है।

बच्छनाग—वेदना शामक और अन्त्रस्थ स्राव का नियमन कर्त्ता है।

अतीस—यकृत् को शक्ति देकर यकृत् पित्तका स्राव बढ़ाता है।

त्रिकटु—दीपन, पाचन और अन्त्रस्थ द्रव्योंकी विकृतिका नाशक है।

धाय के फूल—स्तम्भक, संग्राही और अन्त्रस्थ द्रव्यों के बिगड़ने की क्रियाको रोकने वाला है।

भांग—उत्तेजक, पाचक, संग्राही और दीपक है।

हरड़—रसायन, कसैली और पाचक है।

कैथ—स्तम्भक, कसैला और पाचक है।

नागर मोथा—आमपाचक और ग्राही है।

अजवायन—दीपन, पाचन और उदरस्थ संज्ञावाहिनियों के सिरे को बधिर बना कर शूलको शमन करने वाला है।

चित्रकमूल—शैथिल्य नाशक, तीव्र पाचक और वात प्रक्षोभ प्रशामक है।

अनार दाने—स्तम्भक और संग्राही है।

सोहागा—आक्षेपघ्न, दुर्गन्ध हर और कीटाणु नाशक है।

इन्द्र जौ—यकृत पित्त विरेचक, अन्त्रको सबल बनाने वाला, आमपाचक तथा आमकी उत्पत्ति करने वाले कीटाणुओं एवं कृमि रोगको नष्ट करने वाला है।

धतूरा बीज—वात प्रक्षोभ नाशक, वेदनाहर और अन्त्रस्थ रस स्राव का नियमन करने वाला है।

अफीम—तीव्र शामक, वेदनाहर, स्तम्भक और अन्त्रकी शिथिलता को नष्ट करने वाली है।

धतूरा रस—इस रसायन को धतूरे के रसकी भावना देने से यह रसायन वेदना शामक, स्तम्भक, तीव्र संग्राही, अन्त्र में बढ़ी हुई अन्धातुका नियमन करने वाला, बल्य और रसायन बन गया है। (औ० गु० ध० शा० के आधार से)

२. ग्रहणीवज्रकपाट।

विधि—पारद भस्म (रससिन्दूर), अभ्रक भस्म, शुद्ध गंधक, जवाखार, सोहागे का फूल, वच और काली अरणी का मूल, इन, ७ ओषधियों को समभाग लें। पहले पारद भस्म, अभ्रक भस्म, और गन्धकको मिलावें। फिर सोहागे का फूला, जवाखार तथा अन्तमें वच और अरणीका चूर्ण मिलावें। पश्चात् काली अरणीके क्वाथ, भांगरेका रस, नीबूका रस, इन तीनोंके साथ ३-३ दिन मर्दन कर गोला बनाकर सुखा लेवें। इस गोले को कड़ाहीमें रख उस पर सराव ढक गुड़ चूने से दृढ़ संधि लेप कर मंदाग्नि पर १॥ घण्टे तक स्वेदन करें। स्वाङ्गशीतल होने पर इस रसायनके समान अतीस और मोचरसका चूर्ण मिलावें। फिर भांगके फाण्टमें ७ दिन खरल करके २-२ रत्तीकी गोलियां बनालें। (र० र० स०)

वक्तव्य—रसयोगसागरमें भांगकी भावनाके स्थान पर कैथ और भांगकी ७ भावना देनेका एवं भावना देनेके पश्चात् धाईके फूल, इन्द्रजौ, नागरमोथा, लोध, बेलगिरी, गिलोय, इन ६ ओषधियोंके रस या क्वाथकी भावना देनेको लिखा है; परन्तु हमें भांगकी भावनाके पश्चात् इन सब भावनाओंकी आवश्यक्ता नहीं भासती।

मात्रा—१ से २ गोली तक दिनमें ३ बार शहदके साथ देवें।

रसयोग सागरमें यह रसायन शहद के साथ देनेके पश्चात् ऊपर चित्रकमूल, सोंठ, वायविडंग, बेलगिरी, सेन्धानमक, इन सबका कपड़ छान चूर्ण मिलाये जलके साथ देनेका विधान किया है।

उपयोग—यह रसायन ग्रहणी रोगके नाश करनेमें वज्रके

कपाट सदृश है। यह रसायन विशेषतः आमवातज ग्रहणी विकार, वातरक्तके पश्चात् उत्पन्न ग्रहणी रोग, ग्रहणीमें उत्पन्न आमवात, वातरक्त, आमसंचय और आमाजीर्णका अनुवन्ध होने पर उत्तमकार्य करनेवाला है। यह अन्त्रमें उत्पन्न शोथको नष्टकर आम पचन करनेवाला रस है।

दीर्घकालके आमवात और रह रह कर अच्छा हो होकर पुनः उत्पन्न होते रहने वाले आमवातका परिणाम हृदयेन्द्रिय, यकृत् और बृहदन्त्र पर विविध प्रकारका होता है। आमवात का कारण रूप दोष कुछ काल संधिमें स्थित होता है, एवं कुछ काल धातुओंमें लीन होकर अन्तरेन्द्रियमें प्रवेशकर यकृत् आदि इन्द्रियोंमें दुष्टि उत्पन्न करता है। इस तरह इन्द्रियोंमें दुष्टि होनेपर उन उन इन्द्रियोंके दुष्टि-अनुरूप रोग उत्पन्न होते हैं। ऐसे रोगी की मूल दोष दुष्टि और वह जिन जिन स्थानों में पहुंचती है, उन उन स्थानोंको भी दूषित करती है। एवं रक्त आदि दूष्योंसे संयुक्त होती है, इस हेतुसे चिकित्सा करने के समय दोष दूष्य संयोग और स्थानिक विकृति आदि सब बातों का विचार करना पड़ता है। ग्रहणी आमवातज दोषों से दुष्ट होने पर इस औषध का उत्तम उपयोग होता है। केवल कफ से बृहदन्त्र में श्लैष्मिक कला मोटी होकर अच्धातु की वृद्धि हुई हो, तो चिरकाल तक टिकने वाले ग्रहणी रोग में अश्वकंचुकी रस का उपयोग होता है। यह रसतन्त्रसार प्रथम खण्ड के भीतर अश्वकंचुकी के वर्णन में दर्शाया है।

इस अवस्था में रोगियों की संधियां अनेक दिनों के पहले सूजी हुई होती हैं। संधिस्थानों का शोथ कमी होने के पश्चात् कोष्ठ विकृति के लक्षण थोड़े थोड़े होते रहते हैं। उदर में आफरा उदर में शूल चुभने के समान बारीक बारीक वेदना, अन्न का पचन योग्य न होना, विशेषतः द्विदलधान्य और मांसयुक्त अन्न

हो जाता है। यह विकार बन्द होने पर सांधे दुःखने लगते हैं, तथा छाती में दर्द होने लगता है। फिर ये बन्द हो जाने पर ग्रहणी रोग का प्रारम्भ हो जाता है। उस समय उदर में दर्द, बार बार चक्कर आना, मोह, झागमय चिकने और दुर्गन्धयुक्त दस्त होना आदि लक्षण होते हैं। दस्त अधिक बार नहीं होता, दिन में २-४ बार ही होते हैं। शौच के समय वेदना भी मन्द होती है। अग्नि बल न्यून हो जाता है। किसी भी पदार्थ की अधिक रुचि नहीं होती। आज एक वस्तु पसन्द है, तो कल उस पर अरुचि आजाती है। कोष्ठ में एक प्रकार का शूल भी तीव्र नहीं, मंद ही होता है; फिर भी असह्य मालूम पड़ता है। ऐसी स्थिति में इतर औषधों की अपेक्षा ग्रहणी-वज्र कपाट का उपयोग अधिक होता है।

ग्रहणी विकारके पश्चात् उत्पन्न होने वाली यकृद् विद्रधिमें मूल हेतु आमदोषज ग्रहणी विकार हो, एवं ग्रहणी होने पर या ग्रहणी रोग शमन होने पर उस विद्रधि की उत्पत्ति हुई हो, और विद्रधि अधिक जीर्ण न हो गई हो, तो उस पर इस ग्रहणीवज्र कपाट की योजना हितावह है। विद्रधि अति बड़ी न हो, संख्यामें अधिक न हो, और उसका बल अधिक न हो, तो इस रसायनका प्रयोग किया जाता है। यकृद् विद्रधिमें त्वचा निस्तेज पाण्डु वर्ण की हो जाती है। कुछ शोथ-सा मालूम पड़ता है, नाखून पीले, निस्तेज और स्फीत भासते हैं। बारबार अति ठण्ड लगकर तीव्र ज्वर आ जाता है। यह ज्वर अनेक दिनों तक आता रहता है। बीचमें ज्वर कुछ समय स्थगित होकर पुनः ज्वर बलपूर्वक शीत सह आ जाता है। जिह्वा शुष्क रहती है। उसके ऊपर काले दाग होते हैं; तथा सफेद या पीले मैल की तह लग जाती है। एवं बारबार कण्ठ में शुष्कता, अंगों में दाह आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। इसके साथ यकृत्में मंद वेदना हो और यकृत्का एक

भाग ऊपर उठ आया हो, तो इस रसायन का उपयोग इन्द्र जौ और कुटकी के अथवा कूडा छाल के क्वाथ के साथ करना चाहिये।

इस रसायनमें कज्जली, जन्तुघ्न, ग्रहणी दोष नाशक, योगवाही और रसायन है। अभ्रक भस्म मनोदोष नाशक धातु परिपोषणक्रम व्यवस्थित करने वाली, योगवाही और रसायन है। जवखार और सोहागा आम पाचक और दोष-संघातभेदक है। वच आक्षेप हर, मनोदोषनाशक और शूलघ्न है। अरणी आम पाचक आम वातनाशक और आमशूलघ्न है। भांगरा वातघ्न, अन्त्र दोषनाशक, आम शूलघ्न और रसायन है। नीबूका रस पाचक और अग्नि प्रदीपक है। अतीस यकृत् पित्तस्रावक, यकृच्छक्तिवर्धक, स्वेदल और विद्रधि विनाशक है। मोचरस स्तम्भक और प्रसादक है। भांग, पाचक, उत्तेजक और अग्नि प्रदीपक है। (औ. गु. ध. शा. के आधार से)

३ पीयूष वल्ली रस।

विधि—शुद्ध पारद, शुद्धगन्धक, अभ्रकभस्म, रजतभस्म, लोहभस्म, सोहागेका फूला, रसोंत, सुवर्ण माक्षिकभस्म, लौंग, सफेद चन्दन, नागर मोथा, पाठा, जीरा, धनिया लजावन्ती, अतीस, लोध, कूड़ेकी छाल, इन्द्रजौ, दालचीनी, जायफल, सोंठ बेलगिरी, धतूरेके शुद्ध बीज, दाड़िमके छिलके, मजीठ, धायके फूल और कूठ, ये २८ ओषधियां २-२ तोले लें। पहले पारद गन्धककी कज्जली बना फिर भस्म और शेष ओषधियोंका कपड़छान चूर्ण मिला काले भांगरेके रसमें ७ दिन खरल कर फिर १ दिन बकरीके दूधमें घोटकर १-१ रत्तीकी गोलियाँ बना लेवें।

(भै० र०)

मात्रा—१ से २ गोली दिनमें २ या ३ बार देवें।

अनुपान—आम, विष और मलको बाहर फेंकनेके लिये बेलकी राख और गुड़ या बेलका शर्बत। उदर पीड़ा और अन्त्र के प्रकोप के शमनार्थ इसबगोलका लुआब। आम पचनार्थ १ तोला नागर मोथा और ३ माशे सोंठका क्वाथ।

उपयोग—यह रसायन उत्तमग्राही और दीपन-पाचन है। अतिसार, ज्वर, तीव्ररक्तातिसार, जीर्ण ग्रहणीरोग, शोथ, अर्श, आमवृद्धि, उदरशूल, वातावरोध, संग्रह ग्रहणी, लेसदार आम बढ़कर विविध विकार होना, तृषावृद्धि, दाह, उबाक, अरुचि, वमन, दारुण गुदभ्रंश, पक्वातिसार, अपक्वातिसार, नानाप्रकारके काले, लाल, पीले, मांस धोवनके समान, वेदनासहित अतिसार प्लीहावृद्धि, गुल्म, उदररोग, मलावरोध, सूतिका रोग, उपद्रव रूप उत्पन्न रोग, प्रदर वंध्यत्व, कामला, पाण्डु और २० प्रकार के प्रमेह आदि रोगों को दूर करता है।

जब ग्रहणी रोग पर अफीम युक्त ओषधि देना हो, तब ग्रहणी कपाट, ग्रहणी गज केसरी आदि अनेक व्यवहृत होती हैं, किन्तु रोगी को अफीम अनुकूल न हो या अफीम देनेसे हानि पहुँचनेकी संभावना हो, तब यह पीयूष वल्लीरस निर्भयतापूर्वक दिया जाता है। इस रसायनमें आमको बाहर निकालने, पचानेका दस्त बाँधने का गुण है साथ साथ उदरमें संगृहीत वायुको निकालना, वायुकी उत्पत्तिको रोकना और मलावरोध न होने देनेका उत्तमगुण अवस्थित है। यदि नागरमोथा और सोंठके क्वाथके साथ दिया जाय तो आमकी उत्पत्तिको रोक देता है।

कितनेक रोगीको ग्रहणी रोग कुछ दिन रहता है और कुछ दिन कब्जका त्रास होता है। थोड़ी सी भूल होनेपर या ऋतु बदलने या जलवायु परिवर्तनसे स्वास्थ्य गिर जाता है। अपचन सह थोड़ा थोड़ा दस्त आता रहता है। तब ग्रहणी वज्रकपाट और यह पीयूषवल्ली रस दोनों उपकारक हैं। किन्तु ग्रहणी वज्र कपाटमें

भांगकी ७ भावना होनेसे वह आमाशय रसका स्राव अधिक कराता है और तेज बनाता है। एवं अधिकग्राही असर पहुंचाता है। तब इसके विपरीत यह पीयूषवल्ली रसमें भांगरेकी ७ भावना होनेसे वह आमाशय रसकी तीव्रताको कम करता है और यकृतको सबल बनाकर योग्य पित्त स्राव कराता है; तथा आमाशय और अन्त्रकी श्लैष्मिककला की उग्रताको दूरकर स्निग्ध बनाता है। जिससे अन्त्रस्थ अन्तःस्राव (कफ प्रधान अन्धातु कास्राव) नियमित होजाता है।

नये ग्रहणी रोगमें आमावस्था होने पर अपचन, अरुचि आम बहुत गिरनेसे, दस्तमें अतिदुर्गन्ध आना, उदरमें भारीपन रहना, मुँह बेस्वादु रहना, आदि लक्षण होने पर पहले बेलकी राख और गुड़का अनुपान देकर उदरस्थ आम विष और मलको निकाल देना चाहिये। फिर नागरमोथा और सोंठ के क्वाथ का अनुपान देनेसे आमोत्पत्ति रुक जाती है और अतिसार या ग्रहणी रोग नष्ट हो जाता है।

अतिसार में वात प्रधान लक्षण-उदरमें वायुका अवरोध, हृदय, नाभि, गुदा आदि में वातजनित पीड़ा होना, झागदार, अरुण रंग का मल होना, बार बार थोड़ा थोड़ा शुष्क-सा दस्त आवाज और आमसह गिरते रहना आदि उपस्थित होने पर लघु-अन्त्रका स्राव अधिक होता है। उस स्रावको तीव्र स्तम्भक औषधि अफीम प्रधान देकर सत्वर दबा दी जाय, तो विकार अन्त्रमें रह जानेसे कुछ समयके पश्चात् अतिसार बढ़ जाता है या दोषधातु में लीन हो जाय तो भविष्य में विविध विकार उत्पन्न करता है। अतः ऐसे प्रसंगों पर अन्त्रकी श्लैष्मिक त्वचाकी उग्रता को शान्त करा कर अन्त्र स्रावकी उत्पत्ति कम करानी चाहिये। यह कार्य इस रसायन से उत्तम प्रकार से होता है।

कफ प्रधान संग्रहणीमें मल दुर्गन्ध युक्त, लेसदार गिरता है;

उदरमें मंद मंद वेदना होती है। अरुचि और जिह्वा पर सफेद मैल की तह बनी रहती है। कार्य करने का उत्साह नहीं रहता। ऐसे लक्षण युक्त नये ग्रहणी विकारको यह रसायन सत्वर दूर करता है।

प्रवाहिका युक्त ग्रहणीमें अन्त्र के भीतर उग्रता उत्पन्न होती है, किसी किसी स्थान पर से श्लैष्मिक कला निकल जाती है। फिर थोड़े थोड़े समयमें उदर में पीड़ा होकर दस्त लगते रहते हैं। वार वार किनछना पड़ता है, अधिक बल से किनछने पर गुदा वाहर निकलती है। ऐसे ग्रहणी विकार में बेल की राख और गुड़ के साथ इस रसायन का प्रयोग किया जाता है। यदि उदर पीड़ा अति तीव्र हो, तो अफीम युक्त औषध-ग्रहणी कपाट या ग्रहणी गज केसरी देना चाहिये। अतिसार और ग्रहणी रोग चिरकाल तक रहजाने पर बृहदन्त्र और गुद नलिकाकी अन्तस्त्वचामें से मलिन लेसदार, दुर्गन्धयुक्त आमका स्राव होता रहता है। जो मलके साथ वाहर निकलता रहता है। कितनेक निर्बल अन्त्र वालोंको कब्ज होने पर उस आममें से विष का शोषण रक्तमें होता रहता है। जिससे मस्तिष्कमें उग्रता, व्याकुलता, अति निर्बलता आदि लक्षण उत्पन्न होते हैं। ऐसे रोगियों को यह रसायन बेल की राख और गुड़के साथ देनेसे आश्चर्य कारक लाभ पहुँचाता है।

यदि यकृत्पित्तका स्राव कम होनेसे दस्त सफेद मैले रंगके गाढे और दुर्गन्ध युक्त गिरते हो ऐसे रोगियोंको यह रसायन नहीं दिया जाता। भांग प्रधान औषधि—ग्रहणी वज्र कपाट, लाही चूर्ण आदि देना चाहिये।

यदि अतिसार या ग्रहणी रोगमें दस्तके साथ थोड़ा थोड़ा रक्त गिरता हो, और वेदना तीव्र न हो, गुदा में जलन होती हो, किसीको गुद भ्रंश भी होता है, तृषा अधिक लगती हो, उस पर

यह रसायन सत्वर लाभ पहुँचाता है। आम भी साथ साथ गिरता हो, तो केवल शर्वतके साथ और आम न हो तो इसबगोल के लुआबके साथ देना चाहिये।

जीर्ण अतिसार या ग्रहणी रोगीकी पचनक्रिया निर्बल होनेसे अन्न रस योग्य न बनता हो, आमकी उत्पत्ति अधिक हो जाती हो, फिर उस हेतुसे कफ प्रधान प्रमेहकी प्राप्ति हुई हो, मूत्रमें चिपचिपा या तन्तु जैसा द्रव्य अथवा आटे के समान चूर्ण जाता हो, किंवा पेशाब गाढा उतरता हो, या पेशाब अधिक परिमाणमें आता हो, तथा देह निस्तेज हो गई हो, तो इस रसायनका सेवन नागरमोथा और सोंठके क्वाथके साथ करानेसे आमोत्पत्ति बन्द होकर प्रमेह रोग दूर हो जाता है।

विदेशके जलवायु या दूषित अन्न जलके सेवनसे अतिसार हो गया हो, थोड़ा थोड़ा दस्त दिनमें ४-६ बार आता हो, वृक्क कार्य विकृति होनेसे पेशाबकी उत्पत्ति कम हो गई हो तथा पेशाब गाढ़ा हो गया हो, फिर उसी हेतु से शोथ, कभी कभी ज्वर आजाना, प्लीहा वृद्धि, उदरमें भारीपन, मंद मंद पीड़ा, उदरमें वायु भरी रहना, अरुचि, उबाक, निस्तेजता और शुष्कता आदि लक्षण उत्पन्न हुए हों तो इस रसायनका सेवन बेलकी राख या नागरमोथाके क्वाथके साथ कराना चाहिये।

यदि प्रसूता अवस्थामें अधिक सोंठ, अजवायन आदि खाने से या अपथ्य अन्नके सेवनसे अतिसार होगया हो, पतले गरम गरम दस्त होनेसे गुदामें जलन होती हो, तो इस रसायनका सेवन इसबगोलके लुआबके साथ करानेसे सत्वर लाभ पहुँचाता है।

४. स्वच्छन्दभैरव रस।

विधि—शुद्ध पारद १० तोले, शुद्ध गन्धक और सैंधानमक २०-२० तोले लें। पहले पारदगन्धककी कज्जली करें। फिर सैंधा

नमक मिला भिलावेके क्वाथमें ५ दिन तक खरल करें। फिर गोला बांध छोटी हांडीमें रख दृढ़ मुख मुद्रा करें। फिर वालुका यन्त्रमें रख चूल्हे पर चढाकर रात्रि भर मध्याग्नि देवें। (र० चं०)

सूचना—क्वाथके लिये भिलावेके ४-४ टुकड़े कर लेवें। *भिलावेका तेल टुकड़े करनेके समय न लग जाय, यह सम्हालें। कदाच भिलावेका तेल लग जाय, तो उस पर तुरन्त नारियलका तेल लगा लेवें। क्वाथ करनेमें भिलावेकी वाष्प लगने पर शरीर सूज जाता है; अतः सावधानी रखें।*

मात्रा—१ से २ रत्ती दिनमें दो वार देवें।

उपयोग—यह रसायन ग्रहणी, संग्रहणी, कास, श्वास, उग्र ज्वर, तन्द्रा और स्वल्प निद्रा पर प्रयोजित होता है। इसके सेवन से शरीर पुष्ट, तेजस्वी और स्फूर्ति वाला बनता है।

यह रसायन वृहदन्त्रमें उत्पन्न कफ दोषकी दुष्टिको नष्ट कर उस स्थान को बल देने वाला है। कफके चिपचिपापन को नष्ट करने वाला यह रस है। संग्रहणी के विकार में बहुत कम मल गिरना, मल के साथ झाग, चिपचिपे, गाढ़े, श्लेष्म समान आम जाना, आम के साथ अति किनछना, अति किनछने से अति परेशान होने पर भी चैन न पड़ना, गुद भ्रंश होना, मलमिश्रित किम्वा मल विरहित आम गिरना, मुंहमें उवाक और शुष्कता, क्वचित् वमन हो जाना, उदरसे जड़ना, क्षुधा बिल्कुल नष्ट होना, आदि लक्षण उपस्थित होने पर संग्रहणी रोग में इस रसायन का उत्तम उपयोग होता है।

कास और श्वास रोग में भी कफ का चिपचिपापन अधिक होने पर कफकी गांठ सत्वर नहीं छूटती हो, खांस-खांस कर अति व्यथित होने पर थोड़ा गाढ़ा और लेसदार कफ निकलना, आदि

ताम्रभस्म, शुद्धपारद, शुद्धगन्धक, कालीमिर्च, निसोत और रौप्यभस्म, ये २० ओषधियां ८-८ तोले लेवें। पहले पारद गन्धक को कज्जली करें। फिर भस्म और शेष ओषधियों का कपड़छान चूर्ण मिला आंवले के स्वरस की ७ भावना देकर २-२ रत्ती की गोलियां बना लेवें। इसे अन्य ग्रन्थकारों ने नृपति वल्लभ संज्ञा भी दी है।) (र० चं०)

मात्रा—२-२ गोली दिन में २ बार जल या मट्ठे के साथ देवें।

उपयोग—यह राज वल्लभ रसायन ग्रहणी रोग के लिये अति उपकारक है। उदरशूल, गुल्म, दारुण आमवात, हृदयशूल पार्श्वशूल, नेत्रशूल, हलीमक, शिरःशूल, कटिशूल, आनाह (मलावरोध), आठ प्रकार के शूल, उदर कृमि, कुष्ठ, दाद, वातरक्त, भगंदर, उपदंश, अतिसार, ग्रहणी, अर्श और प्रवाहिका आदि रोगों को नष्ट करता है।

यह औषध दीपन, आमपाचक, कफघ्न, ग्राही, वेदनाशामक और रसायन है। यह अति निर्भय ओषधि है। सगर्भा, प्रसूता, बालक और निर्बल प्रकृति वालों को दे सकते हैं। यह आमाशय और अन्त्र दोनों स्थानों की पचन-क्रिया विकृति को सुधारता है। यह अपचन और अग्निमान्द्यजनित विकार या यकृत् के विकार से उत्पन्न अतिसार और ग्रहणी रोग को दूर करता है। यकृत् वृद्धि होकर या शोथ आकर योग्य पित्त स्राव न होता हो, पचन क्रिया योग्य कार्य न करती हो, दस्त सफेद और दुर्गन्धयुक्त आता हो, दिन में ३-४ बार थोड़ा थोड़ा दस्त होता हो, दस्त कुछ पतला हो, कभी दस्त में छोटे छोटे कृमि भी निकलते हों, जिह्वा पर मल की तह रहती हो, कभी कब्ज रह कर दस्त मैलेरंग का हो जाता हो, उदर में भारीपना रहता हो, वायु बारबार उत्पन्न होती हो, ऐसे लक्षण युक्त अतिसार और ग्रहणी रोग में यह रसायन अच्छा लाभ पहुंचाता है।

कितनेकरोगियों को अतिसार कुछ दिनों तक रहता है, और कुछ दिनों तक नहीं रहता। पचन क्रिया मंद रहती है, दस्त में आम जाता रहता है। उदर में पीड़ा बारम्बार उत्पन्न हो जाती है शरीर अशक्त और कृश हो जाता है। आम अधिक संगृहीत होने पर एरण्ड तेल का विरेचन लेना पड़ता है, अन्यथा विविध उपद्रव उपस्थित होते हैं। ऐसे रोगियों को यह राजवल्लभ रस, प्रवाल पंचामृत और शुद्ध कुचिला (१ रत्ती) के साथ मिलाकर दिया जाता है।

बहुमूत्र (मूत्र बूंद बूंद टपकने) की उत्पत्ति पचन क्रिया विकृति से भी होती है। ऐसे रोगी को प्रायः दिन की अपेक्षा रात्रिको बारबार पेशाब के लिये उठना पड़ता है, रोग तीव्ररूप धारण करे, तब दिन में भी पेशाब बूंद बूंद आता रहता है, कुछ जलन भी होती है, साथ में अग्निमान्द्य, पेशाब पीला होना, यकृद् वृद्धि, हृदय फूला हुआ, मलावरोध, निर्बलता, खट्टे पदार्थ खाने पर सांधों सांधों में दर्द, स्वप्नदोष आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। इस रोग पर इस राजवल्लभ रसका सेवन कराने से थोड़े ही दिनों में लाभ पहुँच जाता है। अति पुराना रोग भी जड़ मूल से दूर होजाता है। घी पचन हो, उतना खाना चाहिये, दही का त्याग करना चाहिये; धम्र पान का व्यसन हो, तो होसके उतना कम कर देना चाहिये। प्रारम्भमें यह रसायन त्रिकटु और शहद के साथ दिन में २ या ३ बार देना चाहिये।

आमवात रोग एकबार होजाने पर अनेकों को आजीवन बार बार त्रास देता रहता है। मधुर पदार्थ खाने या शीत लगने पर भिन्न भिन्न स्थानों के सांधों में दर्द होजाता है। कितने कों को पतले दस्त भी होते रहते हैं। ऐसे रोगियों को पथ्यपालन पूर्वक इस रसायन का सेवन कराया जाय तो अच्छा लाभ

पहुँच जाता है। हृदय में शिथिलता हो, तो इस रसायन के साथ कुचिला १-१रत्ती मिलादेना विशेष गुणकारक होता है।

वात वाहिनियों की विकृति होने पर पार्श्वशूल, हृदयशूल, मस्तिष्क शूल, चक्षुः शूल आदि उत्पन्न होते हैं। यदि शूल के रोगीको आमवृद्धि भी हो, तो इस रसायन का सेवन कराने पर शूल निवृत्त होता है और वात वाहिनियोंकी विकृति भी दूर हो जाती है। इस रसायन के साथ शृंग-भस्म, हींग और शुद्ध कुचिले का चूर्ण मिला देने से अधिक लाभ पहुंचता है।

६. रत्न विजय पर्पटी।

विधि—शुद्ध गन्धक ४ तोले, शुद्ध पारद २ तोले, रौप्य भस्म १ तोला, स्वर्ण भस्म ६ माशे, वैक्रान्त भस्म और मुक्ता पिष्टी ३-३ माशे लें। पारद गन्धककी कज्जली करके शेष भस्में मिलाकर एक दिन मर्दन करें। फिर रस पर्पटीके समान घी लगी हुई कड़ाही में रसकर गोबर पर रखे हुए केले के पत्ते पर पर्पटी बना लें।

श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य

मात्रा—१ से ३ रत्ती दिन में २ या ३ बार शहद चतुःसम चूर्ण और शहद, जीरा और शहद। बकरी के दूध, मट्ठे, मीठे अनार के रस, मोसम्बी के रस या मीठे अंगूरके रसके साथ अथवा प्रवाल पिष्टी, अमृतासत्व, कमलककड़ीके चूर्ण और बेलगिरीके चूर्णके साथ देवें।

लौंग, भुना जीरा, सोहागे का फूला और जायफल समभाग मिलाकर चूर्ण कर लेने पर चतुःसम चूर्ण तैयार होता है।

उपयोग—यह रत्न विजय पर्पटी कष्टसाध्य संग्रहणी, अन्त्र-क्षय, राजयक्ष्मामें उपद्रव युक्त ग्रहणी, शोथ, अतिसार, पाण्डुरोग, प्लीहावृद्धि, जलोदर, परिणाम शूल, अम्लपित्त, हृद्रोग, जीर्ण विषमज्वर तथा कफ और वातप्रकोपसे उत्पन्न अन्य रोगों को नष्ट

करती है। एवं शरीर को पुष्ट और सबल बनाती है। जब पर्पटीके अन्य प्रयोगोंसे लाभ न हो तब इसका उपयोग करना चाहिये।

जब ग्रहणी रोगमें भोजन कर लेने पर तुरन्त दस्त लग जाते हैं। आमाशय और अन्त्र भोजन को अधिक बार धारण नहीं करते। फिर बड़े-बड़े १-२ दस्त पीले गरम-गरम तुरन्त आ जाते हैं। फिर उसी हेतुसे देह शुष्क और निस्तेज होती जाती है। शरीर का वजन धीरे-धीरे घटता जाता है। किसी-किसी रोगी को कुछ ज्वर भी रहता है। अन्त्रमें रोग कीटाणु (यक्ष्मा कीटाणु) की आबादी हो जाती है। फिर कास-श्वास आदि उपद्रव उपस्थित होते हैं। शरीर कृश और निस्तेज होजाता है उस पर यह पर्पटी अमृतके समान उपकार दर्शाती है।

संग्रहणी रोग में जिह्वासे लेकर गुद नलिका पर्यन्त आमाशय, अन्त्र आदि समस्त संस्था की श्लैष्मिक झिल्ली पर सूक्ष्म सूक्ष्म स्फोट होजाते हैं। इस प्रकार के विकार में जिह्वालाल कांटे वाली भासती है, दस्त बड़े बड़े, सफेद या पीले रंगके और गरम-गरम लगते हैं। खाया हुआ अन्न विना पचन हुए कच्चा ही निकल जाता है। यदि दस्त सफेद रंगके हों, तो यकृत् पित्त का अभाव मान कर पंचामृत पर्पटी देनी चाहिये। और दस्त पीले रंगके हों, तो इस रत्नविजय पर्पटी की योजना करनी चाहिये।

सूचना—*यदि ज्वर अधिक हो या पर्पटी देने पर ज्वर अधिक हो जाय तो मात्रा कम कर देनी चाहिये।*

७. अष्टामृत पर्पटी

विधि—शुद्ध पारद, लोहभस्म, अभ्रक भस्म, ताम्र भस्म, वङ्ग भस्म, रौप्य भस्म और जहर मोहरापिष्टी, ये ७ औषधियां ४-४ तोले तथा शुद्ध गन्धक ८ तोले लें। पहले पारद गन्धक की कज्जल

करें। फिर भस्म मिला घी वाली कड़ाहीमें मंदाग्नि पर रखकर (गोबर फैलाकर ऊपर रखे हुये) केलेके पान पर पर्पटी बना लेवें।

मात्रा—१से २रत्ती दिन में ३ बार शहद-पीपल या लौंग, सोहागेका फूला, जायफल और दालचीनीके समभाग चूर्ण मिलाकर ४ रत्तीके साथ देवें।

उपयोग—यह पर्पटी जीर्ण संग्रहणी रोगमें व्यवहृत होती है। यह आमाशयमें वेदना, वान्ति होना, अन्त्रमें मंद-मंद पीड़ा बनी रहना, दस्तमें दुर्गन्ध आना, शरीर निस्तेज और कृश हो जाना, अग्निमान्द्य, अरुचि, प्लीहावृद्धि और मंद-मंद ज्वर आदि लक्षणों सह ग्रहणी रोगको दूर करती है।

८. लवङ्ग द्रावक।

विधि—लौंग, अतीस, नागरमोथा, पाठा, बेलगिरी, धनिया, धायके फूल, मोचरस, जीरा, लोध, इन्द्रजौ, खस, राल, काकड़ासिंगी, सैंधानमक, सोंठ, पीपल खरैंटीका मूल, यवक्षार, अफीम और रसोत, ये २१ ओषधियां १-१ तोला तथा लौंग २१ तोले लें। सबको मिला कपड़छान चूर्ण कर पोस्त डोडाके क्वाथ की ७ भावना देकर २-२ रत्तीकी गोलियां बना लेवें। (भै० र०)

मात्रा—१ से २ गोली दिनमें ३ बार जलके साथ दें।

उपयोग—यह वटी चिरकारी ग्रहणी, शोथयुक्त पाण्डु, कामला, पक्वअतिसार, आमवृद्धि और उससे उत्पन्न विविध विकार मन्दाग्नि और दारुण अम्लपित्त आदि रोगोंका नाश करती है।

यह वटी दीपन, पाचन, ग्राही और स्तम्भन है। जब अतिसार रोगमें मुखपाक, खट्टी डकार आना, छाती में दाह, उदरमें भारीपन रहना और दिनमें ३-४ दस्त उदर पीड़ा सह

होना आदि लक्षण उत्पन्न होते हैं, तब यह वटी अच्छा लाभ पहुँचाती है।

इस वटी के सेवनसे आमाशयकी उग्रताका शमन होता है; आमोत्पत्ति बन्द होती है; तथा अन्त्रगत वेदना दूर होती है। यदि दस्तमें रक्त जाता हो, तो वह भी बन्द हो जाता है।

ग्रहणी विकार और जीर्ण अम्लपित्त रोगमें इस वटीके साथ १-२ रत्ती अभ्रपर्पटी मिला देने पर सत्वर लाभ पहुंचता है।

मूत्र पिण्डोंके शोथ या विकृतिके हेतुसे रक्तमें रहा हुआ विष बाहर नहीं निकल सकता। फिर शोथ और निस्तेजता (पाण्डु) बढ़ने लगते हैं। ऐसे शोथमय पाण्डुपर यह वटी मूत्रल अनुपान (या एलाद्यरिष्ट या पुनर्नवासव) के साथ देने पर अच्छा लाभ पहुंचाती है।

६. कामचार मण्डूर।

विधि—मण्डूर भस्म ४० तोलेको लोहे की कड़ाही या खरल में डाल भृंगराज स्वरसमें ७ दिन मर्दन करें। फिर जितना वजन हो उससे आधा पीपल का चूर्ण मिला कर घोट लें। (आ० सं०)

मात्रा—२ से ४ रत्ती दिनमें २ या ३ बार दूने गुड़के साथ मिला मसूर और बेलगिरीके क्वाथके साथ देवें।

उपयोग—यह मण्डूर जीर्ण अतिसार, संग्रह ग्रहणी, आमवात और अम्लपित्तको नष्ट करता है; तथा पुष्टिप्रद और अग्नि कारक है।

जब आमाशयका पित्त तेज हो जानेसे खट्टी डकार और वान्ति होती रहती है, तथा यकृत् निर्बल बन जानेसे अन्त्रके भीतर पचन क्रिया योग्य नहीं बनती। जिससे आमविषकी वृद्धि होकर अपचन, आमवात, अम्लपित्त, यकृत्का शोथ, उदरवात संग्रह, संग्रह ग्रहणी, शिरदर्द, नेत्रकी निर्बलता, चक्कर आना,

बाल सफेद हो जाना, पाण्डु और त्वचा रोग आदि विकार उत्पन्न होते हैं। इन सब विकारों पर यह रसायन अद्भुत लाभ पहुंचाता है।

मण्डूरको भांगरेके रसमें ७ दिन खरल करने से, वह आमाशय और यकृत्की क्रियाको सुधारता है। फिर पचन क्रिया सबल बनती है; और निबलता दूर होकर शक्ति बढ़ने लगती है। छोटे बालक, सगर्भा, प्रसूता और वृद्ध आदिको यह मण्डूर निर्भयता पूर्वक दिया जाता है।

संग्रह ग्रहणी रोगमें इस मण्डूरके साथ सुवर्णपर्पटी या अभ्रपर्पटी मिला दी जाय, तो लाभ सत्वर पहुंचाता है।

१०. ग्रहणीहर योग।

विधि—श्योनाक की छाल २० तोले को चावल के धोवनमें पीसकर कल्क करें। कल्क को गीले चौलड़े कपड़े में लपेट ऊपर कपड़मिट्टी १-२ अंगुल करें। पश्चात् निर्धूम गोवरी की अग्निमें दबाकर बाटी के समान सेक लेवें। मिट्टी लाल होकर पक जाने पर बाहर निकाल कपड़े को खोल कल्क को किसी मोटे कपड़े में लपेट दबाकर रस निचोड़ लेवें।

मात्रा—१।-१। तोला दिन में ३ बार देवें। साथ में लवङ्ग चतुः सम (लौंग, जायफल, जीरा और सुहागे का फूला) १-१ माशा शहद के साथ देते रहें।

उपयोग—यह योग जीर्ण ग्रहणी, जीर्ण अतिसार और प्रवाहिका में अच्छा लाभ पहुंचाता है। पथ्य का आग्रह पूर्वक पालन करना चाहिये। यदि अन्नपचन हो, तो खिचड़ी आदि हल्का भोजन देवें। ज्वर हो या अन्न पचन न होता हो, उदर में वायु उत्पन्न होती हो और सरलता से अपान वायु न सरती हो, तो रोगी को मट्ठे पर रखना चाहिये। इस योग के साथ निम्ना-

नुसार बाह्य परिमार्जन करते रहने से सत्वर लाभ पहुँचता है।

बहिः परिमार्जन—आंवले को जल में पीस कर कल्क करें। फिर रोगी को चित लेटा नाभि के चारों ओर आलवाल किनारी बांध बीचमें अदरक का रस भरें। इसतरह रोज आध घण्टे तक लेटाये रखने पर नदी के पूर के समान प्रवृद्ध अतिसार भी रुक जाता है; अग्नि प्रदीप्त होती है तथा उदर वातशमन हो जाती है।

११. बबूलाद्यरिष्ट।

विधि—बबूल की अन्तर छाल ८०० तोले को ४०९६ तोले जल में मिलाकर क्वाथ करें। चतुर्थांश जल शेष रहने पर उतार कर छानलें। फिर १२०० तोले गुड़ और ६४ तोले धाय के फूल, एवं पीपल ८ तोले तथा जायफल, शीतल मिर्च, दालचीनी, छोटी इलायची के दाने, तेजपात, नाग केशर, लौंग, कालीमिर्च, इन ८ औषधियोंके ४-४ तोले का जौ कूट चूर्ण मिला देवें। फिर चीनी का बोयाम अथवा घृतभाण्ड में भर एक मास पर्यन्त बन्द रख यथाविधि (आसवविधि) से आसव बनावें। पश्चात् छानकर बोतलों में भर लेवें। (भै० र०)

मात्रा—१। से २॥ तोले तक दिन में २ वार समान जल मिलाकर भोजन कर लेने पर पिलावें।

उपयोग—यह अरिष्ट क्षय, कुष्ट, अतिसार, प्रमेह, श्वास और कास को नष्ट करता है।

इस बबूलाद्यरिष्ट में मुख्य औषध बबूल की अन्तर छाल है। वह कसैली, स्तम्भक और अन्त्रस्थ दोष नाशक है। यह अरिष्ट पक्वातिसार और जीर्ण संग्रहणी में स्तम्भक गुण के लिये व्यवहृत होता है। बारबार बड़े जुलाब हो कर थकावट

आजाने और अग्निमान्द्य आदि लक्षण होने पर यह अरिष्ट हितावह है।

कुष्ठ के विकार में कोउस्थ विष प्रमुख कारण होनेपर बबूलाद्यरिष्ट का उपयोग होता है। शरीर पर काले दाग होजाना, स्थान स्थान पर कील गाड़ने के समान रोमरन्ध्रों के मूल में मोटापन आजाना आदि लक्षण होने पर बबूलाद्यरिष्ट अच्छा लाभ पहुंचाता है।

अच्छमेह, लालामेह और हस्तिमेह विकार पर यह अच्छा कार्य करता है। इसका उपयोग मधुमेहमें चाहिये वैसा नहीं होता।

(औ० गु० ध० शा० के आधार से)

इस अरिष्टमें मुख्य औषधि बबूलकी छाल है। उसमें गोंद और टेनिक एसिड (Tannic Acid) अधिक मात्रामें रहते हैं। जिससे यह छाल ग्राहीगुण करती है, तथा आम, रक्त, अतिसार पित्त और दाहका नाश करती है। कास रोगमें श्वासप्रणालिकाकी उग्रताका शमन करती है। एवं मूत्र कृच्छ्र, अश्मरी, मूत्रेन्द्रिय और जननेन्द्रियकी प्रादाहिक उग्रताका ह्रास करती है। इसीतरह इस छालमें कुष्ठ कृमि और विषको नष्ट करनेका गुण भी अवस्थित है। वंगसेनने जलोदर रोगपरभी बबूलकी छालके क्वाथकी योजना की है।

---

६. अर्श प्रकरण।

१. बावली बूटी।

(ले० Lochnera Pusilla)

यह वनौषधि राजपूताना, यू. पी. आदि अनेक स्थानों में ज्वार बाजरा के खेतों में आश्विन से पोष, माघ तक मिलती

है। यह बूटी लगभग १॥-२ फीट ऊंचाई तक बढ़ जाती है। इसमें २-३ अंगुल के लम्बे पतले पत्ते होते हैं। इसमें मिर्च के आकार की छोटी फली आती है; और उनमें काले जीरे के समान बीज निकलते हैं। इस बूटी के बीजों को चूहे प्रेम से खाते हैं। इसका स्वाद अति कड़ुवा है। पशु इसे खालेवें, तो वह पागल बन जाता है।

मात्रा—६ मासे से १ तोला तक ११ काली मिर्चों के साथ मिला चटनी की तरह घोट कर दिन में दो समय ४० दिन तक पिलाते रहें।

उपयोग— यह औषध रक्तार्श रोग में रामबाण है। केवल ४-५ दिन में ही रक्तार्श का रक्त गिरना बन्द हो जाता है। ४० दिन तक सेवन करने से रोग जड़ मूल से चला जाता है। शुष्क अर्श रोग में भी यह बूटी लाभ पहुंचाती है।

२. लोहादि मोदक

विधि–लोहभस्म, इन्द्रजौ, सोंठ, शुद्ध भिलावे, चित्रक मूल की छाल, बेलगिरी, बायविडङ्ग और हरड़, ये ८ औषधियां समभाग लें। फिर सब के समान गुड़ मिला कर ३-३ माशे के मोदक बना लेवें। (र० र० स०)

मात्रा—१-१ मोदक सुबह शाम सेवन करें।

उपयोग—इस मोदक का सेवन करने पर अर्श, शुष्कार्श जनित वेदना, रक्तार्श का रक्त गिरना, मलावरोध, अग्निमान्द्य आदि दूर होते हैं।

३. अर्शोहर भस्म।

विधि—एक ताजा जमिकन्द २॥ सेर का लेकर उसके बीच में खड़ा करें। उसमें लाल फिटकरी का चूर्ण ४० तोले भर देवें।

मात्रा—१-से-२ गोली सोंफका अर्क अथवा जलके साथ प्रातः सायं देनेसे मल शुद्ध होता है। अर्श और यकृत् संबंधी वद्ध कोष्ठ आध्मान, शूल, मंदाग्नि अरुचि नष्ट होते हैं। रक्तार्शका रुधिर वन्द होता है एवं वातार्शमें इसका उपयोग सद्यःफल दायक देखा गया है। यकृत् वृद्धि एवं तज्जन्य उदररोग आमका संग्रह एवं आम प्रभृति रोग इस महौषधसे नाश होते हैं। इसमें मुक्ता शुक्ति की भस्म है इस कारण केल्शियमकी कमी होनेसे त्वचाके फोड़ा फुन्सि अथवा शीत पितके समान ददौरेको भी नाश करता है। अधिक विरेचन हो तो वीच वीचमें यह गोली वन्द कर देनी चाहिये अथवा मात्रा आधी कर देनी चाहिये। यह अनुभूत वटी है कभी निष्फल नहीं जाती।

५. अर्शोहर लेप।

प्रथम विधि—सोमल, नीलाथोथा और सिंदूर, तीनों १-१ तोला लेकर वारीक चूर्ण करें। फिर निर्मलीके वीजको जलके साथ पत्थर पर घिस उसमें उक्त चूर्ण आधरत्ती मिला मस्से पर लेप करें। मस्सेको छोड़ इतर किसी स्थान पर न लगजाय, इस बातका सम्हाल रखना चाहिये। इतर स्थान पर लग जाय, तो वहां मक्खन या घी लगा लेवें। इस लेपके लगानेके पश्चात् रोगी पौन घण्टे तक औंधा सोता रहे। जिससे औषध और भागमें न लग जाय, इस लेपसे जलन अधिक होने पर निम्न मलहम लगाना चाहिये।

दाहशामक मलहम—कत्था १ तोला, कपूर १ तोला, और सोना गेरू २ तोलेको ४ तोले घीमें मिला मस्से पर लेप कर देनेसे दाह शमन हो जाता है। जब जलन सहन न हो सके तब यह मलहम लगाना चाहिये।

इस तरह सोमलयुक्त लेप प्रति दिन दो समय लगाते रहने से

पर चन्दन की तरह घिसे। फिर २॥ तोले कपूर मिला कर खरल कर लेवें। (महा० भागीरथ स्वामी)

उपयोग—इस मल्हम को रूईमें भरकर दिनमें २-३ वार मस्से पर लगातेरहने पर २१ दिन (१-१॥ मास) में मस्से सूख जाते हैं।

६. दन्त्यरिष्ट।

विधि—दन्तीमूल, चित्रकमूल, दशमूल, हरड, बहेडा, आंवला, इन १५ ओषधियोंको ४-४ तोलेको २०४८ तोले जलमें मिलाकर चतुर्थांश क्वाथ करें। फिर छान, ४०० तोले गुड़ मिला चीनीके बोयाम में भर मुखमुद्रा कर १५ दिन रख देवें। परिपक्व होने पर छान लेवें।

मात्रा—१। से २॥ तोले तक दिन दो वार भोजनकर लेने पर समान जल मिला कर देवें।

उपयोग—इस अरिष्टके सेवनसे अर्श, ग्रहणी और पाण्डु रोग दूर होते हैं। मल और उदरवातकी गतिको अनुलोम करता है, तथा पचन क्रियाको सबल बनाता है।

यह अरिष्ट, अर्श, ग्रहणी, गुल्म, आध्मान, उदरकृमि, उदावर्त पाण्डु रोग, मूत्ररोग, गर्भाशय विकार आदिमें मलावरोध रहने पर व्यवहृत होता है। रात्रिको देनेपर सुबह शौचशुद्धि होती है।

वक्तव्य—वंगसेन और वृन्द माधवने इस अरिष्टमें चित्रक-*मूल नहीं लिखा। (कदाच लेखकके प्रमाद वश यह भूल हुई होगी) और १ मास तक बन्द रखनेका विधान किया है। पाक १५ दिनमें नहीं होता, अतः १ मास बन्द रखना चाहिये। अथवा न सिद्ध हो तो २ मास भी।*

७. अग्निमान्द्य, अजीर्ण, विसूचिका

१. तिक्तजीरक भस्म ।

बनावट—१ मन गोमूत्रको कड़ाहीमें डालकर चूल्हे पर चढ़ावें। गरम होनेपर उसमें ५ सेर कालीजीरी डाल गोमूत्र और कालीजीरीकी भस्म बना लें। पश्चात् कढाईको तुरन्त उतार राखको बोतलमें भर लेवें। दो तीन घण्टे देर होनेसे बाहर की वायु लगकर राखमें गीलापन आ जाता है। (आ० नि० मा०)

मात्रा—२ से ६ रत्ती तक दिनमें ३ बार शहद या जलके साथ।

उपयोग—यह भस्म आमाजीर्ण, विष्टब्धाजीर्ण, रसाजीर्ण और उदर कृमियोंको सत्वर दूर करता है। यह चूर्ण उदर शुद्धि करता है। उदरकृमि और सूक्ष्म कीटाणुओंका नाश करता है; कफ, मेद और आमको जलाता है, तथा पचनशक्तिको बढ़ाकर सब प्रकारके अजीर्णों उदररोग एवं शूलको नष्ट करता है। जलोदर और शोथ रोगमें भी यह भस्म अतिहितावह है। इस भस्मको सिरके अथवा गोमूत्रके साथ लेप करनेसे त्वचाके श्वेत दाग मिटते हैं।

२. नागेश्वररस ।

बनावट—शुद्ध बच्छनाग, लौंग, दालचीनी, पीपल, कालीमिर्च, अकलकरा, सोंठ, अजवायन, जीरा, कालाजीरा, पीपलामूल, कालानमक, सेंधानमक, सांभरनमक, भूनीहींग, ये १५ ओषधियाँ १-१ तोला, सोहागेका फूला और शंखभस्म ४-४ तोले तथा शुद्ध हिंगुल २ तोले लेवें। पहले हिंगुल और बच्छनागको मिलावें। फिर सोहागेका फूला और शंख भस्म डालें।

पश्चात् शेष औषधियोंका कपड़छान चूर्ण मिला नीबूका रस २५ तोले डाल खरलकर, सुखा चूर्ण बना लेवें। (आ. नि. मा.)

मात्रा—२ से ३ रत्ती शहद या जलके साथ दिनमें २ या ३ बार देवें।

उपयोग—यह रसायन सब प्रकारके अजीर्ण रोग और अग्नि-मान्द्यको दूर करता है; उदरशूल और उदरवातको शमन करता है; तथा रुचिको बढ़ाता है। विशेषतः वातप्रधान और कफप्रधान रोगों पर व्यवहृत होता है। आमाशय और यकृत, दोनों स्थानोंके पित्तप्रवाहको बढ़ाता है और अन्त्रको भी बल देता है। जिसको कब्ज रहता हो या मलमें दुर्गन्ध आती हो सूक्ष्म कृमि उत्पन्न होते हों। वे सब विकार दूर होते हैं।

३. अग्निमुखरस

विधि—शुद्ध पारद, शुद्धगन्धक, शुद्धवच्छनाग, तीनों १-१ तोला मिलाकर अदरखके रसके साथ खरल करें। फिर अश्वत्थ (पीपल वृक्ष)काक्षार, इमलीका क्षार, अपामार्गका क्षार, जवाखार, सज्जीखार, सोहागाका फूला, जायफल, लौंग, सोंठ, काली मिर्च, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, ये १४ ओषधियां १-१ तोला तथा शंख भस्म, सैंधा नमक, सांभर नमक, समुद्र नमक, काला नमक, कांचनमक, भूनी हींग और जीरा, ये ८ ओषधियां २-२ तोले मिला नीबूके रसमें ३ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियाँ बनावें। (र० का०)

मात्रा—१-१ गोली दिनमें ५-७ समय मुँहमें रख कर रस चूसें। या २-२ गोली दिनमें ३ बार निवाये जलके साथ देवें।

उपयोग—यह वटी पाचनी और दीपनी है, अजीर्ण, शूल और विसूचिकाको तत्काल दूर करती है। एवं हिक्का, गुल्म और उदररोगको भी नष्ट करती है।

इस अग्निमुखका कार्य अग्निकुमार और अग्नितुण्डीकी अपेक्षा भिन्नप्रकारका है। इन दोनों औषधोंकी अपेक्षा इसमें क्षार अत्यधिक होनेसे इस रसका विशेषतः वियोजन और शोषण यकृत् मध्यम कोष्ठ कफ स्थान और वृक्कोंमें होता है। यह औषध पाचक, दीपक, कफस्थानमें रहे हुए कफको हरणकर पतला बनानेवाला तथा यकृदादि इन्द्रियोंको शक्तिदायक है।

यकृत्की अशक्तता या यकृत्पित्तकी उत्पत्ति कम हो जानेसे जो एक प्रकारका अतिसार हो जाता है। उसमें कफ दुष्टि भी दोष प्रत्यनीक चिकित्साकी दृष्टिसे एक कारण होता है। ऐसे अतिसारमें दस्त सफेद, जलमें घुले हुये आटेके सदृश, क्वचित् खड़ियामिट्टीके जलके सदृश सफेद दुर्गन्ध युक्त, कुछ अंश बंधा हुआ और कुछ बिना बंधा हुआ होता है। इसमें दूसरा प्रकार ऐसा है कि, मेथी आदि शाकके निचोड़े हुए रसके समान हरा-सा, दुर्गन्ध युक्त और कुछ मल मिला होता है। इन दो प्रकारोंमें से पहले प्रकारमें इस अग्निमुख रसका उपयोग अधिक होता है। एवं दूसरे प्रकारमें अग्नितुण्डी से लाभ पहुंचता है। प्रथम प्रकारमें कफ दोषका प्राधान्य होनेसे यकृत्पित्तका सम्यक् स्राव नहीं होता। इस कफकी प्रधानता कम हो जाने पर यकृत्का स्राव सम्यक् होने लगता है। फिर अतिसार नष्ट हो जाता है।

इस प्रकारके अतिसारमें या इस प्रकार के यकृद् विकारमें जुलावके साथ वमन भी होती है। यह वमन, चिकनी और झागयुक्त होती है। आमाशयमें से कफ दुष्टिके हेतुसे पाचक पित्तका स्राव योग्य नहीं होता; जिससे भोजनका परिपाक भी योग्य नहीं हो सकता; और इसी हेतुसे वमन उपस्थित होती है। यह विकार कभी कभी बहुत पुराना भी देखनेमें आता है। इस स्थितिमें अग्निमुखका अच्छा उपयोग होता है।

अन्नके विदाह और विष्टब्धताके हेतुसे उत्पन्न शूल, उसके साथ साथ आफरा, दूषित डकार आना, उदर और कण्ठको बांध दिया हो ऐसा भासना आदि लक्षण होते हैं। कुछ समय तक उदरशूल अधिक और कुछ समय तक कम रहता है। क्वचित् भयंकर शूल चलने लगता है। इस विकार पर अग्निमुखका अधिक उपयोग होता है। शंख और हींगके हेतुसे आक्षेपके सदृश वेदनाका निवारण हो जाता है, तथा शामक ओषधियोंके योगसे अवशिष्ट वेदना शमन हो जाती है।

लघु अन्त्र और बृहदन्त्रके कुछ भागमें अन्न दूषित होने लगता है, उसमें एक प्रकारके कीटाणुओं की क्रिया मिल जानेसे वायुका संचय खूब हो जाता है। इस हेतुसे कब्ज और कभी अत्यन्त तीव्र आफरा उत्पन्न हो जाता है। उदर तंग हो जाता है; यहां तक कि श्वासोच्छ्वास क्रियामें भी बाधा पहुँचती है। कौड़ी स्थान तक समग्र उदरमें वायु भर जाता है; इस हेतुसे उदर अतिशय खिंचता है। रोगी बेचैन हो जाता है, सारे उदरमें मंद मंद वेदना होती है, पहले मल शुद्धि नहीं होती; फिर अधोवायु भी नहीं सरता, मूत्रका भी कुछ अवरोध ही होता है। इस स्थितिमें वायुको अनुलोमन कराने वाली और कोष्ठस्थ दुष्टिको नष्ट करने वाली ओषधि देनी चाहिये। केवल विरेचन देनेसे यह कार्य नहीं होता। अग्निमुखमें वातानुलोमक और कोष्ठ दुष्टिनाशक गुण अवस्थित होनेसे इस समग्र विकार समूहका इस रसायनके सेवनसे निवारण हो जाता है।

निर्जन्तुक विसूचिका (अजीर्ण के तीव्र प्रकोप से उत्पन्न विसूचिका) में सारे कोष्ठमें शूल चुभानेके सदृश वेदना होती है। किसी किसी रोगीको जलके सदृश बड़े बड़े जुलाब होते हैं। जुलाबके हेतुसे सर्वाङ्गकी नाड़ियां खिंचती हैं। हाथ पैरमें ऐंठन होतीहैं। कभी कभी मूत्रावरोध होता है। किसीको वमन भी होता

है। इस व्याधिका कारण कोष्ठस्थ अन्न दुष्टि है। इस स्थितिमें अग्निमुखके सेवनसे सत्वर लाभ हो जाता है।

गुल्म अर्थात् गोला यह किसी भी प्रकारका हो फिर भी उसे गुल्म ही कहने की परिपाटी होनेसे गुल्म चिकित्सामें अनेक बार भारी गड़ बड़ हो जाती है। अन्त्रके भीतर अन्त्रस्थ भागमें वायुका संचय और अवरोध होकर अन्त्र फूल जाने पर वह गोलाके सदृश भासता है। ऐसे प्रकारके वातगुल्म पर अग्निमुखका अच्छा उपयोग होता है। ऊपर आनाहकी जो अवस्था कही है, उसकी व्याप्ति सम्पूर्ण कोष्ठमें होती है; और इस गुल्मकी व्याप्ति अन्त्रके थोड़ेसे भागमें होती है। इस तरह यह केवल वातावरोध ही होनेसे वह सत्वर दूर हो जाता है। कफगुल्म, रक्तगुल्म, अष्ठीला आदि रोगों पर इसका उपयोग कम होता है।

वृक्कविकृति होने पर मूत्रस्राव कम और लालरंगका होता है। मूत्रमें क्लेद जाता है। मुँह और हाथ पैर पर सूजन आ जाती है। उदरकी त्वचा भी शोथमय बन जाती है। यह शोथ धीरे धीरे बढ़ने पर उदरमें जल संचय होने लगता है। पतला और आटेके घोलके सदृश बारबार जुलाब होता है। वृक्कद्वारा क्लेद वहन सम्यक् प्रकारसे न होनेसे और कोष्ठस्थ कफदुष्टि के हेतुसे सर्वाङ्गशोफ या उदररोग (जलोदर) की उत्पत्ति हो जाती है। इस प्रकारके विकारमें अग्निमुख रस मूत्रल औषधके साथ अर्थात् गोखरू, धमासा, पित्तपापड़ा, सारिवा और पुनर्नवा आदि औषधियोंके क्वाथके साथ देने पर मूत्रपिण्डमेंसे क्लेदवहन कार्य सम्यक् होकर मूत्रस्राव भली प्रकारसे होने लगता है; और उसमेंसे मल द्रव्य बाहर निकल जाता है। इस स्थान पर अग्निमुखका कार्य द्विविध होता है। एक तो उसमें रहे हुए क्षारके योगसे मूत्रपिण्डों में से क्लेद वहन और मूत्रस्रावको यथोचित कराता है; तथा दूसरा कार्य शंखभस्म, हींग, अजमोद आदि

औषधोंका वियोजन उदर और अन्त्रमें होने से उस स्थान के विकारका शमन होकर अतिसार कम हो जाता है।

जीर्णकास और उसके साथ अतिसार होने पर अग्निमुख रसका उपयोग करना चाहिये। जीर्णकासमें कफका अच्छी तरह स्राव नहीं होता, कफ बिल्कुल घट्ट और गांठदार बन जाता है। अतिशय खांसने पर कफकी छोटी-सी गांठ निकलती है। साथ-साथ उदर पीडा, अपचन, उदरमें आफरा और सफेद दुर्गन्धमय दस्त आदि लक्षण भी प्रतीत होते हैं। इस स्थान पर भी अग्नि-मुख का कार्य उत्तम होता है। अनुपान रूप से कफ-स्रावी और श्वासवाहिनियों की उपशामक ओषधियाँ–मुलहठी, वासा, छोटी कटेली के मूल आदि के क्वाथ की योजना करनी चाहिये।

इस अग्निमुखरसमें पारद गन्धक की कज्जली जन्तुघ्न और रसायन है। बच्छनाग शूलघ्न और वातशामक है।

अश्वत्थक्षार, चिंचाक्षार, अपामार्गक्षार, सज्जीखार, सोहागा, तथा-पञ्चलवण ये पाचक, कफघ्न और दुर्गन्धनाशक है; जवाखार मूत्रल और पाचक है। जायफल शामक, पाचक और शूलहर है। जीरा और लौंग कोष्ठस्थ विदाह नाशक है। त्रिफला किञ्चित् स्तम्भक और अन्त्र की पुरःसरण क्रियावर्धक है। हींग वातशूलघ्न और आक्षेपहर है। शंखभस्म विदाहनाशक स्वादुतोत्पादक, शूलघ्न, दीपक और पाचक है। नीबूका रस पित्तस्राववर्धक और पाचक है।

सूचना—यह औषध तीक्ष्ण होने से रक्त पित्त, रक्तार्श और उरःक्षत विकार वाले को नहीं देना चाहिये।

(औ० गु० ध० शा० के आधार से)

सौभाञ्जन (सुहिजना) के वृक्ष की छाल के स्वरस की अथवा क्वाथ की भावना देने से विशेष गुण की वृद्धि होती है।

बाद लेना चाहिये। भोजन कर लेने पर जिनको उदर में भारीपन आ जाता है, उनके लिये अति हितकर है।

उदर शूल, प्लीहा वृद्धि, वातज गुल्म, रोगमें भी लाभदायक है। निर्बल शरीर वाले को ज्वर आने के पश्चात् यकृत् बढ़ जाता है, पाचन शक्ति मंद हो जाती है, उन रोगों को अजीर्णारि रस देने में यकृत प्लीहा वृद्धि दूर होकर पचनक्रिया सबल बन जाती है।

६. सर्वतोभद्र रस

विधि—अभ्रक भस्म २ तोले, शुद्ध गन्धक १ तोला, शुद्ध पारद ६ माशे, तथा कपूर, केशर, जटामांसी, तेजपात, लौंग, जायफल, जावित्री, छोटी इलायचीके दाने, गज पीपल, कूठ, तालीसपत्र, धायके फूल, दालचीनी, नागर मोथा, हरड़, काली, मिर्च, सोंठ, बहेड़ा, पीपल और आंवला, इन २० ओषधियों को ३-३ माशे लेवें। पहले पारद गन्धक की कज्जली करके भस्म मिलावें। फिर कपूर और केशर मिला कर अदरखके रसमें घोटें। पश्चात् शेष काष्टादि ओषधियोंका कपड़ छान चूर्ण मिला ६ घण्टे अदरखके रसमें खरल कर १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर छायेमें सुखा दें। (र० सा० सं०)

मात्रा—२ से ४ गोली दिनमें २ बार शहद मिश्री, जल, अनार रस, या कच्चे नारियलके जलके साथ।

उपयोग—यह सर्वतोभद्र रस अग्निमान्द्य, आमवृद्धि, विसूचिका, वात कफ प्रकोप। पित्त कफ प्रकोप, आनाह, मूत्र कृच्छ्र, संग्रहणी, वमन, अम्लपित्त, शीतपित्त रक्तपित्त, पित्तप्रकोपज जीर्ण ज्वर, धातुस्थ विषमज्वर, पांच प्रकारकी कास, कामला, पाण्डु, आदि रोगों को दूर करता है।

आमाशयका पित्त दूषित होने पर अम्लपित्त विदग्धाजीर्ण, उदरमें भारीपना बना रहना, मुख पाक, खट्टी वमन आदि विकार

कार्य तिर्यग् गत दोष या लीन दोषों पर नहीं होता। उतान दोष होने पर इस रसका कार्य अच्छा होता है। अतः जीर्ण विकार की अपेक्षा नूतन विकार पर इसका कार्य अधिक होता है।

नूतन कफज ग्रहणी रोगमें वारवार पतले दस्त होते हों; मल और जल अधिक न मिले हों; मुँहमें जल आना हो; तथा उबाक, उदर और अन्त्रमें जड़ता आदि लक्षण प्रतीत होते हों, तो यह रस पीपलके चूर्णके साथ देना चाहिये। यदि आम और रक्त गिरता, है, तो यह रस नहीं देना चाहिये। उस विकारमें दोष लीन रहते हैं। कफज ग्रहणी या कफवातज ग्रहणी विकार नया उत्पन्न हुआ हो, तो इस रस का उपयोग करना चाहिये।

आमाजीर्ण कफ प्रकोप से उत्पन्न होता है। इसकी उपेक्षा होने पर कभी अतिसार का प्रारम्भ हो जाता है। इस प्रकार के अतिसारमें पित्तकी क्षीणता और कफकी अधिकताके हेतुसे मल सफेद, जड़, गाढ़ा-सा झागमय होता है। वारवार शौच जाना पड़ता है। इस पर अग्नि सून प्रयोजित होता है।

इस प्रकारके आमाजीर्ण या विष्टब्धाजीर्णके हेतुसे ज्वरकी उत्पत्ति होने पर अथवा अजीर्णजन्य अतिसार या ग्रहणीके साथ अतिसार के लक्षण या उपद्रव उपस्थित होने पर भी इस रसायन का उपयोग किया जाता है।

इस रसायनको मट्ठाके साथ देनेसे अरुचि, शूल, गुल्म, पाण्डु, उदर और अर्श रोग नष्ट होते हैं, ऐसा मूल ग्रन्थ कारने लिखा है। यदि ये विकार नये हों, तो इन पर लाभ पहुंच सकता है; किन्तु रोगवल अधिक हो जाने पर इस रसका उपयोग नहीं हो सकेगा। ये सव रोग अन्त्रके दूषित होने पर होते हैं। कफ दोषसे अन्त्र दुष्टि हुई हो, किन्तु दुष्टि अधिक न हो गई हो, तब तक इस रसायनका उपयोग हितकारक माना जायगा।

अग्नि सुतमें कज्जली जन्तुघ्न, रसायन, और योगवाही है।

उपयोग—यह वटी दीपन-पाचन और उदर वात हर है। अजीर्ण, उदर शूल, अफारा, उदर में भारीपन आदि विकारों को दूर करती है, और पाचन शक्ति को बढ़ा देती है। कफ और वात प्रकृति वालों के लिये तथा मेदवृद्धि वालों के लिये यह वटी लाभदायक है।

सूचना—सगर्भा स्त्री तथा अम्लपित्त, रक्तपित्त, प्रवाहिका और अर्शरोग, इन से पीड़ितों को यह वटी नहीं देनी चाहिये।

१० जम्बीर लवण वटी

औषध द्रव्य—जंबीरी या कागजी नीबूका रस १२० तोले, सैंधा नमक १२ तोले, सोंठ, अजवायन, सज्जीखार, पीपल, भुनी हींग, काँटेवाले करंजके सेके हुए फलोंकी गिरी, कालीमिर्च, छिला हुआ लहसुन, सफेद सांठीकी जड़, (पुनर्नवा) सफेद (पीली) सरसों, सेका हुआ सफेद जीरा, अतीस और समुद्र लवण, ये १३ औषधियां २॥-२॥ तोले लेवें।

विधि—पहले नींबूके रसको कपड़ेसे छान अमृतवान या काँचके बरतनमें भर, सैंधानमक मिला बर्तनके मुंह पर स्वच्छ सफेद कपड़ा बाँध कर ४ दिन सूर्यके तेज तापमें रखें। रात्रिको रोज बरतनको उठालें। पांचवे दिन उस रसको मजबूत मिट्टीके बरतनमें डाल मंदाग्नि पर पकावें। लकड़ीके दण्डेसे चलाते रहें। रस गाढ़ा होने पर अन्य द्रव्यों का कपड़छन चूर्ण मिला नीचे उतार शीतल होने पर ३-३ रत्तीकी गोलियाँ बना लेवें।

(श्री० पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्रा—२-२ गोली शीतल जलमें अथवा मुंहमें रखकर चूसें। आवश्यक्तानुसार दिनमें ३-४ बार या भोजनके बाद देवें।

उपयोग—जम्बीर लवण वटी उत्तम दीपन-पाचन है। अग्निमान्द्य, अरुचि उदरशूल, अजीर्ण और अफारामें अच्छा लाभ पहुँचाती है।

शाक भोजी, मांसाहारी और जड़ान्न खानेवाले, सबके लिये यह हितकारक है उदरमें अन्न पत्थर समान पड़ा रहता हो, उदर-शूल चलता हो, उदरमें वायु संगृहीत होती हो और अन्त्रकी क्रिया शिथिल होनेसे कब्ज होजाती हो, उन विकारों पर यह दी जाती है। यकृत् पित्तका योग्य स्राव न होनेसे दस्तमें दुर्गन्ध आती हो, मलका रंग सफेद या मैला प्रतीत होता हो उदरमें छोटे छोटे कृमि होजाते हों, और पेशाब भी पूरा साफ न होता हो, उन दोषोंको यह वटी दूर कर पचनशक्तिको सबल बना देती है।

पाचन क्रियामंद होनेसे आम और कफकी वृद्धि होती हो, अरुचि बनी रहती हो, थोड़े थोड़े दस्त लगते रहते हो, जुकाम, कास और श्वास भी होजाता हो, उन सब विकारोंको जम्बीर लवण वटी थोड़े ही दिनोंमें दूर करती है।

११. द्राक्षादि गुटिका।

विधि—धोकर बीज निकाली हुई काली मुनक्का १ सेर, भुना हुआ जीरा १० तोले, सैंधानमक, काली मिर्च, मिश्री और नीबूका सत्व (Citric acid) ५-५ तोले लें पहले मुनक्काको पीस कर नीबूका सत्व मिलावें। फिर नमक, मिश्री और कालीमिर्च क्रमशः मिला खरलकर २-२ रत्तीकी गोलियां बनाकर सोंठके चूर्णमें डालते जायं।

मात्रा—१-१ गोली मुंहमें रखकर रस चूसें। दिनमें १० गोली तक। भोजनके आध घंटा पहले या भोजनके पश्चात्।

उपयोग—इस गोलीके सेवनसे अरुचि दूर होती है; क्षुधा प्रदीप्त होती है तथा उदर शुद्धि होती है। अपचन, उदरवायु, कब्ज आदि विकारोंमें यह लाभदायक है।

१२. रोचक गुटिका।

बनावट—पहले लिखा हुआ नागेश्वर रस और गुठली

रहित खजूर (अथवा मुनक्का बीज निकाली हुई) सम भाग मिला खरलकर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लेवें। (आ० नि० मा०)

मात्रा—१-१ गोली मुँहमें रख कर रस चूँसे दिनमें १० गोली तक।

उपयोग—यह गुटिका अपचन और अरुचिको दूर करनेमें अति हितावह है; उदर शुद्धि करती है; और क्षुधा भी बढ़ाती है।

१३. नरसारादिपुष्प।

बनावट—नौसादर और सांभर नमकको १०-१० तोले मिला कर बारीक चूर्ण करें। फिर एक बड़े सराव में रख, उसके समान दूसरा सराव ऊपर औंधा रख, दोनोंकी संधिपर कपड़ मिट्टी करें। सूख जाने पर २॥ सेर लकड़ीके कोयलोंकी अग्निपर सम्पुटको रख देवें। स्वाङ्ग शीतल होने पर ऊपरके सरावके भीतर लगे हुए पीले वर्णके पुष्पोंको सम्हाल कर निकाल लें। (आ० नि० मा०)

मात्रा—ज्वरमें प्रस्वेद लानेके लिये ८ रत्ती तक तथा अग्निमान्द्य, ज्वर, विषमज्वर और यकृद् विकारमें ४ रत्ती तक जलके साथ दिनमें ३ बार देवें।

उपयोग—यह पुष्प अपचन, अग्निमांद्य, यकृत्के पित्तस्राव की न्यूनता, कफवृद्धि, उदरका भारीपन, कोष्ठ बद्धता आदिको दूर करता है। यह पुष्प पित्ताशय शूलमें गरम जलके साथ देनेसे पित्तस्राव बढ़ा कर शूलको सत्वर शमन करता है। अजीर्ण जन्य शिरः शूलके लिये अति उत्तम दवा है।

१४. लवण रसायन (नमक सुलेमानी)

विधि—सैंधानमक, कालानमक, संचरनमक, और नौसादर ७-७ तोले, चित्रकमूल, अजवायन, अजमोद, कालीमिर्च, सोंठ, पीपल, सफेदजीरा, कालाजीरा, जायफल और जावित्री, ये

१० औषधियां १-१ तोला लें। सबका कपड़छान चूर्ण मिलाकर पक्के पत्थरकी खरलमें आधसेर सिरकाके साथ मर्दन करें। सिरका थोड़ा थोड़ा मिला कर खरल करते रहें। फिर शुष्क बन जाने पर बोतलमें भर लेवें। (हकीम हाजक उत्तमचंदजी)

मात्रा—४ से ८ रत्ती तक दिनमें २ बार जलके साथ देवें।

उपयोग—यह नमक सुलेमानी खाये हुए भोजनको सत्वर पचा देता है। उदरमें भारीपनको तत्काल मिटाता है। अपचन, उदरशूल, अपचनजनित अतिसार, अरुचि और अग्निमान्द्यको दूर करता है।

१५. दीपन पाचन चूर्ण।

बनावट—सैंधानमक, कालानमक, सांभरनमक, ८-८ तोले और कांच लवण (बिड़ नमक) ४ तोले लें। इन सबको पहले कूट कर कपड़छान चूर्ण करें। फिर कालीमिर्च, पीपल २-२ तोले, डांसरिया (गिर्द समाक) अकलकरा, अम्लवेंत ८-८ तोले, धनियां, दालचीनी, चित्रकमूल, कैथ ४-४ तोले और अनारदाना ३० तोले लेकर चूर्ण करें। पश्चात् इमलीके सत (टारटरिक एसिड) ४ तोलेमें १ तोला जल मिलाकर घोटें। उसमें उपरोक्त दोनों प्रकार का चूर्ण मिला लेवें। अच्छी तरह मिल कर शुष्क हो जाने पर १६ तोले मिश्री, कालाजीरा और सफेद जीरा ८-८ तोले तथा सोंठ २ तोले का चूर्ण डाल कर खरल कर लेवें।

मात्रा—½ माशे से २ माशे तक।

उपयोग—यह चूर्ण दीपन-पाचन है। इसके सेवन से अपचन, आफरा, उदर पीड़ा, उबाक और अरुचि का नाश होता है, तथा अग्नि प्रदीप्त होती है।

१६. शतपत्र्यादि चूर्ण।

विधि—गुलाबके फूल २० तोले, नागर मोथा, जीरा, श्वेत-

चन्दन का बुरादा, छोटीइलायची के दाने, शीतल मिर्च, गिलोय-सत्व, खस, वंशलोचन, खसखस, इसबगोल की भूसी, गोखरू, दालचीनी, तेजपात, नागकेसर, लौंग, सारिवा (अनन्तमूल), कमल गट्टा (जिव्ही निकाले हुए) नीलोफर, कमल और तीखुर, ये २० औषधियां १-१ तोला तथा मिश्री ४० तोले लें। सबको कूट कर कपड़ छान चूर्ण करें। श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य

मात्रा—१॥ से ३ माशे दिन में २ बार जल के साथ।

उपयोग—यह चूर्ण विदग्धाजीर्ण, अम्लपित्त और आमाशयविकार से उत्पन्न मुखपाक पर व्यवहृत होता है।

अधिक मिर्च और अधिक नमक का सेवन, धूम्रपान, तमाखू खाना, विष, संक्रामक तीव्र ज्वर, शराब, सड़े हुए अन्न या फल अधकच्चे भोजन आदि कारणों से आमाशय में विकृति हो जाती है। तब आमाशय में पचन कराने के लिये जो आमाशयिक रस (gastric juice) बनता है उसमें लवणाम्ल (hydrochloric acid) विशेषांश में उत्पन्न होता है और आमाशय में शोथ होजाता है। फिर पित्तप्रकोपजनित विदग्धाजीर्ण और अम्लपित्त आदि विकार उत्पन्न होते हैं। इन आमाशयिक पित्तप्रकोपज विकार में मुखपाक, दाह, भोजन कर लेने पर उदर में भारीपन, अपचन, प्यास अधिक लगना पेशाब में पीलापन आजाना आदि लक्षण उत्पन्न होते हैं। इन विकारों पर यह चूर्ण अच्छा लाभ पहुँचाता है।

सूचना—*अधिक नमक, अधिक मिर्च, अति गरम गरम भोजन, अधिक चावल, इनमेंसे जो अधिक हों, उनको कम कर देना चाहिये। तमाखू, शराब आदि का व्यसन हों, तो उसे छोड़ देना विशेष हितकर माना जायगा।*

धाय के फूल और २४० तोले मुनक्का डाल, सबको मिश्रित कर चीनीके बोयाम में भरदें। मुनक्का को कुछ कूट लेनी चाहिये। जिससे जल्दी मिश्रण बन जाय। फिर आसव विधान अनुसार १-१॥ मास तक बन्द रखकर आसव तैयार कर लेवें। आसव विधि रसतन्त्रसार प्रथम खण्ड के आसव-अरिष्ट प्रकरणमें विस्तार से लिखी है। (भै० र०)

मात्रा—१। से २॥ तोले तक समान जल मिलाकर दिन में २ वार भोजन कर लेने पर देवें।

उपयोग—यह आसव क्षय, गुल्म, उदररोग, कृशता, ग्रहणी आन्त्रक्षय, पाण्डुता और अर्श रोग को सत्वर नष्ट करता है।

यह पिप्पल्याद्यासव उत्तम दीपक औषध है। पाचक अग्नि की क्षीणता होने पर अपचन उत्पन्न हुआ हो तो उसे दूर करनेके लिये यह अति उपयोगी है। वार-वार होने वाले अजीर्ण विकारमें विशेषतः आमाजीर्ण और विष्टब्धाजीर्णपर यह उत्तम लाभदायक है। कितनेक लोगों को दाल (द्विदल धान्य), गेहूँ और दूधके पदार्थका पचन नहीं होता। फिर अजीर्ण होजाता है। ऐसे अजीर्णपर पिप्पल्याद्यासव अच्छा कार्य करता है।

आमाशय रसका निर्माण योग्य न होने पर रसाजीर्ण और फिर रस क्षय होता है। रस क्षयके बाद रक्त क्षय, मांस क्षय आदि धातुओंका क्षय होता जाता है। इस प्रकारके क्षयमें यह आसव अमृतके सदृश उपकारक है।

कफ गुल्म और वात गुल्म पर पिप्पल्याद्यासव उपयुक्त है। कफोदर और वातोदर में जल संगृहीत होने के पहले इस औषध का उत्तम उपयोग होता है।

ग्रहणी रोग की तीव्रावस्थामें इस आसव का उपयोग नहीं करना चाहिये; किन्तु रोग जीर्ण होनेपर या तीव्रता शमन होनेपर

अग्नि मान्द्यके लक्षण हों, तो इस आसव को व्यवहृत करने से लाभ पहुंचता है।

पाण्डुरोग में लोह और शिलाजतु आदि ओषधियों के साथ इस आसव का सेवन कराने से सत्वर गुण होता है।

वातार्श और कफार्श पर इस आसव का सेवन लाभदायक है। (औ० गु० ध० शा० के आधार से)

१६ मधूकासव।

विधि—महुवेके सूखे फूल १०२४ तोले, वायविडंग ५१२ तोले, चित्रकमूल २५६ तोले, भिलावा २५६ तोले और मजीठ १२ तोले लें। भिलावेके ४-४ टुकड़े करके मिलावें। शेष सबका जौ कूट चूर्ण करें। इन सबको ३०७२ तोले जलमें मिलाकर क्वाथ करें। तीसरा हिस्सा (१०२४ तोले) जल शेषरहनेपर उतार कर छान लें। क्वाथ के समय शरीरको वाष्प न लगे, इस बातका सम्हाल रक्खें। क्वाथ शीतल होनेपर शहद १२८ तोले मिलावें। फिर उसे छोटी इलायची, नेत्र वाला, अगर और चन्दनके कल्क से अन्दर लिपे हुए घड़ेमें डाल देवें, और मुखमुद्राकर १ मासतक रहने दें। आसव तैयार होने पर छानकर बोतलों में भर लेवें। (च० सं०)

सूचना—यदि १५ दिनके पश्चात् १२८ तोले शहद और मिला दिया जाय, तो आसव विशेष गुणकारी बनता है।

मात्रा—१।-१। तोला दिनमें दो बार समान जल मिलाकर भोजनकर लेनेपर पिलावें।

उपयोग—यह आसव बृंहण और कफपित्तजित है। तथा ग्रहणीको प्रदीप्त करता है। इसके प्रयोग से शोथ, कुष्ठ, किलास (श्वित्र) और प्रमेह रोग नष्ट होते हैं।

यह आसव उत्तम आमपाचक और अग्निप्रदीपक है।

इस आसवका परिणाम आमाशयस्थ पाचक पित्तपर अधिक होता है। आमाशय, अग्न्याशय, और अन्त्र की पचन क्रिया सबल बनती है। इसहेतुसे रस-रक्त आदि सब धातुएं भी बलवान बन जाती हैं।

इस आसवमें कीटाणुनाशक, दुर्गन्धहर और किञ्चित् उत्तेजक गुण होनेसे फुफ्फुस और श्वासप्रणालिकाओंमें संगृहीत कफ सरलतापूर्वक बाहर निकलता रहता है। इस हेतु से यह आसव जीर्णकास, जिसमें दुर्गन्ध युक्त सफेद या पीला कफ बार बार निकलता रहता है, उसपर लाभ पहुँचाता है।

यह आसव अन्त्र संशोधक, कीटाणुनाशक और सेन्द्रियविष नाशक होनेसे नये उपकुष्ठ (विविधचर्म रोग को भी) दूर करता है। इस तरह वृक्कों को सशक्त बनाकर नये कफज शोथको शमन करता है। यह आसव दीपन, पाचन, गुणयुक्त होने से कफजप्रमेहों पर भी अच्छा लाभदायक है। इनके अतिरिक्त यह जीर्ण आमवातमें लीनदोषको जलाकर देहको निरोगी बना देता है।

२०. द्राक्षादि चाटण।

बनावट—किसमिस गुठलीरहित आलुबुखारा, गुठली रहित खजूर, अम्लतासकी फलीका गूदा, कालीमिर्च, सोंठ, पीपल, दाल चीनी, भूनीहींग, भूनाजीरा, कालानमक, सैंधानमक और लहशुन साफ़ किया हुआ, ये १३ ओषधियां ५-५ तोले, नीबूका रस ३० तोले और गुड़ ३० तोले लेवें। अमलतासकी फलीके गूदाको नीबूके रसमें भिगो दें। फिर मसलकर छान लें। किसमिस, आलूबुखारा, खजूर लहशुन को पहले अच्छी तरह शिलापर पीसकर कल्क बना लेवें। शेष ओषधियों को कूटकर कपड़ छान चूर्ण करें। फिर कल्क, चूर्ण, गुड़, और अमलतास मिश्रित नीबूकारस मिला अवलेहके सदृश बना लेवें।

उपयोग—यह गुटिका विसूचिका में अच्छा लाभ पहुंचाती है। अपचन, शूल, जुकाम और अतिसार आदि को दूर करके अग्नि प्रदीप्त करती है। प्रथम विधिकी अपेक्षा इस विधिमें कपूर कम होनेसे रोगबल कम हो जानेके बाद अधिक निर्बलता नहीं आती। एवं यह निर्बल हृदय वालों को भी निर्भयतापूर्वक अधिक वार दे सकते हैं।

विसूचिका के तीव्र प्रकोपमें आध आध घण्टे पर १-१ गोली देते रहना चाहिये। जल बर्फ जैसा शीतल १-१ चमच देते रहें। रोगबल कम होने पर मात्रा भी देर से देनी चाहिये।

नोटः—लहशुनके स्वरसके स्थानमें यदि प्याजके स्वरस की भावना देकर तैयार किया जाय तो विसूचिका के लिये यह विशेष लाभकारी है।

२२. वज्र वटी

विधि—एरंड तैलमें शोधित कुचिलेका चूर्ण १६ तोले, कालीमिर्च ८ तोले, शुद्ध हिंगूल, ताम्रभस्म और वच्छनाग २-२ तोले लेवें। सबको मिला अदरख और नीबूके रसमें १-१ दिन खरल करके आधआध रत्तीकी गोलियां बनावें।

मात्रा—१-से-२ गोली दिनमें २ या ३ वार जलके साथ दें।

उपयोग—यह वटी दीपन-पाचन कृमिघ्न और वातहर है अपचन, अग्निमान्द्य, आफरा, मलावरोध, उदरकृमि, आमातिसार उदरशूल, वातविकार और ज्वर को नष्ट करती है।

यह वटी उत्तमरसायन रूप है। विषम ज्वर दिनों तक रह जाने पर देह कृश होजाती है. अनेकोंके यकृत्प्लीहावृद्धि होती है, मंद मंद ज्वर बना रहता है और थोड़ा-सा कुपथ्य होने पर ज्वर बढ़ जाता है। इनके अतिरिक्त अग्निमान्द्य, मलावरोध, उदरवात, आमवृद्धि नेत्रदाह मूत्रमें पीलापन आदि लक्षण प्रतीत होते हैं।

उन रोगियोंको इस वटीका सेवन थोड़े दिनों तक कराने पर देह वज्रके समान दृढ बनजाती है।

अपचन होनेपर दुर्लक्ष्य करनेसे रोगजीर्ण और दृढ़ बनजाता है। फिर थोडा थोड़ा दस्त आते रहना, उदरमें भारीपन, अग्निमान्द्य, मलावरोध, निद्रावृद्धि, आलस्य, शिरमें भारीपन, मूत्रमें गँदलापन, बार बार दूषित डकार आते रहना, भोजन करनेकी इच्छा न होना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उस रोगपर इस वटीका सेवन १-२ सप्ताह करानेपर सब लक्षणों सह अजीर्ण रोग निवृत होजाता है। एवं अजीर्ण जन्य शूल आदि रोग नष्ट होते हैं।

असमय पर भोजन करने या अत्यधिक भोजन करने पर आमाशयमें दाह शोथ होकर अपचन होजाता है। फिर दूषित डकार आना, उदरमें भारीपन, जुकाम, किसी किसीको ज्वर होजाना, उदरमें शूल चलना, थोड़ा थोड़ा दस्त होना और बेचैनी आदि लक्षण प्रतीत होते हैं। उस पर यह वज्रवटी सर्वोत्तम औषध है। ४-४ घण्टेपर दिनमें ३ बार देनेसे प्रकृति स्वस्थ होजाती है। उदरमें विशेष भारीपना हो तो साथमें हरड और सोंठका चूर्ण देनेसे सत्वर लाभ पहुंचता है। भोजन न दिया जाय और केवल चाय पर रखा जायतो विशेष अच्छा। दोपहरको अति क्षुधा लगनेपर मोसम्बी, सन्त्रा, अनार आदि फल दे सकते हैं।

यकृत् अशक्त हो जाने पर पित्तस्राव कम होता है। फिर अन्त्रमें अन्नका योग्य पचन नहीं होता। जिससे दस्तमें दुर्गन्ध आना, दस्तका रंग सफेद होना, उदर में छोटे-छोटे कृमिकी उत्पत्ति, कभी कभी पतले दस्त लगना, उदरमें शूल चलना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उसपर इस वटी का सेवन कुमार्यासव के साथ कराने से यकृत् सबल होजाता है और यकृद् विकार जनित सब लक्षण दूर होजाते हैं।

उपान्त्रदाह-शोथ (Appendicitis) रोग होने पर उदरके दक्षिण भागमें जड़ता बनी रहती है। दबाने पर कुछ दर्द मालूम पड़ता है। कुछ कुछ दिनों पर शूलका दौरा होता रहता है। वातवर्द्धक या गुरु भोजन करने पर बहुधा दौरा हो जाता है। अन्य दिनोंमें भी अग्निमान्द्य, मलावरोध, शारीरिक निर्बलता जिह्वा सफेद मलयुक्त रहना आदि लक्षण भासते हैं। उस पर इस वटीका सेवन कुछ दिनों तक कराना चाहिये; और भोजन लघुपथ्य देना चाहिये।

अग्नितुण्डी वटी और वज्रवटी, दोनों अपचन और वात प्रकोप पर हितावह हैं। दोनों में कुचिलाकी प्रधानता है। इनमें से वज्रवटी आमाशय विकार और यकृत्की वृद्धि पर विशेष लाभदायक है। किन्तु जिनका हृदय अधिक निर्बल हो, उनके लिये वज्रवटीकी अपेक्षा अग्नि तुण्डीकी योजना हितावह मानी जायगी। सबल हृदय वालोंको सत्वर लाभ पहुंचाने और तीव्रप्रकोपमें विकारको तत्काल दबानेके लिये वज्रवटी विशेष उपकारक है। तीव्र प्रकोपमें एक दो दिन औषध सेवन कराना हो, तब निर्बल हृदय वाले को भी वज्रवटी देसकते हैं।

२३. तण्डुलादि कृशरा

विधि—लाल शालि चावल २ भाग, तिल और मूंग १-१ भाग लें। सब को पृथक् पृथक् भूने। तिलको कूट कर छिल्टे दूर करें। फिर सब को मिला खिचड़ी बना घी मिला कर खिलावें।

(हा० सं०)

उपयोग—यह खिचड़ी अच्छी तरह पेट भर के खिलाते रहने से तीव्राग्नि अर्थात् भस्मक रोग शमन होजाता है। रोग अधिक तीव्र न होतो खिचड़ी १-१ दिन छोड कर खिलाना चाहिये।

इस खिचड़ी के सेवन कालमें प्रवाल पिष्टी ६ रत्ती,

वंशलोचन, १ माशा सोनागेरू ४ रत्ती और गिलोय सत्व १॥ माशा (या गिलोय स्वरस ४ तोले) मिला दो हिस्से कर प्रातः सायं शहद के साथ देते रहने से अधिक लाभ पहुँचता है।

२४. एफर वेसेन्ट एपसम सॉल्ट।

(Magnesii suphas Effervescens)

मेग सल्फ	Mag. sulph.	५० औंस
सोडा वाईकार्व	Soda Bicarb	३६ औंस
टारटरिकएसिड	Tartaric Acid	१६ औंस
साईट्रिक एसिड	Citric Acid	१२॥ औंस
शर्करा	Sugar	१०॥ औंस

पहले मेगनेशिया सल्फास को फार्न हीट १३०(५४.४ सेन्टिग्रेड) तापांशपर शुष्क करें। जवतक ३ प्रति शत वजन कम हों, तवतक अग्नि पर रक्खें। फिर उसे खरल कर चूर्ण कर शक्कर मिलावें। पश्चात् क्रमशः और ओषधियां मिला लेवें। इस चूर्ण को भगोने में डाल तापांश २०० से २२० फार्न हीट (६३.३ से १०४.४ सेन्टिग्रेड) पर गरम करें। चूर्ण को वरावर चलाते रहना चाहिये। जव तक इसके दाने न वन जायँ तव तक चलाते रहें। फिर चालनी से समानाकार चूर्ण को छानकर अलग करें; और शेप चूर्ण को पुनः किञ्चित् अग्नि देकर दाने वना लेवें। इन सव दाने (चूर्ण) को १३० डिग्री फार्न हीट ताप पर सुखा कर वोतलों में भर लेवें। वजन लगभग १०० औंस होता है।

मात्रा—एक समय के लिये ४ से ८ ड्राम और वार-वार देने के लिये १ से ३ ड्राम तक।

उपयोग— अपचन, उदर में भारीपन, आफरा, खट्टीडकार उदरशूल, उवाक, वमनआदि पर इस औपध को थोड़े जल में डाल उफाण आने पर तुरन्त पिला दिया जाता है।

२५. लवण द्रावक ।

(Acidum Hydrochloriam)

विधि—नमक ४८ औंस, गन्धक का तिजाव ४४ औंस, जल ३६ औंस और वाष्प जल ५० औंस। पहले ३२ औंस जल पर गन्धक का तिजाब डालें। शीतल होने पर लवण मिला चीनी मिट्टी के वक यन्त्र में भरें। आधार पात्र के भीतर शेष ४ औंस जल रक्खें और अग्नि देकर तेजाब बना लेवें। जो वाष्प रूप द्रावक निकले वह आधार पात्र में होकर नल द्वारा दूसरे आधार पात्र में रक्खे हुए वाष्प जल के भीतर लेजाँय। वाष्प जल के योग से वाष्प द्रावक का तेजाब बन जाता है। इस तरह ६६ औंस होने पर प्रक्रिया समाप्त करें। प्रारम्भ से अन्त तक आधार पात्र को सावधानता पूर्वक शीतल रखना चाहिये। इस द्रवयमें ३१ ७६% वजनमें हाइड्रोजन क्लोराइड रहा है। यह विशुद्ध लवण द्रावक वर्णहीन, तीक्ष्ण और अमल स्वाद युक्त है। इसे वायुमें रखने पर श्वेत वर्ण और गन्धयुक्त धूम लवण मिश्रित क्लोरिन गैस निकलता है। इस तेजावको डाक्टरीमें म्युरियाटिक एसिड (Muriatic acid) भी कहते हैं।

इस तरह लवण द्रावक बनाने पर नमक जल और गन्धक के तेजाब के मिश्रण के योग से वक यन्त्र में सल्फेट ऑफ सोडा रह जाता है। तथा लवण में अवास्थित क्लोरिन गेस उस तेजाब में से निकलती है।

वक्तव्य—इस तेजाब को आल्को होल, क्षार, क्षार घटित सब कार्बोनेट, टारि इमेटिक कसीस, नागशर्करा, रजत और पारद घटित लवण के साथ नहीं मिलाना चाहिये।

मात्रा—लवण द्रावक ३३ तोले लेकर ६७ तोले जल में मिला लेने से जल मिश्रित लवण द्रावक (Acid Hydrocholoric dil.) तैयार होता है। इसके १०० अंशमें १० भाग हाइ

ड्रोजन क्लोराइड रहता है। इसका आपेक्षिक गुरुत्व १०५२ होता है। इसकी मात्रा ५ से ६० बूंद है। इसे १ औंस जलमें मिला कर देवें। सामान्यतः २० बूंदसे अधिक नहीं देना चाहिये।

गुणधर्म—स्वल्प मात्रा में जल के साथ मिलाकर सेवन करने पर आमाशय पौष्टिक, रसायन, क्षारनाशक, कृमिघ्न है। अधिक मात्रामें और जल रहित सेवन करनेपर दाहक विषक्रिया करता है।

उपयोग—खनिज द्रावण समूह शरीरके भीतर क्षार प्रधान स्राव (Alkaline secretion) की वृद्धि तथा अम्ल स्राव (Acid secretion) का ह्रास कराता है। इस हेतु से लाला (Salive) पित्त (Bile) और अन्त्र रस (Jnteotinal Juice) की वृद्धि होती है। तथा आमाशय आमरस (gastric juiu) के स्रावका ह्रास होता है। इस हेतुसे अजीर्ण रोग (Dyspepsia) में खनिज द्रावण उपकारी होता है। अतः यह जीर्ण आमाशय विकृति (Chronic gastric complaints) पर व्यवहृत होता है। कारण, विकृति (अम्लपित्त) होनेपर स्वाभाविक की अपेक्षा अम्लद्रावकका निःसरण अधिक होता है। जिन-जिन स्थानों में अम्ल स्राव अधिक (अम्लपित्त) हो, उन उन स्थानोंमें रोगियोंको भोजनके २-३ घण्टे बाद अत्यन्त वेदना होती है, उदर में भारीपन आता है; कुछभी खानेपर अम्ल उद्गार आता है। उसमें भोजनके पहले व्यवहार करनेपर, यह इस अधिक स्रावका दमन करता है; और क्षुधाको बढ़ाता है।

कभी-कभी अन्यदूरवर्ती यन्त्रों के साथ आमाशयकी सम वेदकता रखनेके लिये आमाशयमें अधिक परिमाणमें आमाशय रस निःसृत होता है। उस विकारमें दाह, खट्टी डकार, छाती और आमाशयमें वेदना तथामुखपाक आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। एवं क्षार जनित छातीमें जलन (Pyrosis) हो, तो

उस विकार पर इस द्रावकका उपयोग आहारके पीछे किया जाता है। इस अम्लाधिक्यके निवारणार्थ भोजनके प्रारम्भ में लवणद्रावक और सोरक द्रावकका प्रयोग किया जाता है। अनेक स्थानोंमें आमाशयके अत्यधिक और अनियमित उत्सेचन क्रियाके हेतुसे आमाशयमें विविध प्रकारका रस (एसेटिक एसिड, ल्युटिरिक एसिड, लेक्टिक एसिड) उत्पन्न होकर अम्लपित्त हो जाता है। उस अवस्थामें भी इस द्रावकको जलमें मिलाकर देनेसे अम्लोत्सेचनका दमन होता है।

एक प्रकार के अजीर्ण रोगमें आमाशयमेंसे आम रसका स्राव स्वल्प होता है। ऐसे समय पर भोजनके पश्चात् लवण द्रावकका प्रयोग करने पर अम्लस्राव की अल्पताको सहायता पहुँचाकर पचन करने की क्षमताको बढ़ा देता है। आमाशय में यदि मुक्त रस न हो तो मांस वर्धक सत्व (पेपसिन प्रोटिड) को नहीं गला सकता। अतः अम्ल रस की अल्पता होने पर भोजन के पश्चात् लवण द्रावक का उपयोग करना चाहिये। आमाशय रसकी उत्पत्तिमें अनियमितता होने पर इस द्रावकका उपयोग कुचिले और कितनीक कड़वी ओषधियोंके साथ करने पर पचन क्रिया को विशेष लाभ पहुँचता है।

अन्त्र प्रसेक (Intestinal Catarrh) और चिरकारी अतिसारमें भोजन के २-३ घण्टे बाद यह प्रयोजित होता है।

यह पेशाबमेंसे क्षारका ह्रास कराता है। अतः मूत्रमें फोस्फेट जाने पर अश्मरी रोगमें तथा यकृत् पित्तके स्रावमें उत्तेजना आने पर इस द्रावकका प्रयोग दिनमें ३ बार होता है।

पेशाबमें ऑक्जलिक एसिड या सिस्टिक ऑक्साइड उपस्थित होने पर भी यह व्यवहृत होता है। यदि पेशाबमें लिथेट ऑफ अमोनिया (यूरेट) जाता हो, तो इसका प्रयोग नहीं करना चाहिये।

घातक पाण्डु (Pernicious Anaemia) रोगमें तथा

आमाशय नें श्लैष्मिक स्राव के अत्यधिक संग्रह के साथ आमाशय की प्रसकावस्था (Catarrhal Condition) जिसमें श्लैष्मिक स्रावका अत्यधिक संग्रह हो, उसमें तेजाब सेवन का निषेध है। यह तेजाब स्वस्थ व्यक्तियों को बड़ी मात्रा में दीर्घकाल तक दिया जायगा, तो उत्तेजना और अपचनकी उत्पत्ति कराता है। एवं आमाशय में क्षत उत्पन्न कर देता है।

२६ सोराद्रावक।

(Acidum Nitricum, Nitric Acid)

विधि—गन्धकके तेजाब १७ औंसके साथ सोरा (कलमी सोरा Sodium Nitrate) १ पौण्ड औरजलको मिलाकर वक यन्त्र द्वारा खिंच लेने पर सोरक द्रावक तैयार होता है। इस द्रावकमें ७० प्रतिशत (वजनमें) विशुद्ध सोरक और ३० प्रतिशत जल है। यह द्रावक स्वच्छ, वर्णहीन, प्रवाही और तीक्ष्ण, गन्धयुक्त है। आपेक्षिक गुरुत्वर १. ४२ है। वायुमें रखने पर उसमें से तीव्रदाहक वायु निकलती है।

सूचना—क्षार, मद्यार्क, कार्बोनेट ओक्साइड, सल्फाइड अम्लप्रधान, द्रव्य, कासीस और नागशर्कराके साथ इस द्रावक को नहीं मिलाना चाहिये।

निर्जल द्रावक दाहक होनेसे उसका उपयोग उदर सेवनमें नहीं होता। जलमिश्रित अधिक मात्रामें लेनेपर या जल रहित द्रावकका सेवन करने पर प्रदाह की उत्पत्ति और दाहक-विष क्रिया करता है। विपाक्त लक्षण उपस्थित होने पर गंधक द्रावक के समान चिकित्साकी जाती है। दोनोंमें भेद यह है कि गन्धक द्रावक मुँहकी श्लैष्मिक त्वचा श्वेतवर्ण की तथा सोरक द्रावकके लगने पर पीतवर्ण की होजाती है। यह द्रावक दीर्घकाल तक सेवन करने पर मुँह आजाता है। अतः कुछ दिन बन्द कर देना चाहिये।

मात्रा—इस द्रावकके १५ भागको १०० भाग वाष्प जलमें मिलाकर जलमिश्र सोरक द्रावक बना लेनेपर उसमें १० प्रतिशत शोरा होजाता है। इस जल मिश्रित द्रावककी मात्रा ५ से २० बूंद १ औंस जलके साथ।

उपयोग—सोरा द्रावक योग्य मात्रामें सेवन करने पर यह लाला निः सारक, अग्नि प्रदीपक, पौष्टिक, शीतलता प्रद, रसायन पित्तनिःसारक और क्षार नाशक है। इसके सेवनसे क्षुधाप्रदीप्त होती है। पचनशक्तिकी वृद्धि होती है और शरीर बलवान बनता है। गन्धक द्रावकके समान इसमें संकोचक गुण नहीं है। अधिक दिनोंतक सेवन करनेपर अजीर्ण और उदरमें वेदना उपस्थित होती है। इसके सेवनसे कभी कभी मुँह आजाता है। आमाशय व्रण अर्थात् अलसर पैदा कर देता है।

बाह्यउपचारमें निर्जल द्रावक अति प्रवल दाहक है। उपदंशज सड़े हुए घाव (Chancres), मांसाङ्कुर (Warts) अर्शके मस्से (Haemotrbids), दुष्ट सड़े हुए क्षत (Phagedaenic Soves) जहरीले सर्प और पागल कुत्तेका विष, इन सबको जलानेके लिये व्यवहृत होता है।

रोगान्त दौर्बल्य और अग्निमान्द्यको दूर करनेके लिये कड़वी वनौषधिके साथ जल मिश्र द्रावक देने पर उपकार होता है।

अजीर्ण रोगमें पेशाबके भीतर ऑक्ज़लिक एसिड जाता है और अधिक मानसिक दुर्बलता आई हो, तो इस द्रावकके प्रयोगसे विशेष फल मिल जाता है।

बालकों के अतिसार, जिसमें अधिक किनछना पड़ता हो, मल हरे रंगका दहीके अणु जैसा और आम मिश्रित हो उसपर यह द्रावण आश्चर्यकारक उपकार दर्शाता है। बालकोंके चिरकारी अति सारमें मलहलके रंगका हो, खट्टी वास आती हो, रचना भी योग्य न हो, उसपर इस द्रावकका अच्छा उपयोग होता है।

अम्ल पित्तरोगमें किसी किसीको भोजन करलेने पर थोड़े ही समयमें खट्टी डकार और अम्ल रस मुंहमें आजाता है कि दांत भी खट्टे होजाते हैं तथा छातीमें दाह (Pyrosis) होता है। उसरोगमें भोजनके पहले सोराद्राक या लवण द्रावक देने पर अम्लता सत्वर निवृत्त होती है। किसी किसीको आमाशयके मुँहमें आया हुआ रस क्षार गुण विशिष्ट होता है; अतिशय कष्ट, उवाक और वान्ति होती है, ऐसे प्रकार पर भोजन कर लेनेके २ घण्टे बाद सोरा द्रावक या लवणद्राक का प्रयोग करने पर उपकार होता है।

जीर्ण यकृत् प्रदाह (Chnoric hapatitis) में पारद सेवन से उपकार न होने पर या किसी हेतुसे पारद प्रयोग अविधेय हो, तो जलमिश्र सोरा द्रावक ५-१० बूँद की मात्रामें १-१ औंस जलके साथ दिनमें २ बार कुटकी चूर्ण, रोहितकारिष्ट या कुमार्य्यासवके साथ सेवन कराने पर लाभ हो जाता है। चिरकारी यकृद्दाल्युदर (Cirrhosis) रोगमें इसके प्रयोगसे उपकार होता है। बालकोंके यकृत्क्रिया की शिथिलताके हेतु से मलावरोध होनेपर यह द्रावक निसोत या कुटकीके साथ दिया जाता है। यकृत्के समान चिरकारी प्लीहावृद्धि पर भी यह द्रावक लाभदायक है।

उपदंश फिरंग रोगकी द्वितीयावस्थामें किसी किसीको संधिवात और चर्मरोग हो जाता है। रोगी वृद्ध और दुर्बल होने पर अथवा रस कपूर, अमीररस और मल्ल-प्रधान औषधि अविधेय होने पर इस द्रावकका उपयोग १०-१० बूँद मात्रामें (सारिवासव और रक्त शोधकारिष्टके सेवन कराते हुए) करने पर रोग निवृत हो जाता है।

पेशावमें क्षारकी अधिकता होने पर या फोस्फेट क्षारकी अश्मरी होने पर इस द्रावकका सेवन कराया जाता है। इसके

अतिरिक्त १ बूँद द्रावक को १ औंस जलमें मिला कर मूत्राशयमें पिचकारी देनेसे अश्मरी जल जाती है। इस तरह जीर्ण मूत्राशय प्रदाह रोगमें भी यह पिचकारी हितावह है। परन्तु प्रदाहमें उग्रता हो, तो पिचकारी नहीं देनी चाहिये। प्रारम्भमें दो दिनके अन्तर पर पिचकारी देवें। फिर रोज एक बार देवें। पिचकारी देने के पश्चात् मूत्राशयमें ४० सेकण्डसे अधिक समय तक औषधको न रक्खें। कदाच पिचकारीसे कष्ट हो, तो पिचकारी न देवें।

मधुमेह रोगीको पीनेके १ पिण्ट जलमें १ ड्राम द्रावक मिला लें। फिर थोड़ा थोड़ा पिलाते रहने पर अधिक पिपासा और गात्र दाहका निवारण होता है तथा मूत्र परिमाण कम होता है। यदि साथमें अतिसार हो, तो सोरा-द्रावक न देवें।

अर्श रोग में मस्सा भीतरकी वल्लीमें हो, जो बन्धन योग्य न हो, उस पर निर्जल सोराद्रावक का स्थानिक प्रयोग करने पर यथेष्ट उपकार होता है। बिल्कुल मंद अवस्थामें २-३ बार लगाने पर ही बहुधा ठीक होता है। रक्तस्राव युक्त अर्शरोगमें इसका स्थानिक प्रयोग करने पर रक्तस्राव बन्द होता है। स्फीत और प्रदाह युक्त वल्लिकुञ्चित होती है तथा वेदना शान्त होती है।

सड़े और गले हुए दुष्टक्षत विशेषतः दूषितशस्त्रके लग जाने से उत्पन्न क्षत (Hospital gaugrene), सत्वर फैलने और तन्तुओंके नाशक (Phagedenic) क्षत मुखका सड़ा हुआ क्षत (Cancrumoris), कोमल कर्कस्फोट, वेदना विहीन और भग्न भयंकर व्रण आदि पर निर्जल सोरा द्रावकका स्थानिक प्रयोग सर्वोत्तम माना गया है।

कांचकी सलाकाको द्रावकमें डुबोकर घाव पर स्पर्श कराने पर समस्त मृत तन्तु स्पष्ट हो जाते हैं चारों ओर के जीवित तन्तुओं की अवस्था परिवर्तित होती है; तथा विकार दूर होकर स्वस्थावस्थाकी प्राप्ति हो जाती है।

प्रचुर पूय निःसरण युक्त दुष्ट व्रणको धोनेके लिये सोराद्रावक के धावनका व्यवहार करने पर उपकार होता है।

इस द्रावककी क्रिया त्वचाके ऊपरके हिस्सेके तन्तुओं तक सीमा बद्ध है। भीतरमें रहे हुए गम्भीर तन्तुओंमें यह प्रवेश नहीं कर सकता।

देह पर किसी स्थानमें त्वचाकी उत्पत्ति सदोष होकर मांसांकुर (Naevus wart) बनने और गुदा पर त्वचा विकृति गुद शूक (Condyloma) हो जाने पर उनको जलानेके लिये यह द्रावक महौषध है। १-२ ड्राम जल मिश्र द्रावकको १ पाइण्ट जलमें मिलावें। फिर उसमें पट्टी भिगो कर निरन्तर उस पर रखनेसे और वार वार पट्टीको गीली रखने पर वह विकार दूर हो जाता है और कोई कष्ट नहीं होता। कितनेक चिकित्सक निर्जल द्रावकको स्पर्श करा कर उसे जला डालते हैं। गर्भाशयके जीर्णप्रदाहमें भी यह द्रावक भीतर लगाया जाता है। इस तरह विषाक्त जन्तुका दंश होने पर यह द्रावक उत्तम दाहक है। शीत पित्तके ददोरों पर कण्डूके शमनार्थ इस द्रावकके धावनमें कपड़ा भिगो कर पोंछवाया जाता है। (स्पञ्जिग) मुखके भीतर श्लैष्मिक झिल्लीका प्रदाह, मुखमें क्षत, कण्ठमें नयी कृत्रिम झिल्ली (Aphthal) बनाना, रस कर्पूर आदिके सेवनसे अधिक लाला-स्राव होना, आमाशयकी अति उग्रताके हेतुसे मुँहकी श्लैष्मिक त्वचाका लाल लाल होना, तथा प्रदाह युक्त और उज्वल होना, इन सब पर यह द्रावक हितकारक है। कम मात्रामें उदर सेवन करने पर उपकार दर्शाता है।

गवैयाके स्वरभङ्ग, पचन विकृतिसे प्रतिफलित (रिफलेक्स) होकर उत्पन्न स्वरभङ्ग तथा स्वर यन्त्र की अति थकावटसे उत्पन्न स्वरभङ्गमें १० बूंद जलमिश्र सोरा द्रावकका सेवन कराने पर लाभ हो जाता है।

दो वार प्रयोग किया जाता है। इस तरह पैर, जंघा उरु आदि भागोंको पोंछनेके लिये भी इस द्रावकका उपयोग शीतल जलमें मिला कर किया जाता है। देहके दक्षिण पार्श्वके बाहुमूल तक स्पञ्ज किया जाता है। यह स्पञ्ज दिनमें दो वार १-१ मिनिट तक किया जाता है। स्नानके निमित्त धातुपात्र नहीं लेना चाहिये। एवं जिस स्पञ्जका उपयोग किया जाता है उसे शीतल जलमें रख दें। अन्यथा द्रावकके तेजसे स्पञ्ज नष्ट हो जाता है।

कामला, यकृत् रोगसे उत्पन्न अतिसार और शोथ होने पर यह मिश्र द्रावणका उपयोग विशेप उपकार दर्शाता है।

पित्तनिःसरणकी विकृतिसे उत्पन्न विविध पीड़ाओं पर यह उपकारक है।

मुँहके भीतर उपदंश जनित क्षत होने पर यह द्रावक शहद और जलमें मिला कर कुल्ले करानेसे विलक्षण उपकारक होता है। फुफ्फुस कोथ (gangrine of the lungs) रोगमें मृत द्रव्य (विप) शरीरमें शोपित होने पर विविध उपद्रव उपस्थित होते हैं। उस रोग पर इस द्रावक काप्रयोग हित कारक है।

मान्ध, कास, श्वास आदि दूर होते हैं। यह रसायन बालकों के लिये अति लाभदायक है।

३. मुस्तादि योग।

विधि—शुद्धपारद, शुद्धगन्धक, नागरमोथा, पलासके बीज सेके हुए बायविडङ्ग मज्जा (छिलका निकाले हुए) दाडिम के मूल या वृक्षकी छाल, सेकी हुई कांटे वाले करंज की गिरी, सेके हुए इन्द्रजौ, कपीला और किरमानी अजवायन (खुरासानी अजमोद), ये १० ओषधियां १०-१० तोले तथा अजवायन सत्व (Theymol), और भुनी हुई हींग ५-५ तोले लें। पहले पारद गन्धकी कज्जली कर फिर अन्यद्रव्यों का कपड़छान चूर्ण मिला अन्न-नाश के पत्तोंके रसमें एक दिन खरल कर २-२ रत्तीकी गोलियां बना छायामें सुखा लें। (श्री० पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्रा—२ से ४ गोली तक दिनमें दो बार निम्न क्वाथसे देवें।

अनुपान—नागरमोथा, मूसाकानी, पलासके बीज, वाय-विडङ्ग, दाडिमवृक्ष की छाल, अजवायन, किरमाणी अजवायन, सुपारी, देव दारु, सुहिजनेकी छाल, हरड़, बहेड़ा आंवला और इन्द्रजौ, इन १४ ओषधियोंको समभाग मिलाकर जौकूट चूर्ण करें। फिर १ तोला चूर्णको १६ तोले जलमें मिला चतुर्थांश क्वाथ करके पिला देवें।

उपयोग—इस योगके ७ से २१ दिन सेवन करने से उदर कृमि और कृमिसे उत्पन्न उपद्रव सब दूर हो जाते हैं।

आमाशयके विकारसे कृमि उत्पन्न होने पर अरुचि, अपचन, वान्ति मंदज्वर, अफारा, उदरपीड़ा, हिक्का, पाण्डुता आदि उपद्रव उपस्थित होते हैं। उस पर इस औषध का सेवन करने पर सब कृमियोंका नाश होकर पचन क्रिया सुधर जाती है।

आमाशयके समान यकृत् और अन्त्र विकार से (निर्बलता

मात्रा—१-१ तोलेको १६ गुने गोमूत्र में मिलाकर चतुर्थांश क्वाथ करके सुबह पिलावें।

उपयोग—इस कषायके सेवनसे उदरकृमि (पुरीषज कृमि) एक सप्ताहमें सब गिरजाते हैं। जब पुरीषज कृमि-सूत जैसे पतले और छोटे छोटे कृमि उत्पन्न होते हैं, तब उदरमें वायुसंग्रह, गुदामें खाज आना, हाथ पैर गलना, दिनमें ३-४ बार दस्त लगना, उदरपीड़ा, कृशता, नेत्रके चारों ओर कालापन, रोगबढने पर डकार और निःश्वासमें मल की दुर्गन्ध आना, पाण्डुता, रोंगटे खड़े होना और अग्निमान्द्य आदि लक्षण प्रतीत होते हैं। उन सूक्ष्म कृमियोंके लिये यह क्वाथ अतिहितकारक है। यह कषाय कृमियोंको गिराता है तथा उत्पत्ति भी बन्द कर देता है। प्रारम्भसे जब तक कृमि निकलते रहें, तब तक ऊपर की सब वस्तु मिला कर कषाय तैयार करें। कृमि निकलना बन्द होनेपर विरेचन औषधि निसोत न डालें। एवं जलमें क्वाथ करके १०-१५ दिन तक देते रहनेसे कृमि की उत्पत्ति बन्द होजाती है।

---

६ पाण्डु कामला प्रकरण।

१. प्रवालमाक्षिक मिश्रण।

विधि—प्रवालपिष्टी, सुवर्णमाक्षिक भस्म और अमृतासत्व, तीनों १-१ रत्ती मिला कर प्रातः सायं शहदके साथ देते रहने से थोड़े ही दिनोंमें पाण्डु, रक्तकी न्यूनता, रक्तमें श्वेताणुवृद्धि, निस्तेजता और दाह आदि का शमन होकर रक्तवृद्धि, हो जाती है।

आवश्यकता पर २-२ रत्ती तक तीनों ओषधि दे सकते हैं। इस मिश्रणमें लोह भस्म आधसे एक रत्ती तक मिलानेसे रक्ताणुओं की सत्वरवृद्धि होती है। यदि दाह न हो, तो अमृता सत्व के बदले ६४ प्रहरी पीपल २-२ रत्ती मिला देनेसे अग्नि प्रबल बनती है; और पाण्डु रोग जल्दी दूर होता है।

२. कालमेघ नवायस।

विधि—नवायसलोह (रसतन्त्रसार प्रथम खण्डमें लिखी है) २ भाग और कालमेघ पञ्चाङ्गका चूर्ण १ भाग मिला काल मेघके स्वरस या क्वाथकी ७ भावना देकर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लेवें। (श्री वैद्यराज यादवजी त्रिकमजी आचार्य आयुर्वेद मार्तण्ड)।

मात्रा—२ से ३ गोली दिनमें २ बार जलके साथ।

उपयोग—यह रसायन जीर्ण विषमज्वर, ज्वरके पश्चात्की निर्बलता, पाण्डु रोग और यकृद् वृद्धिमें लाभदायक है।

३. पञ्चाननवटी।

विधि—शुद्धपारद, शुद्धगन्धक, ताम्रभस्म, अभ्रकभस्म, शुद्ध गूगल और शुद्धजमालगोटा, इन ६ ओषधियोंको समभाग लें। पहले पारद गन्धककी कज्जली करें। फिर भस्म और शेष ओष-

धियां क्रमशः मिला १ प्रहर तक १ तोले गोघृतके साथ मर्दन कर गोला बना लें। या १-१ रत्तीकी गोलियां बनावें। (र० सा० सं०)

मात्रा—१ से २ गोली प्रातः काल जल या रोगानुसार अनुपानके साथ देवें।

सूचना—इस रसायनके सेवन कालमें शीतल जल और अम्ल पदार्थोंका त्याग कराना चाहिये।

उपयोग—यह पञ्चाननवटी शोथ सह पाण्डु रोगको दूर करती है। आहार-विहार या ओषधि प्रयोगमें भूल होनेसे या यकृद् विकृतिसे शोथ उपस्थित होता है; तब उस शोथ सह पाण्डुको दूर करनेके लिये इस रसायनकी योजना होती है।

जब त्रिदोषज पाण्डु (Progressive Pernicious Anaemia) होता है, तब नेत्रके अन्तर पटल, त्वचा और, श्लैष्मिककला आदिमेंसे बूंद बूंद रूपसे रक्त स्राव होता है; फिर त्वचा पर चारों ओर रक्तके धब्बे हो जाते हैं; पैरोंके घुटनों की ओर शोथ बढता जाता है; मेद बढ जाता है; बलका क्षय होता है; हृत्स्पंद वेगकी वृद्धि, हृदय विस्तार, बारबार मूर्च्छा, रात्रिको ज्वर १०२-१०४ डिग्री तक रहना, रोग वृद्धिके साथ साथ विचार शक्तिका ह्रास होना आदि लक्षण प्रकाशित होते हैं। इस त्रिदोषज पाण्डु रोगकी उत्पत्ति रक्तमें विषवृद्धिसे होती है। इस पर विशेषतः मल्ल प्रयोग किया जाता है। किन्तु प्रारम्भमें विषको बाहर निकालने और जलानेका प्रबल प्रयत्न किया जाय, तो सत्वर लाभ हो जाता है। यह कार्य इस रसायनसेउत्तम रूप से होता है। अतिसार न हो और रक्तस्राव न होता हो, ऐसे रोगियों पर इस पञ्चाननवटीका प्रयोग किया जाता है। इस रसायनके साथ कुष्ठ रोगोक्त महातिक्तघृतका सेवन कराया जाय तो विशेष लाभ पहुंचता है।

बनाता है। परिणाममें विष नष्ट होकर सत्वर स्वास्थ्य की प्राप्ति हो जाती है।

४. लोह सिन्दूर रस।

विधि—शुद्धपारद ४ तोले, लोह भस्म ८ तोले और शुद्ध गंधक १२ तोले लें। पारद गन्धककी कज्जली कर फिर लोह भस्म मिला कर मर्दन करें। पश्चात् इस मिश्रणको लोहेकी लम्बी नाल वाली या आतशी शीशीमें डाल ऊपरसे आधी बोतल तक लगभग २४ तोले सेमलकी जड़का क्वाथ भरें। फिर वालुका यन्त्रमें रख मंदाग्नि देकर पाक करें। द्रव कुछ शेष रहने पर उसमें त्रिफलाका गरम क्वाथ २४ तोले डालें। फिर गिलोयका गरम स्वरस २४ तोले डालें। द्रव सूख जाने पर अग्नि देना बन्द करें। स्वाङ्ग शीतल होने पर निकाल त्रिकटुके क्वाथ और अदरखके रसमें १-१ दिन खरल कर २-२ रत्तीकी गोलियां बना लेवें।

(र० यो० सा०)

मात्रा—१-१ गोली दिनमें दो बार च्यवन प्राशावलेह या रोगोचित अनुपानके साथ देवें।

उपयोग—यह लोहसिंदूर रस शुष्क पाण्डुका नाश करता है। विविध ज्वर, उदर कृमि, आमवात, मधुमेह, उपदंश आदि रोगोंसे आई हुई पाण्डुता, निर्वलमाताओंको संतानोत्पति, वालकों को स्तनपान, अतिमैथुन, हस्तमैथुन, उपवास, मानसिक चिन्ता, अति शुक्रस्राव, पौष्टिक भोजनका अभाव, तमाखू आदिका अति सेवन तथा शीशा विष, इत्यादि कारणोंसे पाण्डु रोगकी उत्पत्ति होती है। इनमेंसे सब पर तो इसका प्रयोग नहीं हो सकेगा। जिनमें विष प्रकोप अवस्थित हो, ऐसे पाण्डुक्षय, मधुमेह, उपदंश और शीशा विषसे उत्पन्न पाण्डु पर इसका योग्य उपयोग नहीं होता। एवं जब तक तीक्ष्ण ज्वर हो, तब तक भी इस औषध

५. नारायण मण्डूर।

विधि—सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, अपामार्गकी जड़, चव्य, पीपला मूल, भूनी हींग, भारंगी, गज पीपल, अजमोद, अजवायन, बच, हरड़, बहेड़ा, आंवला, हल्दी, दन्तीमूल, मजीठ, वज्रवल्ली (अस्थि संहारी), लहसुन, कालीमिर्च, पाठा, सरफोंका, पुनर्नवा शुद्ध जमालगोटा, सैंधानमक, मूर्वा, कुटकी और इन्द्रायण इन २६ ओपधियों का कपड़छान चूर्ण १-१ तोला तथा मण्डूर भस्म या लोह भस्म २६ तोले लेवें। फिर भांगरा, बिजौरा, हल्दी, अदरख, प्रसारणी, तुलसी, वनतुलसी, नागरमोथा, आंवलेके रस या क्वाथके साथ १-१ दिन खरलकर २-२ रत्ती की गोलियां बना लेवें। (र० यो० सा०)

वक्तव्य—*इस रसायनमें मण्डूरभस्म मिलाना, लोहभस्म की अपेक्षा अधिक हितवह माना जायगा। मण्डूरका वियोजन और रूपान्तर लोह भस्म की अपेक्षा सरलतासे होता है। एवं मण्डूर उदर शोधनमें सहायक भी होता है।*

मात्रा—१ से २ गोली प्रातःकालको सफेद पुनर्नवाके स्वरस, मट्ठा या निवाये जलके साथ दें। शोथ और जलोदरके विषको पेशाब द्वारा बाहर निकालना हो, तब यवक्षार भी पुनर्नवा रसमें मिला देना चाहिये। विरेचन कराके मलको निकालना हो, तब अनुपान में निवाया जल देवें। दोष को पचन कराना हो और ज्वर न हो, तब मट्ठाके साथ देना हितकारक है।

उपयोग—इस रसायनके सेवनसे सब प्रकारके प्रबल पाण्डु रोग, विषप्रकोपज पाण्डु, शोथसह पाण्डु, कामला, शोफ रोग, अरुचि, अग्निमान्द्य, गुल्म, हृद्रोग, शूल, उदर रोग, पार्श्वपीड़ा, विविध प्रकारके विषम ज्वर, वमन, मलावरोध, क्षय, त्रिदोपज श्वास-कास

पुनर्नवा, अपामार्ग आदि; यकृत् प्लीहापर लाभ पहुँचानेके लिये अपामार्ग, सरफोंका और पाठा तथा जीवन-विनिमय क्रिया सुधारनेके लिये अपामार्ग, मूर्वा, आंवला, हरड़, भांगरा आदिका संमिलन कराया है। इन सब द्रव्यों की सहायता लेकर मण्डूर-भस्म रक्त, रक्ताणु, रक्त वाहिनियाँ, रक्ताभिसरण क्रिया और हृदयेन्द्रिय आदि पर लाभ पहुँचा कर पाण्डु, शोथ, उदर रोग, श्वास, अग्निमान्द्य, विबंध आदिको नष्ट करती है।

नोट—जिनको दस्तपतले होते हों अर्थात् मलकी प्रभृति हो उस दशामें उसका प्रयोग सावधानतापूर्वक करना चाहिये। क्योंकि इसमें जमालगोटा है। जमालगोटा क्षीणरोगी क्षत क्षयीको निषेध है।

६ द्वाविंशत्यायस।

बनावट—हल्दी, दारु हल्दी, त्रिफला (हरड़, बहेड़ा, आंवला), दन्तीमूल, व्योष (सौंठ, कालीमिर्च, पीपल), चित्रकमूल, हुल हुल, कुटकी, काली निसोत, पीपलामूल, वच, वायविडंग, त्रिफला (सुपारी, जायफल और लौंग), सफेद निसोत और गजपीपल, इन २१ ओषधियोंको १-१ तोलालें; तथा लोह भस्म ४२ तोले लें। काष्ठ आदि ओषधियोंका कपड़ छान चूर्ण और लोह भस्म मिला मर्दन कर बोतलमें भर लेवें। इस औषधको घी-शहदमें मिलाकर उसको 'हरिद्राद्यवलेह' संज्ञा भी दी है।

(ग० नि०)

मात्रा—४-४ रत्ती दिनमें दो बार घृत शहदके साथ देवें, और ऊपर दूध पिलावें।

उपयोग—इस लोहके प्रयोग से थोड़े ही दिनोंमें पाण्डु रोग और शोथ दूर हो जाते हैं; तथामुखमण्डल तेजस्वी बन जाता है।

७. त्रिशालादिचूर्ण।

विधि—इन्द्रायण, कुटकी, नागरमोथा, कड़ुवा कूठ, देवदारु, और इन्द्रजौ, ये ६ ओषधियां १-१ तोला, मूर्वा २ तोले और कड़वा अतीस ६ माशे लेवें। इन सबको मिला कूट कपड़ छान चूर्ण करलेवें। (भै० र०)

मात्रा—३ से ६ माशे चूर्ण प्रातः काल को निवाये जल से देकर ऊपर ६ माशे शहद चटादेवें; अथवा ६ माशे से १ तोला चूर्ण गरम जल में रात्रिको कांच के पात्र में भिगोदेवें। सुबह छानकर पिला देवें।

उपयोग—यह चूर्ण कोष्ठ शुद्धि करने वाला और कीटाणु नाशक है। पाण्डु रोग, ज्वर, दाह, कास, श्वास, अरुचि, गुल्म, और रक्त पित्त आदि रोगों का नाश करता है।

पाण्डु रोगीको जब मन्द ज्वर, मलावरोध, उदर कृमि, दाह आदि विकार सताते हों, तब प्रातः कालको इस चूर्ण का सेवन कराते रहने से और दिन में दो बार भोजन कर लेने पर लोह या मण्डूर प्रधान औषध देते रहने से थोड़े ही दिनों में ज्वर आदि लक्षणों सह पाण्डु रोग दूर होजाता है।

इस चूर्ण से रोगी को २-३ दस्त लगते हैं। इस हेतु से भोजन में खिचड़ी, चावल, आदि देने चाहिये। चने, मटर, सेम आदि नहीं देने चाहिये। एवं गेहूं, जौ आदि कम देने चाहिये। इस चूर्ण की मात्रा अधिक नहीं देनी चाहिये; अन्यथा विरेचन अधिक होता है। जिससे आंते कमजोर बनती है, और मरोड़े होकर दस्त लगते हैं, फिर अरुचि और मन्दाग्नि बढ़ जाती है। एवं-निर्बलता अधिक आ जाती है।

सूचना—इस चूर्णमें प्रधान ओषधि इनद्रायण है। यह

प्रबल विरेचक है। शाधिक होनेसे मात्रा अधिक देनेपर यकृत् और अन्त्रको हानि करता है। अंत्याधिक मात्रा होजाने पर विष क्रिया करती है। आमाशय और अन्त्रमें प्रदाह होता है; तथा रक्त और श्लेष्म मिश्रितमलका विरेचन होने लगता है। एवं अधिक मात्रासे वृक्क और मूत्राशयमें भी प्रदाहकर देती है। अतः इस चूर्णका सेवन योग्यमात्रामें कराना चाहिये।

सगर्भा स्त्रियोंको यह चूर्ण नहीं देना चाहिये।

८. हरीतकी रसायन।

विधि—उत्तम, रसदार काबुली हरडोंको रात्रिको गोमूत्रमें डालें। दिनमें धूपमें सुखावें। गर्मीके दिनोंमें सूख जाने पर धूपमें से उठा लेवें। इस तरह २१ दिन तक भिगो कर सुखावें।

(बृ० नि० र०)

मात्रा—१-१ हरड़ रोज सुबह सेवन करें।

उपयोग—यह हरीतकी रसायन पाण्डु, अग्निमान्द्य, आमवृद्धि, जीर्ण अजीर्ण, ग्रहणी, जीर्ण ज्वर, उदररोग, प्लीहावृद्धि, उदरकृमि, मलावरोध, शोथ आदिको दूर करता है। ४-६ माशे मात्रामें दीर्घ काल तक शान्तिपूर्वक सेवन करने पर शरीर नीरोग बन जाता है। अपचन और मलवरोध पर एक दिन या २-४ दिनके लिये सुबह शाम दोनों समय और अधिक मात्रामें भी दी जाती है। पुराने मलावरोधके रोगीके लिये यह प्रयोग अति हितकारक, सरल और निर्भय है। जिनका शरीर व्याधि मंदिर बन गया हो, शीतल या उष्ण, उत्तेजक या शामक अथवा कोई भी औषध सहन न होती हो, आहार-विहारके आनंदसे जो वंचित हो गये हों और अति दुःखसे जीवन व्यतीत करते हों उनके लिये

है। बुरादा और मण्डूर आसवमें बिल्कुल नहीं मिलता। कासीस पूर्णांशमें मिल जाती है। फिर भी लोह भस्म मिलाना विशेष श्रेयस्कर माना जायगा। लोहभस्म मिलाने पर कोहलो त्पत्ति अधिक होती है और भस्मका मिश्रण भी हो जाता है।

मात्रा—१।-१। तोला दिनमें दो बार जल मिला कर भोजन के बाद देवें।

उपयोग—यह आसव अति अग्निप्रदीपक है। पाण्डु, शोथ, गुल्म, उदर रोग, अर्श, प्लीहावृद्धि, जीर्ण ज्वर, कास, श्वास, भगन्दर, अरुचि, ग्रहणी और हृदरोगका नाश करता है।

इस आसवमें अग्निप्रदीप्त करनेके लिये त्रिकटु, अजवायन, चित्रक मूल और नागरमोथा मिलाया है। उदरशुद्धि और कृमिहर गुणकी उत्पत्ति निमित्त त्रिफला, बायविडंग, नागरमोथा मिलाया है। इन सबके साथ लोहभस्मका संयोग होने से सबके गुणमें अतिवृद्धि हो जाती है। इस प्रयोग रचना पर लक्ष्य देनेसे विदित होता है कि जिस पाण्डु रोगमें अग्निमान्द्य लक्षण प्रबल हो, उस पर यह आसव लाभ पहुंचाता है।

विषम ज्वर, आमवात आदि संक्रामक ज्वर, मानसिक चिन्ता और उदर कृमि आदि कारणोंसे पाण्डुता आजाती है। इस पाण्डु रोगमें विशेषतः रक्त रचना विकृत होजाती है। जब रक्तमें प्राण वायु मिश्रण विधान (Oxidation) विकृत होजाता है, तब रक्त अशुद्ध बन जाता है। रक्त जीवाणुका ह्रास होजाता है; धमनियोंकी दीवार मृदु होजाती है। रक्ताभिसरण क्रिया बलपूर्वक नहीं होसकती। फिर कैशिकाओंमें यथोचितपूर्ण रक्त नहीं पहुंच सकता। जिससे देह अतिशिथिल और निस्तेज होजाती है। साथ साथ देह को सम्यक् पोषण न मिलनेसे इन्द्रियां स्वकार्यक्षम नहीं रह सकती।

इस हेतुसे निराधार निम्न प्रदेशमें शोथ आने लगता है। मांसमें क्षीणता आने पर हृत्कोष शिथिल होजाता है। मस्तिष्क विकृति होने पर रोगी चिड़चिड़ा होजाता है। या निरुत्साही और उदासीन बन जाता है। फिर नेत्र आदिकी श्लैष्मिक कलामें रक्त-हीनता, शिर दर्द, तन्द्रा, चक्कर आना, हाथ पैरों पर शोथ, हाथ पैरोंमें शीतलता, निद्रावृद्धि आदि लक्षण प्रतीत होते हैं। ऐसे लक्षणयुक्त पाण्डु रोग पर यह आसव सत्वर लाभ पहुंचाता है। यह पाचन क्रिया बढ़ाता है। तथा रक्ताणुओंकी वृद्धि कर रक्ता-भिसरण क्रियाको सबल बनाकर स्वास्थ्यकी प्राप्ति करा देता है।

अनेक बार लंघन आदि कारणोंसे रक्तरञ्जक (Haemoglob-in) की कमी होजाती है। इस वर्णद्रव्यके हेतुसे रक्तमें लाली भासती है। रक्तरञ्जक कम हो जाने पर देहनिस्तेज भासती है। इस रक्तरञ्जककी न्यूनता को भी यह लोहासव दूर करता है।

कभी-कभी युवा स्त्रियोंको एक प्रकारका हलीमक रोग होजाता है। उसमें त्वचा हरी पीली होजाती है। रक्तमें रक्ताणुओंकी संख्या आधी भी नहीं रहती। एवं रक्त रञ्जक (रञ्जक पित्त) का भी ह्रास होजाता है। देखनेमें रोगिणी पुष्ट भासती है; किन्तु हृदयमें घबराहट, मन्द ज्वर (रक्ताणुओंकी न्यूनतासे एक प्रकारका ज्वर होने लगता है) अग्निमान्द्य, चक्कर आना, मलावरोध, थोड़े परिश्रमसे श्वास भर जाना, श्वेत प्रदर, मासिकधर्म कष्टसे आना और असमय पर आना, तथा बलक्षय आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। इस विकार पर लोहासवका सेवन अमृतके समान उपकारक है। साथ साथ रुग्णाको शुद्ध वायुका सेवन तथा अग्निबलके अनुसार घृत और पौष्टिक आहारकी योजना कर देनी चाहिये।

अनेक बार उदरकृमि की उत्पत्ति हो जाने से पाण्डु रोग की प्राप्ति होती है। उदरकृमि होने पर कुछ अंश में ज्वर बना

रहना, उबाक; वमन, उदर-पीड़ा, आध्मान, क्षुधानाश, मुख मण्डल पर निस्तेजता, हृदय में कम्प होना, चक्कर आना, श्वास-कृच्छ्रता, आम और रक्त मिश्रित दस्त तथा पैर, नाभि और मूत्रेन्द्रिय पर सूजन, आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। इस विकार पर पहले कृमिनाशक औषधिका सेवन कराना चाहिये। फिर लोहासव देने से देह सत्वर तेजस्वी और बलवान बन जाती है। मूल हेतु रूप रक्त की न्यूनता और अग्निमान्द्य इन दोनों को यह आसव दूर करता है।

पाण्डु रोग में उत्पन्न लक्षणरूप शोथ, पाण्डु रोग में इन्द्रियां अपना कार्य करने के लिये असमर्थ होजाने से और पचन विकृति होजाने से उत्पन्न गुल्म, अर्श, और उदर में आध्मान, अपचन, अपचनके पश्चात् होने वाला मलावरोध या बार बार दस्त होना, उदरशूल, प्लीहावृद्धि, कास, श्वास, गौण कुष्ठ (त्वचाविकार), अरुचि, ग्रहणी, हृदय विकृति आदि हो जाने पर उन सबको यह लोहासव दूर करता है।

माक्षिक भस्म, बकायनके ताजे पान और नीमके कोमलपान १-१ तोला और कपूर ३ माशे लें। सबको मिला घीकुंवारके रसमें खरल कर १-१ रतीकी गोलियां बना सोनागेरुके चूर्णमें डालते जायं।

मात्रा—१ से २ गोली दिनमें २-३ बार जलके साथ देवें। आवश्यकता हो तो दोपहरको भी देसकते हैं।

उपयोग—रक्तपित, रक्तप्रदर अर्श आदि रोगोंमें रक्तप्रवाह को रोकनेके लिये यह वटी निर्भयतापूर्वक दीजाती है।

---

११. कास-श्वास-हिक्का प्रकरण।

१. नागवल्लभरस।

विधि—कस्तूरी, दालचीनी, सोहागेका फूला, तीनों १-१ तोला, केसर, शुद्धहिंगुल, पीपल, तीनों २-२ तोले तथा अकरकरा, जायफल, जावित्री, बच्छनाग चारों ४-४ तोले लें। सबको मिला नागरवेलके पानके रसमें ३ दिन तक खरलकर पाव पाव रत्ती की गोलियां बनावें। (यो० र०)

मात्रा—१ से २ गोली तक दिनमें ३ बार नागरवेलके पानमें या अदरखके रस और शहदके साथ दें। तीव्र प्रकोपमें आवश्यकता पर १-१ या २-२ घण्टेपर ३-४ बार दें।

सूचना—*इस नागवल्लभमें वच्छनागका परिमाण अत्यधिक है; इस हेतुसे इस रसायनका उपयोग अति सम्हाल पूर्वक करना चाहिये।*

उपयोग—यह नागवल्लभरस प्रमेह, कास, क्षय और वायुको नष्ट करता है। यह रस श्वसन मार्गको उत्तेजित करता है; कास-श्वास कम कराता है; कफस्रावको कम करा कफका नियमन करता है; तथा पित्तका द्रवत्व धर्म बढा हो, तो उसकाभी ह्रास कराता है। एवं यह बलदायक, पीड़ाहर और किञ्चित् उत्तेजक है।

श्वासयन्त्रमें किसी कारण वश, विशेषतः कफ प्रकोप होनेपर विकृति होकर श्वासोच्छ्वास कम से कम होता जाना, नाड़ीमंद होना, रोगीको शून्यता भासना, जीव भीतर और भीतर खिंचता जारहा हो अथवा किसी गाढ अंधकार में पड़ा हूँ ऐसा भासना आदि लक्षण उपस्थित होने पर श्वासयन्त्रको उत्तेजित

करनेका महत्वका कार्य इस रसके प्रयोगसे होता है। इसमें बच्छनाग अवसादक है। किन्तु गोमूत्र द्वारा विशेष संशोधित बच्छनागमें अवसादक गुण उतना प्रवल नहीं रहता। इस रसायनके योगसे श्वसनमार्ग नियामक वातवाहिनियां और सुषुम्णास्थित वातवाहिनियों का नियामक केन्द्र, दोनों पर परिणाम होकर श्वासोच्छ्वास उत्तेजित और नियमित बन जाता है। एवं प्रतिबन्ध दूर होजाता है।

कासकी प्रथमावस्थामें जब श्वासवाहिनियां क्षुभित होती हैं, कास बिल्कुल शुष्क आती है, तब इस औषधका उपयोग नहीं कियाजाता; किन्तु क्षोभ दूर होजाने पर कफस्राव अधिक होनेपर श्वासवाहिनियोंमेंसे पतला, झागयुक्त सफेद थूंक जैसा स्राव होने पर, साथ साथ मंद ज्वर, अंग टूटना, देह भारी होजाना, बैठे हुए स्थानसे उठने की इच्छा न होना, मुंहमें बारबार जल भर जाना, मुँह बेस्वादु रहना, खांसी के वेगसे नाक और आंख से स्राव होनेका भासना आदि लक्षण होनेपर नागवल्लभरसका उपयोग करना चाहिये। नागवल्लभसे कफस्राव कम होजाता है; और सर्वाङ्गमें एक प्रकार की उत्तेजना आनेके समान भासता है।

तमक श्वास या प्रतमक श्वास व्याधि जीर्ण होने पर अथवा इसका दौरा अधिक दिनों तक रहने पर एवं कभी-कभी निर्बल मनुष्योंका श्वास का वेग अति प्रवल होनेसे श्वसनेन्द्रिय आगे आगे अधिक थकती जाती है। इस विकारमें कफ स्राव होता ही है; किंतु एक ओर कफ स्राव होता है; और दूसरी ओर श्वास यन्त्रकी थकावट होती रहती है; तब कफ कभी-कभी किसी स्थानमें अवरुद्ध होजाता है। फिर रोगी बड़ा व्याकुल होजाता है। श्वास लेने और छोड़नेमें त्रास होता है। कण्ठ और छातीमें से घड़ घड़ आवाज निकलती रहती है। श्वासका वेग कम होनेपर प्राण वायु

है)। प्रमेहके इन प्रकारों पर नागवल्लभका अच्छा उपयोग होता है।

पक्षाघातका तीव्र झटका शमन होजाने पर मंदावस्थामें पक्षाघातके शेष रहे हुए विष और विकृति दूर करनेके लिये, यदि कफ भूयिष्ठ लक्षण हों, तो नागवल्लभ की योजना की जाती है।

बार बार कफप्रकोपके होने वालोंको और प्रतिश्याय की आदत वालोंको इस औषधका सेवन अवश्य कराना चाहिये।

नागवल्लभमें कस्तूरी श्वास वाहिनियां, इनसे सम्बन्ध वाली वातवाहिनियाँ, इन केन्द्र तथा श्वसनयन्त्र इन सबको उत्तेजित करती है; एवं शक्तिप्रद, उष्णवीर्य, रसायन और वाजीकर है। दालचीनी वेदनाशामक, आक्षेपहर, कफनाशक और दीपनपाचन है। सोहागा आक्षेपघ्न, कफनाशक और कासश्वास शामक है। केशर उत्तेजक और कफघ्न है। हिंगुल जन्तुघ्न, प्रतिश्याय-नाशक स्वेदल योगवाही और रसायन है। पीपल दीपन, पाचन और रसायन है। अकरकरा उत्तेजक और कफघ्न है। जायफल और जावित्री वेदनाशामक, ज्वरहर, सूक्ष्म स्रोतोगामी, विकासी और व्यवायी है; तथा स्वेद और मूत्र द्वारा क्लेद को बाहर निकालते हैं। नागरबेलका पान उत्तेजक, श्वासनलिका प्रदाह हर (कफहर), पाचक, कृमिघ्न और दुर्गन्धनाशक है।

(औ० गु० ध० शा० के आधार से)

२. नाग रसायन।

विधि—लौंग, जायफल, जावित्री, नागभस्म, कालीमिर्च और पीपलामूल, ये ६ ओषधियां १–१ तोला तथा कस्तूरी और केसर ३–३ माशे लें। इन सबको मिला अदरखके रसमें ६ घंटे खरलकर आध आध रत्तीकी गोलियाँ बना लेवें। (यो० र०)

वक्तव्य—इस रसायनमें हम कपूर ६ माशे मिलाते हैं। कपूर मिलानेसे श्वास क्रिया सबल बनने में सुविधा अधिक रहती है। और कफ पतला और शिथिल होकर सरलतासे बाहर निकलता है।

मात्रा—१ से २ गोली दिन में ३ बार अदरखके रस और शहदके साथ या रोगानुसार अनुपान के साथ देवें।

उपयोग—यह रसायन कफक्षय, श्वास, कास, शूल आदि व्याधियों को हरता है। कफप्रकोप होने से कास, श्वास या शूल उत्पन्न हुआ हो; उस हेतु से अति अशक्ति आगई हो; शरीर अति निबल हो गया हो; किसी भी कार्य करनेका उत्साह न रहा हो; बार बार सफेद चिकना कफ कष्ट पूर्वक गिरता रहता हो; तथा पचन क्रिया अति मन्द होगई हो; ऐसी परिस्थितिमें इस रसायनके उपयोग से सत्वर लाभ पहुंच जाता है।

३. कफ केतु रस।

बनावट—सोहागाका फूला, पीपल, शङ्खभस्म, शुद्ध वच्छनाग, इन ४ ओषधियोंको समभाग मिला अदरख के रस में ३ दिन खरलकर चौथाई चौथाई रत्तीकी गोलियां बना लेवें।

(भै० र०)

मात्रा—१ से २ गोली १ माशे अदरखके रस और ६ माशे शहदके साथ दिनमें दो बार।

उपयोग—यह कफ केतु रस पीनस, श्वास, कास, कण्ठरोग, गलग्रह, दन्तरोग, कर्णरोग, दारुण नेत्ररोग, और सन्निपात आदि व्याधियों को तत्काल नष्ट कर देता है।

इस रसायन में वच्छनाग की मात्रा अत्यधिक है। अतः इसका उपयोग अति सम्हाल पूवक करना चाहिये। जुकाम और ज्वरमें सेवन करने पर शीघ्र अपना प्रभाव दर्शाता है।

तीव्र प्रतिश्याय सह ज्वरमें यह रसायन अमोघ औषध है।

यदि नासिका, स्वरयन्त्र और कण्ठ नलिकामें वेदना होती हो, तो वह इस रसायनके सेवनसे शमन होजाती है।

वच्छनागमें प्रदाह नाशक वेदनाहर और ज्वरघ्न गुण उत्तम प्रकारका है। इस हेतुसे नासिका, स्वरयन्त्र, श्वासनलिका, आमाशय आदिमें प्रदाह होकर प्रतिश्याय, ज्वर, स्वरभंग, श्वास-प्रकोप, कफवृद्धि आदि रोग दूर हुए हों, तो वे इस रसायनके सेवन से दूर होजाते हैं। प्रदाहजनित ज्वरमें यह रसायन अत्युत्तम माना जाता है।

गलग्रन्थि प्रदाह, कण्ठप्रदाह, कण्ठ रोहिणी (डिफ्थेरिया) कर्णमूलप्रदाह प्रसेक युक्त गलौघ (Croup) फुफ्फुसप्रदाह, फुफ्फुसावरण प्रदाह, हृदयावरणप्रदाह, अन्त्रप्रदाह, इन सब प्रकारके प्रादाहिक व्याधियोंमें यह रसायन सत्वर प्रभाव दर्शाता है।

यदि देहके किसी आभ्यन्तरिक यन्त्रमें वेदना होती हो, तो इस रसायनके सेवनसे उसका शीघ्र निवारण हो जाता है।

आमवात जीर्ण होजाने पर जब वेदना मंद होजाती है; तब इस रसायनका सेवन कम मात्रामें कुछ दिनों तक कराया जाय तो लीन दोष जल जाता है और वेदना निवृत्त होजाती है। इस रसायनके उपयोगमें इस बातको सम्हालना चाहिये कि, जिन रोगियोंको हृदयकी विकृति न होगई हों, ऐसे आमवातके रोगियों को यह रसायन दिया जाता है। तमक श्वास और कासका दौरा होने पर इस रसायनका सेवन करानेसे थोड़े ही समयमें श्वासोच्छ्वास और हृदय गति मंद होजाती है। जिससे श्वास और कास का वेग शमन होजाता है।

कफप्रकोपजनित सन्निपात तथा प्रसूता के ज्वर और सन्निपातमें यह उत्कृष्ट औषध है। कम मात्रामें अधिक बार देना चाहिये। यदि रोगी अधिक कृश हो, अधिक प्रस्वेद आता हो, हाथ पैर शीतल हो; रक्तकी अति न्यूनता होगई हो, तथा हृदय

जिनको दाह होता है या कफके साथ रक्त जाता हो, ऐसे रोगियों के लिये यह निर्भय और उत्तम ओषधि है।

५. कफकुञ्जर रस।

विधि—शुद्धपारद, शुद्धगन्धक, थूहर और आकका दूध ४-४ तोले तथा पांचों नमक मिले हुए ४ तोले लें। सबको खरल कर सुखा दें। फिर आक के दूधमें मिला चटनी जैसा कर शंख के भीतर भरें, तथा पीपल, गजपीपल और सुगन्धवालाके चूर्णको आकके दूधमें पीस चटनी जैसा बनाकर शंखके संधिस्थान पर लेप करें। सूखने पर शंखके ऊपर कपड़ मिट्टी करें। मिट्टीका लेप १-१ अंगुल मोटा करें। फिर अग्निमें डाल एक प्रहर आंचदेवें। स्वांग शीतल होने पर कपड़ मिट्टी दूर कर शंख सहित सूक्ष्म चूर्ण कर लेवें। (यो० र०)

मात्रा—यह रसायन आध रत्ती, कपूर १ रत्ती, दोनोंको कत्था चूना लगे नागरवेलके पानमें डाल कर दिनमें ३ बार देवें।

उपयोग—यह कफ कुञ्जर रस श्वास, कास हृद्रोग और पांचों प्रकारके कफ प्रकोपों को दूर करता है।

जीर्ण कास या श्वासमें जब कफ दृढ चिपक जाता है। सरलता से नहीं छूटता, तब रोगी को अति घबराहट रहती है, छाती और पसलियोंमें दर्द होता है, कफ पीला होजाने पर कितनेकों को मंद ज्वर आता है, कब्ज रहता है, शान्त निद्रा नहीं मिलती, अग्नि मन्द होजाती है। ऐसी अवस्थामें यह रसायन कफको सरलतासे बाहर निकालता है; साथ साथ पचन क्रिया सुधारता है और कब्जको भी नहीं होने देता।

कितनेक रोगियों का आमाशय निर्बल होनेसे थोड़ा-सा अधिक भोजन करने या असमय पर खानेसे अपचन हो जाता है। फिर

को नष्ट करता है मूसलीका चूर्ण, घी और शहदके साथ दिया जायतो वाजीकरण गुण दर्शाता है।

यह रसायन उत्तेजक दीपन-पाचन, वातहर, कफघ्न, कीटाणुनाशक तथा हृदय और, फुफ्फुसोंके लिये बलवर्द्धक है। जीर्ण कास, जीर्णश्वास, राजयक्ष्मा न्युमोनियाके पश्चातकी निर्बलता, जीर्णप्रतिश्याय आदिमें श्लेष्म प्रकुपित होता है; और छातीमें अति संगृहीत होजाता है। पहले सफेद गिरता है और फिर पीलाहो जाता है। इस कफको यथा समय न निकालनेसे जीवनीयशक्ति अति क्षीण होजाती है और विविध रोगोंकी उत्पत्ति होती है। इस रसायनके सेवनसे संचित कफ सरलतासे बाहर निकलने लगता है; नूतन उत्पत्ति बन्द होजाती है; ज्वर रहता हो; तो वहभी शमन होजाता है। थोड़े ही दिनोंमें कफधातु शुद्ध होकर शरीर स्वस्थ होजाता है।

कास रोग और राजयक्ष्माकी प्रथमावस्थामें खांसी बार बार आती रहती है, किन्तु कफ नहीं गिरता; अति बेचैन होने पर थोड़ा-सा झाग गिरता है, ऐसी अवस्थामें इस रसायनका उपयोग नहीं होता (उस समय गोदंती भस्म प्रवाल आदि शामक ओषधि की योजनाकी जाती है) किन्तु वह अवस्था दूर होकर कफ संचित होजाने पर अग्नि मंद होजाती है; अरुचि श्वासवाहिनियोंकी विकृति होनेसे बार-बार खांसी चलना, पसलियोंमें शूल चलना, शिरमें भारीपन, मंद-मंद ज्वर, हाथ पैर टूटना, थोड़े परिश्रमसे प्रस्वेद आना, आलस्य, निद्राकी वृद्धि, और मुखमण्डल उदास रहना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उस अवस्थामें शृंगाराभ्र व्यवहृत होता है। कफ अधिक गाढ़ा न हुआ हो, तब बृहद्शृंगाराभ्र, गोदंती भस्म, प्रवालपिष्टी, अमृतासत्व और अति कम मात्रामें सुवर्णवसंत मिलाकर शहद या घी शहदके साथ देना चाहिये।

फुफ्फुसावरणमें अकस्मात् वायु प्रवेश कर जानेसे पार्श्व

मिश्रित रसायन पारद मिश्रितकी अपेक्षा अधिक उत्तेजक होता है। जब अधिक उत्तेजना स्वरयंत्र या फुस्फुसोंसे सहन नहीं होती, तब इस भैरव रसका प्रयोगकिया जाता है। एवं ग्रीष्म ऋतु और उष्ण प्रदेशोंमें आनंद भैरव की अपेक्षा भैरव रसका उपयोग विशेष हितावह माना जाता है।

सूर्यके ताप और शीत लग जानेसे स्वर यंत्रका प्रदाह होकर आवाज बैठ गई हो, छातीमें कफोत्पत्ति होगई हो, तथा मंद ज्वर उपस्थित हुआ हो, तथा भैरव रसके सेवनसे एक दो दिनमें ही प्रकृति स्वस्थ हो जाती है।

६. रसेश्वर अर्क।

विधि—रस कर्पूर ६ माशे और कपूर १ तोलाको पृथक् पृथक् थोड़े जलके साथ पीसें। फिर नागरवेलके पक्के ५० पान पर आगेकी ओर रस कपूर लगावें और इसी तरह आगेकी ओर ५० पान पर कपूरका लेप करें। लेप सूखने पर एक रस कपूरके पान पर दूसरा कपूर लगापान रक्खें। इस तरह सब पानोंको ऊपर ऊपर रखकर सूतके डोरेसे बांधे। पश्चात् एक मिट्टी की हांडीमें जल ४ सेर भर उसमें दौलायन्त्रके समान पानके गट्ठे को लटकावें। पान हांडी के तलसे एक अंगुल ऊंचा रखना चाहिये। फिर चूल्हे पर चढ़ाकर आंच देवें। जब जल ६० तोले शेष रहे, तब हांडी को उतार, पानोंको मसल जलको छान कर बोतलमें भर लेवें। (पं० अम्बाराम शंकरजी)

मात्रा—१-१ औंस २-२ घण्टे पर २ या ३ वार ६ माशे शहद मिलाकर देवें।

उपयोग—श्वास रोगका तीव्र आक्रमण होकर अति घबराहट होने पर और सन्निपात में श्वास प्रकोप होने पर इस अर्क का सेवन कराने से तत्काल लाभ पहुँचता है।

उपयोग—यह चूर्ण उष्ण, कफस्रावी, रसायन और ज्वरघ्न है। जब छातीमें कफ संचितहो जाता है; मंद मंद ज्वर बना रहता है। तथा बार बार कष्ट पूर्वक कफकी गांठ निकलना, अग्नि मान्द्य, अरुचि, बेचैनी आदि उपस्थित होते हैं, वे सब इसके सेवनसे दूर होते हैं। एवं फुफ्फुस, श्वास वाहिनियां, यकृत् और आमाशयमें उत्तेजना आती है। फुफ्फुस उत्तेजित होने पर कफस्राव होता है; तथा आमाशय और यकृत् उत्तेजित होने पर पचनक्रियामें लाभ पहुँचता है। इनके अतिरिक्त इस चूर्णमें रसायन धर्मभी अवास्थित है। जिससे विविध रसोत्पादक ग्रन्थियोंकी क्रिया सबल बननेसे जीवन विनिमय क्रिया सुधरती है। परिणाममें इस चूर्णके सेवन से शरीर स्वस्थ और सबल बनता है।

१२. कास विजय भैरव चूर्ण।

विधि—छिली मुलहठी, मगजकद्दू, वंश लोचन, बबूलका गोंद और कतीरा, ये सब २-२ तोले तथा मिश्री १०० तोले लेवें।

(श्री० पं० मुरारीलाल जी शर्मा वैद्यशास्त्री.)

मात्रा—३-३ माशे शहद या घी-शहद मिलाकर दिनमें ३-४ बार लेवें। अथवा जल मिला चटनी जैसा बनाकर चाट लेवें।

उपयोग—यह चूर्ण वातज और पित्तज शुष्क कासको शमन करनेमें उत्तम है। वातिक खांसी में सैंकड़ों बार खांसने पर कफ नहीं निकलता। अति त्रास होनेपर थोड़ा झाग आता है। किसी किसी को छाती पर कफ चिपका हुआ रहता है, किन्तु नहीं छूटता। किसी किसी को पित्त प्रधान कास होने से कण्ठमें जलन, कण्ठ और मुखमें शोष, जलपान की इच्छा बनी रहना, कफ बिल्कुल सूख जाना तथा खांसनेपर छाती और पसलियोंमें दर्द होना आदि लक्षण प्रतीत होते हैं। इन सब वातिक और पैत्तिक उत्तेजक कासपर यह कासविजय चूर्ण तत्काल लाभ दर्शाता है।

अन्तर पड़जाता है, तथापि वासास्वरस निकालने की जहाँ सुविधा न हो, वहाँ पर वासासवका प्रयोग हो सकता है; और यह उपकारक ही होता है। (औ० गु० ध० शा०के आधारसे)

१४. कफ नाशकक्वाथ।

बनावट—कायफलकीछाल; भारंगमूल, कटेली की जड़, आकमूल की छाल, काकड़ासिंगी, मुलहठी, हरड़, बहेड़ा, अड़ूसाके पत्ते, गिलोय, नागरमोथा, सोंठ और पुष्करमूल, इन १३ ओषधियोंको २-२ तोले मिला जौ कूटकर २६० तोले जलमें मिलाकर क्वाथ करें। चतुर्थांश जल रहने पर उतारकर छान लेवें। फिर शीतल होनेपर २० तोले शहद मिलाकर बोतलमें भरलेवें। श्री० वैद्य गोपालजी कुंवरजी ठक्कुर

मात्रा—२॥-२॥ तोले दिनमें ३-४ बार ३-३ घण्टे बाद देते रहें।

उपयोग—इस क्वाथके सेवनसे कफ जल्दी पक जाता है; और कण्ठमेंसे आवाज साफ निकलने लगती है। कफकास तमकश्वास, पसलीका शूल, कफज्वर, न्युमोनिया, इन्फ्लुएन्झा, जुकाम, और फुफ्फुसशोथ आदि रोगोंमें जहाँ कफका जमाव अधिक होता है; वहाँ पर इस क्वाथके सेवनसे सत्वर लाभ पहुँचता है।

१५. शर्वत जूफा।

प्रथमविधि—सौंफ और अजमोद १७॥-१७॥ माशे, जूफा, २४॥ माशे, अंजीर २० दाने, बीज निकाल कर मुनक्का ३० दाने उन्नाव, लिहसौड़ा २०-२० दाने, मैथी १४ माशे, खितमीके बीज, नीले सौसनके बीज १०॥-१०॥ माशे और हंसराज २४॥ माशे लें। सबको जौकूट चूर्णकोमिला २ सेरजलमें उबाल अर्धावशेष क्वाथ करें। फिर छान १ सेर शक्कर और गुलकंद पीसाहुआ आध सेर

मिलाकर पाक करें। शर्बत जैसा गाढा होने पर उतार लें। शीतल होने पर अमृत बानमें भरलेवें। (तिब्बअकबर) मात्रा और उपयोग-दूसरी विधि के साथ।

द्वितीय विधि—मुनक्का जलसे धोकर कूचली हुई ३० तोले, उन्नाब, सपिस्तान (सूखे पक्के लिह्सोड़े), सूखे अंजीर, सोसनके मूल (बेख सोसन) और मुल्हठी ये ५ औषधियां २०-२० तोले, सोंफ का मूल, कर्फस का मूल (बेख कर्फस) जूफा, और हंसराज, १०-१० तोले, बिहीदाने, अनीसून और सोंफ ५-५ तोले, छिले हुए जौ अलसी जटामांसी और खतमी के बीज ३-३ तोले लें। सबको जौकूट कर रात्रीको ३ गुने जलमें भिगों दें। सुबह मन्दाग्नी पर पकावें। एक तिहाई जल रहने पर उतार शीतल करके कपड़े से छान लें। फिर ६ सेर चीनी मिला शहद जैसी चाशनी बना लें। शीतल होने पर कपड़े से छान कर बोतलमें भर लें। (श्री० वैद्यराज यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्रा—१ से २ तोले शर्बत जलके साथ मिला कर दिनमें २-३ बार देवें।

उपयोग—वात और पित्तप्रधान कासमें इसका उपयोग अच्छा होता है। इसके सेवनसे कफ शिथिल होकर खांसनेके साथ तुरन्त सरलतासे बाहर निकल जाता है।

१६. लवंगादि वटी

विधि—लौंग, बहेड़ा और पीपल ४-४ तोले, काकड़ा सिंगी दालचीनी २-२ तोले अनारका सूखा छिलका और सोहागेका फूला १-१ तोला, कत्था और मुलहठी सत्व १०-१० तोले मुनक्का और आकके फूल ५-५ तोले लें। पहले मुनक्का और आकके फूलों को कूटकर चौगुने जलमें क्वाथ करें। चतुर्थांश जल शेष रहने पर छानकर मुलहठी सत्व और सोहागा मिलावें। पश्चात् शेष

द्रव्योंका कपड़छान चूर्ण मिला १-१ रत्तीकी गोलियां वना लेवें।
(श्री० वैद्यराज यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्रा—१-१ गोली दिनमें ४-६ वार मुंहमें रखकर इसे निगलते रहें।

उपयोग— इस वटीके सेवनसे खांसी का वेग कम होजाता है और कफ सरलतासे निकलकर कण्ठ साफ होजाता है। जव छातीमें कफ भरा हो और खांसी वहुत आने पर भी कफ न निकलता हो, तव यह वटी अति उपकारक होती है।

१७. भाङ्गयादिक्वाथ

विधि—भारंगमूल, वहेड़ा नागरमोथा पुनर्नवा, देवदारु, गिलोय, कुटकी, नीमकी अन्तर छाल, दारु हल्दी और मिश्री, इन १० ओषधियों को समभाग मिला कर जौकुट चूर्ण करें।

मात्रा—२-२ तोलेका क्वाथ कर दिनमें ३ वार पिलावें

उपयोग—यह क्वाथ उरस्तोय (प्ल्युरसी) की प्रथमावस्था में अति हितकर है। उरस्तोयकी प्रथमावस्थामें फुफ्फुसावरणमें थोड़ा जल संचय होता है। एवं शुष्क कास, ज्वर, पार्श्व शूल और घवराहट आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। यह विकार अति त्रासदायक माना गया है। इस रोगमें छातीमें स्रोतोरोध होनेसे फुफ्फुसावरणमें जल भरने लगता है। इस स्थितिमें इस क्वाथके सेवनसे अच्छा लाभ पहुंचता है। निस्तेजता, शोथ और वद्ध कोष्ठ होने पर आरोग्य वर्द्धनी, मण्डूर भस्म और शृंगभस्म दिनमें दो वार आमके मुरब्बाके साथ देना चाहिये। तीव्र प्रकोप में रोगी को केवल दूध पर रखना चाहिये। यदि फुफ्फुसप्रणालिकाओंमें पीला कफ भी संगृहीत हो, तो छोटी कटेली क्वाथमें मिला लेनी चाहिये।

१८. श्वासहर योग।

(१) महा योग राज गूगल ४ से ८ रत्ती तकका धूम्र पान कराने से तत्काल श्वासका दौरा शमन होजाता है। आवश्यकता पर एक घण्टा बाद फिर से दूसरी बार धूम्र पान कराना चाहिये।

पथ्य रूपसे गुड़ या शक्कर मिलाहुआ दूध पिलावें। जिनको दूध अनुकूल न हो, उनको ११ नग काली मिर्च निगलवा कर २ से ४ तोले घी पिलावें।

सूचना:—धूम्रपान करने पर धुंएंको मुखसे हीनिकालें; नाकसे न निकालें। चावल, दही, लाल मिर्च, तैल आदि का कुछ दिनों के लिये परित्याग करना चाहिये।

कुछ दिनों तक अति कम मात्रामें दिनमें २-३ बार श्वासकुठार या समीर पन्नग, अभ्रक और शृंग भस्म का मिश्रण सेवन करें। और प्रतिदिन सुबह फुफ्फुसों पर सरसोंके तैलकी मालिश कर फिर वालुकास्वेद १५-२० मिनट तक करते रहें; तो रोग समूल नष्ट होजाता है।

(२) कपूर ३ रत्ती गुड़में लपेट कर निगलवा देनेसे श्वासका दौरा शमन होजाता है। आवश्यकता पर १ घण्टा बाद दूसरी बार देवें। पीनेके लिये निवाया जल देवें।

(३) नारियलकी जटाको चिलममें रख धूम्रपान करानेसे तुरन्त श्वासका दौरा निवृत्त होजाता है।

(४) छायामें सुखाई हुई अडूसेकी पत्ती ४ भाग, छायेमें सुखाई हुई धतूरेकी पत्ती, भांग, काली चाय और खुरासानी अजवायनकी पत्ती २-२ भाग लें। सबको कूट मोटा चूर्ण बना कलमी सोरेके तृप्त द्रवमें (कलमी सोरेको जलमें मिलाकर घोल करें। जब उसमें अधिक सोरा न घुल सके, तब उस घोलको तृप्तद्रव करते

हैं) भिगोकर छायामें सुखालेवें। आवश्यकता पर इसकी मोटे कागजमें बीड़ी बनाकर धूम्रपान करनेके लिये देवें।

श्री. वैद्यराज यादवजी त्रिकमजी आचार्य

उपयोग—इस धूम्रप्रयोगसे श्वासका दौरा तत्काल दब जाता है। छातीमें घबराहट होती हो वह दूर होती है और कफ सरलता से बाहर निकल जाता है। यदि धूम्रपान करनेसे कण्ठमें शुष्कता उत्पन्न हो तो थोड़ी देरके बाद शक्कर मिलाहुआ गोदुग्ध पिलावें।

१६. हिक्का हरयोग।

(१) इन्द्रायण की १ पत्ती और काली मिर्च ३ नगको पीस १० तोले बकरीके दूधमें मिलाकर पिला देवें। आवश्यकतापर ३-३ घण्टे पर दूसरी और तीसरी बार देनेसे कष्टदायक हिक्का, कास और कफप्रकोपका निवारण होजाता है।

(२) मयूरपुच्छभस्म और पीपलका चूर्ण ३-३ रत्ती मिलाकर शहदके साथ देनेसे हिक्काका वेग शमन होजाता है।

(३) मयूरपुच्छके चन्दवे और नारियल की जटा, दोनोंको समभाग मिला सम्पुटमें बन्द कर भस्म बनावें। इनमेंसे ४-४ रत्ती ३-३ घण्टे पर देनेसे २-३ समयमें हिक्का का निवारण हो जाता है।

(४) बेर की मींगी निकाल पीस उसे आकके दूध की एक भावना देकर छायेमें सुखावें। इसमेंसे थोड़ा चूर्ण चिलम में डालकर तमाखू की तरह पिलानेसे तत्काल हिक्का निवृत्त हो जाती है!

(५) गांजाको ५-१० बार गरम जलसे धोवें; जब तक हरा जल निकले, तब तक धोते रहें। फिर सुखा, पीस शहदसे २-२ रत्ती की गोलियां बनालेवें; और कालीमिर्चके चूर्णमें डालदे जाँय। इनमें से १ गोली निवाये जलसे देवें। आवश्यकता पर

ज्वर अधिक होनेपर इस रसायनका उपयोग नहीं करना चाहिये। क्योंकि इसके सेवनसे ज्वरोष्मा वढनेकी संभावना है। कफ अधिक गिरता हो, और सहज सहज कफ निकलता हो, तो इस औषधका उपयोग करना चाहिये। यदि उरःक्षत हो, और उसमें से रक्त स्राव होता हो, तो इस रसायनका उपयोग न करना ही अच्छा माना जायगा। इस रसायनके प्रयोगसे ज्वर वढता है, रक्त न गिरता हो तो भी गिरने लगता है। कफजक्षयमें वलमांस विहीनत्व अधिक होनेपर इस रसायनकी वहुत कम मात्रा अनुकूल अनुपान (वासावलेह या च्यवन प्राशावलेह आदि) के साथ देते रहनेसे या दूधका ताजा मक्खन, शहद और मिश्री अनुपान रूपसे देनेसे अच्छा लाभ पहुँचाता है।

सूतिकारोगमें पाण्डुता एक लक्षण होता है। इसके अनेक हेतु होते हैं। (१) प्रसव कालमें अति रक्तस्राव होजाना; (२) गर्भकी वृद्धिके लिये निर्वल रुग्णामाताके रक्तका विशेष अंश नष्ट होजाना (३) प्रसव कालकी वेदनाका परिणाम माता के मन-नाड़ीचक्र और वातवाहिनियों पर होना; (४) प्रसूतावस्थाके प्रारम्भके १० दिनोंमें और इनके वादभी क्लेदस्राव अधिक होना; (५) प्रसवके पश्चात् पीड़ाके शमनार्थ पूर्ण विश्रान्ति न मिलना; (६) प्रसवकालमें योग्य सम्हाल न रहना; (७) गर्भावस्था या जापामें योग्य आहार न मिलना; (८) मानसिकव्यथा हो जानेसे एक प्रकारकी पाण्डुता आजाना; आदि कारण होते हैं। यह पाण्डुता रक्तके भीतर रक्ताणुओंकी कमीसे होती है। इस पाण्डुताके साथ अनेक इन्द्रियां भी वलहीन होजाती है। ओज और स्नेहका क्षय होजाता है इस हेतुसे केवल लोह कल्पसे पूरा लाभ नहीं मिल सकता। ऐसी परिस्थितिमें इस हेमाभ्रसिंदूरका उत्तम उपयोग होता है।

यदि क्षय कास और क्षत कासमें कफ की अधिकता हो, तो इस औषधका उत्तम उपयोग होता है।

इनके अतिरिक्त जिस कुष्ठ रोगमें पृथक् पृथक् स्थान पर दाग हो, उनमें यदि स्पर्शबोध न होता हो; सुप्ति अधिक हो; तो उस विकार पर इसरसायनसे लाभ होजाता है।

(औ० गु० ध० शा१ के आधारसे)

द्वितीयविधि—हेममाक्षिकभस्म, रस सिंदूर (षड्गुणगंधक जारित), अभ्रक भस्म शतपुटी (रक्तवर्ग भावित) ये तीनों द्रव्य समभाग लें। पहिले रससिंदूरको अदरखके रसमें घोटें। निश्चन्द्र होने पर अभ्रक और हेममाक्षिकभस्म मिला पुनः अदरखके रस की भावना देकर १-१ रत्ती की गोलियां बना लेवें।

श्री. पं० राधाकृष्णजी द्विवेदी आयुर्वेद भूषण

मात्रा—१ से ३ गोली दिनमें २ या ३ बार मधुके साथ। ऊपर भृङ्गराज, जलपिप्पली (कथरा) और मकोयका स्वरस २॥ से ४ तोले पिलावें।

उपयोग—यह रसायन प्रथम विधिकी अपेक्षा अल्पमूल्य होनेपर भी पाण्डु, शोथ, जलोदर अन्य उदर व्याधि, तथा क्षयकी पूर्वावस्था, मध्यमावस्था, प्लीहावृद्धि, यकृद्रोग, अन्त्रविकार, सर्वांग शोथ, एकांग शोथ, शरीरके किसी भी अवयव का शोथ, स्त्रियोंके अनेक जटिल रोग (गर्भाशय रोग, योनी व्यापद्रोग), शिरो रोग और अनेक विधि फुफ्फुस विकारमें कौतूहल पूर्वक लाभ करता है। यह हमारा शतशोऽनुभूत, अव्यर्थ प्रयोग है। शोथके सम्यक् प्रकार और उदर रोगोंमें रोगीको केवल, दूधपर रखना चाहिये।

रोगीकी निर्बल अवस्थामें जबकि विरेचन कराना कठिन और संदेहास्पद हो, तो उक्त अनुपानसे सेवन कराने पर केवल २-४

वार मूत्र विशेष मात्रामें आते हैं और १ सप्ताहके अंदर ही चमत्कारी लाभहोता है। प्रथम विधि वाला हेमाभ्रसिंदूर जिनजिन रोगों पर दिया जाता है; उन सब रोगोंमें यहभी पूर्व कथित रीतिसे सेवन कराने पर विलक्षण लाभ दर्शाता है। यह अचूक औषधि है।

(राधाकृष्ण वैद्य)

हृदय, आमाशय, अन्त्र, फुफ्फुस, वृक्क आदि अवयवोंको आधुनिक विद्वानोंने इन्द्रिय कहा है। इसी हेतुसे फिजियोलोजी का अर्थ इन्द्रिय विज्ञान या इन्द्रिय कार्य विज्ञान करते हैं। उस प्रवाहके अनुसार हमने भी स्वतन्त्र क्रिया करने वाले अवयवोंके स्थान पर इन्द्रिय शब्दका प्रयोग किया है।

शोथ होनेमें विशेषतःहृदय, यकृत् और वृक्क, इन ३ इन्द्रियों के कार्यकी विकृति हेतु है। अतः इन इन्द्रियोंके कार्योंको मूल स्थितिमें स्थापित कराना चाहिये; एवं दूसरा कार्य रक्तमें से जल को बाहर निकालना है। (रक्तमें जलकी न्यूनता होने पर अन्तर त्वचामें अथवा जलोदर रोगमें उदर्या कलाके भीतरसे संग्रहीत जल रक्तमें आकर्षित होजाता है।) इन दोनों प्रकारके कार्योंकी सिद्धि इस रसायन सेवनसे होजाती है।

इस रसायनमें अभ्रक और रससिंदूर रहे हैं, जो हृदयको सबल बनाते हैं। रससिंदूर और अदरखमें यकृत्पित्तस्रावको बढानेका गुण भी रहा है। सुवर्ण माक्षिक पित्त शामक, शीतवीर्य और रक्त प्रसादक है। भृंगराज यकृद् बलवर्द्धक है। रससिंदूरादिके प्रभाव से यकृत् अपने कार्य करनेमें सशक्त बन जाता है। अभ्रकभस्म वृक्क और मूत्राशयको बल प्रदान करती है। माक्षिक मूत्रमें जानेवाले पित्त, अम्ल द्रव्य आदिका रूपान्तर कराती है; तथा मकोय आदि अनुपान द्रव्य मूत्र वृद्धि करा रक्तस्थ विष और

अधिक जलको बाहर निकालनेमें सहायता पहुँचाते हैं। इसतरह संप्राप्ति-शास्त्रानुसार विचार करने पर इस रसायनसे रोगके मूल हेतु और संग्रहीत दोषको दूर करनेका गुण विदित होता है।

नोट—ईस हेम्राभ्रसिन्दूरको गूलरके शर्बतके साथमें सेवन कराया जाय तो उरःक्षत एवं रक्तष्ठीवी को विशेष लाभकारी है। हृदयकी विशेष निर्बलताके लिये आध आधरत्ती मुक्तापिष्टी अथवा भस्म भी दी जाय तो अधिक गुणकारी है।

३. राजयक्ष्मकरिमत्त केसरीरस।

बनावट—शुद्धपारद, शुद्धवच्छनाग, सुवर्णभस्म, मौक्तिक भस्म और शुद्धगन्धक, इन पांचों को २-२ तोले लें। पहले पारद गन्धककी कज्जली कर फिर वच्छनाग, सुवर्ण भस्म और मौक्तिक भस्म क्रमशः मिलावें। पश्चात् चित्रकमूल के क्वाथ और अदरख के रसकी अनुक्रमसे ३-३ भावना देवें। चूर्ण शुष्क होजाने पर ताम्बे के कटोरदान में भर संधिस्थान पर बाम्बी की मिट्टी और नमकमिला कर कपड़ मिट्टी करें। संधिस्थान सूखने पर कटोरदान को एक हाँडी में रक्खें। ऊपर नीचे चारों ओर ४-४ अंगुल सफेद राख दबावें। फिर यन्त्रको चूल्हे पर चढ़ावें। ३ घण्टे तक मंदाग्नि देवें। पश्चात् स्वाङ्ग शीतल होने पर निकाल त्रिकटुके क्वाथ और अदरख के रसकी ३-३ भावना देकर आध आध रत्ती की गोलियाँ बना लेवें। (र० यो० सा०

मात्रा—१-१ गोली दिनमें दो बार अमृतासत्व, पीपल और शहद के साथ दें।

उपयोग—इस रसायनका उपयोग राजयक्ष्माकी प्रथमावस्था द्वितीयावस्था और तृतीयावस्था, तीनोंमें होता है। यदि राजयक्ष्मा में अग्निमान्द्य प्रधानता हो, तो प्रथमावस्थामें इस रसायनके साथ प्रवाल पिष्टी २ रत्ती, शृंगभस्म १ रत्ती और सितोपलादि ११।

आदि सब उपद्रवों सह सर्व प्रकारके क्षयों को नष्ट करता है; तथा देह को सुवर्णके सदृश बना देता है।

सूचना—पथ्यका यथोचित पालन करना चाहिये। इमली और धूम्रपानका अतिनिषेध है। स्त्रीसहवाससे आग्रहपूर्वक बचना चाहिये। (मन, क्रम, वचनसे ब्रह्मचर्य का पूर्ण पालन करना चाहिये)

५. क्षय केसरीरस।

विधि—हरतालमेंसे बना हुआ माणिक रस ४ तोले, रौप्यभस्म, अभ्रकभस्म, शृंगभस्म और प्रवालपिष्टी २-२ तोले, शंखभस्म, रस सिंदूर और सफेद मिर्च १-१ तोला, मोती की पिष्टी, सुवर्णके वर्क, लोबानके फूल, कपूर और केसर ६-६ माशे, कस्तूरी ३ माशे और पीपर मेण्टके फूल १॥ मासा लें। पहले माणिक रसके साथ भस्म, पिष्टी और सुवर्णवर्क मिलावें। पश्चात् लोहवान पुष्प और मिर्च मिला गिलोय, वासापत्र और कटेली पंचाङ्गके क्वाथको १-१ भावना देकर सुखा चूर्ण करें। फिर केसर, कस्तूरी, पीपरमेन्टके फूल और कपूर मिला नागरवेलके पानके रसमें ६ घण्टे खरल करके आध आध रत्ती की गोलियां बनालें।

मात्रा—१ से २ गोली दिनमें २ या ३ समय ¼ रत्ती कपूर और नागरवेलके पानमें या सितोपलादि चूर्ण अथवा लवङ्गादि चूर्णके साथ दें।

उपयोग—यह रसायन राजयक्ष्मा जीर्ण विषम ज्वर, राजयक्ष्मामें ज्वर और कफ विकार, तथा श्वासरोग, वातरोग, कुष्ठ रोग, त्वचारोग तथा वातरक्त आदि व्याधियोंका नाश करता है। क्षयकी सब अवस्थामें यह रसायन व्यवहृत होता है। हरताल और सुवर्णके योगसे क्षयकीटाणु नष्ट होते हैं। तीक्ष्ण

ज्वरावस्थामें इतर सुवर्णयुक्त योग प्रयोजित नहीं होते। ऐसे समय पर विष और कीटाणुओंका नाशकरनेके साथ ज्वरको शमन करनेका महत्वका काम इस रसायनसे होता है। इसके सेवनसे संग्रहीत कफ बाहर निकलता है; कफोत्पत्ति कम होने फुफ्फुस दोष मुक्त होते जाते हैं, ज्वरविषका ह्रास होता जाता है, तथा शक्ति शनैः शनैः बढने लगती है। राजयक्ष्मा रोगपर यह उत्तम औषध है।

नोटः—इस रसमें यदि शुद्ध बच्छनाग मिलाया जाय तो ज्वर निराकरणके लिये उत्तम है।

६. रसराज रस

प्रथमविधि—मोतीपिष्टी, प्रवालपिष्टी, पारदभस्म (रससिंदूर), सुवर्णभस्म, शुद्धमनःशिल, अभ्रकभस्म, लोहभस्म, और वङ्ग भस्म, इन ८ औषधियोंको समभाग मिलाकर गिलोय और शतावरके स्वरसकी ७-७ भावना देकर १-१ रत्ती की गोलियाँ बनावें। (र० चं०)

मात्रा—१-१ गोली दिनमें २ बार शहद, घी और सफेद मिर्चकेचूर्ण के साथ अथवा वासा स्वरस और शहदकेसाथ या बकरीके दूधके साथ देवें।

उपयोग—यह रसायन क्षय की द्वितीयावस्था और तृतीयावस्थामें उरःक्षत होकर रक्तस्राव होनेपर हितकारक है। इसके सेवनसे रक्तस्रावका रोग होता है, कफ की शुद्धि होती है; ज्वर मर्यादामें रहता है तथा स्फूर्ति की वृद्धि होती है। इस रसायन में क्षयकीटाणुओंको नष्ट करनेका गुण होनेसे उरःक्षतके मूलहेतु को दूरकर शरीरको स्वस्थ बना देता है।

क्वचित् बाहर की चोट लगने, शराब, गांजा आदिके अधिक सेवन करने या तीक्ष्ण औषधि आदि कारणोंसे क्षय

की संप्राप्तिनहोनेपर भी उरःक्षत होकर रक्तस्राव (रक्तवमन या कफके साथ रक्त आना) होने लगता है। उन विकारों पर ६ माशे घी, ३ माशेशहद और ४ रत्ती सफेद मिर्च चूर्ण (या १॥ माशे सितोपलादि चूर्ण) के साथ दिनमें २ या ३ बार देनेसे सत्वर लाभ हो जाता है।

शुक्रक्षयके हेतुसे कृशता, पाण्डुता और अग्निमान्द्य होकर क्षयकी प्राप्ति हुई हो, छाती बिल्कुल पोकल बनगई हो, कफ सरलतासे न निकलता हो, कफका रंग पीला और दुर्गन्धयुक्त हो गया हो, उसपर इस रसायनका सेवन अति हितकारक है। इसके साथ शृंगभस्म, गोदंतीभस्म और मुलहठी मिलादेनेसे विशेष लाभ पहुंचता है।

द्वितीय-विधि—शुद्ध शंख और शुद्धशुक्ति १०-१० तोले तथा शुद्ध गन्धक २० तोलेको मिला ३ दिन आकके दूधमें खरल करके गोला बनावें। फिर सूर्यके तापमें सुखा सराव संपुट कर गजपुटमें फूंक देवें। स्वाङ्गशीतल होने पर सम्पुटको खोल गोले को निकाल कर पीस लेवें। (र० यो० सा०)

मात्रा—२-२ रत्ती। ४-४ रत्ती सफेद मिर्चके चूर्ण और घृतके साथ मिलाकर दिनमें २ समय देते रहें।

उपयोग—यह रसायन राजयक्ष्माकी कासको शमन करता है। रसराज अति सौम्य मृदुक्षार रूप औषध है। तीव्र क्षारके समान यह बल पूर्वक कफको बाहर नहीं निकालता; किन्तु इसका कार्य अति कोमल रूपसे होता है। राजयक्ष्मामें तीव्र औषधका प्रयोग नहीं किया जाता। तीव्र औषधसे रक्तस्राव की वृद्धि होने की भीति रहती है। एवं बार बार कास वेग पूर्वक चलती रहे, ऐसी उत्तेजक औषधि भी हितकर नहीं मानी जाती। कारण, रोगीके कष्टमें वृद्धि हो जाती है। अतः इस सौम्य

औषधिका प्रयोग हितकर माना जाता है। इस रसराजसे कफ सरलतासे बाहर निकलता है। कासके वेग की अधिक वृद्धि नहीं होती। रक्तस्राव नहीं होने देता। एवं रक्त गिरता हो, तो भी उसे बन्द करता है। साथ साथ पचन क्रियाको सबल बनाता है, और भोजनमें से योग्य रसका निर्माण कराता है। यदि अतिसार होगया हो, तो उसे भी दूर कर देता है।

राजयक्ष्माकी प्रथमावस्थामें जबतक कासका वेग प्रबल होता है; और शुष्ककास चलती रहती है; तबतक इस रसराज का प्रयोग बहुधा नहीं किया जाता। शुष्क कासके शमनार्थ मुक्ता पिष्टी, प्रवाल पिष्टी और सितोपलादि घी शहदके साथ विशेष हितकारक हैं। फिर जब कफ गिरने लगता है, तब इस रसायन को प्रयोजित किया जाता है।

चिरकारी और जीर्ण श्वासनालिका के प्रदाहजन्य कास रोग की रसोत्सृजनावस्थामें कफ गिरने लगता है। वह शनैः शनैः गाढा और बताशेके सदृश बन जाता है। कभी कभी कफ कठिनता से और कभी कभी अत्यधिक परिमाणमें सहज निकलता है। इस विकार पर सबल रोगी को कफ निःसारक उत्तेजक क्षारप्रधान औषध, अर्कक्षार, वङ्गक्षार, अपामार्गक्षार आदि कफ को पतला बनाकर बाहर निकालने के लिये दिये जाते हैं; किन्तु वृद्ध, बालक सगर्भास्त्री तथा दुर्बल और कृशरोगियों को अग्नि प्रदीप्त कराने, कफ निकालने तथा कफोत्पत्तिका ह्रास और श्वास नलिकाके प्रदाह को शमन करानेके लिये सौम्य औषधि देनी चाहिये। यह कार्य इस रससे उत्तम प्रकार से होता है।

श्वास नलिका प्रसारण होजाने पर उसमें कफ संग्रहीत होता है। फिर उसमें दुर्गन्धकी उत्पत्ति होती है। शनैः शनैः कीटाणुओं के हेतु से व्रण होजाते हैं। पश्चात् कफके साथ किञ्चित् रक्तभी आता है। बार बार प्रबल कास उपस्थित होती है। विशेषतः

रात्रिको और प्रातः काल उठने पर कास अधिक आती है। इस व्याधि पर रसराज की कज्जली, कालीमिर्च और गोघृतके साथ मिलाकर देनेसे कफको बाहर निकलनेमें सहायता मिल जाती है। कीटाणु नष्ट होते हैं; कफकी दुर्गन्ध दूर होती है; तथा व्रण शनैः शनैः भरजाते हैं।

७. कर्पूरादिगुटिका।

विधि—१ सेर कुचिलेको ४२ दिन गोमूत्रमें भिगोवें, दिनमें सूर्यके तापमें बर्तन रक्खें। रोज गोमूत्र बदल देवें। फिर ऊपरसे छिल्टे और भीतरसे जिभ्भी निकालकर जलसे धोवें। जब तक हरा जल निकले तब तक बारबार जल मिलामिला कर धोवें। धोने की रीति ऐसी है कि, आज जलमें मसल धोकर फिर जलमें भिगो दें। दूसरे दिन मसल धोकर फिर नया जल रख दें। इस तरह लगभग एक सप्ताह तक धोने से कुचिले की तीव्रता विशेषांशमें निकल जाती है जल हरा न होने पर उसे १० सेर दूधमें मिलाकर उबालें। दूध की रबड़ी बन जाने पर कुचिलेको निकाल जलसे धोकर खरलमें मर्दन करें। आवश्यकता हो, तो जल मिला लेवें। फिर केशर दालचीनी, और पीपल २-२ तोले, लौंग, जायफल, जावित्री, कालीमिर्च, और चांदी के वर्क ४-४ तोले अक-लकरा ८ तोले, कपूर १ तोला, कस्तूरी और सोना के वर्क ३-३ माशे लेकर कुचिलेके कल्कके साथ मिलावें। पहले वर्क मिलावें। फिर केसर, कपूर और कस्तूरी मिलावें। पश्चात् शेष औषधियोंका कपड़ छान चूर्ण मिलावें। बादमें जायफल १० तोले कालीमिर्च १० तोले और लौंग २० तोलेको कूट ४ सेर जलमें मिला क्वाथ करें। जल १ सेर रहने पर उतार छान कर उसके साथ खरल करें इस क्वाथ की ३ भावना देकर २-२ रत्ती की गोलियां बनालेवें। (आ० नि० मा०)

मात्रा—१-१ गोली दिनमें ३ समय दूध या जलके साथ देवें।

उपयोग—इन गोलियोंके सेवनसे राजयक्ष्मा रोगीके ज्वर और कफज कास का शमन होकर क्षुधा प्रदीप्त होती है, और शक्ति बढ़ती है। नीरोगी मनुष्यको शक्ति वृद्धिके लिये भी यह गुटिका हितकारक है। स्वस्थ व्यक्तियोंको देना हो, तो दूध-घीका सेवन अधिक कराना चाहिये। इसके सेवनसे वीर्य की स्तम्भनशक्ति, स्फूर्ति और शारीरिक बल की वृद्धि होती है।

८. शुक्र संजीवन रस।

विधि—मुक्ता पिष्टी, प्रवाल पिष्टी, सुवर्ण भस्म, भीमसेनी कपूर, पीपल, केशर, वंश लोचन, अमृतासत्व, दाल चीनी, छोटी इलायचीके दाने, तेजपात, लौंग, बीज निकाली हुई मुनक्का, शुद्ध शीलाजीत, चन्द्रोदय और कस्तूरी, इन १६ औषधियोंको समभाग लेवें। पहले चन्द्राघ्य, सुवर्ण भस्म, मुक्ता और प्रवालको मिलावें। फिर काष्ठादि द्रव्योंका कपड़ छन चूर्ण मिलावें। कपूर, केशर, कस्तूरीको अलग रखें। मुनक्का चटनीकी तरह पीस कर मिलावें। शिलाजीतको जलमें मिला कर डालें। फिर १-१ दिन तक गुलाव जल और वासापचस्वरसमें खरल करें। तीसरे दिन सुबह कपूर, केशर और कस्तूरी मिला गुलावजलमें ६ घण्टे खरल करा २-२ रत्ती की गोलियां बनालें। (सि० भै० मं०)

हम इसके साथ वङ्गभस्म और जसद भस्म भी मिलाते हैं।

मात्रा—१-१ गोली दिनमें २ वार बकरी या गौके दूध अथवा पेठेके रसके साथ।

उपयोग—यह रसायन शुक्रक्षयके रोगियोंके लिये अति हितकारक है। देहमें उष्णता, निस्तेज मुख मण्डल, वार वार चक्कर आना, कानमें गुंज, मस्तिष्कमें घड़ीके लोलकके समान

टक टक होते रहना, अग्निमांद्य, मंद मंद ज्वर रहना, पेशाबमें पीलापन, हाथ पैर टूटना, आलस्य बना रहना, थोड़ा विचार करने पर मस्तिष्क थकजाना, साधारण प्रतिकूलतामें क्रोध उत्पन्न होना, नेत्र दृष्टि मन्द हो जाना, ऊंची आवाज भी सहन न होना, शीत-उष्ण सहन न होना, वीर्यमें पतलापन और उष्णता रहना, स्वप्नदोष होना आदि लक्षण भासते हैं। इसपर यह रसायन अति हितकारक है। जो मनुष्य युवा वस्थामें वृद्ध वन जाता है, उसके वीर्यको सुदृढ बनाकर पुनः नवयुवावस्था की प्राप्ति कराता है। यह रसायन स्त्रियोंके लिये भी हितकर माना गया है।

शुक्रके अति दुरुपयोगसे उत्पन्न क्षय ज्वरके पीछेकी निर्वलता, अति मानसिक परिश्रमसे उत्पन्न मस्तिष्ककी शिथिलता, वात प्रकोप, पित्तवृद्धि और हृदय की धड़कन बढजाना आदि पर यह हितकारक है।

९. रजतादि लोह

विधि—हरताल मारित रजत भस्म और अभ्रक भस्म १-१ तोला, त्रिकटु, त्रिफला और लोह भस्म, तीनों २-२ तोले लें। सबको खरल करके मिला लें। (र० चं०)

मात्रा—२ से ४ रत्ती दिनमें २ वार घी-शहदके साथ दें।

उपयोग—यह रसायन अति बढ़े हुए क्षय, पाण्डु, उदर रोग, अर्श, श्वास, कास, नेत्ररोग तथा सब प्रकारके पित्त प्रकोपज रोगोंको दूर करता है।

राज यक्ष्मा रोगकी द्वितीयावस्थामें जव ज्वर अधिक हो, तव सुवर्ण वाली औषधि देनेसे बहुधा ज्वर बढ़ जाता है। उस अवस्थामें यह रसायन हितावह है। इस रसायनके सेवनसे ज्वरका ह्रास होता है, पार्श्व शूल शमन होता है, प्लीहा वृद्धि दूर होती है, अर्शकी पीड़ा शान्त होती है तथा मानसिक प्रसन्नता होती है।

किसी स्थानमें खिचाव या शूल होता हो, खट्टी डकार आती हो, पेशावमें जलन होती हो, नेत्र ज्योतिभंग हो गई हो, तो ये सब लक्षण दूर हो जाते हैं।

राज यक्ष्माकी प्रथमावस्थामें मंद ज्वर, शुष्क कास, कण्ठमें शुष्कता, पाण्डु ता, नेत्रमें दाह, अपचन, चक्कर आना और बेचैनी आदि लक्षण प्रतीत हों, तब यह रसायन प्रवाल पिष्टी, अमृता सत्वके साथ घी शक्करमें दिया जाता है। इसके सेवनसे ज्वर और कासमें लाभ पहुंचता है और पाण्डुता दूर होती है।

यदि रक्त वाहिनियों संकुचित हो जानेसे निर्बलता और धातुक्षय उत्पन्न हुए हों, स्थान स्थान पर पीड़ा होती हो और अग्निमान्द्य रहता हो, तो उसे दूर करनेके लिये रजतादि लोह अति हितावह है। उसके सेवनसे शुष्कता, शिथिलता, शूल और पाण्डुता दूर होकर देह सबल बन जाती है।

१०. लोकेश्वर पोटली (लोकनाथरस)

विधि—रस सिंदूर ४ तोले, सुवर्ण भस्म १ तोला और शुद्ध गन्धक ८ तोले मिला कज्जलीकर चित्रकमूल के क्वाथमें ३ दिन मर्दन करें। फिर उसे पारदसे चौगुनी शुद्ध पीली कौडियोंमें भरें। और सोहागेको आकके दूधमें घोट कर सब कौडियोंके मुँह बन्द करें। पश्चात् उनको चूना पुती हुई मिट्टी की छोटी हंडीया तवेके संपुटमें रख कर दृढ मुख, मुद्रा करें। सब कौड़ियोंका मुँह नीचे रहना चाहिये। अन्यथा पारा उड़ जानेकी संभावना है। सूखने पर शामको १५ इञ्चके खड्डेमें अग्नि देवें। (आंच कम होने पर कौडियां कच्ची रहजायगी, अधिक अग्नि होगी तो पारद उड़ जायगा) स्वांग शीतल होने पर निकाल कर पीस लेवें।

(र० र० स०)

मात्रा—१ से २ रत्ती पुष्टिके लिये शहद-पीपल और क्षयादि रोगों पर काली मिर्च और घीके साथ देवें।

उपयोग—यह लोकनाथ रस पौष्टिक और वीर्य वर्द्धक हैं; शारीरिक कृशता, अग्निमान्द्य, कास, पित्तप्रकोप और राजयक्ष्मा आदिको दूर करता है। अतिकृश, विषमभोजन जनितक्षय, तथा कास, हिक्का, पाण्डु, मूर्ख वैद्योंके उपचारसे क्षीण और रोगग्रस्त बने हुए रोगी, विविध प्रकारके ज्वरसे संतप्त जिन्हें चक्कर आते रहते हों, मदात्ययरोगी और उन्मादसे ग्रसित, सब इस लोकेश्वर पोटली के सेवनसे स्वस्थ होते हैं।

सूचना—*इस रसायनके सेवन कालमें नमकका त्याग करना चाहिये। अन्यथा पारद भस्मका रूपान्तर होकर यथोचित लाभ नहीं दे सकता। भोजन घी और दहीके साथ करना चाहिये। बैंगन, बेलफल, तैल करेले, मैथुन और क्रोधका त्याग करना चाहिये। औषध सेवन कर चित लेटें और पैर ऊंचे रक्खें (जिससे उदरमें रक्ताभिसरण क्रिया अधिक होकर दोषको जलाने में सुविधा रहती है।)*

रसायनका अति योग हो जाने से वमन हो जाय तो गिलोय का स्वरस या बिजौरेकी जड़का स्वरस अथवा सैंधा नमक लगे हुए लाजा चूर्ण (भातकी लाही) या शहद-पीपलका सेवन करें। जिससे वान्तिशमन हो जाती है।

पित्तप्रकोप उपस्थित होने पर शीतल जलसे स्नान करावें या शिर पर शीतल जलकी धारा डालें और केले खिलावें।

कफ वृद्धि हो, तो भोजनमें कालीमिर्चका चूर्ण या गुड़ मिला हुआ अदरखका पाक देवें।

वमन होने पर धनिये का मगज या छोटी इलायची और कालीमिर्चका चूर्ण घी शक्करसे देवें। कृमि कोपमें अजमोद और वायविड़ंग मट्ठेके साथ देवें, या एरण्डमूल और नागरमोथे का क्वाथ पिलावें।

विरेचन होने पर छोटी दूधीका रस निवाया कर या भांगका चूर्ण शहदके साथ देवें।

हड फूटन होने पर घी की मालिश करा उष्ण जलसे स्नान कराना चाहिये।

यह लोकेश्वर पोटली रस अत्यन्त वीर्यवान् उत्तम औषध है। यह कफ प्रकोप पर और कफ प्रकृतिवालोंके लिये हितकर है। इस लोकेश्वर पोटली रसका गुण रसतन्त्र प्रथम खण्डमें लिखे हुए लोकनाथ रससे मिलते जुलते हैं। लोकनाथमें सुवर्ण नहीं है और इसमें सुवर्ण होनेसे इन्द्रिय विष, गर विष और राजयक्ष्मा के कीटाणुओंके नाशके लिये यह विशेष कार्य करता है। आमवृद्धिजन्य शारीरिक कृशता, संग्रहणी, अन्त्रक्षय, फुफ्फुस क्षय, कफ प्रकोप, देहमें विविध स्थानों पर उत्पन्न गांठ और मांसक्षय पर व्यवहृत होता है। विशेष गुणधर्म लोकनाथ रसके समान है।

११. सुवर्ण सर्वाङ्ग सुन्दर रस।

विधि—शुद्ध पारद १ तोला, शुद्ध गन्धक १ तोला, सोहागा का फूला २ तोले, मोती भस्म १ तोला, प्रवाल भस्म १ तोला शंख भस्म १ तोला और सुवर्ण भस्म आधा तोला लें। पहले

पारदगन्धककी कज्जली करके फिर शेष औषधियां मिला ३ दिन नीबूके रसमें खरलकर चन्द्रिका बनावें। उसे धूपमें सुखा दृढ़ सराव संपुटकर लघुपुट (१ सेर गोबरीकी अग्नि) देवें। स्वांग शीतल होने पर निकाल लोह भस्म ६ माशे और हिंगुल ३ माशे मिलाकर खरलकर लेवें। (र० सा० सं०)

मात्रा—½ से २ रत्ती दिनमें २ बार पीपल शहद, घृत, मिश्री नागरवेलके पान, मिश्री अथवा अदरखके रस और शहदके साथ।

उपयोग—यह रसायन राजयक्ष्मा, घोर वातपित्तज्वर, दारुण सन्निपात, अर्शरोग ग्रहणी विकार, प्रमेह, गुल्म, भगन्दर, वातजरोग तथा कफज रोगोंका नाश करता है। यह रसायन सगर्भा, प्रसूता, बालक आदि सबको निर्भयतापूर्वक दिया जाता है। नूतन संग्रहणी रोगमें भी कितनेकोंको मुख पाक, बड़ेर जुलाब अरुचि, पाण्डुता, उदरमें वातसंग्रह जिह्वा पतली, लेसदार और निस्तेज अच्छी निद्रा न आना, शिरके बाल गिरते रहना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उस पर यह रसायन उत्तम लाभ पहुँचाता है। आमाशय और अन्त्र, दोनों अवयवोंकी क्रिया योग्य बनाता है, कीटाणुओंका नाश करता है, आम विषको जलाता है और रक्ताणुओंकी वृद्धिकर स्वास्थ्य और बल प्रदान करता है।

राजयक्ष्मा की प्रथमावस्थामें शुष्क कास और मंद ज्वरके साथ किसी किसीको दाह, मुख पाक और अधिक निर्बलता रहती है। उसे १-१ माशे घी-शहद (या शक्करके साथ दिनमें ३ बार देते रहनेसे कास ज्वर और दाह आदि लक्षणोंसह राजयक्ष्मा दूर हो जाता है।

राजयक्ष्मा की दूसरी अवस्थामें बंधाहुआ कफ गिरना, दोपहरके बाद ज्वर बढ़जाना, किसीको दाह, मुखपाक, अरुचि

और पतले दस्त भी लगना आदि लक्षण उत्पन्न होते हैं। उनको इस रसायनका सेवन शृंग भस्म (१ रत्ती) मिलाकर शहदके साथ कराया जाता है। कफमें दुर्गन्ध हो, आमाशयमें अम्लरस हो, तो लोहवान के फूल और मुलहठी २-२ रत्ती मिला देना चाहिये। यदि कफमें रक्त गिरता हो तो अनुपान रूपसे वासावलेह देना चाहिये।

१२. गुडूच्यादि रसायन।

प्रथम विधि—खस, वासाके पान, तेजपात, कूट, आंवले, सफेद सूसली, छोटी इलायचीके दाने, रेणुकबीज, मुनक्का, केसर, नागकेसर, कमलका कन्द, कपूर, सफेद चन्दनका बुरादा, लाल-चंदन, कालीमिर्च, सोंठ, पीपल, मुलहठी, धानका लावा, असगंध, शतावर, गोखरू, केवचके बीज, जायफल, शीतलमिर्च और तगर, इन २७ औषधियोंका कपड़ छान चूर्ण १-१ तोला, रससिन्दूर, अभ्रक भस्म, वङ्ग भस्म और लोह-भस्म १-१ तोला और गिलोय सत्व ३१ तोला लें। पहले भस्मोंको मिलालें। फिर गिलोय सत्व और शेष काष्ठादि औषधियोंका कपड़ छान चूर्ण मिलालें।
(यो० र०)

वक्तव्य—मूल ग्रन्थकार ने इस चूर्णका मोदक बना लेनेको लिखा है। हमने मिश्री, घी और शहद रोज मिला लेना अच्छा माना है। इस हेतुसे प्रयोग चूर्ण रूपसे दिया है।

मात्रा—चूर्ण २ माशे, मिश्री २ माशे, घी १ माशा और शहद २ माशे मिला कर दिनमें २ वार देवें। ऊपर गौका दूध पिलावें।

उपयोग—इस रसायनके सेवनसे क्षय, रक्त पित्त, पैरोंकी जलन, रक्त प्रदर, मूत्राघात, मूत्र-कृच्छ्र, वातकुण्डलिका (मूत्राघात), सब प्रकारके प्रमेह, दारुण सोम रोग और जीर्ण ज्वर

ये ३५ औषधियां और चिरोंजी, नेवजा (चिलगोजा), खुरसाणी, ये १-१ तोले लेकर वारीक चूर्ण करें। उसे जलमें पीस कर कल्क करें। फिर आंवले, विदारी कन्द (शतावर काभी) और ईखका स्वरस, बकरेके मांसका रस (अकनी), गो दुग्ध और गोघृत, ये सब १२८-१२८ तोले और उक्त कल्क मिला कर मंदाग्निपर घृत पाक करें। घी पक जाने पर कड़ाहीको उतार तुरन्त घी निकाल लेवें। घृत शीतल होने पर शहद ३२ तोले, मिश्री २०० तोले, तथा काली मिर्च, दालचीनी, छोटी इलायचीके दाने, तेजपात और नागकेसरका चूर्ण २-२ तोले मिला देवें। (च० सं०)

सूचना—*(१)मांस रस न मिलाना हो, तो उतने उड़दका क्वाथ डालें।*

(२) मिश्री २०० तोलेके स्थान पर हम १०० तोले मिलाते हैं।

मात्रा—आधसे एक तोला तक दिनमें दो वार गो दुग्ध या अजा-दुग्धके साथ सेवन करें। भोजनमें मुख्य दूध और मांस रस का सेवन करें।

उपयोग—यह अमृत प्राश मनुष्योंके लिये अमृत रूप ही है। यह शीत वीर्य; उत्तम पौष्टिक अवलेह है। यह कृश, क्षीणवीर्य, क्षीणदेह और क्षीणस्वर वालेको मोटा और वलवान वना देता है। एवं यह कास, हिक्का, ज्वर, क्षय, रक्तपित्त, श्वास, तृषा, दाह, पित्त प्रकोप, वमन, मूर्च्छा, हृद्रोग, योनिरोग, मूत्ररोग आदिको भी नष्ट करता है। एवं यह संतान प्रद, और पौष्टिक है।

यह घृत राजयक्ष्मा और बालकोंके सूखा रोगमें अति हितकारक है। विशेष स्त्री समागम करने वाले, दुर्बल और ज्वर आदि रोगसे मुक्त हुए निर्बल मनुष्योंको पुष्ट बनाता है।

१५. कुर्स कहरुवा ।

विधि—गिलेअरमनी (स्वर्ण गैरिक) निशास्ता और गुलाब के फूल १४-१४ माशे, केहरवा और हब्बुलास २१-२१ माशे, मीठे जल के कैंकड़े की संपुट में की हुई भस्म, कुलफे के बीज, सफेद चंदन का बुरादा, कद्दू का मगज और ककड़ी का मगज ३५-३५ माशे, गील मखतुम १०।। माशे, प्रवाल पिष्टी, कतीरा, वंश लोचन और धोया हुआ सादनज का चूर्ण १७।।-१७।। माशे, अरबी गोंद (या बबूल का गोंद) और मुलहठी सत्व (रुब्बेसूस) २४।।-२४।। माशे तथा कपूर ।।। माशा लेवें। सब को कूट कपड़छान चूर्ण कर बिहीदाने के लुआब में पीस कर ३-३ रत्ती की गोलियाँ या टिकिया बना लेवें। (तिब्बे अकबरी)

मात्रा—२ से ४ गोली, दिन में २ या ३ बार वासास्वरस और शहद के साथ अथवा पेठे के ५-५ तोले स्वरस के साथ देवें।

उपयोग—यह प्रयोग उरःक्षत होकर होने वाले रक्तस्राव को सत्वर बन्द करता है। एवं खाँसी में कफ के साथ रक्त आता हो, रक्त की वान्ति होती हो, नकसीर चलती हो, इन सब में लाभ पहुँचाता है।

१६. खर्जूरासव ।

विधि—पिण्डखजूर बीज रहित कुचली हुई ३२० तोले को २०४८ तोले जल में मिला कर अर्धावशेष क्वाथ करें। फिर मसल छान उसमें हाऊबेर धायके फूल ३२-३२ तोले का कषाय मिला कर अमृतबान में भर दें। मुखमुद्रा कर १५ दिन रहने दें। परिपक्व हो जाने पर छान लें। (यो० र०)

मात्रा—१-१ औंस समान जल मिलाकर दिनमें दो बार देवें।

उपयोग—यह खर्जूरासव राजयक्ष्मा, शोफ, प्रमेह, पाण्डु,

और उत्तेजना मिलती है इस हेतुसे संचित कफ सत्वर बाहर निकल आता है और नूतन उत्पत्तिका ह्रास हो जाता है। यह औषधि फुफ्फुसके सब रोगों पर लाभदायक है। बादामके तैल और गोंदके साथ देनेपर दुर्गन्धयुक्त कफमें सत्वर लाभ पहुंचता है।

नूतन प्रतिश्यायज ज्वरमें कण्ठके भीतर वेदना, हाड़ हाड़ दुखना, शिरमें भारीपना, शारीरिक उत्ताप अधिक नहीं बढ़ना, अरुचि, उबाक आना, मलावरोध, मुँहमें चिपचिपापन आदि लक्षण प्रतीत होते हों, तब इस चोवेका सेवन पानके साथ करने पर प्रतिश्याय सह ज्वर आदि दूर होते हैं और आवाज खुल जाती है।

कितनेक बालकोंके मूत्राशय द्वार पर संयम कम होने से रात्रि में निद्रामें पेशाब कर देते हैं और उसमें कीटाणु विष संगृहीत हो जानेसे दांत चबाते हैं। ये दोनों विकार इस चोवेके सेवनसे दूर होते हैं। बालकको यह औषध शक्कर या दूधके साथ दिया जाता है।

आमवातके हेतुसे सांधि सांधिमें पीड़ा होती हो और सूतिका को मंद ज्वर और वात प्रकोप होकर हाड़ हाड़में दर्द होता हो तो इस विन्दुका सेवन कराने पर दर्द दूर होकर जीवन विनिमय क्रिया बलवान बन जाती है नये आमवातमें यह चोवा ४-४ रत्ती समान लोटिया सज्जी या सोडा बाईकार्ब के साथ मिलाकर दिन में ४ वार देना चाहिये।

यदि आमाशय रस अम्ल और दुर्गन्धित होजाने से कण्ठमें दाह होता हो, खट्टी डकार आती रहती हों, कभी मुँहमें छाले हो जाते हों तथा वार वार अपचन हो जाता हो, तो रसायन विन्दु का सेवन शक्करके साथ करने पर आमाशय रस निर्दोष बन जाता है।

प्रतिश्याय जनित शिरदर्द हो तो इस रसायन विन्दुको ४

नागशर्कराका प्रयोग जल मिश्रित सिर्केके साथ विना कष्ट दीर्घ कालपर्यन्त हो सकता ह। यदि यह शकरा वटी रूप से दी जाय, तो ऊपर में अनुपान रूप से सिर्के का जल पिलाना हितकारक है।

यदि इस औषधके सेवन करने पर मसूढ़े काले हो जायँ, उदरमें वेदना, आमाशयमें दाह अथवा छातीमें भारीपन हो जाय तो इसे बन्द कर देना चाहिये। सिर्केके साथ देने पर ये उपद्रव सत्वर उपस्थित नहीं हो सकते।

नेत्रकी पुतलीके क्षतके ऊपर इस शर्कराके धावनका उपयोग नहीं होता। अन्यथा मलिन श्वेत दाग हो जाता है।

मात्रा—½ से १ रत्ती जलमें गलाकर या गोली रूपसे।

उपयोग—यह शर्करा स्रावण क्रियाके आधिक्य के दमनार्थ और रक्तरोधार्थ प्रयोजित होती है। इसमें अवसादक गुण होने से प्रदाहपर प्रयोग होती है; इस शर्कराका वाह्य प्रयोग करने पर संकोचक और अवसादक होनेसे यह प्रदाहकी प्रथमावस्थामें उपकार करती है। इसके धावन में वस्त्रको भिगोकर पट्टीसेभी बांधी जाती है।

उदर सेवन—विविध प्रकारके रक्त स्राव पर यह सत्वर लाभ पहुँचाती है। भयंकर बढ़ा हुआ अतिसार, राजयक्ष्मा तथा मधुरा रोगमें अन्त्र और आमाशयमेंसे रक्तस्राव पर यह व्यवहृत होती है। ऐसी अवस्थामें अफीमके साथ मिलाकर देनेसे आशु-प्रतिकार दर्शाती है। गुद नालिकामेंसे रक्तस्राव होनेपर अफीम

रत्ती नाग शर्करा २॥ तोले वाष्प जलमें मिला कर दिनमें ४-६ वार पिचकारी लगायी जाती है।

पारदके प्रयोगसे मुखसे लालानिःसरण होने परइसके कुल्ले कराये जाते हैं। विविध प्रकारके चर्म रोग प्रदाह जनित और आघात जनित दोनों पर इसके द्रवकी पट्टी लगानेसे संकोचक और अवसादक होकर लाभ पहुँचाती है। इनके अतिरिक्त विसर्प (Erysiplas), ग्रन्थि विसर्प (Erythroma), कण्डू मय पिटिकाएं (Prurigs), व्युची, शीतपित्तके ददोरे आदि पर नाग शर्करा और नौसादरको समभाग मिला धावन करके उपयोगमें लेते हैं। दन्त शूल होने पर नागशर्कराका चूर्ण गह्वरमें रक्खा जाता है। एवं गुदापर चर्म फट जानेपर इसका मलहम लगाया जाता है।

सूचना—इस औषधिकी मात्रा अधिक होने पर यह प्रादाहिक विषक्रिया दर्शाती है। कण्ठ और आमाशयमें दाह, उदरमें वेदना और मरोड़ा आना, वमन, कभी आक्षेप, अचेतना, पक्षाघात आदि लक्षण प्रकाशित होते हैं। ऐसा होने पर यसद लवण (सल्फेट ऑफ झिंक) द्वारा वमन और सल्फेट ऑफ मेगनेशिया द्वारा विरेचन कराना चाहिये। फिर प्रदाहके निमित्त योग्य चिकित्सा करनी चाहिये।

१४ स्वरभंग प्रकरण ।

१. कुलिजनाद्य गुटिका ।

विधि—कुलिंजन ५ तोले, कूठ, बच, अकरकरा, लौंग, सोंठ कालीमिर्च, पीपल छोटी इलायचीके दाने, जावित्री, तेजपात, कपूर, नागरमोथा, कत्था और बहेड़ा १-१ तोले केशर ३ माशे और कस्तूरी १ माशा लेवें। सबको मिला कूट नागरबेलके पान के रसमें ६ घण्टे खरलकर १-१ रत्तीकी गोलियां बना लेवें।

मात्रा—१-१ गोली मुंहमें रखकर या नागरबेलके पानमें रखकर रस चूसते रहें। दिनमें १० गोली तक।

उपयोग—यह वटी स्वरभेदको दूर करती है। अधिक गाने, व्याख्यान करने, जागरण करने, सूर्यके तापमें घूमकर शीतल जलपान करने या अपथ्यभोजनसे गला बैठ जाने पर इस वटीका अच्छा उपयोग होता है। एवं यह वटी जुकाम, कास और श्वासमें भी हितावह है।

२. कुलिंजनावलेह ।

विधि—कुलिंजन (पानकी जड़) १ सेर लेकर ८ सेर जलमें मिलाकर अर्धावशेष क्वाथ करें। फिर क्वाथको छान पुनः चूल्हे पर चढ़ा गाढ़ा करें, उसमें १ सेर गुड़ डालकर पाक करें। फिर कायफल, पुष्करमूल, भारंगी, सोंठ, पीपल, चव्य, चित्रकमूल, पीपलामूल, कालीमिर्च, हरड़, बहेड़ा, आंवला. वायविडङ्ग, धनियाँ, जीरा, काला जीरा, कांटेवाले करंजके भुने फल का मगज, अपामार्गके बीज, अडूसाके पान, ये १६ द्रव्योंका कपड़ छन चूर्ण १-१ तोला और शहद ८० तोले मिलावें। सबको मिला कर अवलेह बना लेवें। पाक शीतल होने पर शहद मिलाना चाहिये। श्री० गोपालजी कुंवरजी ठक्कुर आयुर्वेदाचार्य

मात्रा—आधसे १ तोला तक दिनमें ३ बार,

उपयोग—यह अवलेह सर्व प्रकार की कफजकास, हिक्का, स्वरभेद, कण्ठ विकार, प्रतिश्याय आदि पर व्यवहृत होता है। विशेषत यह आवाज सुधारनेमें उत्तम है। क्षयरोगमें स्वरभेद पर भी दिया जाता है। इसके सेवन से जठराग्नि सुधरती है।

छोटी इलायचीके दाने २ रत्ती तथा ½ रत्ती पीपरमेण्ट के फूलको शहदमें मिलाकर चटानेसे विविध उपद्रवों सह वमन और हिक्का त्वरित दूर होते हैं। मोरपंख की भस्म कासरोगमें ही लाभदायक है।

(२) आंवलोंका शर्वत या जामुनका शर्वत या संत्रेका शर्वत या नीवूका शर्वत शीतल जल मिलाकर थोड़ा पिलानेसे सूर्यके तापमें घूमनेसे उत्पन्न बेचेनी और वान्ति शमन हो जाती है।

(३) चमेलीके पानोंका स्वरस कालीमिर्च और मिश्री मिलाकर देनेसे नयी और पुरानी छर्दि नष्ट हो जाती है।

(४) चन्दन और मुलहठीको जलमें ठण्डाईके समान पीस छान कर पिलानेसे रक्त वमन और पित्त प्रकोपज वमन दूर होती है।

(५) नीवूका रस निचोडलेने पर शेष रहे हुए छिल्के को छांये में सुखा लें। फिर जला कर राख करें। उसमें से ४ से ८ रत्ती राख शीतल जलके साथ या शहदके साथ २-२ घण्टे पर देनेसे वान्ति रुक जाती है। सगर्भा, बालक और वृद्ध आदिके लिये हितावह है।

३. लाजमण्ड।

विधि—धानका लावा १ तोला, छोटी इलायची २-४ नग-लौंग २-४ नग, और मिश्री ३ से ६ माशे लें। सबको २० तोले जलमें मिला ५-७ उफान आवे तब तक उबालें। फिर शीतल होने पर कपड़ेसे छान लेवें। श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य

उपयोग—इस मण्डमेंसे १-२ चम्मच थोड़ी थोड़ी देरसे रोगीको पिलाते रहनेसे वमन निवृत हो जाती है। यदि वान्ति हरी-पीली और कडुवी होती हो, और वमन होने पर कण्ठमें दाह होता हो, तो थोड़ा नीवूका रस मिलादेवें। यदि इस मण्डके पात्रको बर्फपर रख कर शीतल करके उपयोगमें लिया जाय, तो

विशेष लाभ होता है। यह मण्ड वमन, हिक्का और तृषा रोग पर उत्तम औषध और पथ्य है।

वान्ति और हिक्का रोगमें सेव, मीठा बेदाना (अनार) मोसम्बी और ईख उत्तम पथ्य है।

४. पित्तकीवमन चिकित्सा।

(१) सिकंज वीन सिरका (उत्तम सिरके में दुगुनी शक्कर डालकर बना हुआ शर्वत) ६ माशा, सौंफ का अर्क २ तोले, पोदीनेका अर्क २ तोला ये तीनों चीज मिलाकर बार बार देते रहनेसे २-४ मात्रामें पित्तकी वमन बन्द होजाती है।

श्री पं० रामचन्द्र जी वैद्य

५. सगर्भास्त्रीका छर्दिनाशक प्रयोग

रेक्टी फाइड स्पिरिटके साथमें बना हुआ टिञ्चर आयोडीन (अर्थात् मैथिलेटेड स्पिरिट का न हो) १ बूंद प्रातःकाल प्रति दिन एक बार २॥ तोले शीतल जलके साथ देनेसे एक सप्ताहमें सगर्भाकी दारुण छर्दि अवश्य नष्ट होजाती है।

श्री० पं० रामचन्द्रजी वैद्य

चन्दनादि अर्क—चन्दनका चूर्ण मुसुम्बी गुलाब के फूल, केवड़ेके फूल और कमलके फूल, इन सबको ८ गुने जलमें मिला कर १० या १२ सेर अर्क खींच लेवें।

उपयोग—यह रसादि वटी किसीभी प्रकारके दाह, तृषा, हिक्का और पित्तप्रकोपजवमन (खट्टी वमन) को दूर करता है। विसूचिकामेंभी इसका उपयोग होता है। वमन और विसूचिकामें पोदीनेके रसके साथ देने पर विशेष गुण होता है।

३. चन्द्रप्रभाचूर्ण।

बनावट—सफेदचन्दन, लालचन्दन, मुलहठी, मुनक्का, (काली), नीलोफर, कमलके फूल, महुए के फूल, नेत्रवाला, छोटी इलायचीके दाने, नागरमोथा और धनिया, ये सब समभाग लेवें, और सबके समान मिश्री लेवें। (वै० चि० सा०)

मात्रा—३ से ६ माशे तक दिनमें ३ बार गौ या बकरीके दूध या जलके साथ लेवें।

उपयोग—यह चूर्ण दाह रोग पर अच्छा लाभ दायक है। कण्ठ, हृदय और आमाशयमें दाह, मुखपाक, नाकमेंसे रक्त स्राव, मस्तिष्कमें दाह आदिको दूर करता है। पित्त प्रकोप जन्य श्वेत प्रदरमें भी हितावह है।

४. खर्ज्जूरादि चूर्ण।

विधि—पिण्ड खजूर, आंवलेके बीज, पीपल, शिलाजीत, छोटी इलायचीके दाने, मुलहठी, पाषाणभेद, सफेदचंदन, खीरा ककड़ी का मग्ज़ और धनिया इन १० ओषधियोंको समभाग और शक्कर सबके समान लेवें। पिण्डखजूर और शिलाजीतको छोड़ शेष ओषधियों का कपड़छन चूर्ण करें। फिर पिण्डखजूरको अलग कूटें। पश्चात् उसके साथ शक्कर, चूर्ण और शिलाजीत मिला कूट कर एक जीव बना लेवें। (आ० सं०)

मात्रा—६ माशेसे १ तोला तक प्रातःकाल जलके साथ। मूत्ररोगमें शक्कर मिले मुलहठीके फाण्टके साथ।

उपयोग—यह चूर्ण अंगदाह, मूत्रेन्द्रिय दाह और अश्मरीया शर्करा-सिकतासे उत्पन्न शूलको नष्ट करता है। पेशाबको साफ ला देता है। यह चूर्ण वृष्य और बल्य है तथा शुक्र विकृतिसे उत्पन्न रोगोंको नष्ट करता है।

५. गुडूच्यादि क्वाथ।

विधि—गिलोय, आंवला, नागर मोथा, रक्त चंदन, हरड़, और सोंठ इन ६ द्रव्योंको समभाग मिलाकर जौ कूट करलेवें।

उपयोग—२-२ तोले जौ कूट चूर्ण का क्वाथ कर दिनमें ३ वार पिलाते रहने से विविध प्रकारके दाह की निवृत्ति हो जाती है।

मलेरिया ज्वरमें क्विनाइनका अधिक सेवन करने पर कितनेक रोगियोंको नेत्र दाह, दृष्टि मान्द्य, मस्तिष्क दाह, बधिरता, चक्कर आना आदि लक्षण उत्पन्न होते हैं। उसपर इस क्वाथका सेवन कराने से लाभ होजाता है। इस क्वाथके सेवनके साथ काम दूधा रस देते रहने से विशेष लाभ पहुँचता है।

ज्वर आकर चले जानेके पश्चात् कभी कभी वातनाड़ियों में प्रदाह तथा रक्त मांस, मज्जा आदि धातुओं में दुष्टि शेषरहजाती है। फिर किसी को नेत्रमें दाह नेत्र खुले रहने पर दाह होना, नेत्र बन्द करने पर दाह शमन होजाना; किसी को हृदय में दाह और घबराहट; एवं किसीको मस्तिष्कमें दाह, विचार करनेकी शक्तिका ह्रास, स्मरण शक्तिका अभाव आदि लक्षण प्रतीत होते हैं। इन सब प्रकारों पर इस क्वाथके सेवनसे लाभ पहुँचता है।

दिनों तक ज्वर रह जाने या मिर्च आदिका अधिक सेवन और गरम गरमभोजन करने की आदत आदि से अन्त्रमें दाह

१७. उन्माद-अपस्मार प्रकरण।

१. चतुर्भुजोरस।

विधि—पारदभस्म (अभावमें रससिंदूर) २ तोले तथा सुवर्णभस्म, शुद्धमैनसिल, कस्तूरी, रसमाणिक्य (हरताल से बना हुआ), ये ४ औषधियां १-१ तोला लें। सबको मिला घीकुंवारके रसमें १ दिन खरल करके गोला बनावें। फिर एरंडके पत्तोंमें लपेट धान्यराशिमें ३ दिन रखकर निकाल लेवें। फिर त्रिफलाके क्वाथमें १ दिन खरलकर आध आध रत्ती की गोलियां बनालेवें। (र० सा० सं०)

मात्रा—१ से २ गोली त्रिफला चूर्ण और शहदके साथ या वचके चूर्णके साथ नागर वेलके पानमें रख दिनमें दो वार देवें।

उपयोग—यह रसायन उन्माद रोग पर कहा है। वातसंस्था की विकृति से उत्पन्न सब रोगों पर लाभदायक है। अग्निबलके अनुसार सेवन करने पर वलीपलित का नाश कर देह को सुदृढ़ और सुन्दर बनाता है। अपस्मार, ज्वर, कास, शोष, अग्निमान्द्य, क्षय, हस्तकम्प, शिरःकम्प, विशेषतः गात्रकम्प, वातपित्त जनित रोग और कफप्रकोप जनित व्याधियां इन सबको यह चतुर्भुजोरस निसंदेह नष्ट कर देता है। जो रोग सब प्रकार की औषधियों के सेवन से वमन, विरेचन आदि पञ्चकर्म के योग से एवं मन्त्र या विविध औषधि आदिसे दूर न हुए हों, ऐसे असाध्य रोगों को भी यह रसायन नष्ट कर देता है। जिस तरह वज्र वृक्षों का नाश करता है; उसी तरह यह असाध्य रोगों का नाशक है।

इस चतुर्भुज रसमें उत्तेजक, आक्षेपनिवारक, रसायन और सेन्द्रिय विषनाशक गुण है। इस रसका वातवाहिनियां और वातकेन्द्र पर तत्काल प्रभाव पड़ता है। इस हेतु से उन्माद, अपस्मार, मूर्च्छा, हिस्टीरिया (अपतन्त्रक), और इतर वातप्रकोपज

गोलियों का उपयोग करना विशेष सुविधा वाला है। आयुर्वेद निबंध मालाकार ने अनुभव करके इस प्रयोग को उन्माद के लिए भी लाभदायक दर्शाया है। एवं नामभी उन्माद हर वटी दिया है।

(२)शुद्ध हींग १ से २ रत्ती गधी के दूध के साथ दिन में २ वार देते रहने से १ मास में अपस्मार दूर हो जाता है। रोज दूधकी योजना न हो, तो हींग को ३ दिन गधी के दूध में खरल कर १-१ रत्ती की गोलीयां बांध कर उपयोगमें ले सकते हैं।

(३) नमक जिसमें न मिलाया हो वैसी इमली १ सेर लेकर मिट्टीके वर्तन में १ मन जल में उबालें। १॥ सेर जल अर्थात् दो बोतल जल शेष रहने पर नीचे उतार कपड़े से छान कर बोतल में भरलें। इसमें से २-२ तोले जल दिन में ३ बार पिलाते रहने से शराब, भांग और गांजा के विषप्रकोप से हुआ उन्माद विकार सत्वर शमन हो जाता है।

३. शंखकीटादि नस्य

विधि—शंखका सूखा हुआ कीड़ा, पलाशपापड़ा, नकछिकनी कालीमिर्च, कायफल और कपूर को समभाग मिलाकूट कर कपड़ छान चूर्ण करें।

उपयोग—इस चूर्णमें से एक चुटकी लेकर सूंघने से अपस्मार का दौरा रुक जाता है। यह चूर्ण मस्तिष्क शोधक होने से शिर दर्द को भी दूर करता है।

४. महाचैतस घृत।

क्वाथ द्रव्य—शणके बीज, निसोत, एरण्डमूल, दशमूल, शतावरी, रास्ना, पीपल, सुहिजने की छाल इन १७ औषधियों को २०-२० तोले मिला कर जौकूट करें। फिर ६५ सेर जल मिला कर चतुर्थांश क्वाथ करके छान लेवें।

कल्क द्रव्य—वच, कूठ, दशमूल, एरण्डमूल, नागकेसर, तेजपात, छरीला, पानड़ी, जटामांसी श्वेतचन्दन, दारुहल्दी, शंखपुष्पी, ब्राह्मी, खरैंटी और गिलोय, इन २४ औषधियों को २-२ तोले मिला ब्राह्मी क्वाथ में पीसकर कल्क बनावें।

विधि—पहले दिन तैल के साथ कल्क और ब्राह्मी स्वरस मिलाकर मन्दाग्नि पर पाक करें। फिर क्रमशः एक दिन के अंतर से शेष स्वरस और दूध डालकर मन्दाग्निसे पकावें। सबका पचन होकर तैल सिद्ध होने पर उतार कर तुरन्त छान लेवें। इसमें इच्छानुसार मोतिया आदि की सुगन्ध मिला सकते हैं।

(श्री० पं० विश्वनाथजी द्विवेदी आयुर्वेदशास्त्राचार्य)

वक्तव्य—यहाँ पर जिस ब्राह्मीका प्रयोग किया है, उसे *हिन्दीमें ब्राह्मी, जल नीम, सफेद चमनी, बंगालीमें ब्राह्मी, धोप-चमनी; बम्बई महाराष्ट्रमें बाम, गुजरातमें बांव, कड़वी लूणी; आंध्रमें समरेणु, कृष्णपर्णी; तेलगुमें सम्ब्राणि चेट्टु और लेटिन में मोनीएरा कुनी फोलिया*-Moniera Cuniefolia कहते हैं।

इस ब्राह्मीके छाते जमीन पर फैलते हैं। इसके पान सामने-सामने, वृन्त रहित, कुछ मांसल, चोसरके समान बिल्कुल अखण्ड, काले दाग वाले, ६ से २५ मिलीमीटर (¼ से १ इञ्च) लम्बे और २·५ से १० मिलीमीटर (⅒ से ⅓ इञ्च) चौड़े होते हैं। ये स्वादमें कड़वे हैं। पुष्प पत्रकोणमें से निकले हुए एकाकी होते हैं। उप पुष्प पत्र (उप वृन्त पत्र) ५ मिलीमीटर (⅕ इञ्च) लम्बे होते हैं। डोडी ५ मिलीमीटर लम्बी, अण्डाकार, चिकनी होती है। यह ब्राह्मी भारतमें सर्वत्र गीले-स्थानों पर होती है।

मात्रा—१। से २॥ तोले शामको या आवश्यकता पर देवें। ऊपर नागर वेल का पान (कस्तूरी ½ रत्ती मिला हुआ) खिलावें।

उपयोग—यह अर्क पहले कुछ उत्तेजक, फिर शामक, पाचक, निद्राप्रद, वेदनाशामक और बल्य है। किसी भी रोग में निद्रा लाने के लिये यह निर्भय और उत्तम औषध है। श्वास, कास, अग्निमान्द्य, संग्रहणी, मधुमेह और हैजे में भी यह लाभ पहुंचाता है।

निद्रा लाने वाली और वेदना स्थापक औषध के रूप में अफीम विशेष कार्य करती है, किन्तु सगर्भा, प्रसूता, बालक, मलावरोध के रोगी, अत्यन्त गाढ़े कफ युक्तकास शिराओं में नीलापन की वृद्धि, नेत्र की पुतली संकुचित होना आदि विकार-वालों को अफीम नहीं दी जाती। तब इन स्थानों में यह अर्क निर्भयता पूर्वक दिया जाता है। यह अर्क घण्टों तक शान्त निद्राला देता है। अन्त्र पर शामक असर पहुंचाता है और दस्त भी साफ ला देता है। इसके सेवन से अफीम के समान नशा नहीं आता। किसी भी रोग में वेदना के हेतु से निद्रा न आती हो, वहां पर निद्रा लाने के लिये इसका उपयोग किया जाता है।

मस्तिष्क की निर्बलता में यह अर्क १५-१५ बूंद द्राक्षारिष्ट और जल में मिला कर दिया जाता है। इसके सेवन से मस्तिष्क शान्त रहता है।

७. अपतन्त्रकारि वटी।

विधि—एरंड तेल में शुद्ध किया हुआ कुचिला, भूनीहींग, हरड़, अजवायन, सोंठ, काली मिर्च, पीपल, शुद्ध गन्धक, अभ्रक भस्म और सैंधा नमक, ये १० औषधियां समभाग मिला अदरख के रस में ३ दिन खरल करके २-२ रत्ती की गोलियां बना लेवें।

मात्रा—१ से २ गोली भोजन कर लेने के १ घण्टे बाद जल के साथ दिन में २ बार।

रस सिंदूर ३ माशे मिला कर खरल कर लेवें।

(श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्रा—१-१ माशा प्रातः सायं जल, दूध या गुलाब के अर्क के साथ।

उपयोग—इस योग का सेवन कराने पर अनिद्रा, अपतन्त्रक (हिस्टीरिया), उन्माद और नये अपस्मार में लाभ पहुंचता है।

सूचना—सर्पगन्धा का प्रयोग करने के पहले निशोत या कालादाना अथवा मेगनेशिया सल्फास जैसा विरेचक द्रव्य देकर उदर शुद्धि कर लेनी चाहिये।

द्वितीय विधि—सर्प गन्धा चूर्ण ५ तोले, जहर मोहरा पिष्टी प्रवाल पिष्टी और अमृतासत्व, ६-६ माशे मिला कर खरल कर लेवें।

मात्रा—१॥-१॥ माशा प्रातः सायं गुलाब के अर्क या गुल कंद के साथ देवें।

उपयोग—इसके सेवन से निद्रा आजाती है; और मस्तिष्क की निर्बलता दूर होती है।

सूचना—(१) सर्प गंधा के सेवन काल में नमक रहित भोजन करे तो विशेप और सत्वर गुण दर्शाता है।

(२) रक्तभार (ब्लड प्रेसर) को कम करता है अतः अति क्षीण और निर्बल रोगी कि जिनका ब्लड प्रेशर पहले ही कम हो उनको यह औपधि न दी जाय। अथवा दी जाय तो विशेष सावधानी के साथ दें।

१० चण्डासव

बनावट—शंखावली का स्वरस ५ सेर, शक्कर १। सेर, शहद १। सेर, धाय के फूल २० तोले मुनक्का २० तोले, ब्राह्मी (जल-

है। नव्य और जीर्णरोग पर भी इसका विशेष उपयोग होता है। यह उत्कृष्ट वात पित्त प्रकोप शामक औषधि है।

यह रसायन महावात विध्वंसन के समान आशुकारी तीव्र प्रकोप में लाभदायक नहीं है। किन्तु तीव्र क्षोभ शमन होनेपर तथा चिरकारी अवस्था में जीर्णवात प्रकोप को नष्ट करने में अति हितकारक है। जब वात रोग में दाह, हृदय में घबराहट, बेचैनी, मस्तिष्क में उष्णता, मुखपाक आदि प्रतीत होते हैं, तब पित्तवर्द्धक ताम्र भस्म, मल्ल या कुचिला प्रधान औषधियाँ लाभ नहीं पहुँचा सकती। ऐसी अवस्था में सूतशेखर, योगेन्द्ररस और बृहद्वातचिन्तामणि प्रयोजित होते हैं। इनमें से सूतशेखर का कार्य योगेन्द्ररस और बृहद् वातचिन्तामणि से भिन्न प्रकार का है। सूतशेखर प्रधानरूप से पित्त की अम्लता और तीक्ष्णता को नष्ट करता है और गौण रूप से पित्ताश्रित वातविकार को शमन करता है। योगेन्द्ररस और बृहद् वातचिन्तामणि वात-संस्थापर मुख्य प्रभाव पहुँचा कर वातप्रकोप को शान्त करते हैं। दोनों रसायन वातकेन्द्र को शान्त बनाकर वातवाहिनियों में वातवहन कार्य व्यवस्थित करते हैं; तथा साथ-साथ पित्त प्रकोप को दबाते हैं।

इन दोनों रसायनों की रचना विशेषांश में समान है। इनमें से बृहद् वात चिन्तामणि में मुक्ता, प्रवाल की मात्रा योगेन्द्ररस की अपेक्षा दूनी होने से विष प्रकोपज शारीरिक उत्ताप कुछ अधिक रहने पर विशेष लाभ दर्शाता है; तथा योगेन्द्ररस में सुवर्ण की मात्रा अधिक होने से वह हृदय को बल देना और रक्त प्रसाद करना, ये कार्य अधिक करता है।

अपतन्त्रक (हिस्टीरिया) रोग विशेषतः युवतियोंको होता है। इस रोग के प्रारम्भ में मनोवृत्ति, विवेकशक्ति और वातनाड़ियों में विकार उत्पन्न होता है। फिर जननेन्द्रिय (गर्भाशय आदि)

अच्छी तरह मर्दन कर बोतल में भर १ मास तक धान्यकी राशि में दबा दें। फिर निकाल कर प्रयोगमें लावें। (र० यो० सा०)

मात्रा—आध आध माशा दिनमें दो वार अजवायन और शहदके साथ दें। ऊपर निम्न क्वाथ पिलावें। (सहन हो सके तो मात्रा १ माशा तक देवें। १५-१५ दिन औषध देकर ५-५ दिन औषध बन्द रखें)

अनुपान—चिरायता, मेंढासिंगी, मूर्वा, वच, नीमकी अन्तर छाल और त्रिफलाका क्वाथ; अथवा परवल, पाठा, हल्दी, दारुहल्दी, इन्द्रायण, ब्रांह्मी, दंती मूल, निसोत और पद्मकाष्ठका क्वाथ। इन दोनों में से जो अधिक अनुकूल हो, वह देवें। कोष्ठविकार न हो, तो पहला क्वाथ और बद्धकोष्ठ वालों को दूसरा क्वाथ देना चाहिये। अथवा कड़वी तुम्बीका गर्भ समभाग मिला फिर घी और शहद के साथ देवें।

उपयोग—इस रसायनके सेवन से प्रसुप्तवात, सूतिका रोग वातरक्त, और कुष्ठ रोग नष्ट होते हैं।

७. खञ्जनिकारि रस।

विधि—एरंड तैलसे शुद्ध किये हुए कुचिलेका कपड़छन चूर्ण, मल्लसिन्दूर (रसतन्त्रसार प्रथम खण्ड दूसरी विधि और रजतभस्म, तीनों समभाग मिला अर्जुन वृक्ष के छालके क्वाथ की ७ भावना देकर आध आ रत्ती की गोलियां बना लेवें। श्री० पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य

मात्रा—१ से २ गोली प्रातः सायं गोदुग्ध या दशमूल क्वाथ वें।

उपयोग—यह रसायन अर्दित, खञ्जवात, वहिरायाम, अन्त रायाम, कौब्ज, खल्ली, वातशूल और पुराने पक्षवध पर अच्छा लाभ

पहुंचाता है। इसके सेवन से मांस पेशियां और रक्तवाहिनियों की विकृति दूर होती है। वातवाहिनियां सबल बनती हैं। यदि उपदंश विष रक्त में अवस्थित हो तो वह भी नष्ट हो जाता है। जीर्ण उपदंश विष को नष्ट करने के लिये माजून चोपचीनी या अन्य रक्तशोधक अनुपान के साथ खञ्जनिका रस देना चाहिये। यह रस ज्ञानतन्तुओं को पुष्ट बनाता है।

८. अर्दितारि रस

विधि—केशर, एरण्ड तेल में शुद्ध किया हुआ कुचिला, हिंगुल, रौप्य भस्म, अकरकरा, जायफल, जावित्री और लौंग १-१ तोला, सोमल और कस्तूरी ३-३ माशे लेवें। सबको मिला ब्राह्मी (जलनीम) के क्वाथ में १२ घण्टे और अदरख के रस में १२ घण्टे खरल कर आध आध रत्ती की गोलियां बनावें।

मात्रा—१-१ गोली प्रातः सायं गोदुग्ध के साथ देवें।

उपयोग—इस वटी के सेवन से अर्दित, खञ्जवात, पक्षाघात और कम्पवात आदि रोग दूर होते हैं। जीर्ण अर्दित और जीर्ण पक्षवध में विशेष उपकार दर्शाती है।

९. भल्लातकादि गुटिका।

बनावट—भिलांवे ८ तोले, गुड़ ५ तोले, पीपलामूल, पीपल, अकलकरा, सोंठ और मालकांगनी, ये सब १-१ तोला लें। सब ओषधियों को कूट गुड़ में मिला कर २-२ रत्ती की गोलियां बनावें। (आ० नि० मा०)

मात्रा—२ से ४ गोली तक दिन में दो बार जल के साथ देवें।

उपयोग—यह वटी संधिवात, गठियावात, कमर में वायु का दर्द, और उदरवात को दूर करती है। इस वटी के साथ तैल

सूचना—एरण्ड के मगजमें से जिभ्भी (पत्ती) निकाल देनी चाहिये, अन्यथा औषध सेवन से बेचैनी और उबाक होने लगती है।

उपयोग—इस गूगल की २ से ४ गोली दिन में ३ बार निवाये जल के साथ देते रहने से संधिवात, हाथ-पैर आदि अवयवों में बार बार होने वाली वात जन्य पीड़ा और उदरवात आदि विकार शमन हो जाते हैं।

कितनेक रोगियों को कुछ वातुल पदार्थ खाने, शीतकालमें बद्दल आने और वर्षा ऋतु आदि कारणों से कभी किसी एक अवयव में तो कभी दूसरे अवयव में वातप्रकोपजनित वेदना होती रहती है। उनके लिये यह गूगल हितावह है।

१२. अपतन्त्रकारि वटी।

विधि—भुनीहींग १ तोला, कपूर, १ तोला, गांजा ६ माशे, खुरासानी अजवायन और तगर (आसारून) २-२ तोले लें। सबके कपड़छान चूर्ण को मिला जटामांसी के क्वाथ (फाण्ट) में १ दिन खरल करके २-२ रत्ती की गोलियां बना लेवें।

(श्री० पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्रा—२-२ गोली दिन में ३-४ बार मांस्यादि क्वाथ के साथ।

उपयोग—यह वटी अपतन्त्रक (हिस्टीरिया) पर अच्छा लाभ पहुँचाती है। नये रोग और पुराने, दोनों पर हितकारक है।

१३. गृध्रसीहर गुटिका।

बनावट—महायोगराज गूगल ८ तोले, भूनी हींग २ तोले, और जिभ्भी निकाली हुई एरण्ड की मिंगी २ तोले को मिला

रास्नादि क्वाथ में ६ घण्टे खरल कर ४-४ रत्ती की गोलियां बना लेवें।

मात्रा—१ से ४ गोली तक प्रातः या प्रातःसायं निवाये जल के साथ देते रहें। कब्ज हो, तो एरण्ड तैल के साथ देवें।

उपयोग—इस वटी के सेवन से गृध्रसी वायु थोड़े ही दिनों में दूर हो जाता है। इस औषध के सेवन काल में घी और तैल वाले पदार्थों का सेवन अधिक अनुकूल रहता है।

१४. कार स्करादि गुटिका।

प्रथम विधि—एरण्ड तैल में शुद्ध किया कुचिला २० तोले शुद्ध सिंगरफ, अकलकरा पांच ५ तोले, सौंठ, पीपल, कालीमिर्च, जायफल और जावित्री २-२ तोले तथा लौंग, दालचीनी, पीपलामूल और केशर १-१ तोला लें। सबको मिला कूट कर कपड़छान चूर्ण करें। फिर जायफल, कालीमिर्च और लौंग ५-५ तोले को ८ गुने जल में मिला कर अर्धावशेष क्वाथ करें। इस क्वाथ के साथ चूर्ण को १ दिन खरल कर १-१ रत्ती की गोलियां बना लेवें।

मात्रा—१ से २ गोली दिन में ३ बार जल या दूध के साथ देवें।

वक्तव्य—केवल स्नायु दुर्बलता, आमाशय दौर्बल्य और अग्निमान्द्य पर एवं कोष्ठाश्रित दोषों को दूर करने के लिये कुचिला मिश्रित औषधि भोजन के १ घण्टे बाद गर्मजल से देना विशेष लाभदायक है। शाखाश्रित दोषों में, तथा सर्वाङ्ग वायु और मांस गत वायु के शमनार्थ भोजनसे ३ घण्टे पहले उचित अनुपान कषाय, स्वरस या दूध के साथ देवें।

श्री पं० राधाकृष्णजी द्विवेदी

उपयोग—इस वटीके सेवनसे सब प्रकारके जीर्णवात रोग

आना. ऐंठन, आमवृद्धि, उदर में वात संचय रहना, क्षुधा नाश और मुँह में चिकनापन रहना आदि विकारों को दूर करता है। यह सामान्य औषधि होने पर भी अच्छा लाभ पहुंचाती है।

यदि पैरों पर अधिक ऐंठन हो, तो जायफल को ४ गुने तिल तैल में उबाल कर, उस तैल से मालिश करने पर सत्वर लाभ पहुँचता है। विसूचिका रोग की ऐंठन पर भी यह तैल लाभ पहुंचाता है।

कितनेक वृद्धों को रात्रि में निद्रा नहीं आती, उनके लिये इस गुटिका से निद्रा आने लगती है; और वात प्रकोप नहीं होता।

१६. कुष्माण्ड अर्क

बनावट—एक पेठा पक्का ५ सेर वजन का लेकर उसके डण्ठलकी जगह चाकू से काट छेद कर उसमें चम्मच से गर्भ, बीज आदि को चला देवें। फिर उसमें २० तोले हीरा हींग भर पूर्ववत् बन्द कर कपड़ मिट्टी करके सुखा देवें; फिर उसका मुख ऊपर की तरफ रहे, उस तरह जमीन में दबा देवें। किसी को शंका हो कि, जमीन में दबाने से पेठा सड़ जायगा; तो उस शंका के निवारणार्थ कहना पड़ेगा कि, ऊपर की छाल भी जैसी की वैसी रहती है; और भीतर का मग्ज़ रस रूप बन जाता है। एक मास के पश्चात् पेठे को निकाल, सम्हाल कर मुख पर से कपड़ मिट्टी दूर कर पेठे के मुंह को खोल उसमें से लोहे की पली द्वारा अर्क निकाल, छान कर बोतलों में भर लेवें। यह अर्क २-३ वर्ष तक अच्छा रहता है। (आ० नि० मा०)

सूचना—पेठेके ऊपर लगभग ८-९ इञ्च मिट्टी आजाय, उतना गहरा गड्ढा खोदना चाहिये। जिस जमीनमें शुष्कता हो, ऐसे स्थान पर पेठेको दबाना चाहिये। भलसे मुख भाग

नीचे न रह जाय, यह सम्हालें, अन्यथा अर्क सब जमीनमें चला जायगा।

मात्रा—५ से १० बूंद दिनमें ३ बार २॥-२॥ तोले जलमें मिलाकर पिलावें।

उपयोग—इस अर्कके सेवन से देह में अति उष्णता उत्पन्न होती है; समस्त वातरोग कटिग्रह, सांधों सांधों में वेदना और पक्षाघात आदिका शमन हो जाता है; तथा कफ प्रधान सबरोगों का भी निवारण होजाता है।

१७. मांस्यादि क्वाथ।

विधि—जटामांसी ८ तोले, असगन्ध २ तोले और खुरासानी अजवायन १ तोला लें। सबको मिलाकर जौ कूट कर लें।

श्री० पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य

मात्रा—१।-१। तोला चूर्ण को १० तोले जलमें मिला अर्धाव शेष क्वाथ करें।

उपयोग—इस क्वाथका उपयोग हिस्टीरिया, आक्षेपक वात और बालकोंके आक्षेप (Chorea) पर अकेले या बृहद् वात चिन्तामणि, ब्राह्मीवटी, हिस्टीरिया नाशक वटी, अपतन्त्र कारिवटी या सर्पगन्धावटी के साथ होता है।

१८. त्रयोदशाङ्ग गुग्गुलु।

बनावट—लहशुन, असगन्ध, हाऊबेर, गिलोय, शतावरी, गोखरू, विधारा, रास्ना, सौंफ, कचूर, अजवायन और सोंठ, ये १२ औषधियाँ ४-४ तोले, शुद्ध गूगल ४८ तोले और गोघृत २४ तोले लेवें। सब औषधियोंके कपड़ छान चूर्ण और गूगल को थोड़ा थोड़ा गोघृत मिला कूट कर एक जीव बनालें। फिर २-२ रत्ती की गोलियां बना लेवें। (वं० सें०)

मात्रा—२ से ४ गोली दिनमें ३ वार शराव, यूष या रास्नादि अर्क या रोगनाशक अनुपानके साथ देना चाहिये।

उपयोग—यह गूगल कटिग्रह, गृध्रसी, वाहु, पीठ, जानु (घुटने), पैर, सांधे, हड्डी, मज्जा और स्नायुगतवात, हनुग्रह और कुष्ठ आदि रोगोंको दूरकरता है। वातज और कफज रोग, हृद्रोग, योनिदोष, खञ्जवात और अस्थिमज्जा आदि विकारोंका नाश करता है। यह गूगल तीव्र नूतन रोग की अपेक्षा जीर्ण गृध्रसी रोग पर विशेष हितावह है। शान्ति पूर्वक ४-६ मासतक सेवन करना चाहिये।

१६. पञ्चामृत लोह गुग्गुलु।

विधि—शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, रौप्यभस्म अभ्रकभस्म और सुवर्ण माक्षिक भस्म ४-४ तोले, लोह भस्म ८ तोले और शुद्ध गूगल २८ तोले लें। पहले पारद गन्धक की कज्जली करके भस्म मिलावें। फिर लोहेके खरल वत्ते में गूगल को थोड़ा थोड़ा कडुवा तैल मिला कर कूटें। गूगल नरम होने पर उसमें पारद मिश्रण मिला ६ घण्टे तक कूट कर २-२ रत्तीकी गोलियाँ वनालें। (आ० सं०)

मात्रा—१ से २ गोली दिनमें दो वार दूध या सोंठ और एरण्डमूलके क्वाथ अथवा असगन्धके क्वाथके साथ दें।

उपयोग—इस रसायनका प्रयोग करने पर मस्तिष्कगत वात विकार, मांस पेशियों में पीड़ा, गृध्रसी, अववाहुक, कटिवात आदि वातविकार नष्ट होते हैं।

जव मस्तिष्क गत वात केन्द्रमें और वात नाड़ियोंमें विकृति, रक्त की न्यूनता और आमानुवन्ध सह चिरकारी रोग हो या तीव्र क्षोभवाली अवस्था शान्त होगयी हो, तव इस रसायनका

उपयोग होता है। यह रसायन आम को जलाता है; तथा मस्तिष्क हृदय, रक्त, और रक्त वाहिनियों और वात वाहिनियों को सबल बनाता है। जिससे मस्तिष्कमें शून्यता आजाना, चक्कर आना, घबराहट, मानसिक बेचैनी, देहके विविध स्थानोंमें वात जनित वेदना होना आदि लक्षण दूर हो जाते हैं।

यह पञ्चामृत लोह गुग्गुलु वातपित्त मिले हुए प्रकोप या पित्त प्रकृति वालोंके उत्पन्न वात रोग पर व्यवहृत होता है। आयुर्वेद संग्रह कारने इसे मुख्य मस्तिष्कगत विकार पर लिखा है; तथापि मस्तिष्कके अतिरिक्त गृध्रसी आदि पर भी अच्छा लाभ पहुँचाता है।

२०. रसोन पिण्ड।

बनावट—एक पेठा पक्का ५ सेर वजन का लेकर उसके डण्ठल की जगह चाकू से काट छेद कर भीतर से बीज आदि होसके उतने निकाल देवें। फिर एक पोत्या लहशुन ऊपर से छिलका और बीचका अङ्कुर दूर किया हुआ ४० तोले लेकर उस पेठेके भीतर भर देवें। पश्चात् काटा हुआ डण्ठल ऊपर लगा कपड़ मिट्टी करें। डण्ठलवाला भाग ऊपर ही रहना चाहिये। फिर गोबरी की अग्नि में पुट पाक रीतिसे पका लेवें। जब कपड़मिट्टी ऊपर से लाल प्रतीत होने लगे, तब पेठे को बाहर निकाल लेवें। शीतल होने पर कपड़ मिट्टी दूर कर लहशुन सह पेठे को कूट (बीज निकाल) कर कल्क बनालें। पश्चात् कलई की हुई पीतल की कढ़ाई में ४० तोले तिल तैल डाल कर गरम करें। उसमें छौंक रूप से हींग १ तोला तथा दालचीनी के छोटे-छोटे टुकड़े, जीरा, राई और लौंग २॥-२॥ तोले डालें। फिर पेठे का कल्क डाल अच्छी तरह चला कर पकावें। शीतल होने पर सौंठ, काली मिर्च, पीपल, अकलकरा, दालचीनी, तेजपात, कालाजीरा,

अजवायन, पीपलामूल, धनिया और जीरा, इन ११ औषधियों का कपड़ छान चूर्ण १-१ तोला तथा सैंधानमक ५ तोले (या कम, ज्यादा) डालकर अमृतबान में भर लें।

(श्री० पं० श्री गोवर्धनजी छांगाणी भिषक्केसरी)

मात्रा—६ माशे से २ तोले तक खिला कर ऊपर वायविडङ्ग और एरण्डमूल का क्वाथ पिलावें।

उपयोग—यह प्रयोग सब प्रकारके वात रोगों पर हितकारक है। सर्वाङ्ग वात, अर्धाङ्ग वात, अर्दित, अपस्मार, उन्माद, अपतन्त्रक, गृध्रसी, कटिवात, उदर वात, उरुस्तम्भ, उदरकृमि, कफप्रकोप, उदावर्त, अपचन और आमवृद्धि आदिको दूर करता है। जीर्ण आमवात और संधिस्थानके शोथपर भी यह योग लाभ पहुंचाता है। इसके सेवनसे वात वाहिनियां, मांसपेशी और हृदय सफल बनते हैं; पेशाब साफ आता है; ज्वर रहता हो तो दूर होता है, रक्तदबाव वृद्धि हुई हो तो उसका ह्रास होजाता है, देहमें पूयोत्पत्ति हुई हो, तो पूयकीटाणु नष्ट होते हैं।

वात विकार एवं तज्ज — रक्तदबाव (ब्लड प्रेशर) हुआ हो तो अवश्य लाभ करेगा।

पक्षाघातके रोगीको प्रातः सायं मल्लसिन्दूर या व्याधिहरण-रस सोमलयुक्त ½ रत्ती और कस्तूरी ¼ रत्तीको मिला अदरखके रस और शहदके साथ देते रहें; और ऊपरमें इस रसोनपिण्डमें से २॥-२॥ तोले खिलाते रहने से पक्षाघात रोग सत्वर दूर होजाता है। जिन रोगियोंको शराब सेवनसे पक्षाघात होगया हो, या जिनको पक्षाघात होने पर भी मस्तिष्क और कोष्ठमें उष्णता रहती हो उनके लिये यह रसोनपिण्ड अति उपकारक है।

२१. रसोन पाक।

विधि—छिलके और बीचके अङ्कुर रहित शुद्ध लहशुन ६४

तोलेको २५६ तोले दूधमें मिलाकर खोआ बनावें। फिर उसे ६४ तोले घी मिला कर भूनें; तथा सोंठ, काली मिर्च, पीपल, दालचीनी, छोटी इलायचीके दाने, तेजपात, नागकेसर, पीपलामूल, चव्य, चित्रकमूल, वायविडंग,, हल्दी, दारुहल्दी, हाऊबेर, विधारा, पुष्कर मूल (मीठा कूठ), अजवायन, लौंग, देवदारु, पुनर्नवा की जड़, गोखरू, नीम की अन्तर छाल, रास्ना, सोवा, शतावर, कचूर, असगन्ध और कौंच बीज, इन २८ औषधियोंका चूर्ण १-१ तोला डालें। पश्चात् १२८ तोले शक्करकी चाशनी कर खोआ और चूर्णमिला कर पाक बना लेवें।

मात्रा—४-४ तोले प्रातः सायं देते रहें।

उपयोग—इसपाकके सेवन से सर्व प्रकारके वातरोग, अपस्मार, उरःक्षत, गुल्म, उदररोग, वमन, प्लीहा वृद्धि, वृषणवृद्धि कृमि, कोष्ठ बद्धता, आनाह, शोथ, अग्निमान्द्य, बल क्षय, हिक्का, श्वास, कास, अपतन्त्रक, धनुर्वात, अन्तरायाम, पक्षाघात अपतानक, अर्दित, आक्षेपक, कुब्जवात, हनुग्रह, शिरोरोग, विश्वाची, गृध्रसी, खल्लीवात, पङ्गुवात संधिवात, बधिरता और सम्पूर्ण प्रकारके शूलोंका अति जल्दी नाश होता है। यह पाक वातव्याधि रूपहाथीको सिंहके समान नाश करता है। एवं कफ प्रकोप जनित विकारोंको दूरकर बल और पुष्टि देता है। इस पाकका एक वर्ष तक सेवन करनेसे वात आदि सब रोग नष्ट होजाते हैं।

२२. एरण्डपाक (वातारिपाक)

बनावट—अरण्डीके बीज की गिरी (भीतरकी झिल्ली निकली हुई) ६४ तोले गोदुग्ध ५१२ तोले, घी ४० तोले, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, लौंग छोटी इलायचीके दाने, दालचीनी, तेजपात, नागकेसर, असगंध, सोंवा, रास्ना, पडगंधा (घुड़बच)

रेणुकबीज, शतावर, पुनर्नवाकी जड़, काली निसोत, खस, जावित्री, जायफल, लोहभस्म, अभ्रकभस्म २-२ तोले लेवें। पहले एरण्ड मज्जाको ४० तोले दूधमें भिगोकर शिलापर वारीक पीसकर मक्खनके समान बनालेवें। तत्पश्चात् शेष दूधमें मिलाकर खोआ बनालेवें। खोआ बन जाने पर घृतमें बादामी रंगका होवे तब तक भूनें। इसके बाद उपरोक्त काष्ठादि ओषधियोंका कपड़छान चूर्ण एवं धात्वादि की भस्में मिलाकर खूब अच्छी तरह एक सम बनाई हुई खोए में डालकर तत्काल मिला दें। फिर ऽ२॥ सेर शक्कर लेकर गुच्छा बंद चाशनी बनाकर कुछ शीतल होने पर औषधियां मिश्रित खोआ मिलाकर चक्कियाँ बनालें अथवा लड्डू बनाना हो, तो चाशनी गोली बंद करें।

मात्रा—२ से ४ तोला या बला बलके अनुसार प्रातःकाल को सेवन करें।

उपयोग—इस वातारि पाकके सेवन से ८० प्रकारके वात विकार, ४० प्रकारके उदररोग, अन्त्र वृद्धि, २० प्रकारके प्रमेह, ६० प्रकारके नाड़ी व्रण, १८ जातिके कुष्ट, सब प्रकारके क्षय, ५ प्रकारके पाण्डु, ५ प्रकारके श्वास, ४ प्रकारके ग्रहणी रोग, दृष्टि रोग, गलग्रह और अनेक प्रकारके वात प्रकोपज विकार नष्ट होते हैं। यह पाक शुक्रल और रसायन है।

२३ चोप चीनी पाक।

बनावट—चोपचीनी ४० तोले के चूर्ण को ४ सेर गो दुग्धमें पकाकर खोआ बनावें। फिर २०० तोले शक्कर की चासनी मिलावें। साथमें छोटी इलायचीके दाने ४ तोले तथा लौंग, कपूर दालचीनी, तेजपात, नागकेशर, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, गम्भारी के फल, जावित्री, मालतीके फूल, कौंच, काकोली, कस्तूरी, सिंघाड़े बंश लोचन, जटामांसी, तेजबल, जायफल, नीलोफर, विदारीकंद,

सफेद मुसली, शीतलमिर्च, शतावरी, ताम्रभस्म और अभ्रकभस्म इन २६ ओषधियोंका भस्मों के अलावा कपड़छान चूर्ण २-२ तोले मिलाकर २-२ तोलेके लड्डू बनालेवें। (र० यो० सा०)

मात्रा—१-१ लड्डू दूधके साथ सेवन करें।

उपयोग—यह पाक सब प्रकारके वात व्याधि, अतिदारुण आमवात, अपस्मार, उन्माद, पक्षाघात, अपतानक सब प्रकारके शिरोरोग, संधिपीड़ा, कटिग्रह, अरुचि, जुखाम, कास, श्वास, क्षय, धातु क्षीणता, बलक्षय, ओज क्षय, सब प्रकारके उपदंश-विकार आदिको नष्ट कर देहको सबल और तेजस्वी बनाता है। इस पाकके सेवन कालमें तेजवायु का सेवन नहीं करना चाहिये। दूध और मांस रस पथ्य हैं।

रक्त विकार उपदंशके विषसे पीड़ितोंके विविध उपद्रव दूर कर शक्तिप्रदान करनेके लिये यह पाक अति हितकारक है। इसका अनुभव श्री पं० राधाकृष्णजी द्विवेदीने अनेक बार किया है।

२४. माजून कुचिला।

विधि—शुद्धकुचिला २० तोले कालीमिर्च, श्वेतमिर्च-रूमीमस्तंगी, केशर, लौंग, दालचीनी, सफेद तोदरी, लाल तोदरी, चोपचीनी, शीतल मिर्च, आंवला, छोटी इलायचीके दाने, अजवायन, सफेद चंदन, पीपल, वंशलोचन, सफेद मुसली, गावजवां, जायफल, अगर, शुद्ध वच्छनाग, उद बिलसां, तेजपात, जटामांसी, सौंफ, सालम मिश्री, कबाबा ये २७ औषधियाँ १-१ तोला सोना का वर्क और चांदीका वर्क २-२ माशे तथा शहद सबसे ६ गुना लेवें। काष्ठादि ओषधियोंको कूटकर कपड़छान चूर्ण करें। फिर वर्क और शहद मिलाकर माजून बना लेवें।

(पं० गुरु शरण-दासजी)

मात्रा—२-२ माशे बकरी या गौके दूधके साथ या निवाये जलसे दिनमें २ या ३ बार देवें।

उपयोग—यह माजून सब प्रकार की वात प्रकोपज वेदना को नष्ट करता है। कलायखञ्ज, गृध्रसी, सर्वाङ्गवात, पार्श्ववेदना आदिमें पीड़ाको शमन करने के लिये यह प्रयोजित होता है। हृदयको सबल बनाता है। उदर वातका निवारण करता है और पाचन शक्तिको बढाता है।

सूचना—*इस माजूनमें वच्छनाग मिलाया है। वह वात हर और वेदनाशामक है; किन्तु वह उग्रविष होनेसे इस माजून की अधिक मात्रा नहीं देना चाहिये।*

यह माजून अति कड़वी है। इस हेतुसे हम शहदके बदले में चूर्णके समान शक्कर की चासनी बना कर मिलाते हैं। फिर २-२ रत्ती की गोलियां बना लेते हैं। उसमें से २-२ गोली देते रहते हैं।

२५. महामाष तैल

क्वाथ—उड़द ४ सेर (कपड़ेकी ढीली पोटलीमें बंधा हुआ) दशमूल ६। सेर और बकरेका मांस १५०) तोले (कपड़ेकी ढीली पोटलीमें बंधा हुआ), इन सबको ६४ सेर जलमें मिला कर चतुर्थांश क्वाथ करें।

कल्कः—कौंचमूल, एरण्डमूल, सोवा, सैंधानमक, विड़लवण, कालानमक, जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीर-काकोली, मुद्गपर्णी, मांसपर्णी, जीवन्ती, मुलहठी, मजीठ, चव्य, चित्रकमूल, कायफल, सोंठ, काली मिर्च, पीपल, पीपलामूल, रास्ना मुलहठी, सैंधानमक, देवदारु, गिलोय, कूठ, असगंध वच और

कर्चूर, इन ३२ औषधियोंको २-२ तोले मिला जलमें पीसकर कल्क करें।

विधि—क्वाथ, कल्क, तिलका तैल ४ सेर और दूध १६ सेर मिलाकर यथा विधि तैल पाक करें (भै० र०)

उपयोग—इस तैलके मर्दनसे पक्षाघात, अर्दित, बधिरता हनुग्रह, कर्णशूल, मन्यास्तम्भ, शिरःशूल, त्रिदोषजतिमिर रोग हाथ, पैर, शिर और कण्ठके कम्प और आक्षेप, कलायखञ्ज, पैर रह जाना, गृध्रसी और अवबाहुक आदि नाना प्रकारके, वात रोग नष्ट होजाते हैं। इस तैलका व्यवहार, पान, वस्ति, अभ्यङ्ग, नस्य, कर्णपूरण और अक्षिपूरण (नेत्रमें अञ्जन और नेत्रमें तैल भरना), इन सब प्रकारसे होता है।

२६. सहचरादि तैल।

विधि—मूल सहित पियावांसा का पंचांग ४०० तोले, दशमूल ४०० तोले और शतावर २०० तोले लें। सबको जौकूट कर ८१९२ तोले जलमें मिलाकर चतुर्थांश क्वाथ करें। फिर छान कर पुनः चूल्हेपर चढ़ावें। उसमें खस, भुने हुए नख, कूठ, चंदन छोटी इलायची, ब्राह्मी (जल नीम) प्रियङ्गु, नलिका (सुगंधित पानड़ी), नेत्रवाला, पत्थरफूल, रक्तचंदन, जटामांसी, अगर, देवदारू, खुरासानी अजवायन, सौंफ, शिलारस और तगर, इन १९ औषधियोंका ४-४ तोलेका कल्क, ५१२ तोले दूध और ५१२ तोले तिल तैल मिला कर मंदाग्निसे सिद्ध करें। (अ० हृ०)

मात्रा—१ से ६ माशे तक दिनमें दो बार।

उपयोग—इस तैलका उपयोग उदर सेवन, नस्य, वस्ति और मालिश आदिके लिये होता है। यह तैल विविध प्रकारके कष्ट साध्य वात रोग कम्प, आक्षेप, गात्रस्तम्भ (अंग जकड़ जाना)

श्वांस शोष युक्त वात रोग, गुल्म, उन्माद, पीनस और योनि रोग आदिको दूर करया है।

व्रण, प्रसव कालमें दुर्लक्ष्य और दूपित आहारके सेवनसे विविध प्रकारके वाताक्षेप रोग उपस्थित होते हैं। किसी किसीको झटके वार वार आते रहते हैं। मलावरोध, ज्वर, घवराहट, कफप्रकोप, हृडफूटन आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उस विकार पर यह तैल पिलाया जाता है। इस तेलसे सत्वर लाभ पहुंचता है। इस तरह कम्प रोग पर भी महायोगराज गूगलके साथ इस तैलका सेवन कराने पर सत्वर गुण प्रगट होता है।

अति शीत लग जाने पर देहके विविध संधि स्थानोंमें जकड़ाहट आजाती है। योग्य उपचार न होने पर कुछ दिनके पश्चात् कलायखञ्ज (Loco Motor ataxia) उपस्थित होता है। फिर चलनेमें अति कष्ट होना, वायु सहन न होना, पेशाव गँदला और थोड़ा होना, कोष्ठ वद्धता, घवराहट आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उस रोग पर इस सहचरादि तैलका पान कराया जाता है। जिससे कीटाणु नाश और आम विपका नाश होता है। एवं दिनमें २ बार आरोग्यवर्द्धनीका सेवन करानेसे पचनेन्द्रिय संस्था निर्दोष होकर रोगवृद्धिमें सहायक विपकी उत्पत्ति कर रोध होजाता है। इस तरह १-२ मास तक चिकित्सा करने पर रोगी स्वस्थ हो जाता है। कितनेक चिकित्सक पियावांसा, देवदारु और सोंठके क्वाथके साथ इस तैलका सेवन कराते हैं।

कम्परोग पर सहचरादि तैल, महायोगराज गुग्गुलु और महावातविध्वंसन, तीनों उपकारक हैं। किन्तु तीनोंका कार्य भिन्न भिन्न है। केवल वात विकृति हो, वातवाहिनियोंका स्तम्भ, शोष और आक्षेप हो तथा आम और कफका संसर्ग अधिक नहो और स्नेहन की आवश्यकता हो तो सहचरादि तैल देना चाहिये। अग्निमान्द्य और आम प्रकोप हो तो महायोग

राजगूगल और स्वेदनकी आवश्यकता हो तो महावातविध्वंसन रस दिया जाता है।

मानसिक आघात पहुँचनेसे वात प्रकोप बढजाता है, फिर किसी किसीको मस्तिष्कमें वात संचय होता है, निद्रानाश, बेचैनी कण्ठमें शुष्कता, क्षुधानाश, थकावट, मनकी अस्थिरता मिर्च युक्त भोजन करने पर जिह्वा पर चटका लगना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उस रोग पर सहचरादि तैल १-१ माशेका सेवन सुबह और रात्रिको कराने, नस्यदेने तथा कान में डालते रहनेसे विकार शमन होजाता है। यदि ऐसे आघातसे अर्दित रोग हो गया हो, एक ओर का नेत्र बन्द न होता हो, बोलने, थूंकने और निगलने आदि में कष्ट पहुंचता हो, तो वे सब लक्षण भी दूर हो जाते हैं।

२७. हिमसागर तैल।

बनावट—शतावरका रस, विदारीकन्दका रस, पक्के पेठेका रस, आंवलोंका स्वरस, सेमलकी जड़का क्वाथ, गोखरू पञ्चाङ्ग का क्वाथ, नारियलका जल, तिल तैल, केलेके खम्भेका रस, ये ९ औषधियाँ २-२ सेर और दूध ८ सेर लेवें। कल्क के लिये रक्तचंदन, तगर, कूठ, मजीठ, धूप सरल, अगर, जटामांसी, मुरा (अभावमें तगर या कपूर कचरी) छरीला, मुलहठी, देवदारु, नख, हरड़, पूतिका (जुन्दे वेदस्तर), पोईके पत्ते, कुन्दरु, नलिका (अभावमें महारुख की छाल), शतावर, लोध, नागर मोथा, दालचीनी, छोटी इलायचीके दाने, तेजपात, नागकेशर, लौंग, जावित्री, सौंफ, कचूर, सफेद, चन्दन, गठिवन और कपूर, इन ३१ औषधियोंको १।-१। तोले लेवें। इन सब ओषधियोंको पीस-कल्क कर मिला मन्दाग्नि पर तैलसिद्ध करें (भै० र०)

उपयोग—यह तैल उच्चस्थान या वायुके वेगसे गिरने वाले, हाथी, घोड़ा, ऊँट और मकान परसे गिरने वाले, लँगड़े,

पीठसे लाचार बने हुए, एक अङ्ग जिनका सूख गया हो, सब अङ्ग जिनके सूख गये हों, क्षत रोगी, क्षीणवीर्य वाले, अत्यन्त बढे हुए क्षयरोगी, हनुस्तम्भ रोगी, मन्यास्तम्भ वाले, दुर्बल, शोषरोगी, जिह्वा जिनकी बढगई हो, मिन्मिनाकर बोलनेवाले, दाहसे अत्यन्त पीड़ित, क्षीणदेह वाले और वातरोगसे पीड़ित, इन सबके लिये अतिहितावह है। जो रोग वातप्रकोपसे या पित्तप्रकोपसे उत्पन्न हुए हों, मस्तिष्कमें उत्पन्नविकार और शाखाश्रित रोगहों, ये सब इस तैलके प्रभाव से प्रशमन होजाते हैं।

जब वात रोगमें हाथ पैरोंमें दाह या सारे शरीरमें दाह हो, तब यह अति उपकारक होता है।

२८. पञ्चगुण तैल।

विधि—तिल तैल १ मन को कड़ाहीमें डाल गरम कर फिर शीतल करें। पश्चात् गूगल, राल, गंधाबिरोजा, शिलारस, मोम, आंवला, बहेड़ा, और हरड़, ये ८ ओषधियां १।-१। सेर; नीमके पान और निर्गण्डी (३॥-३॥ सेर लें। इनमें से त्रिफला, नीम और निर्गुण्डी) का कल्क करें। (फिर कल्क, तैल और ४ मन जल मिलाकर मन्दाग्नि पर पाक करें)। तैलसिद्ध होने पर कड़ाही को उतार, तुरन्त तैलको छान १। सेर कपूरका चूर्ण मिला देवें। (कविराज प्रतापसिंहजी)

उपयोग—यह तैल सब प्रकारके वेदना प्रधान वातव्याधि पर मालिश करनेके लिये अति लाभदायक है। बहुत वर्षोंका कविराजजी का परीक्षित है। चोट लगने पर इसके प्रयोगसे दर्द और शोथ दूर होजाते हैं।

इस तैलका उपयोग व्रणरोपणार्थ और पीड़ा शमनार्थ, दो प्रकारसे होता है। अतः हम इस तैल में से, आधा तैल पीड़ा-

शमनार्थ अलग निकाल कर उसमें (शीतल तैलमें) नीलगिरी तैल और तार्पिन तैल १।-१। सेर मिला लेते हैं। नीलगिरी (यूकेलिप्टस् ऑयल) और तार्पिन मिलानेसे इस तैल की पीड़ा शामक शक्ति की वृद्धि हो जाती है।

नोट—इस पीड़ाशामक तेलके बनाने में २० सेर तेलमें ५ तोले अफीम बारीक पीसकर डाल देवें और बर्तनको बंद कर १५ दिन तक धूपमें रख कर बादमें उपयोगमें लेवें तो पीडा शामक शक्ति बहुत बढ जाती है। व्रण रोपणार्थ इसका उपयोग करनेके पहले व्रणोंको नीमके क्वाथसे या त्रिफलाके क्वाथसे धो, पोंछ कर फिर इस तैलमें भिगोई हुई पट्टी रख, ऊपर नागरवेलका पान रख कर बांध देते हैं। (यह अनुभूत है)

२९. रसोनसुरा।

विधि—तेज पुरानी शराब ५ सेर, छिल्के और अङ्कुरको निकाल, पीस कर कल्क की हुई लहशुन २॥ सेर तथा पीपल, पीपलामूल, जीरा, मीठा कूठ, चित्रकमूल, सोंठ, कालीमिर्च और चव्य, इन ८ औषधियोंका चूर्ण १।-१। तोला लें। इन सबको मिलाकर अमृतबानमें भर दें। एक सप्ताहके पश्चात् छान कर बोतलों में भरलें। (च० द०)

मात्रा—इसमेंसे १ माशेसे १ तोले तक प्रकृति और अभ्यास के अनुसार जलके साथ देवें।

उपयोग—यह सुरा वातविकार, आमवात, कृमिरोग, कुष्ठ, क्षय, आनाह, गुल्म, अर्श, पाण्डु, प्लीहा और प्रमेह आदि को दूर करती है; तथा अग्निको प्रदीप्त करती है।

३०. वातशूलान्तक मर्दन।

बनावट—स्नान करने का साबुन ४ औंस, कपूर २ औंस,

अफीम १ औंस और तार्पिन तैल २४ औंस लें। इन सबको मिलालें।

उपयोग—इस वातशूलान्तक मर्दन की कटि शूल और इतर भागमें वात जनित वेदना पर मालिश करने से तत्काल पीड़ा शमन हो जाती है।

३१. वातशूलान्तक योग

(१) रेवाचीनी और कुंदरुको समभाग मिलाकर बारीक चूर्ण करें। इसमें से थोड़े चूर्णको जलमें मिला गरमकर संधिपीड़ा शूल, और संधिशोथपर लेप करनेसे पीड़ा सत्वर निवृत्त हो जाती है।

(२) शिलाजीत १ तोला, एलुआ ६ माशे, कपूर ३ माशे, अफीम १॥ माशे और एक अण्डेकी जर्दीको मिला निवायाकर लेप लगादेनेसे वात प्रकोपजनित अति भयंकर शूल, जीर्ण वेदना और सब प्रकारके दर्द दूर होते हैं।

पं० रोशनलाल जी शर्मा आयुर्वेदाचार्य

(३) कुन्दरू गोंद २० तोले, आमाहल्दी, एलवा, मेथी और हालों ५-५ तोले तथा सज्जीखार, हीरा बोल, मैदा लकड़ी और डीकामाली २॥-२॥ तोले मिला कूट कर चूर्ण करलेवें। आवश्यकता अनुसार इस चूर्णको जलके साथ पीस गरम कर चोटसे आई हुई सूजनपर मोटा मोटा लेप कर देवें। फिर रुई चिपका कर बांध देनेसे वेदना सहशोथ शमन होजाता है।

३२. पार्श्वशूल हर मलहम

बनावट—सरसोंका तैल २० तोले और देशी मोम ५ तोले मिलाकर गरम करें। फिर कड़ाहीको नीचे उतार हिंगुलका चूर्ण १। तोला मिलाकर लोहे की मूसलीसे घोटें। कुछ शीतल हो जाने

परतार्पिन तैल १० तोले, दालचीनीका और नीलगिरीका तैल २॥-२॥ तोले और जमालगोटाका तैल (Croton Oil) १ ड्राम डाल अच्छी तरह घोट लेनेसे लाल रंगका मलहम बन जाता है। उसे चौड़े मुँह की शीशी में भर लेवें।

उपयोग—इसमें से थोडा मलहम निकाल शूल स्थान पर मालिश करें। फिर ऊपर नमक या बालुका की पोटली से सेक करने से शूल शमन होजाता है।

सूचना—इसके हाथ आंखों को न लग जाय यह यह अवश्य सम्हालें।

३३. धनुर्वातहर योग।

विधि—काली तुलसी, ताजा लहशुन, अदरख, प्याज और पोदीनाको मिला कूट कर २-२ तोले स्वरस निकाल कर १-१ घण्टे पर ३ बार पिलाने से धनुर्वातका आक्षेप तुरन्त शमन हो जाता है।

ग ोघृत गरम कर इस स्वरस को छौंक दें, फिर ४-५ काली र से घृत मिश्रित यह स्वरस पिलाना यह मृगांक के समान आशु गुण कारी एवं वल दायक है। राधाकृष्ण वैद्य।

३४. संधिवात हर योग।

विधि—५ सेर या अधिक कटेली पञ्चाङ्गको कूट कर हांडी में भरें; और मुख पर कपड़ा बांध ऊपर औंधा भगोना रख सम्हाल पूर्वक सन्धि ः थानमें मुद्रा करें। फिर भगोना सह हांडी को लगभग पौनी जमीनमें दबावें। भगोने को नीचे और हांड़ी के तल भागको ऊपर रक्खें। फिर तीन घण्टे तक ऊपर अग्नि जलानेसे अर्क भगोने में गिरेगा। इस अर्कको छान कर बोतलमें भरलेवें। इसमें से १।-१। तोला (आध आध औंस)

अर्क दिनमें ३ समय पिलाते रहनेसे संधिवात की पीड़ा दूर होती है। उदरपीड़ा, वात प्रकोप, आफरा और कफ प्रकोपमें भी यह अर्क अच्छा लाभ पहुँचाता है।

३५. अर्दित हर योग।

विधि—उड़दके वड़े सरसोंके तेलमें वना मक्खनके साथ खिलाते रहने पर अति वढ़ा हुआ तीक्ष्ण अर्दित रोग भी एक सप्ताहमें शमन हो जाता है। नये रोग के लिये यह उत्तम उपाय है। रोग पुराना होने पर उतना लाभ नहीं पहुंचता। अत्यधिक वड़े खानेसे वद्धकोष्ठ होकर या अपाचित आम अन्त्रमें शेष रह कर नया उपद्रव उपस्थित करता है। अतः अन्त्रको पहले एरण्ड तैल से शुद्ध कर लेना चाहिये और पचन शक्तिके अनुसार वड़े खाने चाहिये। एवं वड़े पचन होकर फिर क्षुधा न लगे, तब तक कुछ भी नहीं खाना चाहिये।

३६. सूची वूटी मर्दन।

विधि—लिक्विड एक्स ट्रेक्ट वेलेडोना १० औंस, कपूर १ औंस, वाष्पजल २ औंस और आल्कोहोल २० औंस तक लेवें। पहले कपूरको ६ औंस आल्कोहोल में द्रव करें। फिर सवको मिलाकर २० औंस लिनिमेण्ट (मर्दन) तैयार करें। इसे २४ घण्टे रख कर फिर छान लेवें।

उपयोग—इसमर्दनका उपयोग वेदनाके निवारणार्थ किया जाता है। वातज शूल और वेदना युक्त रोगोंमें यह महोपकारक औषध है। गृध्रसी आदि वातरोगों पर मर्दन करनेसे वेदनाको दूर कर देता है। हृदयशूल होने पर हृदय पर भी मर्दन किया जाता है। राजयक्ष्मा रोगमें वक्षः प्रदेश की मांस पेशियोंमें उग्रता तथा त्वचामें स्पर्श शक्ति की अधिकता होने पर इस मर्दन

का उपयोग किया जाता है। एवं प्लास्तर भी लगाया जाता है। स्तनोंमें वेदना होने पर इसकी मालिश करने से सत्वर लाभ हो जाता है।

३७. तार्पिन मर्दन।

तार्पिन तैल ६५ औंस, कपूर ५ औंस, मृदु साबुन (Soft soap) ७॥ औंस और बाष्प जल २६ औंस (१०० भागमें कम हो उतना) लें। तार्पिन तैलमें कपूर मिलावें। साबूनको जलमें मिलावें। फिर दोनोंको मिला घोटकर मर्दन बना लेवें।

उपयोग—यह मर्दन प्रत्युग्रता साधक और चर्मप्रदाहक (rubefacients) है। चिरकारी वातरोग, गृध्रसीशूल, कटिशूल, संधिवात और वातरक्तमें इस मर्दनका उपयोग होता है। सूतिका रोगमें आक्षेप आने पर भी इस की मालिश करायी जाती है।

आम वात प्रकरण।

१. बृहत् सिंहनाद गुग्गुलु।

बनावट—त्रिफलाके क्वाथसे शुद्ध किया हुआ गूगल ६४ तोलेको सरसोंका तैल मिला मिला कर कूटें। कूट कूट कर तैल ६४ तोले मिला देवें। फिर सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला नागरमोथा, वायविडंग, देवदारु, गिलोय, चित्रकमूल, निसोत, दन्ती मूल, चव्य, जिमीकंद, मानकन्द, शुद्धपारद और शुद्ध गन्धक, इन १८ औषधियोंका कपड़छन चूर्ण ४-४ तोले तथा ५ तोले जमालगोटेके बीजोंकी शुद्ध मींगीका चूर्ण मिला कूट त्रिफला क्वाथ में १२ घण्टे खरल कर २-२ रत्ती की गोलियां बना लेवें।

वक्तव्य—*मूलपाठ म १००० जमाल गोटे की मींगी लिखी है। उतनी वर्तमानमें सहन नहीं हो सकेगी, ऐसा मान कर मात्रा कम की है। पारद और गन्धक को मिला कज्जली कर फिर प्रयोगमें डालना चाहिये। (भै० र० के आधार से)*

मात्रा—१ से ४ गोली प्रातःकाल निवाये जलके साथ देवें।

उपयोग—इस रसायनके सेवनसे कोष्ठ बद्धता सह आम-वात दूर होता है। आमवातके दोषको जलानेके लिये बहुत लाभदायक औषधि है। तीव्रविकारमें यह विशेष हितकारक है। जीर्ण विकारमें कोष्ठ बद्धता वाले रोगियोंको कम मात्रामें दिनमें एक बार कुछ दिनों तक देते रहना चाहिये।

२. आमवातेश्वरोरस।

विधि—शुद्धगन्धक २ तोले, ताम्रभस्म २ तोले, शुद्धपारद १ तोला, लोहभस्म १ तोला लें। पहले कज्जली बनाकर फिर

भस्म मिलावें। पश्चात् क्रमशः एरंड पत्रोंके रसकी ७ भावना दें। पश्चात् पञ्चकोल (पीपल, पीपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ) के क्वाथकी २० भावना देकर सूर्यके तापमें बार बार सुखावें। फिर गिलोय स्वरसमें १० भावना दें। तत्पश्चात् सब चूर्णके समान सोहागेका फूला, सोहागेसे आधा विड़नमक (या नौसादर) विड़नमकके समान काली मिर्च, और उसके बराबर इमलीकाक्षार, दन्तीमूल १ तोला, तथा सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला और लौंग, ये ७ औषधियां ६-६ माशे मिलाकर मर्दन कर लेवें। (भै० र०)

मात्रा—२ से ४ रत्ती दिनमें दोवार २-३ माशे मक्खन या घी में मिलाकर देवें। फिर ऊपर निगुण्डीका रस या सोंठ का या एरंण्डमूलका क्वाथ पिलावें।

स्वानुभव—आम वात रोगमें महारास्नादि क्वाथ से आश्चर्यप्रद प्रभाव देखा गया है। अदरख स्वरसमें इसकी १, २ रत्ती की मात्रा लेकर ऊपर क्वाथ पिलाना। मूत्र की कमी होने पर महारास्नादि कषायमें २ से ६ रत्ती तक यवक्षार मिलाकर पिलाने से ३-४ मात्रा में ही लाभ होता है। राधाकृष्ण वैद्य।

अनुपान—अजीर्णमें नीबू रस या सैंधानमक मिश्रित मट्ठा गुल्ममें सज्जीखार और घी अथवा सुहिंजनेकी छालका स्वरस; आध्मानमें भूनीहींग और घी; उदररोग और शोथ पर गोमूत्र या कुटकीका चूर्ण, मेद वृद्धि में शहद मिश्रित जल और पाण्डुरोगमें आंवले और पीपलका चूर्ण अनुपान रूपसे मिला दें। अथवा रोगनाशक और अनुपानकी योजना कर लेनी चाहिये। यह रसायन रोगनाशक अनुपानसे सर्वथा हितकारी है।

उपयोग—यह आमवातेश्वर रस विष्णु भगवान् ने निर्माण

किन्तु आमवात की तीव्रावस्था में ज्वर १०२° से १०६° डिग्री तक रहता हो, बिच्छू के काटने के समान स्थान स्थान पर पीड़ा होती हो, सांधों सांधों में भयंकर दर्द होता हो, प्रस्वेद अधिक आता हो, पेशाब पीले लाल रंगका और बहुत कम होता हो, तथा ज्वर वृद्धि जन्य प्रलाप आदि लक्षण उपस्थित हुए हो, तो ऐसी अवस्थामें हो सके, उतने अधिक अंशमें विषको बाहर फेंकने और जलाने वाली तथा पीड़ा शामक गुण युक्त विरेचन प्रधान ओषधि देनी चाहिये। ऐसी तीव्रावस्था में आमवात प्रमथिनि (रसतंत्रसार प्रथम खण्ड) निसोतके क्वाथके साथ दी जाती है।

उत्तान विकार नष्ट होजाने के पश्चात् संधिस्थानों में लीन दोष को जलाने वाली तथा नूतन दोषोत्त्पत्ति को रोकने वाली अग्निप्रदीपक ओषधि की आवश्यकता होने पर यह रस हित-कारक है। अतः यह आमवातेश्वर रस जीर्णावस्था में अधिक उपयोगी होता है। इस रसायन का कार्य आमाशय और अन्त्र में प्रमुख रूपसे तथा रक्त और रक्त वाहिनियों पर गौण रूप से होता है।

अग्निमन्द होने पर उत्पन्न विविध प्रकार के रोग अजीर्ण, गुल्म, आध्मान, उदर रोग, शोथ मेद वृद्धि, पाण्डु, आदि सब अग्निमान्द्य रूप हेतु नष्ट होने से निवृत्त हो जाते हैं। अतः उन सब रोगों पर रोगानुसार अनुपान के साथ आमवातेश्वर का सेवन कराने से लाभ होता है।

३. वात गजेन्द्रसिंह रस।

विधि—अभ्रक भस्म, लोह भस्म, शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक ताम्रभस्म, नागभस्म, सोहागे का फूला, दूध से भली भांति शुद्ध किया हुआ वच्छनाग, सैंधानमक, लौंग, भूनी हींग और जाय-फल, ये १२ ओषधियां १-१ तोला तथा त्रिसुगन्ध (दालचीनी

तेजपात और छोटी इलायची), त्रिफला (हरड़, बहेड़ा, आँवला) और जीरा, ये ७ ओपधियां ६-६ माशे लें। पहले पारद गन्धक मिलाकर कज्जली करें। फिर भस्में, वच्छनाग, सोहागेका फूला और शेष ओपधियोंका कपड़छान चूर्ण क्रमशः मिला घीकुंवारके रस में ३ दिन खरल करके १-१ रत्ती की गोलियां बना लेवें।

(भैं० र०)

मात्रा—१ से २ गोली दिन में दोबार दूध या रोगानुसार अनुपान के साथ देवें।

उपयोग—यह वात गजेन्द्रसिंह समस्त प्रकार के वातरोग के नाशके निमित्त कहा है। यह रसायन ८० प्रकार के वात रोगों, ४० प्रकार के पित्त रोगों तथा २० प्रकार के श्लेष्म रोगों को नष्ट करता है। अभिघातजन्य क्षीणता, अर्धाङ्ग में आई हुई क्षीणता, किसी व्याधिसे उत्पन्न अशक्ति, वृद्धावस्था के हेतुसे आई हुई निर्बलता अधिक स्त्री समागम जनित दुर्बलता, इन सबको यह वातगजेन्द्र सिंह दूर करता है। क्षीणेन्द्रिय, नष्टवीर्य और अग्निमान्द्यवाले रोगियोंके लिये यह रस वृष्य, ओजवर्धक बल्य और रसायन रूप है। खञ्जरोगी, पङ्गु, कुब्ज और कृशरोगियोंके मांसको बढ़ाता है। स्वस्थ मनुष्यको यह रसायन सुखदेता है; अर्थात् मानसिक प्रसन्नता प्रदान करता है। वयका ह्रास नहीं होने देता, और रोगोत्पत्तिका भय नहीं रहता। एवं यह रसायन रोगी मनुष्योंको रोग से मुक्त कर देता है। यह वातगजेन्द्रसिंह सम्पूर्ण रोगों का विनाशक है।

यह रसायन वातप्रकोप शामक, अन्त्रशोधक, शक्तिवर्द्धक और अग्नि प्रदीपक है। महावात विध्वंसन और इस वातगजेन्द्रसिंह की मुख्य ओपधियां समान हैं। इसमें वच्छनाग कम मिलाया है। और भावना अन्त्रदोष शोधन कार्य के निमित्त केवल घी

कुंवारकी दी है। इस हेतु से महावातविध्वंसन तथा इसके कार्य और अधिकार में अन्तर हो जाता है।

महा वात विध्वंसन का कार्य वातनाड़ियों और रक्तवाहिनियों पर प्रधान रूप से होता है; तथा उसमें वच्छनागका परिमाण अत्यधिक होने से उसका उपयोग निर्बल हृदयवालों के लिये आमवात पर नहीं होता। कारण आमवात में प्राय: हृदय निर्बल होजाता है; और वच्छनाग भी हृदय की शिथिलता लाता है। यह दोष इस रसायन में नहीं है। इस रसायन में वच्छनाग वातविध्वंसन की अपेक्षा अति न्यून मात्रा में है; तथा लोहभस्म, अभ्रकभस्म, आदि हृदय पौष्टिक औषधियों का मिश्रण होने से यह आमवातपर निर्भयतापूर्वक व्यवहृत होता है। मूल ग्रन्थकार ने इस रसायन को आमवाताधिकार में ही लिखा है।

आमवात की तीव्रावस्था में ज्वर रहता है कभी कभी ज्वर १०२° से १०६° डिग्री तक बढ़ जाता है। ऐसे समय पर हृदय को बाधा न पहुँचाते हुए रस-रक्तादि धातुओं में लीनमल को जलाकर ज्वरको उतारना चाहिये; और औषधि विरेचन के साथ देनी चाहिये। तीव्रप्रकोप में दोष उत्तान रहने से उसे विरेचन द्वारा बाहर निकालना पड़ता है। अत: ऐसी अवस्था में इसरसायन के साथ सोंठके क्वाथसह एरण्ड तैल या निसोत का क्वाथ देना चाहिये। एवं रोगी को केवल दूध पर रखना चाहिये।

जीर्ण विकारमें रस-रक्तादि धातुओं के भीतर लीन हुए आमविष को जला कर रक्तप्रसादन करना और पचन क्रियाको बढ़ाना, ये दो कार्य मुख्य रहते हैं। ये दो कार्य होने पर विकार दूर होता है; और शक्ति बढ़ जाती है। ग्रन्थकार ने इस अवस्थामें अनुपान रूप से दूध देने का कहा है। किन्तु कोष्ठ बद्धता रहती हो; तो त्रिफला क्वाथ या अन्य अनुलोमन और पाचन अनुपान की योजना करनी चाहिये।

करता है. वेदना को तत्काल दबाता है। एवं शक्ति को बढ़ाता है। वच्छनागमें उष्ण, वात वाहिनियोंके लिये साक्षात् सम्बन्धसे शामक, धमनियोंके लिये परम्परा गत शामक, वेदना निवारक, स्पर्शहारक, स्वेदल और मूत्रल गुण हैं। यदि इसकी मात्रा शक्ति से अधिक होजाय, तो हृदय और रक्त वाहिनियों को हानि पहुँचाता है। अतः वच्छनाग मिश्रित औषधियोंकी मात्रा सर्वदा कम देनी चाहिये।

तीव्र आमवातमें आमवात प्रमथिनि वटी भी हितकारक है, उसमें शोरा और अर्क मूलत्वक् आनेसे रक्तस्थ विषको बाहर निकालनेमें विशेष हितकारक है, तथापि ज्वरकी प्रधानता होने पर इस रसायन में ज्वरघ्न औषध (वच्छनाग) की योग्य मात्रा और योग्य मिश्रण सहयोजनाकी है। अतः ज्वरको दूर करने के लिये इसका उपयोग किया जाता है।

४ वातान्तक बाम

विधि—पीपरमेण्टके फूल ६ माशे, विण्टर ग्रीन तेल १॥ ड्राम, वेसलीन ४७ तोले, मोम ६ तोले लें। पहले पीपरमेण्ट को और विण्टर ग्रीनको मिलाकर पृथक् रखदें। बादमें वेसलीन और मोमको कलईदार कड़ाहीमें पिघलाकर उनमें मिलादें। फिर किञ्चित् उष्णको ही शीशियोंमें भर लेवें।

उपयोग—यह वातान्तक बाम किसीभी स्थानका आमवातज शोथ, तीक्ष्ण पीड़ा, वातशूल, तीव्र शिर दर्द, किसी जन्तुके काटनेसे उत्पन्न शोथ एवं भीतरसे विकारसे उत्पन्न संधाओं की सूजन और अकड़ाहट इन सब पर सत्वर लाभ पहुँचाता है। इसकी साधारण १-२ मिनिट तक मालिश करनेसे त्वचा पर चुनचुनाहट होती है और थोड़ेही समयमें प्रस्वेद आकर विकार शमन होजाता है।

परिमाण घट जाना और लाल होजाना, शारीरिक और मानसिक शक्तिका ह्रास, स्वभावमें उग्रता, किसी किसीको श्वासकृच्छ्रता अथवा हृदयकम्प, निद्रा नाश होना और शिर दर्द आदि लक्षण प्रकाशित होते हैं। फिर चर्मविकार होता है। पश्चात् वातरक्तकी स्पष्ट प्रतीति होती है।

आशुकारी रोगमें रात्रिको अंगुलियोंकी सन्धियोंमें अति दाह होता है। एवं रोगजीर्ण होने पर संधिस्थल विकृत हो जाते हैं। फिर अनेक स्फोटकोंकी उत्पत्ति होती है। उनमें सुई चुभानेके समान पीड़ा होती है; किन्तु उनमें पूय नहीं होता। इसके अतिरिक्त दृष्टिमान्द्य, तृषा, ज्वर, पंगुता, विसर्प, शिराओंका संकोच, प्रलाप बेहोशी और मूर्च्छा आदि लक्षण उपस्थित होते हैं।

अनेक बार शराबियोंको वातरक्त हो जाता है; तब दाह, प्यास, निद्रानाश, व्याकुलता आदि लक्षण प्रबल होते हैं। शिर दर्द और प्रलाप भी होते हैं। उनके लिये यह रसायन अमृतके सदृश उपकारक है।

इस तरह इतर कारणसे उत्पन्न वातरक्तमें भी पित्तप्रकोपकी प्रधानता हो तो वातरक्तान्तक लोहका सेवन कराना चाहिये। कब्ज अधिक हो, तो उसे दूर करनेके लिये हरड़की मात्रा बढ़ा देनी चाहिये; अथवा छोटी हरड़ या इतर विरेचक औषधिकी योजना करनी चाहिये।

सब प्रकारके वातरक्तके हेतुसे सन्धिस्थानोंके भीतर सज्जीखारके समान क्षार-सोडियम यूरेट्स (Sodium Urates) का प्रवेश होजाता है। एवं रक्तमें भी युरिक एसिड की वृद्धि होती जाती है। फिर मूत्रके साथ कुछ कुछ अंशमें निकलता रहता है। इस क्षारको बाहर निकालने और नयी उत्पत्तिको रोकनेकी आवश्यकता रहती है। इन दोनों कार्योंकी सिद्धि इस रसायनके सेवनसे होजाती है। तीव्रावस्थामें क्षारको बाहर निकालनेके

उद्देश्यसे तीव्र विरेचन और मूत्रल यवक्षार आदि अनुपान की योजना करने से क्षार सरलतापूर्वक बाहर निकल जाता है। जिससे वेदनाका ह्रास होजाता है। यदि चिरकारी अवस्था है, तो हरड़ आदि सारक और शिलाजतुके समान सौम्य मूत्रल गुण युक्त अनुपान विशेष हितकारक माना जाता है।

इस लोहका शान्तिपूर्वक सेवन किया जाय, तो वातरक्त रोग और इसके सब उपद्रव निःसंदेह नष्ट होजाते हैं। एवं इसके सेवनसे रक्तका प्रसादन होनेसे त्रिविधकुष्ठ, उपदंश और प्रमेह आदि व्याधियोंका भी निवारण हो जाता है। पित्तज, वातज, कफज, द्वन्द्वज आदि सब प्रकारके नये कुष्ठ रोग परभी यह लोह हितावह है।

२. वातरक्तान्तकरस

विधि—शुद्ध गन्धक, शुद्ध पारद, लोह भस्म, शुद्ध मैनसिल, शुद्धहरताल, अभ्रकभस्म, शुद्ध शिलाजीत, शुद्धगूगल, इन ८ औषधियों को १-१ तोला लें। पहले कज्जली करें। फिर भस्म, मैनसिल, हरताल, शिलाजीत गूगल आदि क्रमशः मिलावें। तत्पश्चात् सफेद कोयल, दारुहल्दी बावची, चित्रकमूल, पुनर्नवा, देवदारु, हरड़, बहेड़ा, आंवला, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल और बायविडङ्ग इन १३ औषधियोंका कपड़छन चूर्ण १-१ तोला मिला त्रिफला और भांगरेके रस में ३-३ दिन खरल कर १-१ रत्ती की गोलियां बनालेवें। र० सा० सं०

वक्तव्य—रसरत्नाकार और भैषज्यरत्नावली कारने बावची के स्थान पर समुद्रफेन मिलाया है। समुद्र फेनको अपेक्षा बावची विशेष हितकर मानी जायगी। अतः हमने बावची मिलाई है। लेकिन छोटी बावची नहीं, किन्तु कलौंजीके समान काली और बड़ी जाति होती है, अर्थात् जिसको माली बावची कहते है।

मात्रा—२ से ४ गोली प्रातः काल लेवें, ऊपर नीमके पत्र पुष्प और अन्तर छालका चूर्ण ३ माशेको घृत में मिलाकर चाटलेवें।

उपयोग—यह वातरक्तान्तकरस सब प्रकार के वात विकार तथा साध्य और असाध्य वातरक्त, जो महाघोर और गम्भरी हों, जिसका विषसम्पूर्ण शरीर में फैलगया हो, और विविध उपद्रव युक्त हो, उन सबको यह रसायन नष्ट कर देता है।

यह रसायन विशेषतः कफप्रधान और द्वन्द्वज वात रक्त पर हितावह है। पित्त प्रकोप अधिक होने पर इसका उपयोग नहीं करना चाहिये।

सूचना—वातरक्त रोग से पीड़ितों को मांस सेवन का आग्रह पूर्वक निषेध करना चाहिये। अर्थात् सर्वथा निषेध करना चाहिये।

वज्र गुग्गुलु

बनावट—सोंठ, काली मिर्च, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, दन्तीमूल, चित्रकमूल, निसोत, कचूर, वायविडङ्ग, नागरमोथा हल्दी, बावची, इन्द्रजौ, बच, अंकोल की छाल, कूठ और अमलतास की छाल, ये १६ ओषधियां ४-४ तोले, शुद्ध गूगल ७६ तोले, भिलावे का तैल ८ तोले, ताम्रभस्म और तालभस्म ४-४ तोले लें। गूगल को घी मिलाकर कूटें, फिर भिलावेंका तैल मिला लेवें। पश्चात् शेष काष्ठादि ओषधियों का कपड़ छान चूर्ण कूट कर मिलादेवें। (र० र०)

मात्रा—१ से १॥ माशा तक दिन में दो बार गोघृत के साथ देवें।

उपयोग—यह गूगल भयंकर बढ़े हुए अनेक उपद्रवों युक्त

वातरक्तको भी दूर कर देता है; तथा श्लीपद, शोथ, शूल, प्रमेह मेद, कण्ठ के रोग, प्लीहा, गुल्म, उदर रोग, अष्ठीला, कास, श्वास, अरुचि, जीर्ण ज्वर, आनाह आदिको नष्ट करता है। यह गूगल बल, वर्ण और अग्नि को बढ़ाता है। एवं दुष्ट संग्रहणी, पाण्डु, कामला और हलीमक को भी निवृत करता है।

इस गूगल में अन्त्र, त्वचा और रक्त के भीतर संगृहीत मल, आम और विपको बाहर निकालने, नयी उत्पत्ति को रोकने और रक्त प्रसादन करने, तीनों कार्य करनेवाले द्रव्य मिलाये हैं। जिससे जिन रोगियों की पंच कर्मसे शुद्धि न हो सके, उनको बिना शुद्धि कराये इस गूगलका सेवन कराने से विविध उपद्रव युक्त जीर्ण वातरक्त भी दूर हो जाता है। यह गूगल आम, मेद और कफ प्रधान रोगी के लिये विशेप अनुकूलरहता है। पित्त प्रधान प्रकृति वालों और शुष्क देह वालों को नहीं देना चाहिये।

वक्तव्य—*भिलावेका तैल पाताल-यंत्रसे निकालना चाहिये। इस गूगल के सेवन काल में तैल वाले पदार्थ पथ्य माने जाते हैं। यादि मात्रा बढ़ाने पर या औपध सहन न होने से कण्डू उत्पन्न हो जाय तो थोड़े दिनों के लिये औषध बन्द करें और तैल प्रधान फल बादाम, चिरोंजी, काजू, नारियल का गिरि आदि का सेवन करें और नारियल के तैल की मालिश करें। कण्डू शमन होने पर कम मात्रा म फिर से औषध सेवन का आरम्भ करें।*

इस प्रयोगमें ताम्र, ताल और भल्लातक तैल, तीन उग्र औषधि होने से पथ्य का पालन आग्रहपूर्वक करना चाहिये। गरम गरम भोजन, सूर्य और अग्नि का सेवन अधिक

मिर्च, खटाई जलचर जीवों का मांस, दही, शराब, स्त्रीसेवन, क्षार, तेज नमक और बैंगन आदि का त्याग करना चाहिये।

४. गुडूच्यादि लोह

बनावट—गिलोयसत्व, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, दालचीनी, तेजपात, छोटी इलायचीके दाने, ये सब १-१ तोला और लोहभस्म १० तोले लें। काष्ठादि औषधियों को कूट कर कपड़ छान चूर्ण करें। फिर सबको मिला गिलोयके स्वरस के साथ मर्दन कर लेवें। (र० सा० सं०)

मात्रा—४ से ६ रत्ती तक दिन में दो बार २-२ तोले गिलोय के क्वाथके साथ दें।

उपयोग—यह लोह अति बढ़े हुए वातरक्तको दाह आदि विकारों सह सत्वर नष्ट कर देता है। शुष्क, निर्बल और पित्त-प्रधान प्रकृतिवालोंके लिये यह विशेष अनुकूल है।

५. सिंहास्यादि क्वाथ

बनावट—अडूसेकी जड़, लघुपञ्चमूलकी पाँचों औषधियाँ, गिलोय, एरण्डमूल और गोखरू, इन ९ औषधियोंको समभाग मिलाकर जौ कूट चूर्ण करें। (भै० र०)

मात्रा—४-४ तोलेका क्वाथकर एरण्ड तैल २-२ तोले, भूनी हींग १ रत्ती और ४ रत्ती सैंधा नमक मिलाकर प्रातःकाल पिलाते रहें।

उपयोग—इस क्वाथके सेवनसे वातरक्त रोग शमन होजाता है। एवं आमवात, कटिशूल, मल-मूत्रका विबंध और अति बढ़ा हुआ अन्त्र विकार दूर होता है।

और दुष्ट औषधिकी उग्रता, दोनों थोड़े ही दिनोंमें शमन होजाते हैं।

७. अमृताघृत।

विधि—गिलोय ४०० तोलेको २०४८ तोले जलमें मिलाकर चतुर्थांश क्वाथ करें। फिर छान, गिलोयका कल्क ३२ तोले, २५६ तोले दूध और १२८ तोले घी मिलाकर मंदाग्नि पर सिद्ध करें।

मात्रा—१-१ तोला दिनमें २ बार। (शा० सं०)

उपयोग—यह घृत उत्तान (त्वचागत) वातरक्त और अवगाढ़ (मांस आदि धातुओं में लीन), वातरक्त सबका नाश करता है। वातरक्तमें पित्तकी प्रधानता हो, मंदज्वर, दाह, शोष, शुष्क-कास, प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र आदि लक्षण हों, उस पर यह हितकारक है।

८. शतावरी घृत

विधि—शतावरका कल्क ३२ तोले, शतावरका रस, दूध और गौघृत १२८-१२८ तोले मिला मंदाग्नि पर सिद्ध करें (नि० र०)।

मात्रा—१-१ तोला दिनमें दोबार भोजनके प्रारम्भ में।

उपयोग—यह घृत वातरक्त नाशक उत्तम योग है। पित्तवात प्रधान लक्षणशूल, अम्लपित्त, दाह, रक्तविकार, हृदयकी निर्बलता सहवातरक्तमें यह व्यवहृत होता है।

९. महारुद्र तैल।

बनावट—पुनर्नवा, हल्दी, नीमकी अन्तर छाल, बैंगन, अनार फलकी, छाल, बड़ी कटेली, छोटी कटेली, दुर्गन्ध करञ्ज की जड़, अडूसेकी जड़, निगुण्डीके पान, परवलके पत्ते धतूरा का मूल, अपामार्गका मूल, जयन्ती (चमेली) की जड़, दन्तीमूल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, ये १८ औषधियां ४-४ तोले अशुद्ध वच्छ-नाग, १६ तोले, सोंठ, मिर्च, पीपल २४-२४ तोले मिलाकर कल्क, करें। फिर कल्क, गिलोयका स्वरस या क्वाथ ५१२ तोले,

सरसोंका तैल, जल और वासापत्रका स्वरस २५६-२५६ तोले मिला विधिपूर्वक तैलको सिद्ध करें। (भै० र०)

उपयोग—इस तैलकी मालिश करनेसे नाना दोषयुक्त वात-रक्त और १८ प्रकारके कुष्ठ शीघ्र दूर होकर वर्ण और अग्निकी वृद्धि होती है, तथा कृमि, दुष्टव्रण, दाह, कण्डू, प्रस्वेद न आना और अति प्रस्वेद आना आदि विकार भी नष्ट होते हैं।

१० विषतिन्दुक तैल

बनावट—कुचिला २५६ तोलेको कूट १६ गुने जलमें मिला कर उबालें। चतुर्थांश जल शेष रहने पर उतार डंडेसे खूब मसल कर छान लेवें। फिर सुहिंजनेका छालका स्वरस (अभावमें क्वाथ) बड़हर के मूलका क्वाथ, काले धतूरेके पत्तोंका रस, वरुणके पानोंका रस, चित्रकके पानोंका रस, निर्गुण्डी के पत्तोंका रस, थूहरके पत्तोंका रस ये सब २५६-२५६ असगन्धका क्वाथ, वैजयन्ती (श्वेतजयन्ती-चमेली) केपत्तों का तोले मिलावें। एवं लहशुन धूपसरल मुलहठी, कूठ, सैंधानमक, सांभर नमक चित्रकमूल, हल्दी और पीपल, इन ६ औषधियोंका कल्क ६४ तोले और तिलोंका तैल २५६ तोले मिलाकर तैल सिद्ध करें। (भै० र०)

उपयोग—यह तैल अत्यन्त भयङ्कर और असाध्य वातरोगों को दूर करता है। इस तैलको प्रतिदिन मर्दन करनेसे सुप्तवात १८ प्रकारके कुष्ठ, दोनों प्रकारके वातरक्त, देहकी विवर्णता और त्वचाके सब प्रकारके विकार जल्दी नष्ट होजाते हैं।

जब त्वचामें शून्यता आजाती है सुई चुभाने पर वेदना नहीं होती, ऐसे वातरोग, वातरक्त और शून्यकुष्ठमें मर्दन केलिये इस तैलका प्रयोग किया जाता है।

२१ शूलरोग प्रकरण।

१. नारिकेल लवण।

बनावट—जल भरे हुए पक्के नारियलके ऊपरसे थोड़े भाग को काट उसमें सैंधानमक भरें। फिर कटे हुए भागसे पुनः मुखको बन्द कर सारे नारियल पर कपड़ मिट्टी करें। कपड़ मिट्टी इस तरह सम्हाल पूर्वक करें कि, ऊपरका हिस्सा ऊपरको ही रहे। फिर सुखा, १० सेर गोवरी के भीतर गजपुटमें फूंक देवें। स्वाङ्ग-शीतल होने पर जले हुए खोपरे सह नमकको निकाल कर पीस लेवें। (भै० र०)

मात्रा—आधसे १ माशा तक दिनमें २ वार। परिणाम शूल में पीपलके चूर्णके साथ। अम्लपित्त पर नारियल के जलके साथ, तथा वृक्क शूलमें चन्दनासवके साथ देना चाहिये।

उपयोग—इस लवणके उपयोगसे परिणामशूल जनित पीड़ा दूर होती है। एवं अम्लपित्त रोगमें पित्तकी अम्लता और उग्रताका ह्रास होकर वमन कम होने लगती है। धीरे धीरे कुछ दिनों में पित्त (आमाशयरस) की विकृति दूर होकर अम्लपित्त रोग नष्ट हो जाता है।

वृक्क शूलका तीव्र प्रकोप शमन होने पर यह लवण दिनमें २ या ३ वार चन्दनासवके साथ देते रहने से कुछ दिनोंमें रक्तके भीतर रहे हुए अश्मरी उत्पादक द्रव्यका निवारण हो जाता है। नयी उत्पत्ति रुक जाती है। एवं (शर्करा और सिकता) टूटकर वृक्क शूलकी निवृत्ति हो जाती है। त्रिदोषज गुल्म रोगमें उदर में वेदना वारवार होती रहती है। गोला पत्थर के समान प्रतीत होता है. जो दबानेपर चारों ओर सरकता है, ऊपरमें दबाने पर वेदना होती है; गोलेके हेतुसे मलावरोध बना रहता है, कुछ कुछ

दिनोंके बाद उदरशूल बढ़ जाता है, उस समय उदर में दाह भी होता है। ऐसे लक्षण युक्त गुल्म पर यह नारिकेल लवण उत्तम औषध है। नारिकेल लवण, शंखभस्म और हिंग्वष्टक चूर्ण मिला नीबूके रसके साथ दिनमें ४-६ समय देते रहनेसे शूलसह गुल्म निवृत्त हो जाता है। मल शुद्धिके लिये रात्रि को २-२ माशे त्रिफला देते रहें।

२. धात्रीलोह।

विधि—आंवलेका चूर्ण ३२ तोले, लोहभस्म १६ तोले, मुलहठी का सत्व ८ तोले लें। तीनोंको मिला ७ दिन तक गिलोय के क्वाथकी भावना दे मर्दन कर सूर्यके ताप में सुखावें।

(र० र०)

मात्रा—४ रत्ती से १ माशा तक घी और शहद के साथ दिनमें २ या ३ बार लें। भोजनके आध घण्टे पहले लेनें से आमाशयके पित्तकी उग्रता और वात प्रकोप शमन होते हैं। भोजन के बीचमें लेने पर मलावरोध और अन्य दाह दूर होते हैं। भोजनके अन्तमें सेवन करने पर अन्नपान जनित दोष, जरत्पित, उदरशूल, परिणामशूल, आदि पर लाभप हुंचाता है।

उपयोग—यह लोह अम्लपित्त, परिणामशूल, पाण्डु, कामला रोग में हितावह है। कफ पित्त प्रकोपज व्याधियों पर इसका सेवन कराया जाता है। यह रक्त का प्रसादन करता है। जिससे चक्षु की देखने की शक्ति बढ़ जाती है तथा अकाल में शिर के बाल सफेद होते हों, तो वह रुक जाता है।

३ पार्श्वशूलहरयोग।

विधि—रससिंदूर १ तोला, अभ्रक भस्म २ तोले, और शृंगभस्म ६ तोले मिलाकर खरलकर लेवें। इसमेंसे ४-४ रत्ती गोघृत

और शहदके साथ २-२ घण्टे पर २-३ वार देने से पार्श्वशूल हृदयशूल और छातीमें होने वाली वेदना सब शान्त हो जाते हैं।

४. पित्ताशयशूलहरयोग।

विधि---तालमखाना पञ्चाङ्ग की राख से बनाया हुआ क्षार ४ से ८ रत्ती शीतल जलके साथ १-१।। घण्टे पर २-३ वार देने पर भयंकर शूल और वमन आदि लक्षणों पर पित्ताशयकी अश्मरी का नाश होता है। यह क्षार अश्मरी कण को पिघलाकर निकाल देता है। शूलशमन हो जाने पर यह क्षार दिनमें ३ वार घी के साथ कुछ दिनों तक देते रहनेसे पित्ताश्मरी की उत्पत्ति में प्रतिबन्ध होजाता है तथा पित्ताशयमें उत्पन्न अश्मरी गल जातीहै।

५. उदरशूलहरयोग।

(१) सुहिजनेंका गोंद १-२ माशे लेकर अग्नि पर फूला लेवें। फिर चूर्ण कर शक्कर मिलाकर खिला देनेसे तत्कालशूल नष्ट होजाता है। रोगी को शीतल जल या शीतल पेय नहीं देना चाहिये।

(२) नीलगिरीतैल ५ बूंद २-३ माशे शक्कर के साथ मिलाकर खिला देने से उदर शूल, उबाक, वमन, उदरवायु, अपचन, थोड़े-थोड़े दस्त लगना और हैजा आदि रोग दूर होजाते हैं। आवश्यकतानुसार १-१ घण्टे पर ३-४ वार यह तैल दिया जाता है।

२२ गुल्म रोग प्रकरण

१. नाराच रस ।

विधि—ताम्रभस्म, शुद्धपारद, शुद्धगन्धक, शुद्धा, जमालगोटा हरड़, बहेड़ा, आंवला, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल. इन १० औष-, धियों को समभाग लेवें। पहले पारद गन्धक की कज्जली करें। फिर ताम्रभस्म, जमालगोटा और शेष ओपधियों का कपड़छान चूर्ण मिलाकर मर्दन कर लेवें। (र० र०)

मात्रा—२ से ४ रत्ती प्रातःकाल सोहागे के फूले और शहद के साथ दें। ऊपर निवाया जल पिलावें।

उपयोग—यह रसायन तीव्र विरेचक है। गुल्म और उदर रोग दूर करने में अतिहितावह है। जब आमाशय की पचन क्रिया मन्द होकर आम और कफकी वृद्धि होगई हो, यकृत्पित्त का स्राव बहुत कम होता हो, इस हेतुसे कफ प्रधान गुल्मकी उत्पत्ति हुई हो. या कफोदर की प्राप्ति हुई हो तब इस रसायन के सेवन से बड़े बड़े जल के सदृश पतले जुलाब लगकर विकृति, कफ और आम सब निकल जाते हैं; फिर आमाशय, यकृत् और अन्त्रका व्यापार सबल होजाता है। इस हेतु से कफजगुल्म और कफोदर शमन होजाते हैं। इनके अतिरिक्त कृमिरोग, प्लीहा वृद्धि, अष्ठीला, प्रत्यष्ठीला और आनाह रोगमें भी यह रसायन अच्छा लाभ पहुंचाता है।

२. गुल्महर रसायन ।

विधि—अभ्रकभस्म, लोहभस्म, शुद्ध गन्धक, १-१ तोला तथा सोहागे का फूला, सोंठ, कालीमिर्च और पीपल २-२ तोले लेकर मिला लेवें। इसमें से १-१ माशा दिनमें ३ समय मक्खन

या गोघृत और शहद के साथ देते रहने से थोड़े ही दिनों में दाह, मंदाग्नि, पाण्डुता और निर्बलता आदि लक्षणों का गुल्मरोग दूर होकर शरीर सुदृढ़ बन जाता है। यह पित्त और कफ गुल्म रोग की उत्तम औषधि है।

२३. हृद्रोग प्रकरण।

१. शङ्कर वटी।

विधि—शुद्धपारद ४ तोले, शुद्धगन्धक ८ तोले, लोह भस्म ३ तोले और नाग भस्म २ तोले लें। पहले पारद गन्धक की कज्जली करें। फिर भस्में मिला मकोय, चित्रकमूल, अदरख, जयन्ती (अरणी), वासा, बेलछाल और अर्जुनछाल, इन ७ द्रव्यों के स्वरस या क्वाथ के साथ १-१ दिन खरलकर १-१ रत्ती की गोलियां बनालेवें। (भै० र०)

मात्रा—१ से २ गोली दिनमें दो बार शहद, दूध या जलके साथ देवें।

उपयोग—इस वटीके उपयोग से फुफ्फुस यन्त्रकी व्याधियां हृदयके रोग, जीर्णज्वर, २० प्रकार के घोर प्रमेह, कास, श्वास, आमवात और दुस्तर संग्रहणी आदि दूर होते हैं। यह वटी अतिबलवर्धक और पौष्टिक है।

यह वटी हृद्रोगके नाशके निमित्त कही है। हृद्रोग नया हो, तो मात्रा २ रत्ती लेवें; किन्तु रोग जीर्ण हो, तो मात्रा १ रत्ती या आध रत्ती ही लेनी चाहिये। यह रसायन लोह प्रधान होने से रक्त-प्रसादन होता है। रक्तकी वृद्धि होती है; तथा रक्ताभिसरणक्रिया भी सबल बनती है। इस प्रयोगमें दूसरी सीसा भस्म मिलाई है। वह रस, रक्त आदि सब धातुओं को शनैः शनैः पुष्ट करती है। अतः इस रसायन से रक्तवृद्धि और मांस की पुष्टि होती है। जिससे हृदय सुदृढ़ होकर शिथिलता और धड़कन आदि विकारों की निवृत्ति होजाती है।

जिसका देहमें रक्तकी कमी हो, मुख मण्डल निस्तेज भासता हो, थोड़े परिश्रम से और उष्ण पदार्थ सेवन से धड़कन बढ़ जाती

है। पाचन शक्ति मन्द होगई हो, नाड़ी की गति अति शिथिल हो, हाथ पैरों पर शोथ-सा भासता हो, ऐसे लक्षण युक्त हृद्रोग पर यह रसायन लाभदायक है। हृदय या हृदयावरण पर शोथ हो, तो वहभी दूर होजाता है। यदि मूत्र यन्त्रकी क्रिया सम्यक् न होती है, तो इस रसायन के सेवन के साथ शिलाजीत का सेवन कराना चाहिये; तथा स्वेदलक्ष्य से सौंफ या सौंफके अर्क आदि ओषधि भी देते रहना चाहिये।

२. चिन्तामणि रस।

विधि—शुद्धपारद, शुद्ध गन्धक, अभ्रकभस्म, लोहभस्म, वङ्गभस्म और शिलाजीत, १-१ तोला, सुवर्णका वर्क ३ माशे और चांदीका वर्क ६ माशे लें। पहले कज्जली कर फिर भस्म और शिलाजीत मिला चित्रकमूल के क्वाथ और भांगरे के स्वरस की १-१ भावना देवें। फिर अर्जुनछाल के क्वाथकी ७ भावना देकर १-१ रत्ती की गोलियां बना लेवें। (भै० र०)

वक्तव्य—इस रसायनमें हम १ तोला प्रवालभस्म मिलाते हैं।

मात्रा—१ से २ रत्ती दिनमें दो बार गेहूँ के क्वाथ, अर्जुन क्षीर, बलाघृत या खरैंटीके मूलके क्वाथ के साथ देवें।

उपयोग—चिन्तामणि रस हृदयके समग्र रोगों पर हितावह है। हृदयेन्द्रियकी निर्बलतासे उत्पन्न हृदयस्पन्दन वृद्धि (धड़कन) हृदय के पर्देकी विकृति, हृदयेन्द्रियका शोथ, धमनो की दीवारों की विकृति होने से उसमें से रक्तधारि टपकना, आदि से रक्त की न्यूनतासे हृद्स्पन्दन वृद्धि आदि पर यह व्यवहृत होता है।

अर्जुन क्षीर—अर्जुन की छाल का जौकूट चूर्ण १ तोला, गोदुग्ध और जल १६-१६ तोले मिला मन्दाग्नि पर दुग्धावशेष

क्वाथ कर १ तोला मिश्री और थोड़ा इलायचीका चूर्ण मिलाकर उपयोग में लेवें।

३. बलाद्यघृत

विधि—खरैंटीके मूल, गंगेरन की छाल और अर्जुन छाल, तीनों २-२ सेरका जौ कूट चूर्ण मिला १६ गुने जलमें चतुर्थांश क्वाथ करें। फिर छान कलई किये हुए बरतन में भरकर चूल्हे पर चढावें। उसमें गो-घृत ३ सेर तथा मुलहठीका कल्क ६० तोले मिलाकर मंदाग्नि पर पाक करें। घृत सिद्ध होने पर नीचे उतार तुरन्त छान लेवें। (भै० र०)

मात्रा—यह घृत हृद्रोग, हृदयशूल, हृदयमें क्षत, उरःक्षत, रक्त पित्त, वातज शुष्ककास, वातरक्त और पित्तप्रकोपज रोगोंको दूर करता है।

४. जवाहर मोहरा

विधि—माणिक्य, पन्ना और मोती २-२ तोले, प्रवालपिष्टी, शृंग भस्म और संगयसब पिष्टी ४-४ तोले, कहरवा पिष्टी २ तोले, सोना और चांदीके वर्क ६-६ माशे, दरियाई नारियलका चूर्ण ४ तोले, आबरेशम कतरा हुआ और जदवारका चूर्ण २-२ तोले तथा कस्तूरी और अम्बर १-१ तोले लें। पहले सब पिष्टी और भस्म मिलालें। फिर १-१ वर्क, तत्पश्चात् दरियाई नारियल आदि ३ औषधियोंका कपड़छान चूर्ण मिलाकर १४ दिन गुलाबजलमें खरल करें। १५वें दिन कस्तूरी और अम्बर मिला गुलाबजलमें ६ घण्टे खरल कर ½-½ रत्तीकी गोलियां बनालें।

(श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्रा—१ से २ गोली दिनमें २ या ३ बार शहद, खमीरे गावजवां अम्बरी ५ माशेके साथ (खमीरे गावजवां अम्बरी

रसतंत्र सार प्रथम खण्डमें लिखा है) ऊपर दूध या केवड़े या गावजवांके फूलका अर्क पिलावें।

उपयोग—जवाहरमोहरा उत्तम हृदय पौष्टिक और मस्तिष्क पौष्टिक योग है। इसके सेवनसे हृदयकी घबराहट, हृदयकी निर्बलतासे थोड़ासा चलने पर दम भर जाना और दिल धड़कना, निस्तेजता, स्मरण शक्ति कम होजाना, निकम्मे-निकम्मे विचार आते रहना, थोड़ासा विचार करने पर मस्तिष्क थक जाना और मस्तिष्ककी उष्णता आदि दूर होते हैं।

महाधमनी या हार्दिक धमनीके रक्ताभिसरण क्रियामें परिवर्तन होने पर हृदयशूल (Angina pectoris) उत्पन्न होता है। उससे हृदय बहुत निर्बल होजाता है। तीव्रप्रकोप शमन होजाने पर भी रोगीको दिनों तक लेटाया जाता है और हृदय पौष्टिक ओषधि दी जाती है। कितनेकों को इसके दौरे बार-बार होते हैं। इस हृदयशूलकी तीव्रावस्था शमन होजाने पर जवाहरमोहराका सेवन कराया जाय, तो थोड़ेही दिनोंमें हृदय सबल बन जाता है। एवं फिरसे आक्रमण होनेकी भीति टल जाती है। यदि रोगीको पहले उपदंश रोग होगया हो तो अष्टमूर्ति रसायन या उपदंश सूर्य भी साथ-साथ देते रहना चाहिये।

५. याकूती

विधि—माणिक्यपिष्टी, पन्नापिष्टी मुक्तापिष्टी, प्रवालपिष्टी, कहरुवापिष्टी, पूर्ण चन्द्रोदय, सुवर्णके वर्क, अम्बर, कस्तूरी, आबरेशम कतरा हुआ और केशर ये ११ औषधियां २-२ तोले, बहमन सफेद, बहमन लाल, जायफल, लौंग और सफेद मिर्च १-१ तोला लें। पहले चन्द्रोदयके साथ सुवर्णके वर्क १-१ मिलाकर खरल करें। फिर पिष्टी और अन्य द्रव्य मिला गुलाबजलमें २० दिन खरल करें। २१वें दिन अम्बर कस्तूरी मिला गुलाबजलमें

६ घण्टे खरलकर आध-आध रत्तीकी गोलियां बनालेवें। यह प्रयोग स्वर्गवासी वैद्य तिलकचंद ताराचंदसे श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य को मिला है।

मात्रा——१ से २ गोली पोदीनेके स्वरस या रोगानुसार अनुपानके साथ दिनमें २ बार।

उपयोग—यह याकूती सन्निपात ज्वर आदि विकारोंमें नाड़ीकी क्षीणता, देह शीतल होजाना, स्वेदाधिक्य आदि लक्षणों तथा हृदय की दुर्बलता और उससे थोड़ा चलने पर दमभर जाना हृदय स्पन्दन बढजाना आदि लक्षणोंको दूर करनेके लिये व्यवहृत होती है।

इस याकूतीका सन्निपातमें सेवन कराने पर तत्काल नाड़ी सबल बनती है, घबराहट दूर होती है, तन्द्रा और मानसिक विकृति दूर होती है। वात और पित्त प्रकोपज सन्निपातमें इसका प्रयोग होता है।

हृदयेन्द्रिय निर्बल बनने, विविध रोगोंसे रक्तको योग्य पोषण न मिलने और मस्तिष्क गत हृदय केन्द्र विकृत होजानेसे हृदय क्रिया अव्यवस्थित (Cardiac neurosis) हो जाती है। इनमें यदि हृदयेन्द्रिय या पर्दे पर शोथ न आया हो तो इस याकूतीका सेवन करानेसे क्रिया नियमित होजाती है। फिर हृद्वेपन (Pulpitation), हृदय स्पन्दनके तालमें अनियमितता (Arhythmia) या हृत्स्पंदन वृद्धि (Tachy cardia) तथा इनसे उत्पन्न पचन क्रिया विकार, उदरमें वातसंग्रह, निस्तेजता, दम भर जाना आदि लक्षण दूर होजाते हैं।

अति मानसिक श्रमसे मस्तिष्क निर्बल बन जाता है। फिर स्मरण शक्तिका ह्रास, आलस्य, मनमें विविध कल्पना आती रहना, मानसिक व्याकुलता बनी रहना, निस्तेजता, शारीरिक

कृशता, अग्निमान्द्य आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उस पर यह याकूती अच्छा लाभ पहुँचाती है।

शुक्रका दीर्घ काल तक दुरुपयोग करने पर शुक्र क्षय होजाता है। मुखमण्डलश्याम, निस्तेज होजाना, शरीर शुष्क होजाना, स्वभाव क्रोधी और संशयी बन जाना, कोई भी कार्य करनेका उत्साह न रहना, आलस्य, अग्निमान्द्य, वीर्य अति पतला हो जाना, किसी स्त्रीका चित्र सामने आने, पैरोंकी आवाज सुनने या स्मरण होने पर शुक्र स्राव होजाना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। इस विकार पर ब्रह्मचर्य पालन सह इस याकूतीका सेवन कराया जाय, तो देह सबल और तेजस्वी बन जाती है। अनुपान दूध।

६. हृदयपौष्टिक चूर्ण

विधि--प्रवाल पिष्टी, लाल फिटकरीका फूला, कहरवा, नागरमोथा और पोदीना १०॥-१०॥ माशे, जटामांसी ३॥ माशे, मुक्तापिष्टी ३॥ माशे, जरावन्द, मुदहर्रिज, दरूनज अकरबी १॥-१॥ माशे, कस्तूरी ६ रत्ती और मिश्री सबके समान (६८माशे) लेकर मिलालेवें।

मात्रा--१॥ से २ माशे तुरबुदके क्वाथके साथ दिनमें २ या ३ बार देवें।

सूचना—*तुरबुद (फारसी में निशोथको कहते हैं) लें, तो सफेद लेनी चाहिये, और जिस रोगीको मलकी प्रवृति हो अर्थात पहले ही पतले दस्त होते हों अथवा अतिक्षीण एवं शोधन करनेके योग्य न हो उनको यह निशोथका क्वाथ नहीं देना चाहिये। इसके स्थान पर मीठे अनारका स्वरस अथवा गो दुग्धका अनुपान उत्तम होगा।*

२. नरसार पुष्प।

विधि—२० तोले नौसादर को कूट दो बड़े घड़े के डमरू यन्त्रमें डाल दृढ़ सन्धि लेप करके सुखावें। फिर चूल्हे पर चढ़ाकर ३ घण्टे मन्दाग्नि देवें। शीतल होने पर ऊपरके घड़ेमें और कुछ नीचेके घड़ेमें नौसादरके पुष्प लगे हों, उसे कपड़े या ब्रुशसे पोंछ-कर तुरन्त बोतलमें भर लेवें। यदि यह पुष्प एकाध घण्टा बाहर रह जायगा, या आर्द्र वायु लग जायगी, तो जलरूप बन जायगा।

उपयोग—इस पुष्पमें से ½ से १ माशे तक जलके साथ देनेसे बन्द हुआ पेशाब तुरन्त खुल जाता है। बालकों को १ से २ रत्ती तक देवें। मूत्र साफ लानेके लिये यह पुष्प अच्छा काम देता है।

३. श्वेतपर्पटी

विधि—सोरा ४० तोले फिटकरी का चूर्ण ५ तोले और नौसादर चूर्ण २॥ तोले मिला मिट्टी की कड़ाहीमें डालकर गरम करें। द्रव होने पर गोबर पर रखे हुए केलेके पत्ते पर ढाल देवें; और ऊपर तुरन्त दूसरापान रख कर लकड़ीके तख्तेसे दबादें। शीतल होने पर पर्पटी को निकाल कूटकर कपड़छान करलें।

मात्रा—४ से ८ रत्ती सुबह १ बार या आवश्यकता पर किसी भी समय शीतल जल या कच्चे नारियलके जल अथवा १ रत्ती कपूर को जलमें मिला कर उसके साथ देवें।

उपयोग—श्वेतपर्पटी मूत्र कृच्छ्रमें अति लाभदायक है। यह मूत्रल, स्वेदल, और वातानुलोमक है। यह मूत्राघात और अश्मरीमें अनुपान रूपसे व्यवहृत होती है। एवं अम्लपित्त, अपचन और आफरामें भी सरलता पूर्वक दीजाती है।

इस पर्पटीमें सोराके साथ फिटकरी और नौसादर मिलानेसे अम्लतानाशक गुणकी वृद्धि और मूत्रल गुण की सत्वर प्राप्ति होती है। फिटकरीके हेतुसे स्थानिक (मूत्राशय, आमाशय और अन्त्रकी) शिथिलता दूर होती है। नौसादर तीक्ष्ण, मूत्रल, सारक, रजोनिसारक, पाचक, व्रणविदारक और उदरवात हर है। सोरा मूत्रल; तीक्ष्ण, पित्त निःसारक, क्षारनाशक और अग्नि प्रदीपक है।

आर्त्तव और मूत्रको भले प्रकार साफ लाने वाला है।

२५—अश्मरी प्रकरण।

१. सर्वताभद्रावटी।

बनावट—सुवर्ण भस्म, रौप्यभस्म, अभ्रकभस्म, लोहभस्म, शुद्ध शिलाजीत, शुद्ध गन्धक और सुवर्णमाक्षिक भस्म, इन ७ औषधियों को सम भाग मिलाकर ३ दिन वरुण की छालके क्वाथ में मर्दन कर १-१ रत्ती की गोलियां बनावें। (र० यो० सा०)

मात्रा—१-१ गोली वरुण के क्वाथ या वीरतर्वादि क्वाथ (रसतन्त्रसार प्रथम खण्डमें लिखा है) के साथ देवें। तीव्र शूल के समय दो दो घण्टे पर ३ बार देवें। अन्य दिनोंमें दिनमें २ या ३ वार १ मास तक देते रहें।

उपयोग—इस रसायनके सेवनसे वृक्क स्थान और वस्ति में रही हुई अश्मरी टूट टूटकर निकल जाती है। वृक्कशूल और बस्तिशूल नष्ट होते हैं। एवं वीर्य की वृद्धि होती है।

सूचना—इस रसकी विशेष विधि यह है कि सुवर्ण, कलमी सौरा और कांटेदार चौलाई के साथ भस्म किया हुआ हो एवं अभ्रक कलमी सोरा और बथुएके स्वरसके साथ भस्म किया हुआ हो अनुपान वरुण छाल और तृण पंचमूलके क्वाथमें देना विशेष लाभप्रद है।

२. पाषाणभेदी रस।

विधि—शुद्धपारद १० तोले और शुद्ध गन्धक २० तोले मिलाकर कज्जली करें। फिर श्वेत पुनर्नवा, रक्त पुनर्नवा, वासा और सफेद कोयल (गोकर्णी) के स्वरसमें ३-३ दिन खरल कर एक गोला पेड़ा) बना लेवें। पश्चात् सराव सम्पुट कर भाण्ड पुट देवें, अर्थात् एक बड़ी हांड़ीमें चारों ओर छोटे छोटे छिद्र कर तुष (धानोंकी भूसी) भर उसके बीच सरावसम्पुटको रख कर

अग्नि देवें। स्वाङ्ग शीतल होने पर निकाल लेवें। (र० र० स०)

मात्रा—२ से ४ रत्ती तक प्रातःकालको एक समय देवें। ऊपर गोपाल ककड़ी (पपैया-पपिता) की जड़का चूर्ण १ तोला खिला कर १०-२० तोले कुलथी का यूष पिलावें। शामको गोखरू और गम्भारीकी जड़की छालका क्वाथ पिलाते रहें अथवा दोनों समय पपिता और कुलथीका यूष देते रहें।

उपयोग—यह प्रयोग अश्मरी नाशक है। इस रसायनका सेवन पथ्यसह धैर्य पूर्वक १-२ मास तक करनेसे वृक्क और मूत्राशय की असाध्य पथरी भी टूट टूट कर निकल जाती है। कभी बड़े अणु टूटकर निकलने पर भयंकर शूल चलता है। उस दिन शूलके समय भी इस रसायनका सेवन गोपाल कर्कटीमूलके साथ करना चाहिये। एवं शूल स्थान पर हींगको जलमें मिला निवाया कर लेप करना चाहिये। मूल ग्रन्थकार लिखते हैं कि, इस रसायन को २-६ माशे गोखरूके चूर्णके साथ देकर ऊपर भेड़का दूध पिलाते रहें, तो पथरी कट कटकर निकल जाती है।

जिन रोगियोंको रात्रिमें बारबार पेशाबके लिये न उठना पड़ता हो, उनको रात्रिको भी गोखरू चूर्णके साथ इस रसायन का सेवन करानेमें बाधा नहीं है। बारबार निद्रा भङ्ग होती हो, तो यह रस एक ही समय देना चाहिये।

३. एलादिचूर्ण।

बनावट—छोटी इलायचीके दाने, पाषाण भेद, शुद्ध शिला-जीत और पीपल, चारों को समभाग मिलाकर चूर्ण करें। (चक्रदत्त)

उपयोग—१॥-१॥ माशे चूर्णको १०-१० तोले चावलोंके धोवन या कुलथीके यूपके साथ अथवा गुड़के साथ तीव्र दर्दमें दो-दोघण्टे पर देते रहनेसे वृक्क स्थानमें रहे हुए कंकड़ जल्दी टूट कर पीड़ा दूर होजाती है; एवं तज्जन्य मूत्र कृच्छ्र भी दूरहोजाताहै।

सूचना – *रोगीको पीनेके लिये कुसुमके बीज ५ तोले और शक्कर १० तोलेको २ सेर शीतल जलमें मिला लेवें। फिर उसमें से थोड़ा थोड़ा जल आवश्यकता पर पिलाते रहें।*

४. बृहद् वरुणादि क्वाथ।

बनावट—वरनाकी छाल, सोंठ, गोखरू, मूसली और कुलथी १-१ तोला तथा कुशादिपंचतृण मूल ५ तोले को मिला जौ कूट चूर्ण करें। (भै० र०)

मात्रा—इस चूर्णमें से ६ तोलेको ६६ तोले जल में उबाल चतुर्थांश क्वाथ करें। फिर ३ हिस्सा करके श्वेतपर्पटी या जवाखार मिला कर १-२ या ३ बार २-२ घंटे पर पिलावें।

उपयोग—इस क्वाथके सेवनसे वृक्क स्थान का भयंकर शूल और उस हेतु से उत्पन्न वमन आदि उपद्रव, मूत्र कृच्छ्र, लिंगशूल, बस्तिशूल आदि सब दूर होजाते हैं।

५. अश्मरीहर कषाय।

विधि—पाषाणभेद, सागौनके फल, पपीते (एरण्डककड़ी) के मूल, शतावर, गोखरू, वरनाकी छाल, कुशके मूल, कासके मूल, चावल-धानके मूल, पुनर्नवा, गिलोय, चिचड़ेके मूल और खीरा ककड़ीके बीज, इन १३ औषधियोंको १-१ तोला तथा जटामांसी और खुरासानी अजवायनके बीज (या पान) २-२ तोले लेवें। सबको मिला जौ कूट चूर्ण करलें।

श्री०-पं यादवजी त्रिकमजी आचार्य

मात्रा—१ तोले चूर्णको १६ तोले जलमें मिला चतुर्थांश क्वाथकर छानकर उसमें ५ रत्ती शिलाजीत या १। माशा त्तार पर्पटी या जवाखार मिलाकर पिला देवें। आवश्यकता पर २-२

इनकी आकृति धानकी खीलके समान होती हैं। ये पुष्प कुछ दिनोंमें झड़ जाते हैं, ये ही इस प्रयोगमें काममें आते हैं।

(२) चन्द्र प्रभावटी २-२ रत्ती तथा यवक्षार २-२ रत्ती प्रातः सांय शहदके साथ देवें। दो पहरको दो बजे और रात्रिको सोते समय नारिकेल पुष्प चूर्ण ३ माशे तथा यवक्षार ६ रत्ती मिला कर जलके साथ देवें; तथा दोनों समय भोजनके बाद चन्दनासव १।-१। तोला नरिकेल लवण ६-६ रत्ती और १।-१। तोला जल मिलाकर देते रहें। (कविराज उपेन्द्रनाथ दासजी)

इस व्यवस्थाके अनुसार १५ दिन तक औषध सेवन कराने पर वृक्क स्थान और मूत्राशय की पथरीके कण थोड़े रोज में निकल कर अश्मरी नष्ट हो जाती है। इस औषध प्रयोगसे पथरी गलती है, टूटती है और सरलतासे निकल जाती है। शस्त्र चिकित्साके योग्य अनेक रोगियोंको इस प्रयोग व्यवस्था द्वारा थोड़े ही दिनों में लाभ होगया है।

(३) २ रत्ती एलवाको मुनक्काके भीतर रख निगल जानेसे थोड़े ही समयमें वृक्कशूल शमन होजाता है।

(४) मकईके भुट्टे की डोंडी और पुरानी सुपारीको चिलममें रख कर धूम्रपान करनेसे वृक्कशूल की तीव्रता तत्काल निवृत्त हो जाती है।

७. पाषाण भेदादिघृत।

विधि—पाषाण भेद, बड़े वकुल (मोलसरी) के पुष्प, अपामार्गका मूल, गिर हटा (अश्मन्तक-मराठीमें आपटा), शतावर, ब्राह्मी, अतिबला (कंघी पेटारी) श्योनाक, खस केतकी की जटा, वृक्षादनी, सागोनके फल, छोटी कटेली, रोहिष घास गोखरू, जव, कुलथी, बेर, वरूण की छाल और निर्मलीके फल इन २० औषधियोंको १६-१६ तोले मिलाकर ८ गुने जलमें

२६ प्रमेह प्रकरण ।

१. चन्द्रकला वटी ।

विधि—छोटी इलायचीके दाने, कपूर, शिलाजीत, आंवला, जायफल, केशर, मोचरस, रससिन्दूर, वङ्ग भस्म और लोहभस्म ये १० ओषधियां समभाग मिला गिलोयस्वरस और सेमलकी छाल के क्वाथ से ३-३ दिन खरल कर २-२ रत्ती की गोलियां बना लेवें। (आ० सं)

मात्रा—१ से २ गोली दिनमें २ बार शहदके साथ देवें। ऊपर गोदुग्ध या त्रिफला, देवदारु, दारुहल्दी और नागर मोथा, इन ६ द्रव्यों का क्वाथ पिलावें।

उपयोग—यह रसायन सब प्रकारके प्रमेहों पर लाभदायक है। यह विशेषतः शुक्रमेह या स्वप्न दोष पर व्यवहृत होता है।

२. प्रमेहान्तको रस ।

बनावट—वंगभस्म, नागभस्म, अभ्रकभस्म, लोहभस्म, कान्त लोहभस्म, रससिंदूर, ताम्रभस्म, तीक्ष्ण लोहभस्म शुद्ध हिंगुल शुद्धगन्धक सोहागाका फूला और ज-दभस्म इन १२ ओषधियोंको १-१ तोला मिलाकर हंसराजके रसमें ३ दिन खरलकर सुखादें। फिर आतशी शीशोमें भर बालुका यन्त्रमें रख ६ घण्टे अग्नि देनेसे औषध पक कर एक पिण्ड बन जायगा। उसे स्वाङ्ग शीतल होने पर निकाल कर पीस लेवें। पश्चात्, कपूर, केसर, दालचीनी, नागकेसर, तेजपात, छोटा इलायची के दाने, सफेद चन्दन, जायफल, जावित्री, इन ६ औषधियों के चूर्ण को समभाग मिला मर्दन कर मिश्रण बना लेवें। फिर कंदुरीके पान (बिम्बी पत्र) के स्वरसमें ३ दिन खरल कर २-२ रत्तीकी गोलियां बनाकर छायामें सुखालेवें। (र० यो० सा०)

वालोंको यह रसायन नहीं देना चाहिये। धतूरा आमाशय आदिके स्रावको कम कराता है; जिससे पचन क्रिया अधिक मंद होजाती है।

४. बृहद्हरि शंकर रस।

बनावट—शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, लोहभस्म, सुवर्णभस्म, वङ्गभस्म और सुवर्णमाक्षिकभस्म, इन ६ औषधयों को समभाग मिला आंवलेके स्वरसमें ७ दिन तक खरल करके २-२ रत्तीकी गोलियां बनालें। (र० सा० सं०)

मात्रा—१ से गोली २ तक दिनमें २ समय आंवलोंके रस गिलोयका स्वरस, त्रिफला और शहद, हल्दी और मिश्री या मिश्री और शहद अथवा रोगानुसार अनुपानके साथ देवें।

उपयोग—यह रसायन कफज, पित्तज और वातज, सब प्रकारके प्रमेहोंको निःसंदेह नष्ट करता है; पाचन क्रियाको बढ़ाता है; शुक्रको गाढ़ा करता है; तथा शरीरको नीरोगी और पुष्ट बनाता है।

५. प्रमेहकुञ्जर केसरी।

बनावट—सुवर्णभस्म १ तोला, जसदभस्म २ तोले लोह भस्म ३ तोले, अभ्रकभस्म ४ तोले तथा वङ्ग भस्म, रससिन्दूर और अमृता सत्व ५-५ तोले लें। सबको मिला सफेद मूसलीका क्वाथ, केलेके खम्भेका रस, सेमलकी छालका क्वाथ और गोखरूके क्वाथ इन सबकी ३-३ भावना देकर २-२ रत्तीकी गोलियां बना लेवें। (र० यो० सा०)

मात्रा—१ से २ गोली तक दिनमें दो बार शहद के साथ देवें। फिर ऊपर आंवला और गोखरू का क्वाथ कर पिलावें।

उपयोग—इस रसायन के सेवन से २ मासमें सब प्रकार

स्वेदोत्पादक, शोथघ्न और श्लेष्म नाशक है। अफीमके रासायनिक पृथक्करण करने पर इसमें से मॉर्फिन (morphine) कोडिन (codeine) अफोमार्फिन और नार्कोटिन (norcotine) आदि विविध प्रभाव द्रव्य मिलते हैं; किन्तु अफीमको जैसीकी वैसीही उपयोग में लेनी, इस दृष्टिसे आयुर्वेदीय कल्प सुविधा जनक है। विशेष विचार करने पर अफीम विचित्र गुण समूहयुक्त ओषधि है।

इस औषधमें शिलाजीत है, वह दोषघ्न, रसायन, धातु परि-पोषण क्रमको व्यवस्थित कर है। एवं अदरखकी भावना देनेसे पाचकाग्नि और धातुओंसे सम्बन्ध वाली अग्निको बढ़ानेका कार्य सम्यक् प्रकारसे होता है।

मधुमेह दर्पहारीका कार्य इक्षु मेह और मधुमेह, इन दोनों में मूत्रके साथ जाने वाली शक्करको कम करनेक है। यह कार्य अफीम और शिलाजीतके संयोगसे उत्तम प्रकारसे होता है। मधुमेहमें मधु नियमन डाक्टरी मतानुसार इन्सुलिन (Insulin) नामक द्रव्यसे होता है; किन्तु इसकी अपेक्षाभी मधु नियमन अत्यधिक परिमाणमें इस रस द्वारा होता है। अधिक बार और अधिक मात्रामें पेशाब होने पर ही इस औषधका उत्तम उपयोग होता है। मधुमेह रोग दीर्घकाल का होजाने पर, उसी हेतुसे प्रमेहपिटिका उत्पन्न होने पर यह औषध अधिक मात्रामें प्रयो-जित करना चाहिये। अशक्ति, बार बार पेशाब होना, पेशाब अधिक उतरना, शारीरिक और मानसिक उत्साहका क्षय, अंगों में कुछ वेदना बनी रहना, जलपानकी इच्छा अधिक रहना आदि लक्षण होने पर मधुमेहदर्पहारीका अवश्य प्रयोग करना चाहिये। इससे मन प्रसन्न रहता है और उत्साह बढ़ने लगता है; परन्तु इस बातको लक्ष्यमें रखना चाहिये कि इसमें अफीम होनेसे पहले उत्तेजना बढ़ती है। फिर कुछ समयके पश्चात् अवसादकता आने लगती है। उस समय शरीर निर्बल बन जाता है। अतः

मधुमेह जीर्ण होजानेसे या वृद्धावस्थामें मधुमेह उत्पन्न होजानेसे बेचैनी, धैर्यनाश और चिन्ता आदि लक्षण होने पर मधुमेह दर्पहारीसे उत्तम लाभ पहुँचता है।

क्वचित् किसी विलक्षण आघ तके हेतुसे मधुमेह होजाता है। जैसे सट्टा या व्यापारमें हानि अथवा चोरी डाका, अग्निप्रकोप आदिके धन नाश होजाने, कर्ज होजाने अथवा मानहानि या कीर्त्तिनाश होनेकी आपत्ति आने पर मधुमेह होजाता है। ऐसे मधुमेह पर यह औषध अच्छा लाभ पहुंचाता है।

अफीमके गुण दोष—अफीमसे अन्तःस्राव कम होता है; किन्तु प्रस्वेद अधिक मात्रामें आने लगता है; तथा स्तन्य (दूध की मात्राकम नहीं होती। श्लेष्मलत्वचा शुष्क होती है। आमाशय का रस स्राव कम होजाने से अन्त्र का स्त्राव भी कम होजाता है। क्षुधा कम होजाती है; पचन विकृति होती है; हृदय की क्रिया सुधरती है। धमनियां में रक्तवहन उत्तम प्रकार स होता है॥ प्रारम्भ में आध पौन घण्टा के लिये नाड़ी का दबाव (Tension) बढता है। जिससे नाड़ी सबल भासती है। फिर क्षीण होजाती है। मगज में तरी आती है। मन शान्त बनता है। अधिक मात्रा सेवन करने पर नशा आजाता है। निद्रास्वस्थ आती है; किन्तु इससे अच्छा लगेगा, ऐसा नहीं होता। कण्ठ सुन्न होजाता है; दर्द होने लगता है: थकावट आजाती है। मानसिक बेचैनी सी भासती है। पचन शक्ति का ह्रास होजाता है,तथा मलावरोध होजाता है। अफीम के ये सब गुणधर्म इस स्थान पर विस्तार से लिखने का कारण यह है कि, इसमें रहे हुए दोषों को लक्ष्य में रखकर औषधयोजना करनी चाहिये।

सूचना—जिन रोगियों को कब्ज अधिक रहता हो, उनको यह औषध नहीं देनी चाहिये। एवं इस औषधकी ज्यादामात्रा

उष्णता रहती हो, मस्तिष्क निर्बल होगया हो, स्त्री का दर्शन होते ही शुक्रपात हो जाता हो, शारीरिक कृशता, अग्निमान्द्य, उदर में भारीपन, जीर्ण वातप्रकोप, निद्रा कम आना, मस्तिष्क में उष्णता आदि लक्षण प्रतीत होते हों, उनके लिये यह वटी हितावह है। इस वटी के सेवन से पेशाब में धातु जाना, वीर्य का पतलापन, स्वप्न दोष, स्मरणशक्ति की कमी और हृदय की निर्बलता आदि दूर होकर बल, वीर्य और उत्साह की वृद्धि होती है। जीर्ण रोग में कम मात्रा में शान्ति पूर्वक २-४ मास तक सेवन करना चाहिये।

तीसरी विधि-शुद्ध शिलाजीत २० तोले, निम्ब पत्रादि सत्व २० तोले; त्रिवङ्ग भस्म २॥ तोले और अभ्रक भस्म १। तोले लें। शिलाजीत और भस्म को पहले मिलावें। फिर नीम और गुड़मार के पान का कपड़ छान चूर्ण मिला थोड़े जल से खरल कर २-२ रत्ती की गोलियाँ बना लेवें।

निम्बपत्रादिसत्व-नीम के कोमल पान और बेल के पान को समान वजन में लें। फिर धोकर चटनी की तरह पीसें। पश्चात् कपड़े पर मसल कर छानलें। जो सत्व नीचे निकल आवे, उसे छाये में सुखा लेवें। कितनेक चिकित्सकोंने इसकी २-२रत्ती की गोलियां बनायी हैं; और 'इक्षुमेहारि' संज्ञादी है।

मात्रा-२ से ३ गोली दिन में ३ वार गुड़मार के अर्क के साथ। अथवा सुबह और रात्रि को गोदुग्ध से। दोपहर को जल से।

उपयोग--यह वटी मधुमेह, इक्षुमेह, और बहुमूत्र में लाभ दायक है। इस वटी के सेवन से मूत्रधारण शक्ति बढ़ जाती

है। रक्त में विषोत्पत्ति कम होती है। फिर निर्बलता, श्यामता और उदासीनता शनैः शनै दूर होकर मुखमण्डल तेजस्वी और प्रसन्न बन जाता है।

मधुमेहके रोगियों को चोट लगजाने या अन्य हेतु से व्रण होने पर जल्दी नहीं भरता। अनेकों के व्रण खूब फैल जाते हैं, फिर मांस सड़ता है पूय निकलता रहता है और भयंकर दुर्गन्ध आती रहती है। ऐसे व्रणों को भरने और मूलहेतु रूप मधुमेह को दूर करने के लिये यह शिलाजत्वादि वटी अति हितकारक है। व्रणवालों को अनुपान रूपसे निम्ब पत्रादि सत्व १-१ माशा और गोदुग्ध देना चाहिये।

मधुमेह में विष अति बढ़जाने पर प्रमेहपिटिका (अदीठ Carbuncle) उत्पन्न हो जाता है। वह अति घातक है। उसमें से मांस सड़ा हुआ निकाल कर बाह्य उपचार करना चाहिये, तथा इस शिलाजत्वादि वटी का सेवन निम्बपत्रादि सत्व और लोध्रासव के साथ सेवन करना चाहिये। इस तरह १-२ मास तक सेवन कराने पर शक्कर दूर होती है। और अदीठ मेंभी लाभ हो जाता है।

१०. प्रमेहान्तक चूर्ण।

प्रथम विधि-तालमखाना ५ तोले, गिलोयसत्व और जायफल २॥-२॥ तोले तथा मिश्री १० तोले लें। तालमखाना और जायफल को कूट कर कपड़छान चूर्ण करें। मिश्री का पृथक चूर्ण करें; फिर सबको मिला खरल में मर्दन कर अच्छे डाट वाली शीशी में भर लेवें।

मात्रा-३ माशे से १ तोला के साथ २-२ रत्ती प्रवाल पिष्टी मिला कर दिन में १ या २ वार गोदुग्ध के साथ देवें।

उपयोग-यह चूर्ण सब प्रकार के प्रमेह, विशेषतःकफज और पित्तज प्रमेह में लाभदायक है। यह चूर्ण वृक्कों को शक्ति देता है; रक्त में रहे हुए विष को रूपान्तरित करता है एवं मूत्र की वृद्धि कराकर शेष रहे दोष को जल्दी निकाल देता है। परिणाम में वृक्क, मूत्राशय और मूत्रनलिका आदि अवयवों की श्लैष्मिक कला का प्रदाह दूर होकर मूत्र में वीर्य, श्लेष्म, पित्त और क्षार जाना बन्द हो जाता है। यह चूर्ण वीर्य को शीतल और गाढ़ा बनाता है तथा मूत्राशय की उष्णता को शान्त करता है। जिससे स्वप्नदोष भी रुक जाता है।

इस चूर्ण को मुँह में डालकर ऊपर दूध पीने से चूर्ण तालु में चिपक जाता है। एवं दूध में डालने से दूध चिकना और गाढ़ा हो जाता है इस हेतु से कितनेक मनुष्य इसे नहीं ले सकते। इस चूर्ण और प्रवाल पिष्टी को मिला ५ तोले दूध में डाल थोड़ा चला कर तुरन्त पीलेवें। फिर शेष दूध धीरे धीरे पीवें। इस तरह चूर्ण का सेवन करते रहने से निश्चित लाभ हो जाता है।

पाचन क्रिया अच्छी हो, तो मात्रा १ तोला ले सकते हैं। वरना ६ माशे या ३ माशे पचन क्रिया के अनुरूप लेते रहें। शक्ति से अधिक मात्रा लेने पर या दूध पाचन शक्ति से अधिक लेनेपर योग्य लाभ नहीं मिलता।

सूचना-मेदा, शक्कर, और गुड़ वाले पदार्थ कम खाना चाहिये। रात्रि को भोजन हलका और थोड़ा करना चाहिये। तेज खटाई, अधिक मिर्च, गरम चाय, बीड़ी, सिगरेट आदि को छोड़ देना चाहिये।

प्रातः काल और सायं काल १-२ माइल या अधिक घूमते रहने से जल्दी लाभ पहुँचता है।

द्वितीय विधि-शतावर, कच्चे सिंगाड़े, गोंद, छोटी इलायची के दाने, गोखरू, बीजबन्द, तालमखाने, मेदालकड़ी, सेमल का गोंद,

पलास का गोंद, बबूल का गोंद, गिलोय सत्व और काहूके बीज ये १२ औषधियां समभाग मिलाकर कपड़ छान चूर्ण करें।

मात्रा—४ से ६ माशे समान मिश्री मिलाकर दिन में दो बार दूध या जल के साथ सेवन करें।

उपयोग—इस चूर्ण के सेवन से पित्त प्रकोप जनित प्रमेह रोग १ मास में नष्ट हो जाता है तथा वृक्क और मूत्राशय सबल बनते हैं। यह चूर्ण रक्त में रहे हुए विष को नियमित बाहर निकालता रहता है। जिससे मूत्र विकार, अग्निमान्द्य, आलस्य, सांधे सांधे में दर्द होना, ये सब दूर होते हैं। शरीर में बल वीर्य की वृद्धि होती है और मुख-मण्डल तेजस्वी बन जाता है।

११. बृहच्छतावर्य्यादिचूर्ण।

विधि—शतावर, गोखरू, कौंच के बीजों की गिरी, गंगेरन की छाल, खरैंटी की छाल, ताल मखाना, सफ़ेद मुसली, उटङ्गन के बीज, ऊंट कटारे के मूल की छाल, बीज बन्द, समुद्र शोष, कमर कस, सूखा सिंघाड़ा, गिलोय सत्व, सेमल के मूल की छाल और आंवले, इन १६ औषधियों को समभाग मिला कूट कर कपड़ छान चूर्ण करें।

मात्रा—४ से ६ माशे तक समान मिश्री मिलाकर दिन में दो बार सेवन करें।

उपयोग—इस चूर्णका २१ दिन तक सेवन करने से प्रमेह, धातुक्षीणता, स्वप्नदोष और अधिक शुक्रपात से आई हुई निर्बलता दूर होकर वीर्य शीतल, नीरोगी और गाढ़ा बन जाता है।

१२. प्रमेहान्तक कषाय

विधि—दारू हल्दी, हल्दी, देवदारू, गिलोय, हरड़, बहेड़ा, आंवला, नागर मोथा, रक्त चंदन, खस, शतावर, जवासा, लोध, पाठा और गोखरू इन १५ औषधियों को समभाग मिला कर जौकूट चूर्ण करें।

मात्रा ४-४ तोले चूर्ण को ६४ तोले जल में भिगो कर चतुर्थांश क्वाथ करें। फिर दो हिस्से कर सुबह और रात्रि को ६-६ माशे शहद मिलाकर पिलावें।

उपयोग—यह क्वाथ सब प्रकार के प्रमेहों पर हितकारक है। यह अकेला या अन्य रसायनों के साथ अनुपान रूप से व्यवहृत होता है।

१३. प्रमेहहर योग।

(१) त्रिफला का कपड़ छान चूर्ण आधा तोला और हल्दी पिसी हुई १॥ माशे को १ तोला शहद के साथ मिलाकर प्रातः काल चाट लेवें। इस तरह २-४ मास तक पथ्य पालन सह सेवन करते रहने से अति जीर्ण प्रमेह रोग भी निवृत्त हो जाता है। साथ साथ अग्निमान्द्य, मलावरोध, रक्तविकार मेदवृद्धि और कफ प्रकोप आदि सब दूर हो जाते हैं। यह औषधि समान्य होने पर भी अत्युत्तम है। इस योग ने असाध्य माने गये प्रमेहों को दूर कर दिये हैं।

(२) वंग भस्म २ रत्ती, गिलोय सत्व ४ रत्ती और हल्दी ४ रत्ती इन तीनों को मिलाकर ६-६ माशे शहद के साथ दिन में दो बार देते रहें। ऊपर गिलोय का स्वरस ४ तोले

और शहद १ तोला मिलाकर पिलाते रहें। इस योग से १ मास में सब प्रकार के प्रमेहों की निवृत्ति हो जाती है।

(३) आँवला और हल्दी १-१ तोला मिला एक कांच के ग्लास में २० तोले जल में रात्रि को भिगो देवें। सुबह औषधि को मसल जल को छान लेवें। फिर १ माशा गिलोय सत्व को ६ माशे शहद मिला चाटकर ऊपर वह जल पीलेवें। इस तरह २१ दिन तक प्रयोग करने से प्रमेह रोग दूर हो जाता है।

(४) सूर्यपुटी प्रवाल भस्म, शौक्तिक भस्म, वराटिका भस्म, और अमृतासत्व ३-३ तोले और सोनागेरू ६ माशे लें। सबको खरल कर अच्छी तरह मिला लेवें। इसमें से २ से ४ रत्ती तक शहद और घी के साथ मिलाकर दिन में २ या ३ बार देते रहने और रात्रि को सोने के समय त्रिफला ६ माशे, हल्दी १ माशा और मिश्री ६ माशे मिलाकर शहद या जल के साथ देते रहने से जीर्ण प्रमेह भी १-२ मास में दूर हो जाते हैं।

(५) वंग भस्म और प्रवाल पिष्टी १-१ तोला, सुवर्ण माक्षिक भस्म ६ माशे और जहर मोहरा पिष्टी १ तोला मिलाकर मिश्रण बनालें। इसमें से ४-४ रत्ती प्रातः सायं मिश्री मिले हुए दूध या च्यवनप्राशावेह अथवा मोसम्बी के रस और मिश्री के साथ दें। थोड़े दिन सेवन कराने पर स्वप्नदोष, पेशाब में जलन, आलस्य, निरुत्साह आदि दोष दूर होते हैं।

(६) १ मन बड़के पत्तों को जलसे धोकर १ मन जल मिलाकर उबालें। पत्ते नरम पड़ने पर उतार मसल कर जलको छान लेवें। पुनः जलको अग्नि पर चढ़ाकर रबड़ी जैसा पाक करें। फिर उसमें प्रवाल पिष्टी १ तोला, वंशलोचन २ तोले इसबगोल की भूसी २ तोले इमली के फल की गिरी १ तोला और बहु-

रास्ना, दालचीनी, छोटी इलायची के दाने, भारंगी, चव्य, धनिया, इन्द्रजौ, पूतिकरंज के बीज, अगर, तेजपात, हरड़, बहेड़ा आंवला, नाड़ीशाक, नेत्रवाला, खरैंटी, कंघी, मजीठ, धूप सरल, कमल, लोध्र, सोंफ, वच, कालाजीरा, खस, जायफल, वासा, और तगर, इन ४१ औषधियों को १-१ तोला लेकर कल्क करें। फिर कल्क, तिल तैल १२८ तोले, शतावर का रस १२८ तोले, लाख का रस ७६८ तोले, दही का जल ७६८ तोले और दूध १२८ तोले मिलाकर मंदाग्नि पर तैल सिद्ध करें।

(भै० र०)

लाक्षारस-लाख को ४ गुने जल में मिलाकर गरम करें। जल गरम होने पर दसवां हिस्सा लोध, दसवां हिस्सा सज्जीखार और थोड़े बेर के पत्ते डालने से लाख का रस हो जाता है। अथवा सोहागा मिलाने पर भी रस हो जाता है। फिर इस रस को कपड़े से छानकर तेल में मिलाना चाहिये।

उपयोग—इस श्रेष्ठ प्रमेहमिहिर तैल की मालिश से वात जनित समस्त व्याधियाँ नष्ट होती हैं। इस तरह मेदोगत, मज्जागत, जीर्ण वातज, पित्तज, कफज और त्रिदोषज, सब प्रकार के जीर्ण विषम ज्वर निवृत्त होते हैं। यह तैल क्षीणेन्द्रिय व्यक्तियों के लिये और ध्वजभंग (नपुंसकता) में विशेष लाभदायक है। एवं दाह, पित्त प्रकोप, प्यास, छर्दि, मुखशोष २० प्रकार के प्रमेह आदि रोग, इसके मर्दन से निःसंदेह नष्ट हो जाते हैं।

१५. श्रेष्ठादिवटी

बनावट-त्रिफला ८ तोले, शुद्ध गंधक ४ तोले, हल्दी, गुड़मार, कपूर, वंग भस्म, निम्बत्वक्, गूगल और आंवला, ये औषधियां

२७. बहुमूत्र प्रकरण

१. वहुमूत्रान्तकरस ।

विधि-रससिन्दूर, लोहभस्म, वङ्गभस्म, अफीम, शुद्ध जमालगोटा, गूलरके बीज, बेलकी जड़ या छाल और पीली चमेली के फूल, इन ७ औषधियों को समभाग मिला गूलर के फलों के स्वरस में १ दिन खरल कर २-२ रत्ती की गोलियां बना लेवें। (र० च०)

मात्रा-१-१ गोली दिन में दो वार रोगानुसार अनुपान के साथ दें। फिर गूलर के फूलों का रस पिलावें।

उपयोग—यह रसायन वहुमूत्र रोग (वार वार अधिक परिमाण में पेशाव आना) और उससे उत्पन्न उपद्रवों को निःसंदेह दूर करता है।

मधुमेह और अन्य जिन विकारोंमें अधिक जलपान करना पड़ता है। उन विकारोंमें वारवार अधिक परिमाणमें पेशाब आता रहता है। उसका निवारण इस रसायन से होता है। इस रसायन के सेवन के साथ तृषा शमनार्थ निम्न क्वाथ का उपयोगभी करते रहना चाहिये।

सारिवादि कषायः—कालीसारिवा,मुलहठी,मुनक्का, दर्भमूल, चीढ़ (देवदारू भेद) का बुरादा, सफेद चन्दन, हरड़ और महुए के फूल, इन ८ औषधियों को समभाग मिलाकर चूर्ण करें। फिर इसमें से ५ तोले चूर्णको रात्रिको घड़े के भीतर उबलते हुए ५ सेर जलमें भिगोदेवें। सुवह छानकर प्रयोग में लावें।

भोजनमें मांस प्रधान और गेहूँ के आटे की रोटी खासकते हैं। ऐसा मूल ग्रन्थकार ने लिखा है, किन्तु हमारे अनुभवानुसार जौ-चने की रोटी विशेष लाभदायक है। तले हुए पदार्थ, तैल, खटाई, गुड़, शक्कर, चावल, मांस आदि भारी भोजन, ये सब हानि पहुँचाते हैं।

बहुमूत्रान्तक रस में अफीम और जमालगोटा मिले हुए हैं। जमालगोटा मिलाने से अफीम की बद्धकोष्ठ करने की शक्ति का दमन हो जाता है। अफीम इस रसायन में प्रधान औषधि है अफीम से वातकेन्द्र और वातवाहिनियों की उग्रता का दमन होता है। जिससे तृषा का ह्रास होता है, तथा यकृत् परभी अकुंश आता है। परिणाम में मधुमेह में मधु उत्पादन का कार्य कम हो जाता है तथा तृषा की वृद्धि भी रुक जाती है।

पचन क्रियाकी विकृति होकर उदकमेह आदि कफ प्रधान प्रमेहों की सम्प्राप्ति होती है। उनमें सामान्यतःबहुमूत्र लक्षण प्रतीत होता है। इन प्रमेहों में आमाशय, लघु अन्त्र और बृहद्-न्त्रमें सेन्द्रियविष संगृहीत होता है। बद्धकोष्ठ बना रहता है। अतः इन पचनेन्द्रिय में संचित विष और मलको बहार निकालनेकी योजना करनी चाहिये। इस हेतुसे इस रसमें जमाल-गोटा का मिश्रण किया गया है। जमालगोटा से अधिक प्रदाह न हो औरअधिक विरेचन न हो, यह कार्य अफीम से होजाताहै। अफीम और जमालगोटा परस्पर एक दूसरे के दर्पका हरण करते हैं।

रसतन्त्रसारमें अश्विनीकुमार रसका पाठ दिया है, वहभी मूत्रकृच्छ्र, बहुमूत्र और प्रमेह पर प्रयोजित होता है। उसमेंभी अफीम और जमालगोटा का मिश्रण है। किन्तु उसमें वच्छ-नाग और हरतालभी मिलायेहैं। अतः दोनोंके कार्य में बहुत भेद होजाता है। जब ज्वर रहता हो और ज्वरोत्पादक कीटाणुओं के नाशकी आवश्यकता हो तब अश्विनी कुमार की योजना करनी चाहिये; एवं कफज मेह में पचन क्रिया बढ़ाने के उद्देश्य से भी अश्विनीकुमार दिया जाता है। किन्तु जब ये उद्देश्य न हों, प्यास और दाह के शमन सह बहुमूत्र को दूर करना इष्ट हो, तब इस रसायन का व्यवहार किया जाता है।

इस बहुमूत्रान्तक रस में रससिंदूर रसायन, कीटाणुनाशक और विषहर है। लोहभस्म रसायन, रक्तवर्द्धक, पित्तकफघ्न और मूत्रसंस्था को सबल बनाने वाली है। बङ्गभस्म शुक्राशयकी पोषक, कफघ्न और मूत्रसंस्था के दोष-नाशक है। अफीम और जमालगोटा के गुण ऊपर कहे हुए हैं।

गूलर फल, शीतल, ग्राही, सेन्द्रिय विषघ्न, तृषाशामक, रक्त प्रसादक, मधुमेहनाशक, प्रमेहघ्न और रक्तप्रदर शामक है।

गूलर में अनेक दिव्य गुण रहे हैं। रक्तस्रावको बन्द करता है। मधुमेह में मधु की उत्पत्ति का दमन करता है। सुजाक पर गूलर के रस ४-४ तोले में जीरा और मिश्री मिला कर पिलाया जाता है। गूलर के पत्तों के रस में भी सुजाक नाशक गुण हैं।

महामहोपाध्याय कविराज गणनाथसेन ने गूलर के पत्तों के रस का घन (Extract) बनाकर उपयोग किया है। उनका नाम "उदुम्बर पत्र-सार" दिया है। इससे जो लाभ मिला, वह अपने व्याख्यान में कलकत्ता

मात्रा- ४-४ गोली दिन में ३ बार जल के साथ देवें।

उपयोग- यह रस बहुमूत्र को दूर करता है। सुजाक या अन्य हेतु से मूत्राशय और मूत्रप्रसेकनलिका में प्रदाह होजाने पर मूत्र बार बार एक एक बूंद टपकता रहता है। उसे दूर करने के लिये यह रसायन उपयोगी है। जीर्ण रोग में कुछ दिनों तक शान्तिपूर्वक सेवन करना चाहिये। मधुमेह या और रोगों में बहुत ज्यादा मूत्र उतरता है, उसपर इस रसायन अधिक लाभ नहीं पहुँचता। उसके लिये तो यकृत् पर कार्यकारी, तृषा-शामक गुणयुक्त तथा वात संस्थाके क्षोभ की शामक औषधि देनी चाहिये। इसके लिये बहुमूत्रान्तक रसकी योजना करना हितावह है।

सूचना-अधिक स्नेह भोजन, भारी भोजन, चावल, खटाई, ठण्डाई, मठा, अधिक मिर्च, कब्ज करने वाले पदार्थ आदि का सेवन नहीं करना चाहिये। अधिक घृत से भी बूंद बूंद पेशाब आने का कष्ट बढ़जाता है।

३ मूत्रदाहान्तक चूर्ण

विधि—प्रवाल पिष्टी २० तोले, अमृतासत्व ४० तोले, संगेयहूदपिष्टी ६० तोले और सोनागेरू ८० तोले मिला चन्दनादि अर्क (चंदन, गुलाब, केवड़ा और कमल पुष्प के अर्क) में ७ दिन तक मर्दन करें।

सूचना—सोनागेरू के समान शीतल चीनी भी मिलाई जाय तो विशेष लाभप्रद है। (संशोधक)

मात्रा—२ से ४ रत्ती दिन में ३ बार चन्दनादि अर्क के साथ दें।

उपयोग—यह चूर्ण पेशाब की जलन और बूंद बूंद टपकने को सत्वर दूर करता है। मूत्रकृच्छ्, उग्र औषध आदि का सेवन यकृत्, मूत्राशय और मूत्रनलिका में दाह होने पर भी अधिक घी और अन्य अपथ्य पदार्थों का सेवन, इन कारणों से तथा पूयमेह आदि रोगों में पेशाब बूंद बूंद निकलता है और दाह भी होता है। वह इस औषध के सेवन से दूर होता है।

ग्रीष्म ऋतु में सूर्य के ताप में अधिक भ्रमण करने और मिर्च आदि का अधिक सेवन होने पर पेशाब में जलन होने लगती है। उसके लिये यह औषधि अमृत के समान उपकार करती है।

वृक्क और उपवृक्क में शोथ आजाने से मूत्रविष देह में से चाहिये उतना न निकलता हो, फिर मुख, पैर वृषण और समस्त शरीर पर शोथ आजाना, अग्नि अतिमन्द होजाना, हृदयगति शिथिल होना, पेशाब थोड़ा और लाल या पीला होना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उस पर यह मूत्रदाहान्तक चूर्ण १ रत्ती, रसायन हरीतकी और वकुल बीज २-२ रत्ती मिलाकर आंवलों के मुरब्बा के साथ दिन में ४ बार देते रहने से थोड़े ही दिनों में वृक्क आदि अवयव सबल बन जाते हैं और शोथ निवृत्त हो जाता है। रोगी को केवल दूध पर रखना चाहिये।

हृदय की विकृति होने पर सर्वाङ्ग शोथ उपस्थित होता है, इस शोथ का प्रारम्भ पैर और हाथ पर होता है; फिर सर्वाङ्ग में फैल जाता है। साथ में घबराहट, श्वास, कास,हृदय की धड़कन आदि होते हैं। इस विकार में मूत्रशुद्धि योग्य न होनेपर

शोथ सत्वर बढजाता है। इस रोग पर मूत्रदाहान्तक चूर्ण २-२ रत्ती और हृद्य चूर्ण (डिजिटलिस के पान) ½ रत्ती मिलाकर पुनर्नवादि क्वाथ के साथ दिन में ४ बार देते रहना चाहिये। यदि मलावरोध हो तो रसायन हरीत की भी मिला देनी चाहिये

पूय मेह की तीव्रावस्था में प्रमेहान्तक वटी (नं० १) या अन्य औषध देकर प्रकोप की तीव्र अवस्था को शान्त करना चाहिये। फिर चिरकारी अवस्था में जब मंद मंद पीड़ा होती है, तब इस चूर्ण का प्रयोग गोक्षुरादि गूगल के साथ कराने से लीन विष नष्ट हो जाता है। और स्वास्थ्य की प्राप्ति हो जाती है।

पूयमेह की जीर्णावस्था में पेशाब में पूय न हो, किन्तु पेशाब में जलन, घबराहट और मूत्र परिमाण कम हो गया हो तो मूत्र-दाहान्तक चूर्ण २ रत्ती, सुवर्णमाक्षिक भस्म और चन्द्रकलारस आध आध रती तथा खोरासानी अजवायन २ रत्ती मिलाकर दिया जाता है।

फिरंग के विषजनित वातरक्त उपस्थित होने पर हाथ और विशेषतः पैरों के अंगुष्ठों पर शोथ आता है। शोथस्थान लाल काला भासता है. अंगुली से दबाने पर वेदना होती है, उसमें जलन भी होती रहती है। शोथस्थान पर और सारे पैरों पर प्रस्वेद आता रहता है। फिर शोथ बढता जाता है। शारीरिक उष्मा १०१° डिग्री हो जाती है। विष संचय अधिक होने पर ज्वर १०३° डिग्री तक पहुँच जाता है। उस रोग पर मूत्रदाहा-न्तक चूर्ण और शिलाजीत को काली सारिवा, मजीठ, गिलोय और आंवले के फांट के साथ दिन में दो बार देने तथा रात्रि को उदर शुद्धि के लिये कुमार्यासव देने से विकार थोड़े हो दिनों में शमन होजाता है।

शीतला होने पर रक्त में विषोत्पत्ति होती है। क्वचित् यह विष शीतला शमन होने पर भी शेष रह जाता है। फिर सर्वाङ्ग में कण्डू, सर्वाङ्ग शोथ, पेशाव में ओज (albumen) जाना, पेशाव लाल हो जाना और वमन आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उस पर मूत्रदाहान्तकचूर्ण गोरोचन मिश्रण और सुवर्ण माक्षिक भस्म मिला कर शहद के साथ थोड़ी थोड़ी मात्रा में दिन में ४ या अधिक बार देते रहने पर विष और विषज सर्व उपद्रव थोड़े ही दिनों में दूर हो जाते हैं। साथ में वमन अधिक हो तबतक नीबू के छिल्के की राख ४-८ रत्ती तथा पेशाव द्वारा जल और विष को बाहर निकालने के लिये श्वेतपर्पटी १-२ माशा थोड़े जल के साथ देते रहना चाहिये। एवं रोगी को केवल दूध पर रखना चाहिये।

विसूचिका रोग की तीव्रावस्था में पेशाव विशेषतः नहीं होता। किन्तु रोग बल कम होजाने पर पेशाव की उत्पत्ति होने लगती है। कभी वृक्क पर विषका असर अधिक पहुंच जाने पर मूत्राघात (वृक्क संन्यास) हो जाता है। फिर रक्त में मूत्र विष वृद्धि होने पर जब वह मस्तिष्क में पहुंच जाता है; तब काटना, मारना बूम मारना, कपड़े फाड़ना आदि उन्माद जैसे लक्षण उत्पन्न होते हैं। ऐसी अवस्था में सूतशेखर देने के अतिरिक्त मूत्रदाहान्तकचूर्ण और गोक्षुरादि गूगल दिन में ३ बार देने से वृक्क विकार दूर होकर मूत्रोत्पत्ति होने लगती है। आवश्यकता हो तो नारायण तेल को निवाया कर हाथ पैर पर मर्दन कर के सेक करें।

आफरा, मलावरोध आदि कारणों से कितनेक रोगियोंके वृक्क भी योग्य कार्य नहीं कर सकते फिर मूत्र विष रक्त में वढ़

जाता है। छाती में दाह, असम्बद्ध प्रलाप, शुष्कपैत्तिक कास और निद्रा नाश आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उस रोग पर मूत्रदाहान्तक चूर्ण, मौक्तिक पिष्टी और सितोपलादि चूर्ण मिला कर दिन में ३ बार अनार शर्वत के साथ देने से प्रकृति स्वस्थ हो जाती है।

२६. प्रमेहपिडिका प्रकरण

१. प्रमेहपिटिकाहर योग

विधि—मिरच्या कंदका चूर्ण ४ से ६ रत्ती को गुड़ में मिला गोलियां बनाकर रोगी को निगलवाकर शीतल जल पिला देने से आध घण्टे में दस्त और वमन होने लगती है। किसी किसी को ५-७ दस्त और वमन होते हैं। इस तरह दोनों ओर संशोधन होते हैं, तथा रक्त में रहा हुआ विष निकल जाता है। इसी कन्द को जल में घिस कर प्रमेह पिटिका (अदीठ आदि सब प्रकार के प्रमेहजनित फोड़ों) पर लेप करते रहने से मात्र ३ दिन के भीतर सराविका कच्छुपिका, विद्रधि आदि भयंकर बढ़े हुए फोड़े सब गल जाते हैं।

इनके अतिरिक्त इस कन्द के लेप से श्लीपद, गलगण्ड, कण्ठमाल और रसौली आदि भी ३ दिन में दूर होजाते हैं। मेद वृद्धि को यह कन्द नष्ट करता है। अण्ड कोष वृद्धि को यह दूर तो कर देता है; किन्तु एक सप्ताह के पश्चात् पुनः जल या मेद भर जाता है,। इस हेतु से अण्डकोष वृद्धि इसके लगाने से दूर होने पर टिञ्चर आयोडिन का इञ्जेक्सन करालें तो लाभ हो सकता है। (आ० नि० मा०)

सूचना—इस कन्द के सेवन करने पर बेसन, शक्कर,

गुड़, तेल, मिर्च, खटाई और हींग का त्याग कर देना चाहिये। यदि मिर्च, हींग आदिका छौंक देने पर उसकी वास रोगी को आजायगी, तो भी कण्ठरोध हो जाता है। फिर बोलने में असमर्थ होजाता है।

सूचना—यदि रोगी दस्त और वमन लगने से घबराजाय या निर्बलता आजाय, तो २ तोले घी को निवाया कर इलायची के दाने १० नग को पीस मिलाकर पिला देवें। जिससे दस्त और वमन तुरन्त बन्द हो जावेंगे, तथा कण्ठ भी खुल जायगा।

३ दिन या जितने दिन तक इस कन्द का उपयोग करें, उतने ही दिन तक प्रयोग बन्द करने के पश्चात् भी तैल आदि पदार्थों का सेवन नहीं करना चाहिये। आग्रह पूर्वक पथ्य पालन करना चाहिये।

२७. मेदोरोग प्रकरण

१. त्रिमूर्तिरस।

विधि—शुद्धपारद, शुद्धगन्धक और लोह भस्म, तीनों समभाग मिलाकर निर्गुण्डी के पत्तों के रस और सफेद मुसली के क्वाथ के साथ १-१ दिन मर्दन करके २-२ रत्ती की गोलियां बना लेवें। (यो० र०)

मात्रा—१ से २ गोली तक ३ माशे लोध और ६ माशे शहद के साथ देवें। फिर ऊपर षडुषण (पीपल, पीपला मूल, चव्य, चित्रक, सोंठ और काली मिर्च), त्रिफला (हरड़, बहेड़ा, आंवला) पांचों नमक (सैंधानमक, साम्भरनमक, समुद्रनमक, कांचनमक, कालानमक,) और बावची के बीज, इन सबको मिला कूट कपड़ छान चूर्ण कर ६-६ माशे थोड़े जल के साथ देते रहें।

उपयोग—इस रसायन का उपयोग मेद, शोथ, अग्निमान्द्य और आमवात को दूर करने के लिये होता है। यह रसायन

पचनेन्द्रिय से सम्बन्ध वाली वातवाहिनियां और पचन क्रिया करने वाले अवयव सबका सबल बनता है। इस रसायन के साथ षड्ूषणादि चूर्ण का संयोग होने से आमाशय रस की उत्पत्ति सत्वर बढ जाती है, आम और मेद जलने लगता है। रक्त के भीतर और त्वचा से सम्बन्ध वाले मेदाणु गलने लगते हैं, आमाशय और अन्त्र में उत्पन्न सेन्द्रिय विष या कीटाणु नष्ट होने लगते हैं। मलशुद्धि नियमित होने लगती है; तथा वातवाहिनियाँ सबल बनकर पचनेन्द्रिय संस्थाको सबल बना देती हैं। फिर पचन क्रिया बलवान् होने पर मेद, मेद जनित शोथ (स्फीति) और आमवात सहज दूर हो जाते हैं। मेदो वृद्धिमें जोमेद है, वह देह को मोटा तो बना देता है; किन्तु देहका पोषण नहीं करता; विपरीत देह के बल का शोषण करता है। मेदो रोग अधिक बढ़ने पर थोड़े परिश्रम से श्वास भर जाता है; क्षुधा, तृषाका वेग सहन नहीं होता; शारीरिक परिश्रम करने से मन घबराता है; शरीर भार रूप भासता है; उदर मोटा हो जाता है; देह पर चिकना प्रस्वेद आता है; प्रस्वेद में दुर्गन्ध भी अधिक होती है; निद्रा अधिक सताती है; वायु का मार्ग मेद से रुक जाने के कारण उदर में वायु का विचरण सम्यक् नहीं होता; अनेक बार उदर में वायुभरा है, ऐसा भासता है; और मन में व्याकुलता बनी रहती है। ऐसी स्थिति में इस रसायन का सेवन अति हितावह है। ३-४ मास तक पथ्यपालन पूर्वक औषध सेवन किया जाय, तो लाभ हो जाता है। इस प्रयोग में कज्जली रसायन, जन्तुघ्न और कोष्ठस्थ दोषनाशक है। लोह भस्म, रक्ताणु वर्धक, रक्तप्रसादक, बल्य, रसायन और दीपन पाचन है। निर्गुण्डी वातहर होने से वातवाहिनियों को सबल बनाती है। षड्ूषण दीपन, पाचन; त्रिफला,

पाचक, उदरशोधक और रसायन; पञ्चलवण पाचक और आमवातनाशक; तथा बावची कीटाणु नाशक, मेदोहर और कफशोधक; लोध अन्त्र शक्तिवर्धक और विषहर; एवं शहद मेदोहर और रसायन है।

३०. उदर रोग प्रकरण

१. यकृत्प्लीहारिलोह

विधि—शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, लोहभस्म, अभ्रक भस्म, मैनसिल, हल्दी, शुद्ध जमालगोटा, सोहागा का फूला और शिलाजीत, ये ९ ओषधियां १-१ तोला तथा ताम्र भस्म २ तोले लें। पहले कज्जली कर फिर भस्में और मैनसिल मिलावें पश्चात् शेष ओषधियां मिलाकर मर्दन करें। तत्पश्चात् दन्तीमूल, निसोत, चित्रकमूल, निर्गुण्डी, त्रिकटु, अदरख और भांगराके रस या क्वाथ की १-१ भावना देकर १-१ रत्ती की गोलियां बना लेवें। (भै० र०)

मात्रा—१-१ गोली रोगोचित अनुपान के साथ देवें।

उपयोग—इस लोह के उपयोग से जीर्ण, एक दोषज, द्विदोषज और त्रिदोषज प्लीहा और यकृत् की वृद्धि, आठों प्रकार के उदर रोग, ज्वर, पाण्डु, कामला, शोथ, हलीमक, अग्निमान्द्य, और अरुचि आदि व्याधियां नष्ट हो जाती हैं।

यह रसायन यकृत् और प्लीहा पर मुख्य लाभ पहुँचाता है। इस हेतु से इसका नाम यकृत्प्लीहारि लोह रक्खा है। ताम्र, लोह और पारद का प्रभाव यकृत् और प्लीहा पर विशेष पड़ता है। एवं जमालगोटा, दन्तीमूल और निसोत भी यकृद् विरेचक हैं। मैनसिल कीटाणुनाशक, दोषघ्न, लेखन,

रक्तविकार हर और सारक है। सोहागा कीटाणु नाशक, दुर्गन्धहर और पाचक है। अभ्रक भस्म, मांस और वात वाहिनियों के लिये पौष्टिक होने से यकृत्प्लीहा को बलवान् बनाती है। शिलाजीत रसायन और दोषनाशक और योग वाही है। भांगरा से जमालगोटा और ताम्र की उष्णता और दोषका दमन होता है। चित्रकमूल, त्रिकटु, निर्गुण्डी और अदरख पाचक, अग्निप्रदीपक और यकृत्प्लीहा के दोष के नाशक है।

पारद, मनः शिल, जमालगोटा, ताम्रभस्म आदि के संयोग से आमाशय और अन्त्र में रहे हुए आमविष और कीटाणु देह से बाहर निकल जाते हैं; तथा शेष जल जाते हैं। इस तरह आमाशय और अन्त्र की शुद्धि हो जाने से ज्वर का निग्रह होता है; उदर रोग और शोथ का नाश हो जाता है, तथा अग्नि प्रज्वलित होती है। फिर भोजन में रुचि उत्पन्न हो जाती है।

लोह और ताम्र के योग से यकृत् का कार्य नियमित हो जाने से कामला की निवृत्ति हो जाती है। एवं लोह, पारद आदि से रक्त संशोधन होजाने और रक्त की वृद्धि हो जाने से पाण्डु और हलीमककी निवृत्ति हो जाती है।

विविध प्रकार के विषमज्वर, यकृद्विकार आदि कारणों से प्लीहा वृद्धि हो जाती है। फिर प्लीहा वृद्धि के साथ पाण्डुता, मंदजीर्ण ज्वर; अग्निमान्द्य, क्षीणता, मूत्र में पीलापन, नाड़ी की गतिमन्द होना और मलावरोध आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उस रोग पर यह यकृत्प्लीहारि लोह अच्छा लाभ पहुँचाता है। उदर शोधन करके ज्वर को जल्दी निवृत्त कराता है तथा रक्त प्रसादन कर प्लीहा वृद्धि का सत्वर ह्रास कराता है। यह औषधि त्रिकटु और शहद के साथ या जल के साथ दी जाती है।

प्लीहोदर होने पर भगवान् धन्वन्तरि कथित

"मन्दज्वराग्निः कफपित्तलिङ्गैरुपद्रुतः क्षीणबलोऽतिपाण्डुः"

अर्थात् मन्दज्वर, अग्निमान्द्य, कफप्रकोप, पित्तविकार बल का ह्रास और अति पाण्डुता आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। प्लीहा की अति वृद्धि हो जाने से कभी कभी उदरगुहा और उरोगुहा के अनेक अवयवों को स्थान भ्रष्ट कर देती है। वमन होना, मलमूत्र में रक्त निकलना और रोग बढ़ने पर यकृत् की वृद्धि हो जाना आदि लक्षण प्रकाशित होते हैं। इन लक्षण युक्त प्लीहोदर पर यह यकृत्प्लीहारि लोह अति लाभदायक है। शान्तिपूर्वक औषध कुछ समय तक पथ्यसह सेवन करना चाहिये। भोजन में दीपन औषधि मिला हुआ यूष देना चाहिये।

गुड़ या शक्कर नहीं देना चाहिये। अनेक रोगियों को गुड़ शक्कर के सेवन से ज्वर बढ़ जाता है।

प्लीहोदर और प्लीहा वृद्धि पर पिप्पल्यादि लोह (चि० त० प्रदीप द्वितीय खण्ड पृष्ठ ३१८ हितावह है किन्तु आमाशय और अन्त्र दूषित हो तथा बद्धकोष्ठ बना रहता हो, तब पिप्पल्यादि लोह से सम्यक् लाभ नहीं मिल सकता ऐसी अवस्था में यह यकृत्प्लीहारि रस लाभदायक माना जाता है।

विवर्धनयुक्त यकृद्दाल्युदर होने पर अतिशय यकृद्वृद्धि, कभी कभी यकृत् नाभि तक चला जाना, कामला, कण्डू, ज्वर, प्लीहावृद्धि, मंदनाड़ी, ज्वर, नाक, मुँह, मसूढे और गुदा से रक्तस्राव आदि लक्षण उपस्थित होते हैं।

यदि रोग प्रथमावस्था में है तो यकृत्प्लीहारिलोह के सेवन से निवृत्त हो जाता है। भोजनमें शक्कर रहित दूध केवल दिया-

लगजाय तो लाभ सत्वर होता है। यदि रक्तस्राव अत्यधिक होने लगगया हो और अति क्षीणता आगई हो, तो फिर इस औषधि से लाभ होने की आशा कम रहती है।

सूचना—इस यकृद्दाल्युदर रोगमें उत्तेजक औषधि बहुधा नहीं दी जाती। इस बातको लक्ष्यमें रखकर यकृत्प्लीहारि लोह देनी चाहिये। यह औषधि भी कुछ अंशमें उत्तेजक है। अतः मात्रा अधिक न दें।

त्रिफला कषाय अनुपान रूपसे देवें। आमाशय अन्त्र आदि का शोधन होजाने पर यकृत्प्लीहारिलोहको बन्दकर चिकित्सा-तत्व प्रदीप द्वितीय खण्ड पृष्ठ ३१८ में लिखी हुई यकृदरिलोहका सेवन शान्तिपूर्वक कराते रहना चाहिये।

यदि उपदंश विष जनित यकृद्दाल्युदर है; तो उस पर इस लोह की अपेक्षा सोमल प्रधान औषधि विशेष गुणदायक मानी जाती है।

विशीर्णतायुक्त यकृद्दाल्युदर के प्रारम्भमें यकृत् दृढ़ और कठिन होता है। रोग सबल बनने पर यकृद्वृद्धि, कामला, कृशता, ज्वर, अति प्रस्वेद, मूर्च्छा, भ्रम, अतिसार, प्रलाप, उदर पर नसें नीली लाल भासना आदि लक्षण प्रतीत होतेहैं। इस रोगमें हृदयकी भी विकृति हो जाती है। यदि हृदयको अधिक हानि न पहुँची हो, तो यकृत्प्लीहारिलोह त्रिफलाक्वाथ के साथ देने से लाभ होजाता है। इस रोगमें विरेचन द्वारा रक्त दबावको जल्दी कम करना पड़ता है। रक्तदबाव कम हो जाने पर यकृदरिलोहके साथ प्रवाल पञ्चामृत जैसी पित्तशामक औषधि देनी चाहिये।

कभी कभी शराबियोंको यकृद्दाल्युदर होजाता है; तब प्रारम्भमें भारीपना प्रातःकाल खट्टीवमन होना, आफरा,

क्षुधानाश, कोष्ठबद्धता मुखमण्डलपर अति निस्तेजता, हृदयमें विकृति और क्षीणता आदि लक्षण प्रकाशित होते हैं। ऐसे रोगियोंको यकृत्प्लीहारिलोह त्रिफला कषायके साथ देनेसे यकृत्का भारीपन दूर होता है, उदरकी शुद्धि होती है, और रोगका बढ़ना रुक जाता है। उदर शुद्धि, यकृत्का हलकापन, और रक्त दबावका ह्रास होने पर यकृदरिलोहका सेवन कम मात्रामें दीर्घकाल तक कराना चाहिए।

२. उदरारिरस–

विधि—शुद्ध पारद, शौक्तिक भस्म, विशुद्ध नीलेथोथेकी भस्म, जमालगोटेके शुद्ध बीज, पीपल और अमलतासकी फली का गूदा, इन ६ ओषधियोंको सम-भाग मिलाकर थूहरके दूधमें ६ घंटे खरल करके २-२ रत्तीकी गोलियां बनावें। (र० चं०)

मात्रा—१ से २ गोली तक इमली के फलोंके रसके साथ प्रातःकाल देवें; तथा विरेचन लग जानेपर दही-भात पथ्य रूपसे देवें। नमक बिल्कुल न देवें।

उपयोग—यह रसायन तीव्र विरेचन करा जलोदरको दूर करता है। स्त्रियोंके जलोदर (बीजकोषके जलोदर) को भी निवृत्त करता है, ऐसा मूल ग्रंथकारका लेख है।

इस रसायनका विशेषतः उपयोग यकृद्वृद्धि और प्लीहा-वृद्धिसे उत्पन्न तथा कफ प्रधान जलोदरपर होता है। कफज जलोदरके साथ उदरशूल अति मलावरोध हो, तो यह रस लाभ पहुँचा सकता है। इस रसायनके प्रयोगसे तीव्र विरेचन

होताहै। जिससे अन्त्र या मल-मार्गमें प्रतिबंध हो वह दूर होजाताहै। एवं दस्तमें जल विशेषरूपसे निकल जाता है। इस हेतुसे रक्तको उदर्य्याकला या वीजकोष अथवा जिस जिस स्थान पर जल संगृहीत हो, वहांसे आकर्षित कर लेना पड़ता है। इस शोषण क्रिया (Absorption) के संबंध में वैज्ञानिक विचारणा (पृष्ठ २७६ से २७८) में समझाया है।

यकृद्विकृति से उत्पन्न जलोदर या सर्वाङ्ग शोफ में यदि हृदय और वृक्क स्थानकी क्रियामें विशेष विकृति न हुई हो, मूत्रोत्पत्ति कार्य करने में वृक्क समर्थ हों, सारे शरीर में निस्तेजता, पांडुता, मुंह और हाथ पर कुछ स्फीति, मूत्र में पीलापन, जिह्वा पर मैल की तह आजाना, क्षुधानाश, नाड़ी की मंदता आदि लक्षण उपस्थित हों और कोष्ठबद्धता अत्यधिक हो, तो इस रसायन को प्रयुक्त करना चाहिए।

स्त्रियों के वीजकोष में जल भर के जलोदर (Ovarian dropsy) बन जाता है। इसका विचार डाक्टरी मतानुसार चि० त० प्र० द्वितीय खंड के पृष्ठ २०६-२१० में किया है। इस विकार में एक कोषमय व्याधि हो, तो इस विरेचन से लाभ पहुँच सकता है।

३· रोहितकलोह।

विधि—रोहितक (रोहड़े) की अन्तर छाल, सौंठ, काली मिर्च, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, बायविडंग, नागरमोथा और चित्रकमूल, इन दस ओषधियों का कपड़छान चूर्ण १-१ तोला तथा लोह भस्म १० तोले मिला रोहितक आदि ओषधियों के क्वाथ की ३ भावना देकर २-२ रत्ती की गोलियां

बना लेवें । (र० सा० सं०)

मात्रा –१ से २ गोली दिन में दो बार, शरफोंका के मूल के क्वाथ, दूध, मट्ठे या रोगानुसार अनुपान के साथ देवें।

उपयोग—यह लोह प्लीहा वृद्धि, अग्रमांस (बढ़ा हुआ मांस) और यकृद्वृद्धि को शोथ और जीर्णज्वर सह दूर करता है। इस प्रयोग में मुख्य औषधि रोहितक है। रोहितक प्लीहा-वृद्धि यकृद्वृद्धि को नाश करने में अत्युत्तम औषधि है। रोहितक में कृमिघ्न, व्रणनाशक, नेत्र रोगहर, विषशामक और रक्त प्रसादन गुण भी रहा है। कुष्ठरोग में भी इसका क्वाथ स्नान, पान और लेप आदि कार्यों में व्यवहृत होता है।

लोह भस्म में बढ़ी हुई प्लीहा का ह्रास, यकृत के बल की वृद्धि करना और रक्ताणुओं की वृद्धि का गुण है; उसके साथ रोहितक का संयोग होने से प्लीहा वृद्धि के शमन का कार्य बहुत जल्दी होता है। त्रिकटु, त्रिफला और त्रिमद का प्रभाव आमाशय और अन्त्र पर विशेष पड़ता है। ये सब विकार की निवृत्ति करके पाचन क्रिया को सुधारते हैं। एवं यकृत्प्लीहा आदि के ह्रास कराने में सहायक होते हैं।

४. पाशुपतोरस ।

विधि-शुद्ध पारद १ तोला, शुद्ध गन्धक २ तोले, लोह-भस्म ३ तोले तथा शुद्धवच्छनाग ६ तोले लें। पारद गन्धक की कज्जली करें। फिर लोह और वच्छनाग क्रमशः मिलाकर चित्रकमूल के क्वाथ के साथ १ दिन खरल करें। पश्चात्

धतूरे के बीजकी कालीराख ३२ भाग, सोंठ, काली मिर्च, पीपल, लौंग, और छोटी इलायचीके दाने ३-३ तोले, जायफल, जावित्री, सेंधानमक, सांभरनमक, समुद्रनमक, कालानमक, बिड़नमक, थूहरका क्षार, अर्कक्षार, एरण्डक्षार, इमली का क्षार, अपामार्ग क्षार, और पीपलवृक्ष की छाल का क्षार, ये १३ औषधियां ६-६ माशे: हरड़, जवाखार, सज्जीखार, भूनी हींग, जीरा, सोहागेका फूला, ये ६ औषधियाँ १-१ तोला मिला कपड़छान चूर्ण करें। फिर पारद मिश्रण के साथ चूर्ण मिला नींबू के रसमें १२ घण्टे खरल कर १-१ रत्ती की गोलियां बनालें। (र० सा० सं०)

मात्रा—१-१ गोली भोजन कर लेनेपर दिन में दो बार दें।

अनुपान— उदर रोग में मुसली का रस, अतिसार में मोचरस, ग्रहणी में सेंधानमक मिला हुआ मट्ठा, शूल में काला नमक, पीपल और सोंठका चूर्ण, अर्श में मट्ठा, राजयक्ष्मा में ६४ प्रहरी पीपल, वात जनित रोगमें सोंठ और संचर नोन, पित्तजरोग में धनिया-मिश्री तथा कफज रोग में शहद पीपल।

उपयोग—पाशुपत रस तुरन्त प्रभाव दर्शाता है। यह अग्निप्रदीपक, आमपाचक और हृद्य है। विसूचिका को तत्काल निवृत्त कर देता है। उदर रोग, अतिसार, ग्रहणी, शूल, अर्श, राजयक्ष्मा में अग्निमान्द्य तथा वातज, पित्तज और श्लेष्मज विकारों को तुरन्त ही नष्ट कर देता है।

यह रसायन आमाशय रसकी वृद्धि तथा यकृतपित्त का स्राव अधिक करता है; एवं कीटाणुओं का नाश करता

है। क्षार दीपन-पाचन क्रिया बढ़ाता है; तथा धतूरे के बीज की राख कीटाणुओं का नाश और अन्त्र के संशोधन का उत्तम कार्य करती है। इस हेतु से इस रसायन के सेवन से पचन क्रिया प्रबल बन जाती है। फिर अग्निमान्द्य; अपचन, तथा अपचन से उत्पन्न अतिसार, विसूचिका शूल, उदरमें भारीपन और उदरवात आदि शमन होजाते हैं। वात और कफजनित विकारों में इसकडा पयोग हितकारक है। पित्त प्रकोप जनित विकार में इसका उपयोग नहीं करना चाहिये। पित्तशमनार्थ प्रवाल पञ्चामृत, वराटिका भस्म शंखभस्म आदिका प्रयोग किया जाय, तो वह विशेष लाभ-दायक माना जायगा।

वातज और कफज अपचनको निवृत्त करने के लिये पाशुपत रस अति प्रभाव शाली औषध है। हमने इसका उपयोग अनेक बार करके लाभ उठाया है।

५. प्लीहार्णवरस

विधि—नीबू के रससे शोधित हिंगुल, शुद्ध गन्धक, सोहागेका फूला, अभ्रक भस्म और शुद्ध बच्छनाग, ये सब ४-४ तोले; पीपल और काली मिर्च २-२ तोले लें। इन सबको मिला काली निर्गुण्डी के पानके स्वरसमें ७ दिन खरल करके १-१ रत्ती की गोलियां बांधलें। (इ० च०)

मात्रा— १-१ गोली दिन में दो बार निर्गुण्डी के पान के रस और शहद के साथ।

उपयोग-यह रसायन ९ प्रकार के प्लीहा विकार को

शीघ्र दूर करता है। एवं ज्वर, अग्निमान्द्य, कास, श्वास, वान्ति, चक्कर आना आदि लक्षणों को भी शान्त करता है। जब प्लीहा बहुत बढ़ जाती है, तब ज्वर बना रहता है, अग्नि मन्द होजाती है, कफवृद्धि होकर श्वास-कास उपस्थित होते हैं, मुखमण्डल निस्तेज और शुष्क भासता है, मलावरोध बना रहता है, भोजन करने पर उदर में भारीपन आजाता है, किसी भी कार्य के लिये मन में उत्साह नहीं आता, शीत काल में शीत अधिक लगता है आदि लक्षण प्रतीत होते हैं। उस पर इस वटी का सेवन शान्ति पूर्वक पथ्यपालन सह एक दो मास तक कराने पर पुनः स्वास्थ्य की प्राप्ति हो जाती है। शीतल वायु शीतल जल गुड़ शक्कर वाले पदार्थ और देर से पचने वाले पदार्थों को छोड़ देना चाहिये। ज्वरावस्था में स्नान नहीं करना चाहिये। एवं मलावरोध रहे तो कुमार्यासव या अन्य सारक लेकर उदर शुद्धि करते रहना चाहिये।

६. यकृच्छूल विनाशिनी वटी।

विधि—नौसादर १ तोला, सैंधा नमक २ तोले, तालमखाना रोहितक की छाल, अजवायन, और चित्रकमूल की छाल, ये चारों १०-१० तोले लें। सबको मिला कूट कपड़छान चूर्ण कर दुर्गन्धीवाले करञ्ज के पानों के स्वरस में २ दिन खरल कर २-२ रत्ती की गोलियां बनालें। (भै० र०)

मात्रा—१ से २ गोली दिन में २ बार २ तोले करेले के रस के साथ।

उपयोग—यह वटी यकृत् में होने वाले शूल, यकृद्वृद्धि, गुल्म और प्लीहोदर को नष्ट करती है। करेले के रस

में देने से प्रायः वान्ति होकर विष निकल जाता है। अति निर्बल शरीर हो तो करेले का रस कम देवें या निवाये जल के साथ दें।

७, यकृद्विकार हरी वटी।

विधि—कुटकी २० तोले, नौसादर १० तोले, काला नमक और सैंधानमक ४-४ तोले और भुनीहींग २ तोले लें। सब को मिला गोमूत्र, चित्रक मूल का क्वाथ और घीकुंवार का रस, तीनों की ३-३ भावना देकर १-१ रत्ती की गोलियां बना लेवें। (श्री वैद्य गोपालजी कुंवरजी ठक्कुर)।

मात्रा—२-२ गोली दिन में २ या ३ बार निवाये जल या कुमार्यासव के साथ।

उपयोग—यह वटी यकृत् और प्लीहा वृद्धि तथा गुल्म आदि को दूर करती है। यकृत् की वृद्धि होने पर जब पचन क्रिया योग्य काम नहीं करती, यकृत् पर दबाने से दर्द होता है, तथा कब्ज रहती है, तब इस वटी का सेवन कराया जाता है।

८, प्लीहारि वटिका।

विधि—एलवा, अभ्रक भस्म, शुद्धकासीस और छिल्के और बीच के अंकुर रहित लहशुन, इन चारों को सम भाग मिला द्रोणपुष्पी के रस में १२ घण्टे खरल कर २-२ रत्ती की गोलियां बनावें। (भै० र०)

मात्रा—२ से ३ गोली दिन में २ बार शीतल जल से देवें।

उपयोग—इस वटी के सेवन से प्लीहा वृद्धि, यकृद् वृद्धि गुल्म, अग्निमान्द्य, शोथ, कास, श्वास, तृषा, कम्प, दाह, शीत लगना, वान्ति, चक्कर आना आदि विकार दूर होते हैं।

ज्वर के पश्चात् प्लीहा वृद्धि होने पर इस वटी का सेवन अति हितकारक है। इस वटी के उपयोग से प्लीहा वृद्धि, अग्निमान्द्य, उदरपीड़ा, बार बार ज्वर बढ़ जाना, आदि सब उपद्रव दूर होते हैं।

९. कासीसाद्य वटी।

विधि—शुद्ध कासीस १ तोला, भुनी हींग २ तोले और रेवाचीनी ४ तोले मिला लहशुन के रस में ६ घण्टे खरल कर २-२ रत्ती की गोलियां बना लेवें। (भै० र०)

मात्रा—२ से ४ गोली तक दिन में दो बार शराब, द्राक्षासव, रोहितकारिष्ट या लहशुन के रस के साथ सेवन करावें।

उपयोग—इस वटी के उपयोग से यकृत्प्लीहावृद्धि, आम प्रकोप, छोटे उदरकृमि; मलावरोध, अग्निमान्द्य, मंद ज्वर आदि दूर होते हैं। यकृत् सबल बनकर अपना कार्य नियमित करने लगता है। यह यकृत और प्लीहा के विकारों के लिये महौषध है।

१०. अग्नि प्रभा वटी।

विधि—सैंधा नमक, नौसादर, यवक्षार, बिड़नमक और रस सिंदूर को सम भाग मिलाकर पटोलमूल के क्वाथ के साथ १ दिन खरल करके २-२ रत्ती की गोलियां बना लेवें। (भै० र०)

मात्रा—२ से ४ गोली प्रातः काल तालमखाने के जल के साथ देवें। यकृत् या पित्ताशय के शूल पर अनुपान करेले के एक पान का रस देना चाहिये।

उपयोग—इस वटी से यकृत् और प्लीहा के महा घोर रोग दूर होते हैं। जिन रोगियों को ज्वर और अधिक मलावरोध न रहते हों, उनके लिये यह हितावह है। तालमखानेका जल अनुपान रूपसे देनेसे क्षार द्वारा अन्त्र की श्लैष्मिक कला को हानि नहीं पहुँचती, एवं मन शुद्धि में सहायता मिल जाती है। यकृत वृद्धि, प्लीहावृद्धि, यकृच्छूल आदि रोगों को दूर करने में यह वटी अति उपकारक है।

११. प्लीहोदरारि चूर्ण

विधि—इन्द्रायण के फल ५ तोले, कड़वी जीरी (काली जीरी) आमा हल्दी और सैंधा नमक २०-२० तोले लें। सबको मिला कर कपड़ छान चूर्ण करें।

मात्रा—२ से ४ रत्ती सुबह जल के साथ देवें; या छोटी मात्रा में दो या तीन बार देवें।

उपयोग—यह चूर्ण प्लीहावृद्धि, यकृद् वृद्धि, कोष्ठबद्धता, आमवृद्धि, उदर रोग, शोथ, कफप्रकोप और उदर कृमि को दूर करता है। मात्रा अधिक होने पर उदर में दर्द सह पतले जल जैसे दस्त लगते हैं।

बालकों को डब्बा रोग में यह चूर्ण गोरोचन के साथमिला कर दिया जाता है। इसके सेवन से आध्मान, कफ की घर घर, बद्धकोष्ठ, घबराहट और ज्वर दूर होते हैं। केवल उदर शोधनार्थ देना हो, तो रात्रि के सोने के समय माता के दूध के साथ ½ रत्ती दिया जाता है।

शोथ रोग प्रकरण

१. पुनर्नवाष्टक कषाय ।

विधि—पुनर्नवा की जड़, नीम की अन्तर छाल, पटोल पत्र, सोंठ, कुटकी, गिलोय, दारू हल्दी और हरड़ इन ८ औषधियों को समभाग मिला कर जौ कूट चूर्ण करें । (वं० से०)

मात्रा—४ से ८ तोले का क्वाथ कर दो हिस्से करें । प्रातः काल को एक पीलेवें । दूसरा हिस्सा शीशी में रहने दें । उस का सेवन सायं काल को करें ।

उपयोग—इस क्वाथ के सेवन से सर्वाङ्ग शोथ और उदर रोग का निवारण होता है; तथा लक्षण रूप या उपद्रव रूप से उत्पन्न कास, शूल, श्वास और पाण्डु भी नष्ट हो जाते हैं । विशेषत' यह क्वाथ मण्डूर भस्म के साथ अनुपान रूप से दिया जाता है ।

यह क्वाथ शोथ रोग की उत्तम और निर्भय औषधि है । यह मूत्र को साफ लाता है; एवं कोष्ठ वद्धता को भी दूर करता है । ज्वरयुक्त शोथ और ज्वररहित शोथ, मूल रोग और लक्षण रूप शोथ, सब पर व्यवहृत होता है । निर्बल व्यक्ति को मात्रा कम देनी चाहिये ।

२. मूत्रल कषाय ।

विधि—पुनर्नवामूल, ईख का मूल, कुश का मूल, कांस का मूल, छोटे गोखरू, सौंफ़, धनिया, सागोन के फल, मकोय, (काक माची) कासनी के वीज, ककड़ी (खीरा) मग्ज, का गिलोय, पाषाण भेद, काकनुज और कमल के फूल,

इन १५ ओषधियों को समभाग १-१ तोला मिला कर जौकुट कर लेवें। (श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्रा—२-२ तोले चूर्ण को १६ तोले जल में मिलाकर चतुर्थांश क्वाथ करके छान लें। फिर शिलाजीत या श्वेतपर्पटी ४ रत्ती से १ माशा तक मिलाकर पिलादें। इस तरह दिन में २ या ३ वार देवें।

उपयोग—इस क्वाथ का उपयोग वृक विकार जनित शोथ से होता है। वृकविकार से उत्पन्न शोथ में मूत्र में एलब्यूमिन जाना, मुख पर प्रथम शोथ आना, शोथ जीर्ण होने पर रक्त-वाहिनियां विकृत होना और हृदय निर्बल होना, पेशाव बहुत कम उतरना, रोगी निस्तेज और स्थूल हो जाना तथा विशेषतः मुख मण्डल, कटि देश वृषण और मूत्रेन्द्रिय पर सत्वर और विलक्षण शोथ आना, ये लक्षण प्रकाशित होते हैं। इन पर यह क्वाथ विशेष लाभ पहुँचाता है।

कभी कभी मूत्रग्रन्थि का बाह्यअंश (Renal cortex) शीर्ण होने पर हृदय और रक्त वाहिनियों में भी विकृति आ जाती है। फिर शोथ उत्पन्न होता है। यह शोथ दोनों पैरों से आरम्भ होता है। प्रारम्भ में मुख मण्डल आक्रान्त नहीं होता। इस प्रकार में भी मूल विकार वृक से उत्पन्न हुआ है। इस विकार पर भी यह कषाय लाभ पहुँचाता है। इस प्रकार में पुनर्नवा मण्डूर के साथ यह क्वाथ देना विशेष हितावह माना जायगा।

अश्मरी जनित कमर और पेट में शूल चलता हो, उसमें इस क्वाथ के साथ २ भाग (१५ तोले में २ तोले) और खुरासानी

है। शाखाएं पतली और कोमल होती हैं। पान त्रिकोणाकार, शिखर भाग में अतितीक्ष्ण और आधार स्थान में सकड़े होते हैं। फूल सफेद ३ से ४ मिलीमीटर (लगभग ⅛ इंच) लम्बे और थोड़े फूलों के छत्राकार गुर्दे में आते हैं। बीज चिकने ४ से ६ मिली० व्यास के, गोलाकार, काले, सूक्ष्म सफेद हृदयाकार उपकवच वाले होते हैं।

उपयोग—यह रसायन वृषणवृद्धि और अन्त्रवृद्धिका नाश करता है। शांति पूर्वक दीर्घकाल तक सेवन करनी चाहिये कोष्ठबद्धता हो, तो हरड़ का क्वाथ या एरण्ड तैल का अनुपान रूप से उपयोग करना चाहिये। मूत्रशुद्धि न होती हो, तो यवक्षार मिश्रित हरड़ का क्वाथ लेना चाहिये, और समय में कान फोड़ी का क्वाथ विशेष हितावह है।

२. वृद्धि हरि वटिका।

विधि—कुन्दरु गोंद, कांटे वाले करंज के सेके हुए फलों का मग्ज़ और काला नमक ४-४ तोले, इन्द्रजौ, वायविडंग, छिलका और अंकुर निकाला हुआ लहशुन, इन्द्रायन की जड़, अजमोदा और रूमी मस्तंगी, ये ६ ओषधियां २-२ तोले, भूनी हींग और डीका माली (नाडी हिंगु) १-१ तोला लें। सबके कपड़ छान चूर्ण को घी कुंवार के रस में १ दिन मर्दन करके २-२ रत्ती की गोलियां बनालेवें।

श्री पं० यादवजी, त्रिकमजी, आचार्य

मात्रा—२ से ४ गोली दिन में ३ बार जल के साथ।

उपयोग—यह वटिका वातज और कफज वृद्धि रोग, कृमि विकार और उदर पीड़ा को निवृत्त करती है।

३. श्लीपदारि लोह।

बनावट—हरड़, बहेड़ा, आंवला, मुण्डलोहभस्म, कान्त लोहभस्म और शुद्ध शिलाजीत, ये सब २-२ तोले मिला त्रिफला के क्वाथ में ७ दिन तक मर्दन कर २-२ रत्ती की गोलियां बना लेवें। (भै० र०)

मात्रा—१ से ४ गोली तक दिन में २ बार त्रिफला के क्वाथ के साथ सेवन करावें।

उपयोग—इस लोहका शान्तिपूर्वक ४-६ मास तक पथ्य पालन कर सेवन करने से बढ़ा हुआ पुराना श्लीपद रोग भी शमन हो जाता है।

४. वृद्धि हर लेप।

(१) एरण्ड के बीज की गिरी, रास्ना, एलुआ, गूगल, कुन्दरु, काली मिर्च और पुनर्नवा, इन ७ औषधियों को सम-भाग मिला जल के साथ पीस कर पतला कल्क तैयार करें। इसे थोड़ा गरम कर लेवें; फिर वृषण पर से बालों को दूर कर लेप लगा देवें। इस तरह दिन में दो समय लेप करने से नया वृषणशोथ ३-४ दिन में ही दूर हो जाता है।

सूचना—गरम जल में कपड़ा भिगो कर सम्हाल कर पहले के लेप को धो, फिर स्वच्छ कपड़े से पोंछ कर नया लेप लगाना चाहिये।

(२) शिलारस को तमाखू के ताजे पान पर लगाकर गरम

करें। फिर अण्डकोष पर से बालों को निकाल कर पान को बांध देवें। ऊपर से लंगोट लगा लेवें। इस तरह १ सप्ताह तक दिन में दो बार करते रहने से वृषणावरण में भरा हुआ जल सूख जाता है, वृषणशोथ निवृत्त हो जाता है, और वेदना शान्त हो जाती है।

सूचना—तमाखु के व्यसनी को तमाखु के पान का उपयोग करना चाहिये। औरों को उबाक आकर वमन हो जाती है। वमन होने पर लाभ जल्दी होता है; परन्तु कितनेक रोगी घबरा जाते हैं। अतः निर्बल मन वाले को नागर बेल के पान पर शिलारस लगाकर बांधना चाहिये।

(३) खाने का तमाखू ५ तोले और मुलतानी मिट्टी ५ तोले को सुबह भिगो, शाम को मल छान कर पकालें। रात्रि को लेप करें। किन्तु पानी न पिलावें (प्यास अधिक होती है) दूध किंवा घी वारम्वार पिलाने से वृषणवृद्धि दूर होती है।
(श्री पं० राधाकृष्णजी द्विवेदी)

(४) फुलसन (विदियासन) के बीजों को रात्रि में शराब में भिगो कर प्रातः पीस पकाकर उपरोक्त विधि से लेप करें। यह सत्वर लाभ कारी है। (श्री पं० राधाकृष्णजी द्विवेदी)

(५) मनः शिल, जायफल और जावित्री को गोदुग्ध में पीस कर लेप करें। और ऊपर एरण्ड पत्र रख कर लंगोट बांधने से १ सप्ताह में नया वृषण वृद्धि रोग शमन हो जाता है।

(६) दशांगलेप २ तोले और उदुम्बर सार ६ माशे मिला

निर्गुण्डी के रस में पीसकर वृषण पर लेप करने से शोथ और वेदना दोनों शमन हो जाते हैं।

(श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

वक्तव्य—वृद्धिरोग में मल-मूत्र साफ लाने वाले तथा वायु को अनुलोमन करने वाले आहार और औषध का उपयोग करना चाहिये

श्लीपद और वृद्धि रोग दोनों की उत्पत्ति फ़ाइलेरिया नामक कीटाणु जनित होने से डाक्टरी में वृद्धिरोग का अन्तर्भाव श्लीपद (Elephantiatis) में किया है। उपचार और पथ्यापथ्य दोनों के लिये अनेक अंश में समान मानागया है।

गण्डमाला, गलगण्ड प्रकरण

गण्डमाला हर योग।

(१) शिरीष बीज की गिरी का चूर्ण २० तोले, कचनार छाल का चूर्ण १० तोले तथा शहद ६० तोले लेवें। तीनों को मिला १५ दिन तक रहने देवें। फिर निकाल रोज प्रातः सायं १-१ तोला सेवन करें।

(श्री कविराज पं० हरदयालजी वैद्य वाचस्पति)

सूचना—प्रातः और सायं को कुछ भी खाने या पीने के पहले औषध सेवन करें। और ऊपर गण्डमाला हर अर्क पीते रहें।

(२) काञ्चनार गूगल २ माशे, प्रवाल पञ्चामृत ४ रत्ती और सुवर्णभस्म $\frac{1}{4}$ रत्ती मिला २ हिस्सा कर सुबह शाम देवें। अनुपान रूप से कचनार छाल, वरने की छाल, गोरख मुण्डी और खैर की छाल या लकड़ी का बुरादा समभागलेकर २- २

तोले का क्वाथ करके पिलाते रहें; तथा गूगल, गन्धक और रसोंत, तीनों को जल में पीसकर लेप करते रहने से नया गण्ड माला रोग १-१॥ मास में दूर हो जाता है ।

(श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

(३) वातरोग में लिखे हुए पञ्चामृत लोह, गुग्गुलु का सेवन, अमृत प्राशा वलेह के साथ प्रातः सायं कराते रहने से नयेगण्डमाला और गलगण्ड रोग में अच्छा उपयोग होता है ।

(४) रस कपूर १ तोला, भिलावा, अजवायन और गुड़ २-२ तोले मिला कूट कर १-१ रत्ती की गोली बना कर मट्ठे के साथ १-१ गोली निगलवाते रहने से गण्डमाला रोग दूर हो जाता है ।

गण्डमालाहर अर्क ।

विधि—पुनर्नवा मूल २ सेर, मुण्डी और वरना की छाल १-१ सेर तथा जल २० सेर लेवें । पुनर्नवादि ओषधियों को जौकूटकर जलमें भिगों देवें । २४ घण्टे के पश्चात् नलिका यन्त्र द्वारा ५ से ७ सेर अर्क निकाल लेवें । यदि कचनार की छाल भी १ सेर मिला दीजाय तो अच्छा ।

(कविराज श्री० पं० हरदयालजी वैद्यवाचस्पति)

उपयोग—गण्डमाला हर योग के सेवन के साथ इस अर्क में से रोज ५-५ तोले दिन में दो वार पिलाते रहने से ४०-४५ दिन में गण्डमाला और अपची निश्चय ही दूर हो जाती है ।

सूचना—रोग अति जीर्ण हो जाने पर फिर लाभ होने की आशा कम रहती है।

दही, मट्ठा दूध, उड़द की खटाई, पक्का भोजन और अन्य कफकारक पदार्थों का त्याग कर देना चाहिये।

यदि रोगी को ज्वर भी आता हो तो सुदर्शन-चूर्ण ऽ२ दोसेर, सारिवा ऽ१ सेर गिलोय ऽ॥ आधा सेर सबको जोकूट चूर्ण करके ।ऽ४ जल में भिगो ऽ५ पांच सेर अर्क खेंच लेवें।

मात्रा–४–४ तोले समान भाग गण्डमालाहर अर्क मिला कर प्रातः सायं पिलाते रहने से गण्डमाला रोग ज्वर सहित हो उसका नाश हो जाता है।

एक १०–१२ सालकी आयुका बच्चा था जिसको ३–४ कण्ठमाला थी; मंद ज्वर सतत् रहता था क्रमशः शारीरिक वजन भी न्यून होता जाता था। अतः क्षय जन्य रोग निश्चय हुआ था। इसरोगी को ६ मासतक प्रातः सायं २–२ माशे सुदर्शनचूर्ण बराबर दियागया और प्रातः काल १–१ तोला बछड़े का गोमूत्र यथा सम्भव देतेरहे थे जिससे सब गांठें और ज्वर सदाके लिये दूर होगये और रोगी नैरोग्य और पुष्ट होकर हमारे सामने जिसको आज २०–२५ वर्ष हुए हैं देख रहा हूँ। (रा. वैद्य पं० रामचंद्रजी)

३ गण्डमालान्तकलेप

विधि—एक कलीवाले साफ तुषरहित लहसुन ५ तोले

को खरल में पीस फिर ४ तोले वैसलीन मिला ३ घण्टे खरल कर मिश्रण बना लेवें।

उपयोग—गण्डमाला की गिल्टी के आकार की कपड़े की गोलचुकत्ती काट लेप लगाकर ग्रन्थिपर चिपका देवें। फिर ऊपर कपड़े की पट्टी बांध देवें। इस चुकत्ती और पट्टी को दिन में दो बार बदल देवें। यदि और समय में औषधिसह पट्टी स्थान से हट जाय, तो उसे निकाल उसी समय नयी औषधिवाली पट्टी लगा देवें।

यह औषध गण्डमालाकी प्रारम्भावस्था में अतिहितकारक है। १५-२० दिन तक रोज पट्टी बांधते रहने से लाभ होने लगता है। प्रारम्भ में ग्रन्थि में मृदुता आती है; फिर ग्रन्थि में संगृहीत दूषित रस पतला होकर रक्त में लीन होने लगता है। पश्चात् २-३ मास में ग्रन्थियां नष्ट हो जाती हैं।

सूचना—इस औषध के सेवन काल में ऊपर लिखा हुआ गण्डमाला हर योग अथवा गण्डमालाकण्डन रस (रस-तन्त्र सार प्रथम खण्ड) का सेवन कराते रहना चाहिये।

छोटे बालक को गण्डमाला होने पर अपामार्ग के मूल के छोटे छोटे टुकड़े की माला बनाकर गले में पहना देवें। इस माला के प्रभाव से भी २-३ मास में गिल्टियां दूर होती हैं।

(कविराज श्री पं० हरदयालजी वैद्यवाचस्पति)

४. गुग्गुलु पञ्च तिक्तक घृत।

(पञ्चतिक्तघृत गुग्गुलु)

विधि—नीम की छाल, गिलोय, अडूसा, परवल के पान, छोटी कटेली, गोरखमुण्डी, वरना की छाल, कचनार की छाल, निर्गुण्डी मूल, नागर मोथा, अमलतास का मूल, और सुहिजने का मूल त्वक् ये १२ औषधियां ४०-४० तोले लेवें। सब को जौकूट कर २०४८ तोले जल में मिला कर अष्टमांश क्वाथ करें। फिर छान कर चूल्हे पर चढ़ावें। उसमें २० तोले त्रिफला के साथ शुद्ध किया हुआ गूगल, १२८ तोले घी, तथा पाठा, वायविडङ्ग देवदारु, गजपीपल, सज्जीखार, जवाखार, सोंठ, हल्दी, सौंफ चव्य, कूठ, मालकांगनी, काली मिर्च, इन्द्र जौ, अजमोद, चित्रकमूल, कुटकी, भिलावा, वच, पीपलामूल, मजीठ, अतीस, हरड़, बहेड़ा, आंवला और अजवायन, इन २६ औषधियों को १-१ तोला का कल्क मिलाकर मंदाग्नि पर घृत सिद्ध करें।

(श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्रा---आधे से १ तोला प्रातः सायं गोदुग्ध के साथ।

उपयोग—यह घृत प्रबल वातरोग, सन्धिगत, अस्थिगत और मज्जागत वातप्रकोप, कुष्ठ, नाडीव्रण, अर्बुद, भगंदर, गण्डमाला, उर्ध्व जत्रुगत रोग, गुल्म, अर्श, प्रमेह, यक्ष्मा, अरुचि श्वासरोग, पीनस, कास, शोष, हृद्रोग, पाण्डु, गल रोग, विद्रधि और वातरक्त आदि दोषों में हितावह है। यह घृत नये और पुराने अतिबढ़े हुए उपद्रवयुक्त गण्डमाला, अस्थिक्षय, भगंदर और भगंदर आदि पिटिका, पर विशेष व्हवहृत होता है।

कफ प्रकृति वालों को नूतन एवं जीर्ण रोग में हितावह है ।

३ व्रण रोपण रस।

विधि—शुद्ध गन्धक, शुद्ध पारा और अफीम, तीनों समभाग लेवें। पहले पारद गन्धक की कज्जली करके अफीम मिलावें। और ३ दिन नींबू के रस में मर्दन करें। पश्चात घी कुंवार का रस, नर मूत्र (बकरे का मूत्र) चित्रक मूल का क्वाथ सैंधा नमक का जल (१-१६) काले नमक का जल, इन सब के साथ ७-७ दिन खरल करके १-१ रत्ती की गोलियां बनावें । (र० यो० सा०)

मात्रा—१-१ गोली दिन में २ बार शहद, गूगल अथवा जल के साथ देवें।

उपयोग—यह व्रणरोपण रस, समस्त व्रण, सद्यो जात व्रण मकड़ी के विष जनित व्रण, भगंदर, गांठ और गण्डमाल आदि को नष्ट करता है।

पथ्य—सफेद चांवल, मूंग गेहूं और घी देवें। नमक न देवें इस रसायन में अफीम आता है, अतः मात्रा अधिक न देवें।

४, व्रणान्तक रसायन।

विधि—सफेद सोमल १ भाग, सिंगरफ २ भाग, सफ़ेद कत्था ३ भाग लें। सबको मिला अदरख के रस में ३ दिन खरल करके सरसों के समान गोलियां बना लेवें। (र० यो० सा०)

मात्रा—१ से ३ गोली घी के साथ दिन में २ बार।

उपयोग—इस व्रणान्तक रसायन के सेवन से व्रण जल्दी सूख जाते हैं, और भर जाते हैं। उपदंश, रक्तविकार और अन्य कितनेक रोगों में व्रण हो जाने पर सत्वर नहीं भरता तथा नाड़ी व्रण होने पर वर्षों तक दुःख पहुँचाता है, उन सब पर इस रसायन का सेवन कराने से सत्वर लाभ हो जाता है।

सूचना—भोजन में घी अधिक लें। ६ मास तक मूंग, करेला, कुष्माण्ड, गुड़ और केला नहीं खाना चाहिये।

उपदंश जन्य व्रण विशेष पर विशेष गुणकारी है।

५. विड़ङ्गारिष्ट।

विधि—वायविड़ङ्ग, पीपलामूल, रास्ना, कूड़े की छाल, इन्द्रजौ, पाठा, एलवालुक (अभाव में कूठ या नेत्रवाला) और आंवला, इन ८ औषधियों का जौकूट चूर्ण ६४-६४ तोले को ८१९२ तोले जल में मिला कर क्वाथ करें। चतुर्थांश (२०४८ तोले) जल शेष रहने पर पात्र को उतार कर छान लें। क्वाथ शीतल होने पर शहद १९०० तोले, धाय के फूल २० तोले, त्रिजात (दाल चीनी, तेजपात और छोटी इलायची, के दाने) ८ तोले प्रियङ्गु, कचनार की छाल और लोध ४-४ तोले तथा त्रिकटु (सोंठ, काली मिर्च और पीपल) ३२ तोले का चूर्ण मिला मुखमुद्रा कर १ मास रहने देवें। आसव परिपक्व होने पर छान कर बोतलों में भर लेवें। (शा० सं०)

सूचना—मूलग्रन्थ में वायविड़ङ्ग आदि औषधियां २०-२०

तोले लिखी हैं। एवं क्वाथ का जल १०२४ तोले शेष रखने का लिखा है। परन्तु यह भूल परम्परा नकल करने वालों की हुई होगी ऐसा मानकर हमने सुधार लिया है। १०२४ तोले जल में १२०० तोले शहद मिलाने से अरिष्ट बलवान् नहीं बन सकेगा। २०-२० तोले ही औषध लेने से जल ५१ गुना हो जाता है। यह भी मर्यादाविरुद्ध होता है।

मात्रा—१। से २।। तोले दिन में दो बार जल मिलाकर देवें।

उपयोग—यह अरिष्ट दीपन, पाचन, ग्राही, कीटाणुनाशक, और अन्त्रसंशोधक है। मूलग्रन्थकार ने नये उत्पन्न होने वाले अन्तर्विद्रधि आदि विकारों के प्रतिबन्ध के लिये इस अरिष्ट का निर्माण किया है। यह अरिष्ट आमाशय और अन्त्र में स्थित सेन्द्रियविष का रूपान्तर करा देता है, कीटाणुओं को नष्ट करता है; तथा पचनक्रिया को बढ़ा देता है। इस हेतु से रस और रक्त की शुद्धि हो जाती है। परिणाम में विद्रधि की उत्पत्ति में रुकावट आजाती है; एवं भगन्दर, गण्डमाला का बल भी घट जाता है। पचन क्रिया बढ़ जाने के हेतु से दूषित आम, मेद नहीं बनता और वात प्रकोप नहीं होता जिससे कीटाणुजन्य उरुस्तंभ, प्रमेह, हनुस्तंभ और प्रत्यष्ठीला रोग दूर हो जाते हैं।

उदर कृमि पर भी यह विडङ्गारिष्ट लाभदायक है। यह अरिष्ट छोटे कृमियों को नष्ट कर देता है। एवं बड़े कृमियों की उत्पत्ति को रोकने में हितावह है। बड़े कृमियों को कृमिनाशक औषध और विरेचन द्वारा निकाल फिर इस विडङ्गारिष्ट का सेवन कराया जाय, तो अन्त्र और रक्त में रहे हुए

कृमिजन्य विष और अण्डे नष्ट हो जाते हैं। अन्त्र निर्दोष होकर सत्वर सबल बन जाती है फिर कृमि रोगको अथवा कृमि जन्य पाण्डु, उदरशूल, अतिसार, वमन, हृद्रोग, शिर दर्द आदि की पुनः उत्पत्ति नहीं हो सकती।

६ हरड़ पाक

विधि—हरड़, सोनामुखी (सनाय), मजीठ, छोटी हरड़ मिश्री और घी प्रत्येक १०-१० तोले तथा कालीमुनक्का ५० तोले लेवें। मुनक्का को धोकर बीज निकालदेवें। शेष औषधियों को कूटकर कपड़ छान चूर्णकरें। मुनक्काको पीसकर कल्क करें फिर शेष चूर्ण और घी मिलाकर मर्दन करें। एक जीव होने पर अमृतबान में भरलेवें। (आ० नि० मा)

मात्रा—३-३ माशे दिन में दोवार सेवनकरें।

उपयोग—इसपाकके सेवन से विस्फोटक की उष्णता उस हेतुसे शिरःशूल और त्वचापर उत्पन्न पिडिकाएं आदि दूर होते हैं। रक्तका प्रसादन होता है; उदरशुद्धि होती है; तथा मस्तिष्क शान्त बनता है।

७. अन्तर्विद्रधि हर योग।

विधि—सुहिंजने के क्वाथकी ७ भावना दी हुई कज्जली २-२ रत्ती दिन में २ वार प्रातःसायं शहद के साथ देकर फिर सुहिंजने की छालका स्वरस १-२ तोले पिलातेरहनेसे देह के भीतर किसी भी स्थान में उत्पन्न विद्रधि यदि आमावस्था में है; तो उसका निवारण होजाताहै। इस तरह उपान्त्रप्रदाह, यकृत्प्रदाह, प्लीहाप्रदाह, आन्त्रप्रदाह, फुफ्फुस-प्रदाह आदि अन्त्रविकारों पर भी यह प्रयोग हितावह सिद्ध हुआ है।

ताज़ी छाल न मिलनेपर सुहिंजने की सूखी छाल का कषाय बनाकर उपयोग में लिया जाता है। सुहिंजने की छालके कषाय में गेहूँके आटे की पुल्टिस बनाकर विद्रधि स्थान पर बांधते रहनेसे बाहरसे भी विष का शोषण होने लगताहै। हो सके तो सुहिंजनेकी छाल मिलाकर उबाला हुआ जल पीनेको देना चाहिये। एवं रोगी को केवल दूध पर रखना चाहिये। दूधको भी सुहिंजने की छालका चूर्ण और ४ गुना जल मिला क्षीरपाक विधि से पका (दुग्धावशेष कषाय कर) कर पिलाते रहना विशेष हितावह है। आवश्यकतापर अधिक ज्वर और घबराहट रहनेपर ब्राह्मीवटी या कस्तूरी भैरव रस भी देते रहना चाहिये।

सुहिंजने के समान वरना के कषाय की ७ भावना देकर कज्जलीका उपयोग करने से भी अन्तर्विद्रधिका प्रसादन होजाताहै।

८. दशांग उपनाह (पुल्टिस)

विधि—दशांग लेप का चूर्ण १ तोला, घी १ तोला, शहद १ तोला, सूखा चूना बुझाया हुआ १ तोला, कूटीहुई अलसी ५ तोले लें। पहले दशांगलेप घी और शहद मिला लेंफिर अलसी मिला जल डाल कर रबड़ी जैसा पतला बनाहीकर मंदाग्निपर पकावें। उसे पकाने के समय चिमचसे चलाते रहें। फिर एक तख्तेपर साफ कपड़ा बिछा, उसपर चिमचसे फैला दें। सहन होसके उतनागरम रहनेपर, व्रणशोथपर घी वाला हाथ लगाकर बांधदेवें।

उपयोग यह पुल्टिस पकने वाले फोड़े को जल्दी पका करफोड़देता है। यदि शोथमें पाकका आरम्भ न हुआहो, तो उसे बैठा देता है। जिन व्रणशोथमें सूई चुभानेके समान पीड़ा

होतीरहती है, वह पकजाताहै। ऐसे पकनेवाले फोड़ेपर पुल्टिस २-२ घंटेपर बदलनी चाहिये। जिसमें दर्द नहो उसपर ३-३ घन्टे पर पुल्टिस बदले तो चल सकेगा।

व्रण फूट जाने पर भी जब तक पूय निकलता रहे, तब तक (२-३ दिन) इस पुल्टिस को बांधने से व्रण जल्दी शुद्ध हो जाता है।

९ क्षारादि उपनाह।

विधि—सांभर नमक ३ माशे, लोटिया सज्जी ३ माशे, हल्दी १ माशा, घी ६ माशे और कूटी हुई अलसी या बाजरी का आटा २ तोले लें। सबको मिला जल में पतला करें। फिर मंदाग्नि पर पका कपड़े पर फैला कर पुल्टिस बना लेवें। फिर सहन हो उतना गरम बांध देने से पके फोड़े आध या एक घन्टे में फूट जाते हैं।

सूचना—इस पुल्टिस का उपयोग कच्चे फोड़े पर नहीं करना चाहिये।

१० आगन्तुक व्रणान्तक लेप।

विधि—एरण्डतैल के नीचे की गाद, गुड़, नमक, हल्दी और शिर के बाल सबको मिला लोहे की कुड़छी में डाल कर गरम करें। फिर कपड़े पर डाल सहन हो उतना गरम चिपका देवें। इस तरह दिन में एक या दो बार लेप लगाते रहने से ३-४ दिन में चोट वाले भाग में जिस स्थान पर शोथ आया है, उस स्थान के भीतर रुफ आ जाती है और बाहर की त्वचा

सफेद मृत हो जाती है। फिर शनैः शनैः वह त्वचा निकल जाती है, और विकार बिल्कुल दूर हो जाता है।

(आ० नि० मा०)

सूचना–मृत त्वचा जब तक स्वयमेव दूर न हो तब तक फाड़कर न निकालें। अन्यथा भीतर की कोमल लाल त्वचा पक जावेगी यदि अन्त त्वचा में पूयो त्पत्ति हुई हो या जल भर गया हो तो कैंची से थोड़ा कतर कर या छिद्रकर पूय या जल को निकाल दें। त्वचा को न निकाल दें।

११ निर्गुण्डी तैल।

बनावट–सम्हालू की जड़ (शाखा) और पत्तों को कूट यन्त्र विधान से निकाला हुआ स्वरस २ सेर और तिल तैल २ सेर मिला यथाविधि तैल सिद्ध करें। (च० सं०)

मूल ग्रन्थ में 'समं तैलम' वचन होने से टीकाकार चक्रपाणि ने समान स्वरस लेने का विधान किया है किन्तु और आचार्यों ने निर्गुण्डी स्वरस ४ गुना लेने को लिखा है।

उपयोग–इस तैल के बाह्य और आभ्यन्तर प्रयोग से नाड़ी व्रण का शोधन होता है। कुष्ठ, पामा, अपची, विविध प्रकार के स्फोट और सब प्रकार के व्रण दूर होते हैं, तथा वात विकार का भी निवारण हो जाता है। इस तैल का उपयोग पान, मर्दन, वर्ति, बस्ति और नस्य आदि विविध रूप से होता है। यह तैल गण्डमाला, कान का नासूर कफ प्रकोप जनित व्याधियों और विविध वात रोगों पर अच्छा लाभ पहुँचाता है।

१२ व्रणशोधन तैल।

विधि—कड़वे निम्बके पान साफ किये हुए ६४ तोले, हल्दी ३२ तोले और निसोत की छाल ३२ तोले लें। फिर ३६ सेर जल में मिला कर चतुर्थांश क्वाथ करें। उसे छान कर पुनः चूल्हे पर चढावें, उसमें तिल का कल्क २४ तोले और तिल तैल ऽ२। सेर मिला कर मंदाग्नि से तैल सिद्ध करें।

उपयोग—इस तैल के उपयोग से व्रणों का जल्दी शोधन होता है। सामान्य व्रण, सड़े हुए दुष्ट व्रण, नाड़ी व्रण, भयंकर वेदना, शोथ और ज्वर सह व्रण प्रकोप, इन सब में शोधन कर पूय को बाहर खेंच लेने के लिये इस तैल का फोहा रक्खा जाता है। पहले नीम के पान और त्रिफला के उबाले हुए जल से व्रण को धो दें। फिर इस तैल का फोहा रख, शहद की पट्टी रख कर ऊपर व्रण पट्टी बांधें। इस तरह पट्टी बांधते रहने से अति गहरे व्रण भी थोड़े ही दिनों में शुद्ध होकर भर जाते हैं।

नाड़ी व्रण में इस बाह्य उपचार के साथ वंग भस्म और शृंगभस्म मिलाकर पुनर्नवादि क्वाथ या मंजिष्ठादि क्वाथ के साथ देते रहने से विषनिवृत्ति, रक्त प्रसादन और व्रणशोधन रोपण कार्य त्वरित होते हैं।

नूतन दुष्ट व्रण अधिक गहरा हो गया हो, व्रण के हेतु से ज्वर भी रहता है। ज्वर १०० डिग्री से कम न होता हो, ऐसी अवस्था में यह तैल १-२ माशे रात्रि के आधे घन्टे पहले

पिलाते रहने और महायोग राज गूगल १-१ रत्ती तथा चिरायता, चन्दन, सोंठ, अमृतासत्व, आंवला और नागर मोथा सबका कपड़ छान चूर्ण ६-६ रत्ती मिलाकर शहद के साथ दिन में ३ समय देते रहने से थोड़े ही दिनों में व्याधि नष्ट हो जाती है।

छोटे बालकों की माता के स्तन कभी कभी पक जाते हैं। फिर उन में से पूय स्राव होता रहता है। तीव्रशूल चलता है; कान पर शोथ आजाता है, और कुछ दिन व्यतीत होने पर गहरा घाव हो जाता है उस पर इस शोधन तैल का फोहा बार बार लगाते रहने तथा कुटकी, मंजीठ, सारिवां, नागरमोथा, पाठा और पटोल पत्र का चूर्ण २-२ माशे दिन में ३ बार देते रहने से स्तना व्रण थोड़े ही दिनों में भर जाता है।

मधुमेह के विष से उत्पन्न प्रमेह पीटिका, अलजी और प्रमेह विरहित अलजी होने पर भयंकर वेदना और जलन होती है। इसका वर्ण काला लाल होता है, और इसके चारों ओर छोटी छोटी फुन्सियां हो जाती हैं। इसका पाक होने पर ज्वर तीव्र रूप में रहने लगता है। इसके फूट जाने पर गहरा घाव हो जाता है। उसमें इस शोधन तैल का पिचु रखने और दिन में दो बार स्वच्छ करते रहने से घाव थोड़े ही दिनों में भर जाता है। इस बाह्य उपचार के साथ उदर सेचनार्थ औषध भी देते रहने से विशेष लाभ पहुँचता है। सुवर्ण माक्षिक भस्म, प्रवाल पिष्टी और गिलोयसत्व को शहद के साथ दिन में दो बार देवें। सुबह को काली सारिवा और परवल के पान १-१ माशे का क्वाथ कर के माक्षिक मिश्रण के साथ देते रहने से विष शमन होकर जल्दी लाभ पहुँचाता है।

एक वयोवृद्ध मधुमेही को व्रत कमर के ४ थे मणके पास था वह ४ इञ्च लम्बा और ४ इञ्च गहरा था पेशाब में ५ से ७ प्रति सहस्र शर्करा जाती थी पहले डाक्टरी उपचार करने पर अच्छा न हुआ. तब उसका आयुर्वेदिक उपचार श्री पं० गुणेशास्त्री से कराया गया, उसे शर्करा कम करने के लिये उदर सेवनार्थ औषध देने के साथ इस व्रण शोधन तैल से व्रण चिकित्सा प्रारम्भ की। परिणाम में ४८ दिन में व्रण भर गया और पेशाब में शक्कर जाना भी शमन हो गया।

एक युवक रोगी को मूत्रेन्द्रिय के अग्रभाग में निरुद्ध प्रकाश (Phimosis) रोग हुआ था। उस रोग में शिश्न मणि पर की त्वचा तंग हो जाती है, जिससे पेशाब करने में रुकावट होती है। उनकी शस्त्र चिकित्सा कराकर डाक्टरी औषधिसे व्रण धावन शोधन २४ दिन करने पर भी लाभ नहीं हुआ; तब आयुर्वेदीय पद्धति से चिकित्सा प्रारम्भ की। जिस पर इस व्रणशोधन तैल की पट्टी लगाई जाती थी। उससे १२ दिन के भीतर घाव पूर्ण भर गया था।

एक युवा मनुष्य को पत्थर की खान में सुरंग से उड़े हुए पत्थर के लगने पर दाहिने पैर पर गहरी चोट लगी थी उसे। २० मील दूर से औषधालय में लाये थे। इस व्रणशोधन तेल की पट्टी से ११ दिन में लाभ हो गया था।

एक अधी वयोवृद्धा स्त्रीके पैर परसे चूनेकी गाड़ी चली जाने से बांये पैर का चूरा होगया था। उस पैर को घुटने के पास से डाक्टरों ने काट दिया था। इस शस्त्र चिकित्सा के तीसरे दिन पट्टी खोलने पर घाव पुष्ट हो जाने का प्रतीत हुआ। जिससे टांके नहींलग सकते थे। रुग्णा, निर्बल, वृद्ध और कृश होने से और अधिक पैर काटना अशक्य प्राय था। इस हेतु से उसका उपचार आयुर्वेदीय पद्धति से इस शोधन तैल द्वारा

आरम्भ किया, और घाव अति सड़ा हुआ होने पर भी इसी तैल से २॥ मास में भर गया।

१३ अरिमेदादि तैल।

विधि-अरिमेद (दुर्गन्ध वाले खेर) की छाल ४०० तोले को २०४८ तोले जल में मिला कर चतुर्थांश क्वाथ करें। फिर छान कर उसमें तिल तैल १२८ तोले तथा अरिमेद की छाल, लौंग, गेरू, काला अगर, पद्माख, मजीठ, लोध, मुलहठी, लाख, बड़की जटा, नागर मोथा, दालचीनी, जायफल, कपूर, शीतल मिर्च, कत्था, पतंग, धायके फूल, छोटी इलायची के दाने, नागकेशर, कायफल, इन २१ औषधियों के १-१ तोले का कल्क मिला कर मंदाग्नि पर तैल सिद्ध करें। (शा० सं०)

हम कपूर पहले नहीं मिलाते। तैल छानने पर दो तोले मिलाते हैं।

उपयोग—यह तैल मूल ग्रन्थकार ने मुख रोग पर लिखा है। मुख रोग पर जैसा यह लाभ दायक है, वैसा या उससे भी अधिक व्रणों के रोपणार्थ उपयोगी है।

व्रण शुद्ध होने पर चाहे जितना गहरा हो, इस तैल की पट्टी से शीघ्र भर जाता है। निबल रक्त वाले, वृध्द मनुष्यों के व्रण जो जल्दी नहीं भरते, वे भी इसके प्रयोग से सत्वर भर जाते हैं।

कितनेक रोगियों को उदर, जंघा आदि प्रदेश में गहरे विद्रधि हो जाते हैं। जिसकी शस्त्र चिकित्सा क्लोरो फार्म सुंघा

कर की जाती है। ऐसे घावोंपर पहले कुछ दिनों तक व्रण शोधन तेल का और फिर इस अरिमेदादि तेल का उपयोग अनेक वार श्री वैद्यराज गुणेशास्त्री ने किया है और अनुभव में पूर्ण सफलता मिली है।

एक १६ वर्ष का नवयुवक साइकल पर से गिर कर वेहोश हो गया था। उसे मोटर वालों ने आयुर्वेदीय रुग्णालय में पहुँचाया। उसके जख्म पर टांके उसकी अर्ध वेहोशावस्था में लगा लिये। उसके मुख और हाथ पर बुरी तरह से चोट आयी थी। मुखमण्डल पर ७-८ टांके लगाये थे। उसके लिये प्रारम्भ से ही इस रोपण तेल का उपयोग किया था। २५ दिन में रोगी के सब घाव अच्छे हो गये।

इस तरह यह अरिमेदादि तेल व्रणों का रोपण करने में उत्तम कार्य करता है। इस हेतु से अहमदनगर के आयुर्वेद महाविद्यालय में इसे 'रोपण तेल' संज्ञा दी है।

१६ लाल मलहम।

विधि—गन्धा विरोजा ४० तोले और हिंगुल १ तोला लें। पहले गन्धा विरोजा को कड़ाही में डाल मंदाग्नि देकर पिघलालें बीच बीच में १-२ बूंद चाकू से निकाल जल पर डालें। फिर अंगुलियों से दबा कर देखें कि मलहम का पाक हो गया है या नहीं पाक हो जाने पर कड़ाही को उतार कर तुरन्त कपड़े से छान लें। उसमें हिंगुल थोड़ा थोड़ा कर के डाल दें। और मलहम शीतल न हो तब तक चलाते रहें। यदि चलाया नहीं जायगा, तो हिंगुल भारी होने से तले में बैठ जायगा।

(श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य,)

उपयोग—यह मलहम शोधन (व्रणों को शुद्ध करने वाला) रोपण (व्रणों को भरने वाला) वेदनाहर और प्लीहा वृद्धि को दूर करने वाला है। पार्श्वशूल (उरस्तोय-प्लुरिसी) या अन्य स्थानों की वेदना पर इस के लेप से लाभ हो जाता है।

सूचना—इस मलहम को जिस स्थान पर लगाना हो उस स्थान को उस स्थान के बराबर मोटे कपड़े की पट्टी काटें। फिर एक छुरी को गरम कर उससे मलहम निकाल कर पट्टी पर फैलावें। उस पट्टी को आवश्यक स्थान पर लगावें। किन्तु लगाने के पहले उस स्थान के बालों को उस्तरे से निकाल डालें। अन्यथा पट्टी निकालने के समय बाल खिचेंगे। यदि कुछ बाल रह गये हों और खिचते हों तो तार्पिन तेल के कुछ बूंद डाल कर पट्टी को खोल लेवें। पट्टी बांधने पर उस पर कागज चिपका देवें। जिससे गन्धा विरोजा पट्टी में से बाहर न निकाले।

१५ हरा मलहम।

विधि—गन्धा विरोजा ४० तोले, जंगाल, साबून और पत्थर के कोयले २-२ तोले पापड़ खार ३ तोले लें। पहले गन्धा विरोजा को मंदाग्नि पर गरम करें। मलहम के योग्य बनने पर कपड़े से छान कर शेष द्रव्यों को कपड़ छान चूर्ण मिलालें। मलहम शीतल होने तक हिलाते रहें।

(श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

उपयोग—यह मलहम व्रणों का शोधन करने वाला, भरने वाला तथा फोड़ों को पका कर फोड़ने वाला (विदारण) है। यदि व्रण शोथ पक जाने पर भी न फूटता हो तो इस की पट्टी लगाने से जल्दी फूट जाता है। इसके अतिरिक्त ओरियंटल

सोर जिसको अकबरी फोड़ा भी कहते हैं और १ वर्ष की अवधि के बिना नहीं मिटता उस पर ३ महिने तक इस मलहम की पट्टी बांधने से अवश्य आराम होता देखा गया है।

१६ काला मलहम।

बनावट—तिल तैल १ सेर को एक कड़ाही में डाल कर चूल्हे पर चढावें। तैल गरम होने पर आध सेर सिंदूर डाल लोहे की कल्छी से चलाते रहें। छींटे न उड़ें यह सम्हालना चाहिये ऐसे ही उफाण आकर तेल चूल्हे में न गिर जाय, यह भी देखते रहना चाहिये। इस हेतु से कढाई ४-६ गुनी बड़ी रखनी चाहिये, और पंखा भी तैयार रखना चाहिये सिंदूर का पाक मंदाग्नि पर करना चाहिये। सिंदूर का रंग काला होने पर कड़ाही को नीचे उतार मलहम के २-४ बूंद जल में डाल कर देखें कि गोली होती है या नहीं? यदि मलहम फैल जाता है, तो मलहम कच्ची मानी जावेगी, और मलहम जल में डूब जाता है तो मलहम कड़क मानी जावेगी, । कड़क पाक हो जाने पर मलहम लाभ दायक नहीं रहता। योग्य पाक होने पर ही मलहम लाभ पहुँचाता है। इस मलहम को पुनः मंदाग्नि पर चढा, कड़ाही कर उसमें सूखा गंधा बिरोजा ४ सेर थोड़ा थोड़ा करके डालें; अच्छी तरह चलाते रहें। सब बेरजा अच्छी तरह मिल जाने पर कड़ाही को नीचे उतार १० तोले कपूर मिला लेवें।

(आ० नि भा०)

उपयोग—इस मलहम की पट्टी लगाने से सब प्रकार के व्रण विद्रधि दूर हो जाते हैं। यह मलहम उत्तम व्रणशोधन और व्रण रोपण है। पुराने और नये सब प्रकार के व्रणों पर लाभ दायक है।

स्त्रियों के स्तन पकते हों, तो उस पर इस मलहम की पट्टी लगाने से पूय निकल जायगा और घाव भर आवेगा। यदि स्तन में दूध बारबार आता रहता हो तो खर के दुग्ध कर्षक यन्त्र (Chest pump) द्वारा दूध को निकालते रहना चाहिये। व्रण और नाड़ी व्रण के मुख पर शोथ हो उस समय किसी भी प्रकार का मलहम नहीं लगाना चाहिये। धतूरा के पानों का कल्क बांध कर पट्टी बांधनी चाहिये। इससे दो तीन रोज में शोथ दूर हो जायगा फिर नीम तैल की पिचकारी लगाकर उपर इस मलहम की पट्टी बांधनी चाहिये। कदाचित् नाडी व्रण में ऊपर विकार रह जाता है और बीच में से घाव भरने लगता है। ऐसे समय पर हिंगुल को जल में पीस कर दर्द हो वहां से नाडी व्रण के मुख तक लेप करते रहें और फिर उस हिंगुल पर भी इस मलहम की पट्टी लगाते रहें तो नाडी व्रण भर जाता है। नाडी व्रण के रोगी को त्रिफला गूगल खाने के लिये भी देते रहना चाहिये।

१७ श्वेत मलहम।

विधि—कपूर, सफेदराल, मुर्दासंग और मोम १-१ तोला और घी ५ तोले लें। घी को गरम करें। उसमें मोम डालदें। फिर कपूर आदि चूर्ण डाल कर लकड़ी से मिला दें, और तुरन्त थाली में डाल दें। फिर १०० बार जल से धो लेवें। (र० सा०)

उपयोग—यह मलहम अति सड़े हुए घावों का शोधन करके रोपण कर देता है। जहरबाद' जैसे विष युक्त फोड़े इस मलहम से अच्छे होगये हैं।

यदि घाव हड्डी तक पहुँच गया हो,तो उस हड्डी के ऊपर मनुष्य की जली हुई हड्डी का कपड़ छान चूर्ण बुरक कर फिर मलहम की पट्टी लगा देने से घाव भर जाता है। यह मलहम मनुष्यों के अतिरिक्त गौ, घोड़ा, ऊंट आदि पशुओं के भयंकर बढ़े हुए घावों को भी भर देता है। जिस पशु के घाव पर मलहम लगाना हो, उसके लिये उसी जाति के पशुकीजली हुई हड्डी का चूर्ण बुरकाना चाहिये।

१८ जन्तुघ्न मलहम

विधि--सत्यानाशी पञ्चाङ्ग का स्वरस ४ सेर निम्ल पत्र का रस ४ सेर जल मिला हुआ शमीपत्र क्वाथ ४ सेर तीनों का कल्क ४० तोले और करञ्ज का तैल ४ सेर मिलाकर मंदाग्नि पर तैल सिद्ध करें। फिर मोम २० तोले मिलाकर छान लेवें पश्चात् ५ तोले कपूर मिला लेवें।

उपयोग--इस मलहम का उपयोग जहरी फोड़े और जन्तुओं के प्रकोप से अधिक फैलने वाले फोड़े, जिनका विष जहां जहां लगे वहां वहां फोड़े हो जाते हैं ऐसे फोड़े तथा नाड़ी व्रण पर विशेष होता है। यह कीटाणुओं का नाश करता है तथा व्रण को शुद्ध कर जल्दी भर देता है। यह मलहम अतिः निर्भय और उत्तम है।

१९. क्षतारि मलहम।

विधि--सफेद कत्था २ तोले, कपूर १ तोला और सिंदूर ६ माशे लेवें। तीनों को पीस कर धोये हुए घी अथवा वेसलीन

५ तोले में मिला कर मलहम बना लेवें।

उपयोग--यह मलहम सब प्रकार के फूटे हुए फोड़े अग्नि से जले हुए घाव, खुजली के पीले फोड़े और उपदंश के घाव आदि को मिटाता है। जिनमें से रुधिर और पूय स्राव होता रहता हो, ऐसे व्रणों का जल्दी शोधन कर भर देता है। जिन फालों में जलन होती है वह जलन इस मलहम के लगाने पर तत्काल शमन हो जाती है। यदि अर्श के मस्सों में वेदना हो रही हो तो इस मलहम के लगाने से तुरन्त शान्ति आजाती है। यह मलहम सामान्य द्रव्यों से बना है; तथापि बहुत लाभदायक सिद्ध हुआ है।

२० निम्बादि मलहम।

प्रथम विधि--नीमकी निबौली के १ सेर तैल को लोहे की कड़ाही में डाल कर गरम करें। गरम होने पर २० तोले राल और ५ तोले गन्धा बिरोजा डालें। मिल जाने पर कड़ाही को उतार तत्काल जल की भरी हुई बाल्टी में डाल देवें। कड़ाही में लगा रहे उसे भी खुरच कर उसी जल में डाल दें। २-५ मिनट बाद जल पर तैरती हुई मलहम को निकाल मजबूत कपड़े में रख कर दबावें। जिससे सारभाग बाहर निकल आवेगा और किट्ट कपड़े में रह जायगा। इस मलहम को १-१ सेर जल डाल कर ५०-१०० बार धोवें। फिर मिट्टी के पात्र में भर देवें। यह मलहम सफ़ेद; चिकना और शीतल होता है।

उपयोग- अग्नि से जले हुए भागपर चाहे जितनी जलन होती हो। चर्म चाहे जितना अधिक जलगया हो, मलहम लगातेही वेदना शमन होजाती है, और थोड़े ही दिनों में रोगी स्वस्थ होजाता है। यह मलहम घावों पर भी लगाने में उपयोगी है। किसी स्थानपर दाह होता हो, तो यह मलहम लगाने के साथ तत्काल शान्ति हो जाती है।

द्वितीय-विधि--नीम, भांगरा, बबूल, और मेंहदी, इन सब की ताजी पत्तियों का स्वरस ३०-३० तोले लें। तथा त्रिफला १५ तोले को १६ गुने जल में उबाल कर अष्टमांश क्वाथ करें, फिर स्वरस और क्वाथ के साथ सरसों का तैल १ सेर और जल २ सेर मिला कर मंदाग्नि पर पकावें। तेल सिद्ध होने पर कड़ाही को उतार कर तुरन्त छान लेवें, और उसमें देशी मोम १५ तोले मिला लेवें। यह मलहम लगभग ७० तोले तैयार होता है। (राजवैद्य भ्रमरदत्तजी मिश्र)

उपयोग--पहले व्रण को नीम के उबाले हुए जलसे धोकर साफ कर लें। फिर रूई या साफ कपड़े से पोंछ कर अच्छी तरह शुष्क करें। पश्चात् स्वच्छ श्वेत कपड़े की चकत्ती पर मलहम लगा कर व्रण पर चिपका दें। और ऊपर थोड़ी रूई रख कर पट्टी बांध दें। सामान्यतः दिन में दो समय पट्टी बांधे पूय स्राव अधिक होता हो तो ३-४ या ५ वार चकती और पट्टी बदल देवें। घाव को बार बार धोने की आवश्यकता नहीं है। दिन में दो वार ही धोवें।

गुण--कैसा भी सड़ा हुआ व्रण इस मलहम से साफ होकर भर जाता है। इस मलहम में यह विशेषता है कि शोधन और रोपण दोनों क्रिया सम्यक् प्रकार से सत्वर कर देता है।

अग्निदग्ध हर मलहम

विधि—राल २॥ तोले, कच्ची घाणीका अलसीका तेल अथवा तिल्ली का तेल १० तोले, नीला थोथा ४ रत्ती सिंदूर ६ माशे सब को कड़ाही में डाल कर अग्नि पर पिघलावें। पिघल जाने पर कांसी की थाली में चूने का पानी भर कर तत्काल ही एक कपड़े के ऊपर डाल देवें गरम गरम यथा सम्भव शीघ्रातिशीघ्र ही कपड़े से उस थाली में छाने फिर हथेली से उसे मथन कर के उस पानी को निकाल देवें। और दूसरा चूने का पानी फिर डाले। इस भांति १०८ बार बारम्बार चूनेकापान डाला जाये और धोता जावे। अन्त में ४० बूंद यू० के लिम्ड्स ऑइल सब मलहम में डाल कर हथेलीसे खूब मथन करदे और शीशी में भर लें।

उपयोग—अग्निदग्ध पर तत्काल ही लेप कर दिया जाय तो हिम के समान शीतल और शान्ति युक्त कर देता है। यदि फफोले हो गये हों तो उबाली हुई कैंची से त्वचा को काट कर पानी निकाल कर इस मलहम का लेप करें। इसका प्रयोग अग्निदग्ध की सब अवस्था में किया जा सकता है और सामान्यतया विसर्प दाहयुक्त व्रणशोथ, कीटिभा (एक्जिमा) पर भी इसका उपयोग विशेष हितकारी देखा गया है।

राजवैद्य-रामचन्द्रजी वैद्य

२१ उदुम्बर पत्र सार।

विधि—ताजी अच्छी पुष्ट गूलर की पत्ती साफ की हुई १० सेर लेवें। उसे जल में धोकर ऊखलमूसल से कूट १ मन

गाढ़े द्रवका नेत्र के चारों ओर लेप करनेसे सत्वर लाभ पहुँचता है। इस तरह यह नाड़ी व्रण, अग्निदग्ध व्रण, विद्रधि, भगन्दर, शीत आदि से हाथ पैर कटना आदि रोगों पर बाह्योपचार रूप से प्रयोजित होता है।

रक्तार्श, रक्तप्रदर, सुजाक, मधुमेह, मांसशोष, (मांस क्षय) जीर्ण, आमातिसार, प्रवाहिका और जीर्ण ज्वर आदि में इसका उदर सेवन भी कराया जाता है। ३ से ६ माशे क्षार को ३-४ तोले जल में मिला कर दिन में ३-४ बार पिलाया जाता है। जीर्ण सुजाक में इसके जल में जीरा-मिश्री मिला देने पर विशेष लाभ होता है।

२२ मधुच्छिष्टाद्य घृत।

विधि—मोम, मुलहठी, लोध, राल, मजीठ, सफ़ेदचन्दन और मूर्वा ४-४ तोले और गोघृत ६४ तोले लेवें। पहले मुलहठी, लोध, मजीठ, चंदन और मूर्वाका कल्क करें। फिर पीतलको कलईदार कडाही में कल्क, घृत और २५६ तोले जल मिलाकर मंदाग्निपर घृत पाक करें। पश्चात् कडाही को नीचे उतार छान कर राल और मोम मिला कर पुनः पिघलाकर छान लेवें।

(वं० से०)

उपयोग—यह अग्निदग्धा व्रणोंपर लगाने में अत्युपयोगी योग है। इसके लगाते रहने से थोड़े ही दिनों में व्रण भर जाता है और ऊपर की त्वचा पहले के जैसी ही आ जाती है।

सूचना—जले हुये भागों को शीतल जल नहीं लगाना चाहिये। धोने के लिये गरम जल का उपयोग करें। यदि रोगी विशेष जल गया हो, तो भोजन बन्दकर देना चाहिये। दूध, मोसम्मी का रस, अनार का रस और फल आदि पर रखना चाहिये।

२३. तुगाक्षीर्यादि लेप।

विधि—वंशलोचन, प्लक्ष (पाखर की छाल), रक्त चन्दन, गेरु और गिलोय को समभाग मिला कूटकर कपड़ छान चूर्ण करें। फिर दूध में मिला कल्क कर धोया घी मिला लेवें। (शा० सं०)

उपयोग—इस लेप के प्रयोग से अग्नि से जले हुए तथा तेल घृत से जले हुए सत्वर शुद्ध होकर भर जाते हैं। विद्युत् और तेजाब से जले हुए पर भी यह लेप हितकारक है।

उबलता हुआ तेल या घी हाथ पैर पर लग जाने पर उस भाग में भयंकर जलन होती है। उस पर शीतोष्ण उपचार करने को शास्त्र में लिखा है। अर्थात् घी तेल लगाकर अग्नि से सेकें। (किन्तु जलन अत्यधिक होने पर तत्काल शमन करने के लिये कालीसारिवा और कमल के फूलों के चूर्ण का शीतल जल में कल्क बना कर पतला लेप किया जाता है। सूखने पर उसे हटा कर फिर दूसरी तीसरी बार लेप करें। फिर दाह शमन होकर छाले हो जाते हैं। (किसी किसी को ज्वर भी आजाता है)। उन फालों को सुई लगा फोड़ कर जल निकाल डालें। उन पर यह तुगाक्षीर्यादि लेप लगावें। किसी स्थान पर क्लेद स्राव होता हो, वहाँ पर शुष्क चूर्ण ही लगाते रहें।

बाह्य प्रयोग के साथ महा ज्वरांकुश, प्रवालपिष्टी और अमृतासत्व का सेवन कराते रहने से ज्वर सह व्रण में सत्वर लाभ हो जाता है। अधिक जले हुए रोगी को हो सके

तब तक केवल दूध पर रखना चाहिये। इस मलहम से त्वचा जो नयी आती है, वह सवर्ण ही आती है।

अग्निदग्धव्रण को शीतल जल नहीं लगाना चाहिये। साफ करना हो तब गरम जलमें फोहा भिगोकर धोवें। यह चूर्ण धोये घी में मिलाकर पित्त प्रधान व्रणों पर लगाया जाता है। इस से व्रण शोधन और व्रणरोपण, दोनों कार्य होते हैं।

व्रणकुठार मिश्रण

(१) पहले १ काली बोतल वाष्पोदक (उड़ा हुआ पानी) ६० तोले लें। ६ रत्ती उत्तम कर्पूर डालें। डालकर मज़बूत डाट लगाकर लकड़ी के तख्ते पर एक सप्ताह तक खुले स्थान में रख दें। ताकि दिन में कड़ी धूप और रात्रि में चंद्रमा के प्रकाश में पड़ा रहे। कर्पूर गल जाता है। यदि कुछ डली रह जाय तो कोई हानि नहीं। बाद में पिसी हुई १२½ तोले फिटकरी और २½ तोले उत्तम नीला थोथा जो सफेद न हुआ हो वह उपरोक्त कर्पूरोदक में डालकर २४ घण्टे पड़ा रक्खें; और अच्छे शुद्ध वस्त्र से छान कर दूसरी बोतल में भरलें।

उपयोग—जो व्रण ऊपर से सफेद हों, लेखन क्रिया की आवश्यकता हो, दुर्गन्धयुक्त पूयस्राव होता हो, उनको नीम के पत्ते अथवा गूलर के छाल के सुखोष्ण क्वाथ के जल से धोकर फोहा भर कर चुपड़ दें। इसके द्वारा जन्तुघ्न क्रिया एवं लेखन क्रिया जैसी हाइड्रोजन परऑक्साइड से होती है उस से भी उग्र होती है। थोड़े से समय में ही व्रण की सफेदी मिट कर लाल अंकुरान्वित हो जाता है फिर इस क्रिया की आवश्यकता नहीं। इसके बाद अन्य व्रण रोपण मरहम लगा

सकते हैं। यदि किसी मलहम से व्रण भरता न दीखे तो नं॰ २ व्रण कुठार तैयार करलें।

(२) विधि—११ छटांक बाष्प जल (अभाव में कूपोदक को अच्छी तरह उबाल कर अर्थात् १ सेर का ऽ।।।= छटांक रहे उतना उबालें) इसमें १ छटांक प्रथम विधि वाला व्रणकुठार मिला, हिला कर बोतल भरलें इसमें से फोहा भर कर व्रण पर लगा कर प्रातः सायं पट्टी बाँध दें। इससे व्रण रोपण भी होता है और जन्तुघ्न क्रिया भी होती है। उपदंश जन्य व्रण एवं प्लेग आदि की ग्रन्थि पक कर फूट जाने के बाद, बने रहने वाले विपाक्त व्रण आदि अनेक व्रणों को यह नाश करता है।

वर्ध्म मार्श (आँखों के पलक के दाने) नं० १ व्रण कुठार का छोटा सा फोहा भरकर पलक को उलट कर दोनों के ऊपर हलके हाथ से लगाने से दो तीन बार में ही दाने मिट जाते हैं नेत्राभिष्यंद (आंखदुखना) के लिये व्रण कुठार नं० २ में समान-भागही उत्तम गुलाब का अर्क मिलानेसे नेत्र विन्दु बन जाता है। गरम पानी २० तोलेमें ४ रत्ती टंकण क्षार अर्थात् बोरिक एसिड डालकर उस गरम गरम जल से विशुद्ध रुईके द्वारा आंखो पर सेक करे और आंखके पलकको उलट कर भीतर स्थित दूषित पूय (रस्सी) को सुखोष्ण जल (इसी बोरिक लोशन) से धोवे और रुईके फोहे से पोंछलें। इस प्रकार साफ किये हुए नेत्रों में ४-४ बूंद इस नेत्र विन्दु की प्रातः सायं डालने से आंख दुखना मिट जाता है। इसीभांति कान बहना एवं नासूर आदि पुराने व्रणों को मिटाने के लिये आवश्यकतानुसार नं० १ अथवा नं० २ व्रणकुठार की २-४ बूंदें भीतर प्रवेश कर रोगानुसार एक सप्ताह या चार सप्ताह तक प्रयोग करने से पुराने व्रण, नासूर, भगंदर, सुजाक आदि में प्रयोग किया

जासकता है। चमत्कारी गुण दिखाता है। यह हमारा बहुत अनुभूत है। समान्य खर्च की दवा विधिपूर्वक बनाकर उपयोग में लाने से ज्यादा कीमती दवाका कार्य करती है।

(श्री राजवैद्य पं० रामचंद्रजी)

व्रणकुठार तैल

ताजी स्वर्णक्षीरी के पंचाग को विशुद्ध जल से धोकर, कूट निचोड़ कर रस निकाल लें। उस स्वरस से चतुर्थांश असली मीठी सरसों का उत्तम तैल मंदाग्नि से पकावें तेल मात्रशेष रहने पर छान, नितार कर बोतल में भर लेवें। इसके प्रयोग से साधारण से साधारण एवं गंभीर से गंभीर व्रण, नाड़ी व्रण (नासूर), क्षयजन्य और अस्थिपर्यन्त व्रण नाश होते हैं। यह हमारा शतशोऽनुभूत है। व्रण का बहुत छोटा छिद्र हो और तेल नहीं जा सकता हो तो गरम जल से उबाली हुई (स्टरे लाइज की हुई) इंजेक्शन की सुई और पिचकारी द्वारा व्रण की अन्तिम परिधि तक पहुँचाने की कोशिश करनी चाहिए। इसके द्वारा क्षयजन्य व्रण जो अस्थि पर्यन्त पहुँच जाते हैं और हड्डी की झिल्ली एवं हड्डी के ऊपर का भाग गल जाता है, उसके टुकड़े २ होकर बाहर निकल जाते हैं और चिरस्थायी लाभ होजाता है। यह हमारा परम्परागत का अनुभूत है। (श्री राजवैद्य पं० रामचन्द्रजी।)

२४ आगन्तुक क्षत हर योग।

(१) अपामार्गके पत्ते का स्वरस निकाल उसमें क्षत स्थान को डुबाने से अथवा उस स्वरस में रुई या कपड़े को भिगोकर क्षत स्थान पर रख देने से रक्तस्राव बंद हो जाता है।

(२) रक्त बंद हो जाने पर क्षत में मुलहठीका कपड़ छान चूर्ण भर देवें। फिर कपूर को गोघृत में मिलाकर क्षत के चारों

ओर लगा देवें। ऊपर नागरवेल का पान, कागज़ या कपड़ा बांध देने से घाव सत्वर भर जाता है।

(३) पर्णबीज तुख्मे हैयात-हेमसागर-कनाडी में कांगुसले, मराठी में घावमारी- (Broplyllum Calycinum) के पत्तों का स्वरस क्षत स्थान पर निचोड़ देवें फिर पत्तों का कल्क कर बांध देवें; तो घाव बिना पके अच्छा हो जाता है।

(४) बंबूल के निर्धूम अर्ध जले हुए कोयले को पीस तिल तैलमें मिला देवें। फिर उस तैलमें रुई डुवो, क्षत स्थान पर रख कर पट्टी बांध देने से घाव भर जाता है। पक नहीं सकता। छुरी, चाकू आदि शस्त्रों के घाव के लिये यह सरल और निर्भय प्रयोग है।

(५) अरणी के पान को पीस घी में भूनकर बांध देने से क्षत भर जाता है।

(६) रामशर (अपूर्व्वदण्ड--गुजराती पान वाजरियुं) जो जलाशय में १-१॥ फीट जल में होता है। इसकी ऊंचाई लगभग ५-६ फीट होतीहै। पान बाजरीके पानकेसमान होतेहैं। एवं ऊपर डोडी भी बाजरी के समान ही होती है। इन डोडियों को जला राख कर तैल में मिलाकर लगा देने से घाव भर जाता है। इन डोडियों के भीतर जो रुई है वह निकाल घाव में भर कर पट्टी बांध देने से भी घाव जल्दी भर जाता है। यह रामशर घाव के लिये उत्तम औषध है।

(७) पूर्वलिखित निर्गुण्डी तैल आगंतुक क्षत की प्रत्येक दशामें अप्रतिम लाभ करता है। (पं०राधाकृष्णजी द्विवेदी)

(८) कभी वर्षा-ऋतु में छोटे ग्रामों वालों को खड़े हुए कांटे लग जाते हैं, जो निकालने पर टूट जाता है। पूरा नहीं निकल सकता। उसके लिये अपामार्ग के ३ पान को ३ माशे

गुड़ मिलाकर ३ दिन तक सुबह खा लेने पर सड़ा हुआ कांटा गल जाता है। और पीड़ा दूर हो जाती है।

(९) कांटा मांस में घुस जाता है। फिर कुछ अंश टूट कर भीतर रह जाता है, उसके लिये घाव के मुख पर आक का दूध लगाने से दूसरे दिन कांटा सरलता से निकल आता है।

(१०) एक प्रकार का दुष्ट व्रण देखने में आता है। वह प्रथम एक फुंसी के रूप में उत्पन्न होता है परन्तु धीरे २ गोल घाव का रूप धारण कर लेता है जिस पर एक प्रकार का सफेद चिकना और अत्यन्त दुर्गंधियुक्त पदार्थ जम जाता है। इसमें से हर समय एक प्रकार का दुर्गंध युक्त स्राव निकलता रहता है। अनेक उपचार करने पर भी उसका शोधन नहीं होता है। उसके लिये निम्न प्रयोग अति उत्तम सिद्ध हुआ है:—

शोधन:—शलाका पर रुई लगा कर उसे कारबोलिक एसिड Carbolic Acid में भिगो कर घाव पर लगावें। इससे घाव के ऊपर जमा सफेद दुष्ट पदार्थ ऊपर आ जायगा उसको सम्हाल पूर्वक रुई से पोंछ ले। एक बार लगाने से ही जो रोगी पीठ पर आया था भगता हुआ चला जायगा। इस प्रकार यह तीन चार दिन तक ही (उस समय तक ही लगावें जब तक कि घाव लाल न हो जाय) लगावें घाव की सफेदी हटकर लाल हो जाना उसके पूर्णतया शोधन हो जाने का लक्षण है।

रोपण:—इसके बाद रोपण तैल, निर्गुंडी तैल या अन्य रोपण उपचार करने से घाव शीघ्र अच्छा हो जाता है।

(११) शिरीष (सिरस) वृक्ष के मूल में १ गज गहरा खड्डा खोदने पर मूल पर से रूई जैसी मृदु छाल निकलती है। उसे निकाल सुखा कपड़ छान चूर्ण करके बोतल में भर दें। तलवार, छुरी आदि के घाव लगने पर रुधिर स्राव हो रहा हो,

तब इस चूर्ण को दबा देने से तत्काल रक्त निकलना बन्द हो जाता है। फिर पट्टी बांध देने पर एक ही पट्टी में घाव भर जाता है।

२५ आगन्तुक चोट पर योग।

(१) प्याज और थोड़ी हल्दी को पत्थर पर पीस कर पोटली बांधें। फिर एक कटोरी में थोड़ा सरसों का तैल गरम करें। उसमें पोटली डुबो सहन हो सके उतनी गरम रहे पर सेक करें। शीतल होने पर बारबार तैल में डुबोते रहें; और सेक करते रहें। इस तरह आध घण्टे तक सेक कर फिर प्याज के कल्क को बांधदेने से चोटजनित पीड़ा दूर होती है।

(२) हल्दी और नमक को सत्यानाशी के रसमें मिला, गरमकर सूजन पर लगादेनेसे सूजन और वेदना, दोनों दूर होते हैं।

२६. हरीतक्यादि कषाय।

विधि—हरड़, वच, सोंठ, निसोतकी छाल, सनायपत्ती, छोटी इलायची, बड़ी इलायची और लौंग, इन ८ औषधियों को समभाग मिलाकर जोकुट चूर्ण करें।

उपयोग—२॥-२॥ तोले का क्वाथ कर दिनमें दो समय पिलाते रहने से कास और ज्वर सहित ब्रध्न (बदगांठ) रोग शमन होजाता है। कषाय पिलाने के साथ आवश्यकता पर गांठपर बाह्योपचार भी करना चाहिये। इसलिये पहले गांठ पर से बालों को निकाल फिर बड़ के दूध का लेप करते रहें, जिससे गांठ जल्दी बैठ जाती है। यदि गांठ पकने लगती हो, गांठ में शूल के समान वेदना होती हो, तो गेहूं के आटे की जल या दूधमें पुल्टिस करके बांधते रहें। पुल्टिस को २-२ घण्टे

पर बदलते रहने से गांठ जल्दी पक कर फूट जाती है।

२७. दन्तीमूलादि लेप।

विधि—दंतीमूल (जमाल गोटे की जड़), चित्रकमूल की छाल, सेहुण्ड का दूध, आक का दूध, गुड़, भिलावे की मज्जा (गोंडंबी), कासीस और सैंधानमक इन ८ ओषधियों को समभाग लें। शुष्क औषधियों के कपड़छान चूर्ण के साथ आक और सेहुण्ड का दूध (थोड़ा जल) मिला कल्क करें। फिर गुड़ मिला गरम करें। (यो० र०)

उपयोग—इस लेप के लगाने से १-२ लेप से ही (४-६ घंटे में) पकी विद्रधि फूट जाती है। किसी भी प्रकार का कष्ट नहीं होता, और सत्वर कार्य हो जाता है। देह के किसी भी स्थान के पक्व विद्रधि पर इस प्रयोग को उपयोग में लासकते हैं। बालक और डरपोक, निर्बल स्त्रियों के लिये भी यह लेप निर्भय और सिद्ध अनुभूत योग है।

(श्री पं० राधाकृष्ण वैद्यजी द्विवेदी)

सूचना—यह लेप नेत्रों के न लगे इतना अवश्य सम्हालें।

२८. सवर्ण कर योग।

(१) कपूर कचरी १ माशा, हल्दी २ माशे, हरी मेंहदी १० तोले और तिल ५ तोले मिला पीस कर लेप करें। उसका व्रणस्थान या गांठ दूर होने पर रहे हुए चिन्ह पर लेप करके पट्टा बांधते रहने से एक सप्ताह में त्वचा स्वाभाविक बन जाती है। इस लेप से कुष्ठ के दाग (सिध्म छीप) भी दूर होते हैं, ऐसा अनुभव में आया है।

(२) सफेद चन्दन, प्रियंगु, आम की गुठली की गिरी, नागकेशर, मजीठ और रसौंत को गोबर के रसमें घिस कर

लेप करने से त्वचा स्वाभाविक बन जाती है। (च० सं०)

२९ अर्क आयोडिन (टिञ्चर आयोडिन)

प्रथम विधि—आयोडिन १० औंस, पोटास आयोडाइड (Pot. Iodide) ६ औंस, जल १० औंस, मद्यार्क (आल्कोहोल ९०%) लगभग ७५ औंस लेवें। पहले आयोडिन और पोटास आयोडाइड को जलमें मिलावें। फिर उसमें मद्यार्क मिला कर १०० औंस बना लेवें।

इस औषधिका नाम पहले टिञ्चुरा आयोडी फोर्टिज (Tinct Iodi fortis) था, उसे बदल कर ई० १९३२ में लाइकर आयोडी फोर्टिज (Liq Iodi fortis) रखा है। इसे लिनिमेण्ट आयोडाइड भी कहते हैं। बाहर लगाने के लिये इस अर्क में आल्कोहोल के स्थान पर मेथिलेटेड स्पिरिट मिला लिया जाता है।

द्वितीय विधि—आयोडिन और पोटास आयोडाइड २॥-२॥ औंस को २॥ औंस जलमें मिलावें। फिर आल्कोहोल इतना मिलावें कि सब मिल कर परिमाण १०० औंस हो जाय। इस औषधि का नाम पहले टिञ्चुरा आओडी मिटिस (Tinct Iodi Mitis) था, उसे बदल कर ई० १९३२ में लाइकर आयोडी मिटिस रख दिया है।

प्रथम विधि में औषध १० प्रतिशत है? दूसरी विधि में २॥ प्रतिशत है। पहली विशेषतेज है। दूसरी निर्बल है।

उपयोग—यह औषधि वेदना हर और उत्तम कीटाणु नाशक है। घाव लगने पर तेज अर्क का उपयोग करने से उसके पकने की भीति दूर हो जाती है। विविध प्रकार की

गांठ, ततैयर आदि छोटे छोटे जन्तुओं के विष, संधिशोथ, दाद, तुरन्त के उत्पन्न फोड़े और अनेक चर्म रोगों पर लगाने के लिये इसका व्यवहार होता है।

दूसरी विधि वाला निर्बल अर्क सामान्य त्वक प्रदाहक (Rubefacient) कार्यकरता है। पहली विधि वाला अर्क लगाने पर वहां पर फाला हो जाता है। दूसरी विधि वाला अर्क लगाने पर तत्काल शोषित होकर भीतर संयोजक तन्तुओं में प्रवेश कर शोषक नाड़ियों (Absorbant vesseles) को उत्तेजित करता है। इसी हेतु से प्रदाह युक्त ग्रन्थि समूह (Glandular Swellings) पर लगाने से यह शोषित हो जाता है। फुफ्फसावरण में जो रस संगृहीत (Pleuritic effusion) होता है, उसेभी यह औषधि इस नियमानुसार दूर कर देती है।

सामान्यतः प्रथमविधि और दूसरी विधि, इन दोनों को समभाग मिलाकर व्यवहार में लाना, यह विशेष हितकर माना जायगा। किन्तु चिरकारी बड़ी गांठों (Chronic Glanduloc enlargements) वक्षस्थान की बात वाहिनियाँ और मांस पेशियों में तीव्र वेदना और स्थानिक प्रदाह पर द्वितीय विधि वाले अर्क का ही प्रयोग कराना चाहिये। अधिक समय होजाने पर भी उसमें पूय नहीं हो सकेगा और गांठ को बढ़ने भी नहीं देगा।

प्रदाह या अन्य हेतु से उत्पन्न अर्बुद आदि तथा प्लीहा, यकृत्, गर्भाशय, वृषणकोष, उदर्याकला की ग्रन्थियां आदि बढने एवं अस्थि आदिपर शोथ आने पर इस अर्क का बाह्य उपयोग होता है; एवं आयोडिन का आभ्यन्तरिक प्रयोगभी किया जाता है।

गलौध रोग (क्रुप croup) में इस अर्क का स्थानिक प्रयोग करने से विलक्षण लाभ पहुँचने के उदाहरण मिले हैं।

दांतों की अम्लता दूर करने और मसूढ़ों की शिथिलता सह दंतविद्रधि का आरम्भ होने पर इस अर्क को लगाते रहने से लाभ हो जाता है।

नखक्षत (Onychia) होने पर प्रथम विधिवाले अर्क का व्यवहार करनेपर अवश्य रोगदमन होता है। घातक घाव लगने से उत्पन्न कोथ युक्तक्षत (Hospital gangrene) परभी इस अर्क से उपकार होता है। इस तरह अन्य जीर्ण क्षत में भी इसका स्थानिक प्रयोग करने से शोषक और उत्तेजक असर पहुंच कर उपकार होता है।

कर्कस्फोट और कर्कस्फोट जन्य अर्बुद और क्षत आदि पर आयोडिन का आभ्यन्तरिक और स्थानिक प्रयोग हितकारक होता है।

गर्भाशय मुख में रक्ताधिक्य या क्षत हो जानेपर तेज अर्क का स्थानिक प्रयोग करने से रोगनिवृत्ति हो जाती है। एवं गर्भाशय में से जीर्ण रक्तस्राव और रजोधिक विकार होने पर द्वितीय विधि वाले अर्क में समान जल मिला कर उसकी पिचकारी दी जाती है।

रसार्बुद - रसपूरित फाले (cyst) के भीतर दूषितपदार्थों के संशोधनार्थ द्वितीयविधिवाले अर्क को ५० गुने जल में मिलाकर धोया जाता है। वृषणवृद्धि में से जल को निकाल देने के पश्चात् मंद अर्क में ३ गुना जल मिलाकर पिचकारी लगानेसे प्रदाह होकर रसमय ग्रन्थियां जुड़ जाती हैं। फिर जल का संग्रह नहीं होता। इस अर्क का प्रयोग वृषणवृद्धि में अन्य उपायों की अपेक्षा अधिक हितकारक है। इसतरह भगंदर

और नाड़ी व्रण में भी इस अर्क की पिचकारी लगाई जाती है।

जीर्ण पूयमय श्वासनलिका प्रदाह (कासरोग) में द्वितीयविधि वाले अर्क १५ बूंदका इञ्जेक्शन बढ़ी हुई ग्रैवेय ग्रन्थि (Solid Bronchocele) और बढ़ी हुई लसीका ग्रन्थि में करने से वह शोषित होकर अच्छा लाभ दर्शाता है। साथसाथ आयोडिन की वाष्प देने से सत्वर लाभ पहुँचता है।

विसर्परोग में आयोडिन का उग्र अर्क लगाने से कास्टिक की अपेक्षा अधिक उपकार होता है। इसतरह छोटी पिटिका युक्त त्वचारोग (Psoriasis) त्वचा मुर्झा कर शुष्क सलवट युक्त होजाना (Pityriasis) विस्फोटक (Impetigo) कण्डू मय पिटिकायें (Prurigo) और दद्रु (Favus- (Honeycomb ringworm) आदिमें स्थानिक प्रयोगद्वारा बहुत लाभ पहुँचता है।

सूचना—टिञ्चर आयोडिन का आभ्यन्तरिक प्रयोग जैसे मुख के द्वारा पेट में अथवा इञ्जेक्शन करना हो वहाँ यह सामान्य मेथिलेटेड स्प्रिट द्वारा बना हुआ कदापि उपयोग में नहीं लेना चाहिये। क्योंकि मेथिलेटेड स्प्रिट विषाक्त है। इसके लिये रेक्टीफाइड स्पिरिट द्वारा बना हुआ टिञ्चर आयोडीन यदि पेट में देना हो, तो प्रातः काल भूखे पेट ही एक विन्दु टिञ्चर आयोडिन १ छटांक शीतल जलके साथ, सगर्भा की छर्दि एक सप्ताह में बन्द होजाती है। इसी भांति प्लेगके दिनों में १ से २ बूंद तक प्रातःकाल पिलाने से या ऐसेही १ सप्ताह में २ दिन अथवा अधिक से अधिक प्रति दिन एक विन्दु देने से प्लेग के कीटाणुओंका आक्रमण करनेका भय नहीं रहता। इञ्जेक्शन करना हो, तो केवल इस टिञ्चर का ही नहीं करना चाहिये।

इसके द्वारा बने हुए इञ्जेक्शन पार्क डेविस आदि कम्पनियों के बने हुए इञ्जेक्शन आवश्यकतानुसार उस पर लिखी हुई विधि के अनुसार करना चाहिये। इसके इञ्जेक्शन से प्रसूति जन्य विष या आभ्यन्तरिक किसी भी प्रकार का विष, एवं तज्जन्य पूय और तज्जन्यरोग विधिपूर्वक इञ्जेक्शन करने से रोग एकदम बढ़ने से रुक जाता है और शनैः-शनैः भले प्रकार नष्ट होजाता है।

(राजवैद्य पं० रामचंद्रजी)

३०. पारद लेप

मर्क्युरियल प्लास्तर (Mercurial Plaster) पारद, ३ औंस जेतून का तैल (Olive oil) ५६ ग्रेन, ऊर्ध्व पातित गंधक, (Subliment Sulphur) ८ ग्रेन और शीशे का लेप, (Lead Plaster) ६ औंस लेवें। पहले तैल को गरम कर गंधक मिला लेवें दोनों का संमिश्रण न हो, तबतक पारद मर्दन करें। फिर पारद मिलावें। जबतक पारद के अणु अदृश्य न होजायं, तबतक खरल करें। फिर शीशे का लेप डालकर अच्छा तरह मिश्रण बना लेवें।

उपयोग—इस लेप का उपयोग जीर्ण अर्बुद, संधिरोग और उपदंश जनित अर्बुद आदि के शोषण के लिए किया जाता है।

३१. नागशर्करा धावन

लाइकर प्लम्बीसबएसिटेट (Liq. Plumbi Subacetet) ४ ड्राम
एसिड एसिटेक डिल० (Acid Acetic dil) २ ड्राम
स्पिरिट वाइनम रेक्टीफाइड (Spt. Vinum Rectified) डेढ़ औंस गुलाब जल (Rose water) १२ औंस।

इन सबको मिलाकर धावन (Lotion) बना लेवें। फिर उसमें कपड़ा डुबो कर आघात प्राप्त स्थान पर बांध देवें और उसे लोशन की बूंदें डाल डाल कर गीला रक्खें।

३२. कृष्ण धावन।

(लोशियो हाइड्राजिरी निग्रा ब्लेक मर्क्युरियल लोशन)

विधि—केलोमल ६.६८५ भाग, ग्लिसरिन ५ भाग और शेष चूने का प्रवाही (Solution of lime) मिलाकर १०० भाग पूर्ण करें। पहले केलोमल को ग्लिसरीन के साथ मिलावें। फिर चूने का जल थोड़ा २ मिला कर लोशन तैयार करें। इस द्रव को डाक्टरी में ब्लेक वाश (Black wash) भी कहते हैं।

उपयोग—इस द्रव में कपड़ा भिगोकर उपदंश जनित क्षत और फूटे हुए दूषित व्रण पर रक्खा जाता है। फिरंग रोग में केवल इस धावन की पट्टी से ही आराम होजाता है। सामान्य उपदंश जनित घाव में उत्तेजक और शोधक क्रिया करता है। सामान्य उपदंश (साफ्ट शंकर) में इस धावन से धो ऊपर आयडोफार्म लगाकर कपड़ा बांध दिया जाता है। उपदंश और फिरंग दोनों पर इसका प्रयोग होता है। इनके अतिरिक्त बाहर के घाव को भी यह सुखा देता है।

चूने का जल बनाने की विधि—चूने के साथ $\frac{1}{3}$ हिस्सा जल मिलाने से अति गरम होजाता है। फिर सफेद बन जाता है। इस अवस्था में इसे आर्द्रचूर्ण (Slaked Lime) कहते हैं। इस गीले चूने के २ औंस को बार २ जल मिला कर धोवें। जब क्षारीय अंश (Chloride) नष्ट होजाय, तब उसे १ गैलन जल में मिला हिला कर १२ घंटे रहने देवें। फिर ऊपर से नितरे हुए जल को ले लेवें। उसे सॉल्युशन आफ लाइम कहते हैं।

३३. पीतधावन

(लोशियो हाइड्राजिरी फ्लेवा—यलो मर्क्युरियल लोशन)

विधि- मर्क्युरिक क्लोराइड (Mercuric chloride) २० ग्रेन (०.४६ ग्राम) और चूने का जल (Solution of lime) १० औंस (१०० क्युबिक सेन्टीमीटर) लें। दोनों को मिलाकर धावन बना लेवें। इस विलियन को डाक्टरी में 'यलोवाश' भी कहते हैं।

उपयोग—यह धावन घाव धोने में अति उपयोगी है। बाह्यत्वचा आदि के समान इसका व्यवहार नेत्रों के लिये भी होता है।

सूचना-पारद की सब कृतियों में मर्क्युरिक क्लोराइड (कोरोसिव सब्लिमेट —Corrosive sublimate) अधिक विषाक्त है। इसे यूनानी वाले दालचिकना कहते हैं। इसका मुख्य गुण कीटाणुनाशक है। यह तीव्र विष है। अत: इसका लोशन बनाने में भी अधिक मात्रा में न गिरजाय, यह सम्हालना चाहिये।

सामान्य और पूय युक्त चक्षु प्रदाह में नेत्रों को धोने के लिये दालचिकना १ ग्रेन, नौसादर ६ ग्रेन और निवाया जल ८ औंस मिलाकर तैयार किया जाता है। इसमें से दिन में ३—४ बार प्रयोग करने से विलक्षण लाभ पहुँचता है।

पीनस—दुर्गन्धमय प्रतिश्याय (Ozaena) रोग में $\frac{1}{1000}$ धोवन से नाक को धोकर बोरिक एसिड का चूर्ण नस्य रूप से चढ़ा लेने से विशेष उपकार होता है।

इस धोवन को $\frac{1}{10000}$ (अर्थात् २० औंस में १ ग्रेन) बलवाला बनाया जाय, तो कीटाणुओं (माइक्रो कोकाई और बेसिली) को नष्ट कर देता है। सामान्यतः घाव धोने के लिये

$\frac{1}{5000}$ से $\frac{1}{2000}$ तक का धावन प्रयोजित होता है। कण्ठ रोहिणी में द्रव छिड़कने और उपदंश आदि के क्षत को विशुद्ध करने के लिये यह उपयोगी है। $\frac{1}{500}$ धोवन अति सम्हाल पूर्वक त्वचा के वर्ण परिवर्तन (Chloasma) और पीली पिटिकाएं (Freckles) को दूर करने के लिये व्यवहृत होता है। इसमें फोहा भिगोकर कीटाणुओं से संरक्षणार्थ घाव पर बांधा जाता है।

इनके अतिरिक्त विकार के अनुरूप विविध त्वचारोग-द्रद्रु आदि में धावन सबल-निर्बल तैयार किया है। अति समान्य बल वाले धावन के लिये $\frac{1}{100000}$ (अर्थात् १ ग्रेन औषध और २००औंस जल) का उपयोग होता है। गर्भाशय आदि भागको धोने के लिये वस्ति रूप से इसका व्यवहार करने से हजारों रुग्णाओं के जीवन का उद्धार हुआ है।

३४. कार्बोलिक धावन।

विधि—एसिड कार्बोलिक १ औंस (वजन किये हुए को १९ औंस जलमें मिला लेने से कार्बोलिक लोशन बन जाता है।

उपयोग—यह धावन घाव धोने के लिये हितावह हैसौम्य लोशन बनाना हो, तो ३९ औंस जल मिला लेना चाहिये। इस धावन के उपयोग से व्रण आदि कीटाणु रहित होते हैं।

३५. गन्धक का मलहम।

(अंग्वेण्टम सलफ्युरिस-Ung. Sulphuris)

विधि—गन्धक पुष्प (sulphur sublimatum) १ भाग को ९ भाग लोहवान मिश्रित मेषवसा (या वेशलीन) में मिला कर मलहम बना लेवें।

उपयोग--यह मलहम कीटाणुनाशक है। विविध चर्म रोग पर यह व्यवहृत होता है। कण्डू होनेपर यह घर्षण किया जाता है। कभी व्यूची रोग में अत्यन्त कण्डू आने पर इस मलहम का उपयोग किया जाता है।

पारद सेवन जनित विकार-पक्षाघात आदि होने पर शुद्ध गन्धक या गंधक रसायन के सेवन के साथ इस मलहम की मालिस कराते रहने से सत्वर लाभ पहुंचता है।

३६. टार मलहम।

विधि—टार(tar) ७० भाग,विशुद्ध वसा(prepared suet) या वेसलीन ५ भाग मक्खियों के छत्त का मोम (bees wax) २५ भाग लें। पहले चर्बी और मोम को मिलाकर गरम करें फिर टार (डामर) मिलाकर मलहम बना लेवें। शीतल हो तब तक चलाते रहना चाहिये।

उपयोग--यह मलहम विविध शुष्क त्वचा रोग--स्रावमय पिटिका (psoriasis), मत्स्यसदृश कठोरत्वचा विकार (ichth yosis मणिबन्ध, कपूरसंधि पर उत्पन्न उग्र कण्डू युक्त कुछ गुच्छाकार पिटिकाएं (lichen planus) तथा पुराने व्युची रोग पर व्यवहृत होता है।

इस मलहमके बाह्य प्रयोग से कभी कभी छोटी छोटी पूयमय पिटिकाएं उत्पन्न होती हैं; तथा किसी को अति उग्रता उपस्थित होती है, अतः थोड़े हिस्से में विकृति हो तब इसका उपयोग होता है। इस मलहम में कीटाणुनाशक गुण क्रियोसीट और फेनोल की अपेक्षा उत्तम रहा है।

३७. ककस्फोट हर मलहम।

प्रथम विधि—सर एस्टलिकुपर का मलहम (Sir Astley

Coopers ointment

मल्ल Arsenic

गन्धक Sulphur १ड्राम

(ointment) व्हेल मछली की चर्बी का मलहम (Spermaceti ointment) ७ औंस १ ड्राम

इन सबको मिला मलहम बनाकर उपयोग में लेवें।

स्पर्मेसिटि मलहम बनाने का विधि

व्हेलवसा (स्पर्मेसिटी आइल) २०० ग्राम,

सफेद मोम ८० पेरोफिन हार्ड ग्राम लिक्विड पेराफिन १२० ग्राम तीनों को मंदाग्नि पर गरम कर मिलालेवें; और जब—तक ठण्डा न हो जाय तब तक चलाते रहें।

द्वितीयविधि—हेब्रास पेस्ट—Hebra's Paste

एसिड आर्सेनिक Acid-Arsenic ५ ड्राम

सिनेबार-Cinnabar १ ड्राम

सादामलहम Simple Ointment ८ ड्राम

इन तीनों को मिलाकर प्रयोजित करें।

सूचना- इन दोनों प्रयोगों के उपयोग में बार बार सम्हालते रहना चाहिये कि मल्ल के विपाक्त लक्षण तो उपस्थित नहीं हुये?

३५ भगंदर प्रकरण।

१० भगंदरहरो रस।

विधि—शुद्धपारद २ तोले और शुद्ध गन्धक ४ तोले मिलाकर कज्जली करें। फिर ३ दिन घी कुंवार के रसमें मर्दन कर ताम्रभस्म और लोह भस्म ६-६ तोले मिलाकर घी कुंवार के रसमें घोटकर पेड़ा बना अरण्ड के पत्ते लपेट दें। उसे हांडी में राख के भीतर दबाकर ६ घण्टे स्वेदन करें। पश्चात्

निकाल ७ दिन तक नीबू के रसमें खरल कर १-१ रती की गोलियां बनावें।

मात्रा--१-१ गोली दिनमें २ बार पुनर्नवारिष्ट अथवा आंवले के रस या मुरब्बा के साथ देवें।

उपयोग--इस रसायन का सेवन शान्ति पूर्वक ४-६ मासतक करने पर भगन्दर नष्ट होता है।

यह औषधि कफ प्रकृति वाले रोगी, जिनकी पचन क्रिया सदोष हो तथा मूत्रोत्पत्ति योग्य न हो उस के लिये हितावह है। इसके सेवन से पचन क्रिया सुधरती है। रस में से रक्त बनाने का कार्य सम्यक प्रकार से होने लगता है। रक्त का प्रसादन होता है, तथा मूत्र शुद्धि होती है। फिर पूयोत्पत्ति बन्द होकर भगंदर नष्ट होता है। इसके अतिरिक्त शरीर के किसी भी स्थान के नाड़ीव्रण, विद्रधि, कफ प्रधान गौण कुष्ठ आदि रोगों पर भी यह लाभ पहुँचाती है।

२ नारायण रस।

विधि—शुद्ध हिंगुल, फिटकरीका फूला, रसौंत, शुद्ध मनःशिल, शुद्ध गूगल, शुद्ध पारद, ताम्रभस्म, शुद्ध गन्धक, लोहभस्म सैंधानमक, अतीस, चव्य शरफोंका की जड़, वायविडंग, अजवायन, गजपीपल, पीपली, मिर्च, अर्कमूलत्वक्, बरने की छाल, राल और हरड़, इन २१ द्रव्यों को समभागलें। पहले पारद गन्धक की कज्जली कर हिंगुल, मनः शिल, ताम्र और लोह मिलावें। राल और गूगल को सरसों (करंजे) के तैल में कूट कर मुलायम मक्खनसदृश बना लेवें। शेष औषधियों का कपड़ छान चूर्ण करें। पश्चात् राल-गूगल मिश्रण के साथ पहले भस्म और फिर शेष चूर्ण मिलावें। उसे सरसों (करंज) का तैल मिलाकर लोहे के खरल में कूटकर एक जीव बना १-१

रत्ती की गोलियां बना लेवें। इस रसायन को कितनेक ग्रन्थ-कारों ने व्रणगजांकुश और दरद वटी संज्ञा भी दी है।
(र० चं०)

मात्रा—१ से ४ गोली दिन में २ बार मंजिष्ठादि क्वाथ या अन्य रोगानुसार अनुपान के साथ देवें।

उपयोग—इस रसायन के सेवन से नाड़ीव्रण, भयंकर पूयस्राव युक्त व्रण, गण्डमाला, विचर्चिका, जीर्ण दुष्टव्रण, दाद, कान से पूय आना, शिरोरोग, श्लीपद, हाथपैर का फटना और दुःसाध्य भगंदर आदि रोग नष्ट होते हैं।

३. भगंदर नाशकयोग।

(१) चोपचीनी, मिश्री और गोघृत ३२-३२ तोले तथा लोहभस्म और मनः शिल ४-४ माशे लें। सब को मिलाकर ३-३ तोले के लड्डू बना लेवें। इसमें से १-१ लड्डू प्रातः काल और रात्रि को गोदुग्ध के साथ सेवन कराने से भगंदर, जीर्ण उपदंशज उपद्रव रूप नाड़ी व्रण, रक्त विकार और कुष्ट आदि १ मास में दूर होते हैं।

(२) बालहरीतकी योगः—नीला थोथाका फूला १ तोला और छोटी हरडका चूर्ण१६तोले मिला नीबू के रसमें ७ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनावें। इनमें से १-१ गोली सुबह शीतल जल (या नीबू मिले जल) केसाथ २१ दिन तक सेवन करने पर उपदंश रोग, उपदंश के विकार रूप नाड़ी व्रण, भगंदर, दुष्टव्रण आदि रोग निवृत्त होते हैं। बाहर धोने के लिये धावन (Lotion) चूर्ण और मलहम रूप से (कज्जली मिलाकर) भी लगाने के लिये इस वटीका उपयोग लाभदायक है। (यो० इ०)

२६. फिरंग प्रकरण

१. उपदंश कुठार वटी।

प्रथम विधि—मुर्दासिंग और कूठ १-१ तोला तथा नीला थोथा ६ माशे मिला ६ घण्टे अदरख के रस में खरल कर १-१ रत्ती की गोलियां बनालेवें। (वृ० नि० र०)

मात्रा—१ से २ गोली प्रातः सायं अदरख के रस के साथ देवें।

उपयोग—इस वटी का सेवन कराने से एक सप्ताह के भीतर उपदंश रोग दूर हो जाता है। उपदंश के लिये यह सरल निर्भय और उत्तम उपाय है। यह वटी नये और पुराने रोगमें भी व्यवहृत होती है।

सूचना—मीठे और खट्टे पदार्थ, मांस, दूध और कुष्माण्ड का त्याग कराना चाहिये। (कितनेक चिकित्सक आमका अचार अवश्य देते हैं। उससे नीले थोथे की वान्ति करानेकी शक्ति शमन हो जाती है)।

द्वितीय विधि—रस कपूर १ तोला और मुलतानी मिट्टी ४ तोले मिला जल के साथ खरल कर आध-आध रत्ती की गोलियां बना लेवें। (आ० नि० सा०)

मात्रा—२-२ गोली प्रति दिन प्रातः काल एक वार निगलवा देवें। फिर ऊपर ५ तोले इमली को ४० तोले जल में मसल तुरन्त निकाल बिना छाने पिला देवें। इस तरह प्यास लगने पर इमली का जल १ दिनमें ३-४ सेर तक पिलाते रहें।

इमलीका जल पीने में रोगी को बेचैनी नहीं होती। दंत हर्ष नहीं होता; एवं साँधाओंमें या हड्डियोंमें भी बाधा नहीं पहुँचती।

उपयोग—इस रसायन के प्रयोग से उपदंश रोग जिसमें घाव फैलगया हो, नासूर होगये हों, रोगने तीव्र रूप धारण किया हो, वह दूर होजाता है। अधिक मे अधिक २१ दिन तक गोलियां देनी पड़ती हैं। २१ दिन के सेवन से उपदंश रोग, उपदंश जनित रक्त विकार, नाड़ी व्रण आदि दूर होकर शरीर स्वस्थ सबल और तेजस्वी बन जाता है।

सूचना—(१) औषध बन्द होने पर २१ दिन तक प्रतिदिन नीम के २१ पत्ते को जल के साथ पीस छान कर जल पिलाते रहना चाहिये।

(२) औषध सेवन कालमें और नीम सेवन काल में अर्थात् ४२ दिन तक दूध, मीठे पदार्थ और घी बिल्कुल नहीं खाना चाहिये। दूध पीने से कम्पवात और गुड़ शक्कर खाने से स्वरभंग हो जाता है।

(३) कदाच रोगी को उपदंशके हेतु से विस्फोटक भी होगया हो, तो औषध सेवन के साथ चिरौंजी को जल में पीस कर शरीर पर मर्दन करावें, अथवा पलास के पत्ते की डण्डियों को जला राख कर तांबे के बर्तन में डाल दही मिला ताम्बे के लौटे से घोटें। फिर शरीर पर मालिश करावें। सूख जाने पर स्नान कराने से विस्फोटक दूर होजाते हैं।

२ नील कण्ठरस।

प्रथम विधि—शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, नीले थोथे का फूला, फिटकरी का फूला, छोटी हरड़, आंवला, बड़ी हरड़, और मुर्दासंग, ये सब समभाग लेवें। पहले पारद गन्धक की कज्जली करें। फिर शेष औषधियों का कपड़ छान चूर्ण मिला नीबूके आधसेर रस के साथ खरल करें। रस थोड़ा २ मिलाते जायँ। फिर २-२ रत्ती की गोलियां बना लेवें।

मात्रा—१ से २ गोली दिनमें दो बार भोजन कर लेने पर तुरन्त घीमें लपेट कर निगला देवें।

उपयोग—इस वटी के सेवन से १४ दिन के भीतर उपदंश रोग दूर होजाता है। हींग, वेसन और लालमिर्च न खायँ। तैल अधिक सेवन करने से उबाक नहीं आती; और वैचेनी भी नहीं रहती। भोजन करके जल वहुत ज्यादा न पीवें। कम से कम पीवें। आध या एक घण्टे वाद आवश्यक जल पीने से उबाक या वैचेनी नहीं होती। औषध सरलता से पचन होकर जल्दी लाभ पहुँचाता है।

द्वितीय विधि—नीले थोथे का फूला १ तोला लेकर एक सेर नीवू के रसके साथ पचन करावें। थोड़ा थोड़ा रस मिला कर मर्दन करते रहें। सब रस शोषण होजाने पर आध आध रत्ती की गोलियां बना लेवें। (आ० मि०)

मात्रा—पहले दिन सुबह एक गोली निगल लेवें। दूसरे दिन दो, तीसरे दिन तीन। इस तरह उबाक और वेचैनी न हो, तब तक बढ़ावें। वमन होजाने के पश्चात् दूसरे दिन से एक गोली कम करावें।

उपयोग—इस रसायन के सेवन से १४ दिन के भीतर उपदंश रोगकी निवृत्ति होजाती है। भोजन में गेहूँ की रोटी, घी और मिश्री देवें। वमन होने पर वमनको रोकनेके लिये भुने चने छिलके रहित खिलावें।

३. मल्लादिपुष्प।

विधि—सफेद सोमल, सिंगरफ, रसकपूर और दालचिकना, चारों १-१ तोले मिला ब्राण्डी में खरल कर टिकिया वना छोटी हांडी में भर डमरु यन्त्र बना ६ घण्टे मंद २ अग्नि देकर पुष्प उड़ा लेवें। ऊपर की हांडी पर गीला वस्त्र वार वार वदलते रहें। फिर यन्त्र स्वांग शीतल होने पर पुष्प को निकाल

लेवें। यदि पुष्प कम उड़े हों, तो फिर से उड़ा लेवें।

मात्रा—$\frac{1}{8}$ से $\frac{1}{4}$ रत्ती मुनक्का में रख कर निगलवा देवें।

उपयोग—यह रसायन उपदंश रोग दूर करने के लिये उत्तम है। नये और पुराने विकार में लाभ पहुँचाता है। इसके सेवन से उपदंश रोग तथा उसके उपद्रव रूप संधिवात, नाड़ी-व्रण, विद्रधि, पक्षाघात, गुदशूक, रक्तविकार, तालुव्रण, अस्थि-गतव्रण, वात नाड़ियों की विकृति, कफ प्रकोप, नेत्रप्रदाह और मस्तिष्क विकार आदि समस्त थोड़े ही दिनों में दूर हो जाते हैं तथा देह नीरोगी और पुष्ट हो जाती है।

४. भैरव रस।

विधि—शुद्ध पारद १०० रत्ती और मिश्री ३०० रत्ती मिलाकर निम्ब के दण्डे से लोहे की खरल में एक प्रहर तक घोटें। फिर १०० रत्ती सफेद कत्था मिला कर कज्जली कर थोड़ा जल मिला कर २० गोली बना लेवें। (र० सा० सं०)

मात्रा—३ दिन तक दिन में ३ बार १-१ गोली गेहूंके आटे के हलवेमें रख कर निगलवा देवें। फिर चौथे दिनसे रोज सुबह १-१ गोली ११ दिन तक देते रहें। अनुपानरूप से मंजिष्ठादि अर्क ५-५ तोले देवें।

उपयोग—यह रसायन फिरंग रोग का नाश करने में अत्युत्तम है। फिरंग रोग पुराना होने पर विविध उपद्रव उत्पन्न होते हैं। एवं कच्चे रसायन आदि के सेवन से देह मृत्यु मुख में जाने के लिये तैयार होजाती है। किसी किसी के सारे शरीर की त्वचा शुष्क होकर मुरझा जाती है; शरीर में से भयङ्कर दुर्गंध आती है; दाह होता रहता है; मक्खियां भिन-भिनाती हैं; निद्रा नहीं आती; थूंक चिपचिपा, पीले रंगका और

पूय के समान बन जाता है; जिह्वा लाल लाल भासती है; शौच शुद्धि नहीं होती और देह निस्तेज हो जाती है। इस अवस्था में न्यूसल्वरसन (नं० ६०६) के इंजेक्शन भी नहीं दे सकते। यदि रोगी नियम पालन कर लेवें, तो मात्र यही औषधि जीवन बचा सकती है।

वक्तव्य—इस रसायन के सेवन काल में जल पान और जल स्पर्श बिल्कुल बन्द है। तृषा लगने पर ईख का रस या मीठे अनार का रस पीवें। शौच जाने पर गरम जलसे शुद्धि करें फिर तुरन्त कपड़े से पोंछ लेवें। १४ दिन तक कमरेमें से बाहर न निकले। तेजवायु, अग्नि सेवन और सूर्य के ताप का त्याग करें।

इस औषध सेवन का प्रारम्भ विशेषतः शीत काल या वर्षा ऋतु में करना चाहिये (अति आवश्यकता पर अन्य ऋतु मेंभी कर सकते हैं)।

भोजन दूध या दूध भात अथवा जंगल के पशुओं के मांसका रस लवण और अम्ल पदार्थ का निषेध। इस तरह दिनमें निद्रा, रात्रिमें जागरण व्यायाम और स्त्री समागम का भी त्याग करें। भोजन करलेने पर ताम्बूल कर्पूर मिला हुआ लेवें। इस औषध सेवन से मुँह आजाता है। उसके लिये पञ्चवल्कल के क्वाथ से बारबार कुल्ले करते रहें। पान खाँय। खदिरादि वटी मुंहमें रक्खें या चमेली (जातीपत्री) के पान चबावें। १४ दिन पूरा होने पर गरम जल से स्नान करावें।

इस तरह पथ्य पालन करते रहने से शरीर स्वस्थ होजाता है। मंजिष्ठादि अर्क के हेतु से दिन में २-३ दस्त होते रहते हैं। एक सप्ताह बाद दाह शमन, निद्रा की उत्पत्ति, (किन्तु मुखपाक की वृद्धि) आदि लक्षण प्रतीत होते हैं। दो सप्ताह पूरे होने पर क्षुधा प्रदीप्त होजाती है। फिर आवश्यकता रहे तो आरोग्य वर्द्धनी सुबह शाम मंजिष्ठादि अर्क के साथ देते रहने से थोड़े ही समय में मुखमण्डल तेजस्वी बन जाता है।

५ सबीर वटी (केशरादि वटी)

विधि—शुद्ध सबीर (रसकपूर), केशर, लौंग, श्वेत-चन्दन, प्रत्येक ४-४ तोले और कस्तूरी ६ माशे लें। पहले रसकपूर को खरल करें। फिर केशर, कस्तूरी मिलाकर नागरवेल के पान के रस में खरल करें। पश्चात् लौंग और चन्दन का चूर्ण मिला नागरवेल के पान के रस में १ दिन मर्दन कर १-१ रत्ती की गोलियां बनालेवें।

(श्री० पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्रा—१ से २ गोली प्रातः सायं निगल कर ऊपर से मिश्री मिला गो दुग्ध (गरम करके शीतल किया हुआ) पिलावें।

उपयोग—यह वटी फिरंग और उसके विष से उत्पन्न वध विकार, मांसगत व्रण, नेत्रव्रण, अर्बुद, भगंदर, ग्रन्थि, जड़ता, तन्द्रा, संधिवात और वात नाड़ियों की विकृति होकर पक्षवध या कलायखञ्ज के समान लक्षण उत्पन्न होना आदि विकारों पर अच्छा लाभ पहुँचाती है। निर्बल हृदय और अति नाजुक प्रकृति वालों को रसकपूर के अन्य योग देने की अपेक्षा यह वटी विशेष हितावह है।

पथ्य—इस रसायन के सेवन समय में खटाई, मिर्च, हींग, राई, आदि गरम मसाले तथा गन, सरसों, मूली और परण्ड खबूजा का शाक नहीं खाना चाहिये।

६ उपदंश दावानल रस।

विधि—हिंगुल, हरताल, सोमल, मैनसिल, रसकपूर, दाल चिकना, और नीलाथोथा ये ७ औषधियां ५-५ तोले लेकर, ब्रांडी अथवा जलाने पर जल जाय ऐसी तेज शराब में १२ घण्टे

खरल कर एक टिकिया बनावें। फिर मिट्टीकी छोटी २ दो हाँडी समान मुखवाली लें। उनके मुंह को पत्थर पर जलडाल घिसकर चिकना बनालें। फिर एक हांडी पर दृढ़ कपड़ मिट्टी करें। उस कपड़ मिट्टी की हुई हांडी में रसायन की टिकिया रख, ऊपर दूसरी हांडी औंधी रख दोनों के मुखों को मिलाकर मुख मुद्रा करें। सूखने पर डमरु यंत्र को चूल्हे पर चढ़ा कर नीचे बेर की लकड़ी की आंच चावल सिजोने के समान ४ प्रहर तक देवें। बार बार ऊपर गीला कपड़ा बदलते रहें। स्वाङ्ग शीतल होने पर ऊपर की हांडी में लगा हुआ पुष्प निकाल पुनः नीचे रही हुई औषधि में मिलाकर शराब केसाथ खरल करके पुष्प कोउड़ावें। इस तरह ७ बार करें। अन्तिम समय उड़े हुए पुष्पों और नीचे की औषधि को अलग अलग शीशी में भरलेवें हाँडी में नीचे रही हुई औषधि को पुनर्नवा के रस में ३ दिन खरल कर १-१ रत्ती की गोलियां बनालेवें। (र० यो० सा०

मात्रा—पुष्प १ से २ चावल तक केपसुल, घी, मक्खन या हलवे में रखकर रोज प्रातःकाल निगल जायँ। इसतरह ७-१४ या २१ दिन तक लेवें। गोलियों का सेवन कराना होतो १-१ गोली पुनर्नवाके १ तोले कल्क या स्वरस के साथ २१ दिनतक देवें।

सूचना—पुष्प निगलना चाहिये। दांतों को लग जानेपर दांत गिर जाते हैं।

उपयोग—यह रसायन असाध्य से असाध्य उपदंश रोगको भी दूर कर देता है। भोजन में केवल गेहूँ-चने की रोटी, घी शक्कर के साथ दें; और कुछ भी न देवें। कदाच कब्ज रहे, तो निम्न विरेचन क्वाथ देवें।

विरेचनक्वाथ—गुलाब के फूल, काली मुनक्का और

तीनों २-२ तोले मिला कूट ४० तोले जलमें औटाकर १० तोले शेष रहनेपर रात्रि को सोते समय पिला देवें। इससे सुबह तक २-३ दस्त आजायगें। आवश्यकता पर इस क्वाथ का व्यवहार करें।

उपदंश रोग के उपद्रव नाड़ी व्रण, गुदशूक, वद आदि चाहे जितने बढ़ गये हों, रक्त चाहे जितना दूषित होगया हो, सब विकार सह उपदंश का निवारण होकर पुरुषत्व की प्राप्ति होजाती है।

अर्शके मस्से को नष्ट करने के लिये शीशेकी सलाई को मक्खन से चिकनी कर इस पुष्प पर फिरावें। जितनी औषध लगजाय, उतनी को मस्से पर दिनमें एक समय लगावें। ४-५ दिन तक लगाने से मस्से फूल जाते हैं। फिर खट्टी छाछमें गेहूँ के दलिये को पका पुल्टिस बनाकर बांधने से सब मस्से मुर्दार होजायेंगें। पश्चात् उसे कैंची से काट दें; अथवा वे स्वयमेव कुछ दिन में निर्जीव होकर गिर जायेंगें।

ऊपर कही हुई औषधि की गोलियों का प्रयोग कएठमाल के रोगी पर करने से २१ दिन में रोग निवृत्ति होजाती है। एवं ये गोलियां नपुंसकता पर देने से पुरुषत्वकी प्राप्ति हो जाती है।

७. उपदंशवनकुठार।

विधि—जमाल गोटा और एरण्ड बीज की गिरी ७-७ नग, टोपी उतारे हुए ताजे भिलावे ५ नग, पुराना गुड़ १॥ तोला, काले तिल १ तोला और दालचिकना १ माशा लेवें। पहले भिलावे और तिलोंको मिलाकर भिलावे का अंश मालूम न हो तब तक कूटें। एरंड बीज और जमालगोटा को मिलाकर कूटें।

दालचिकने को १ प्रहर तक खरल में मर्दन करें। फिर सब को मिलावें। अच्छी तरह मिल जाने पर गुड़ डालकर कूटें
(र० यो० सा०)

मात्रा—३ माशे प्रातः काल में दही की मलाई के भीतर लपेट कर निगल जांय। ऊपर एक तोला दही और खा लेवें।

उपयोग—यह उपदंशवनकुठार उपदंश के लिये कुठार रूप है। इस रसायन के सेवन से बहुधा २-३ दस्त होते हैं। जिनको दस्त होते हैं वे जल्दी अच्छे होजाते हैं। जिनको दस्त न हो, उनको पूर्वोक्त उपदंश दावानलरस में कहा हुआ विरेचन क्वाथ दें। फिर अच्छी तरह भूखलगने पर चाहे मूंग की दाल और चावल की खिचड़ी सैंधानमक या घी मिलाकर खायँ। अथवा गेहूँ चने की रोटी या गेहूं की रोटी घी शक्कर से खावें। इसके साथ नमक न लेवें।

२१ दिनतक इस तरह औषधि सेवन करने पर असाध्य उपदंश रोग भी अच्छा होजाता है। ४६ दिनतक प्रयोग करने-पर जिस का शरीर एकदम काला पड़गया है; अथवा सर्वाङ्ग को दद्रुजाल ने छालिया हो; और सारे शरीर पर खुजली चलती रहती हो, अथवा कुष्ठ से सारी देह जलने लगी हो, तो भी रोगी स्वस्थ होजाता है।

जिसके शरीर में बहुत समय का विष रह गया हो; अथवा जिसको कृत्रिम विष खिलाया हो, उसके सब उपद्रव इस रसायन के सेवन से दूर हो जाते हैं। यह रस स्व० पं० हरि प्रपन्न जी का हजारों बार का अजमाया हुआ है।

सूचना—यह रसायन युवा मनुष्यों को ही देना चाहिये। यह रसायन अथवा विरेचन प्रधान भिलावां मिश्रित अन्यरस जिन रोगियों

का शरीर एक दम जीर्णशीर्ण होगया हो, उनको और वृद्धोंको नहीं देना चाहिये। अनधिकारी को देने से देह में रक्ताभाव से किसी किसी की देह पर छाले होजाते हैं। फिर वे फैलने लगते हैं; और उनका मांस सड़ने लगता है। ऐसा होनेपर रोगी और परिचारक आदि सब घबड़ा उठते हैं। जिससे वैद्यको औषध जनित विकार शान्ति करनेका मौका नहीं मिलता।

भिलांवा रसायन द्रव्य है। रसायन द्रव्य एक दम धातुशून्य आदमी को देने से परिणाम हानिकर होता है। कदाचित् तरुण व्यक्तिको भिलावायुक्त औषधसे कुछ उपद्रव होजाय, जैसे कि दाह, खुजली, चक्कर-आना, आदि उपस्थित होजाय, तो वैद्य को घबड़ाना नहीं चाहिये। उसी समय अजवायन का धुंआसर्वाङ्ग में देना बहुत उपकारक होता है। यदि इससे भी किसी को शान्ति न हो, तो चौलाईके रस और मूली के रस को एकत्राकर शहद और तिल तैल मिलाकर सारोदेह में मालिश करानी चाहिये। इसतरह नारियल का तैल भी भिलावें के दोष शमनार्थ उत्तम है। (श्री हरिप्रपन्न जी)

इस विधि के सेवन काल में भल्लातक की दृष्टि से पथ्यपालन कराना चाहिये। शांत भाव से छाया में रहे। घी अधिक खायँ। तेज मिर्च, धूल, धूप, धुंआ, अग्नि, क्रोधादि से भी आग्रह पूर्वक बचे। श्री० पं० राधाकृष्णजी द्विवेदी।

८. उपदंशहर कषाय।

विधि – नीमकी अंतरछाल, इन्द्रायणकीजड़, कचनार की छाल, बबूलकी कोमल (अबीज) फली, कटेरी की जड़ अथवा पंचांग, प्रत्येक १०-१० तोले और गुड़ पुराना (१-२-३ वर्ष का) ३० तोले लें। सबको कूट पीस कर पांचसेर जलमें किसी कलईदार या मिट्टी पात्र में २४ घण्टे भिगोकर पकावें। अष्टमांश शेषरहने पर छान बोतल में भरें।

मात्रा—२ औंस (५ तोले) उपदंश के रोगी को नित्य प्रातः पिलावें। सुजाक के रोगी को १ औंस कषाय और १ औंस शीतल जल मिलाकर पिलावें।

उपयोग—यह कषाय नूतन उपदंश उपद्रव रहित या अत्यन्त बढ़े हुए को तथा सुजाक को नष्ट करता है।

पथ्य—खिचड़ी और घी (अधिक)। इससे नित्य ३-४ विरेचन होते हैं। इसके द्वारा पित्त के विषैले परमाणु नष्ट होकर रक्त शुद्ध होता है। यदि उक्त मात्रा से ३-४ विरेचन न हो, तो मात्रा और बढ़ावें। यदि विरेचन अधिक हों, तो मात्रा कुछ घटावें। अधिक विरेचन आवें तो १ दिन औषधि न लेवें। इस प्रकार प्रयोग करने पर नूतन रोग १ सप्ताह में निर्मूल होता है। यदि उपदंश रोग पराकाष्ठा को पहुँच गया हो, तो एक सप्ताह औषध लेकर एक सप्ताह को छोड़ दें। पुनः आरम्भ करें। इस प्रकार ३-४ सप्ताह में पूर्ण लाभ हो जाता है। यह प्रयोग नूतन उपदंश पर अमृत समान है। और सुजाक (पूयमेह) के रोगी को सेवन कराने पर मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात और मूत्र नलिका प्रदाह आदि लक्षण नष्ट होते हैं। पथ्य प्रत्येक अवस्था में पूर्ववत् पालन करें। यह प्रयोग अनेकों बार का अनुभव सिद्ध है।

पाठान्तर—कई अनुभवी वैद्यों से इस प्रयोग में बकायन की छाल, ऊंट कटाराकी जड़, बेरकी जड़ और सिरसकी छाल ५-५ तोले डालने की सम्मति मिली है। तथापि उक्त-प्रयोग बराबर काम करता है। १ सप्ताह की औषधि एक बार में बनावें। इसका अरिष्ट बनाकर देखा गया तो यह प्रभाव नहीं मिला अतः कषाय ही ठीक है। श्री पं० राधाकृष्ण जी द्विवेदी

वक्तव्य—रसतंत्रसार प्रथम खण्ड में ऊपरके क्वाथ में बकायनकी छाल अधिक मिलायी है; और विधिमें कुछ अन्तर है। इसस्थानमें जो प्रयोग विधि दी है; वह श्री० पं० राधाकृष्णजी द्विवेदी की अनुभूत है। अतः विशेष श्रद्धापूर्वक औषध प्रयोग कर सकेंगें।

९. उपदंशहर चूर्ण।

विधि—पीलीकौड़ी की राख, पुरानी सुपारी के कोयले, सफेदा से लखड़ी, मुर्दासिंग, कपूर और सफेद कत्था, ये ७ औषधियां १-१ तोला और नीलाथोथा १ माशा लेवें। सबको मिला खरलकर बोतलमें भर लेवें। इसमें से उपदंशज व्रणपर थोड़ा सा दबा देने अथवा दूने धोये घृतमें मिला मलहम बनाकर चकत्ती लगाने से उपदंश रोग की निवृत्ति होजाती है।

१०. नील अर्क।

विधि—नीलाथोथा १ तोला, फिटकरी २ तोले और कपूर २ तोला लें। इन सब को पृथक् पृथक् पीसकर बोतल में भरकर जल बना लेवें। इसद्रवमें से १ तोला निकाल ४० तोले जलमें मिला लेवें। (आ० नि० मा०)

उपयोग—उपदंश जनित लिङ्गशोथ होने पर इस अर्क की २-४ बूंद डालें; अथवा फोहा रक्खें और सुपारी पर सूजन न हो, तो पिचकारी लगावें। इस औषध से दाह होता है, यह सहन न हो सके, तो और जल मिला लेना चाहिये। यह अर्क सड़े हुए घावों को धोने के लिये भी उपयोगी है। मंद प्रवाही बनाकर नेत्रमें भी इसकी बूंदें डाली जाती है।

११. उपदंशहरोधूम्र।

प्रथमविधि—हिंगुल ६ माशे, सोहागा, अकलकरा और

मोम १०-१० माशे लेवें। पहले मोम गलाकर शेष औषधियों का कपड़ छन चूर्ण डालकर बेर की गुठली के समान गोलियां बना लेवें (र० यो० सा०)

उपयोग—प्रातः काल चिलम में बबूल (नीम) के कोयले की अग्नि पर एक गोली रखकर धूम्रपान करने से उपदंशरोग नष्ट होजाता है। भोजन में जौ की रोटी और घी दें। नमक नहीं खाना चाहिये। रात्रिको नागरवेल का पान देवें। इसतरह १४ दिन पथ्य पालन करनेपर फिरङ्ग रोगका निवारण होजाता है।

सूचना—धूम्रपान करने के पश्चात् १० सेर शीतलजल लेकर रोगी को धीरे-धीरे कुल्ले करने का कहें। कुल्ले करलेने से बहुत विष निकल जाता है; और दांतों को भी बाधा नहीं पहुँचती।

द्वितीयविधि—हिंगुल आध तोला और अकलकरा २ तोले को मिलाकर चूर्ण बना लेवें। फिर इसकी १४ पुड़ी बना लेव।

उपयोग—प्रातः सायं दिन में दो बार कपड़ा ओढ़ाकर धुँआ लेने से ३ से ७ दिन के भीतर उपदंशरोग नष्ट होजाता है। ७ दिन तक भोजन में मात्र गेहूँ की रोटी और घी देवें। फिर ७ दिन तक गेहूँ की रोटी, शक्कर और घी देवें। बाद में इच्छानुसार भोजन करें। कितनेक चिकित्सक तमाखू भी दो तोले इस धूम में मिला लेते हैं। तमाखू के व्यसनी के लिये तमाखू मिला लेना हितकर है।

वक्तव्य—मुख, नाक नेत्र और कान को नहीं ढकना चाहिये।

पूयमेह प्रकरण।

१. कन्दर्प रस

बनावट—शुद्धपारद, शुद्ध गन्धक, प्रवाल भस्म, सुवर्ण भस्म, सोनागेरु, वैकान्तभस्म, रौप्य भस्म, शंख भस्म और मोती भस्म, इन ९ औषधियों को समभाग लेवें। पहले पारद गन्धक की कज्जली करें। फिर शेष भस्म आदि मिलाकर वड़ के अङ्कुरों के क्वाथ की ७ भावना देकर २-२ रत्ती की गोलियां बना लेवें।
(भै० र०)

मात्रा—१-१ गोली त्रिफला क्वाथ, तुलसी का स्वरस, अर्जुन छाल के क्वाथ, बबूल के पत्तों के स्वरस या शीतल मिर्च के क्वाथके साथ दिन में ३ बार देवें। इन अनुपानों में से किसी एक का अनुकूल अनुपान के साथ सेवन करावें।

उपयोग—इस कन्दर्प रस के सेवन से औपसर्गिक मेह (सुजाक) जनित विष और कीटाणु नष्ट होकर शरीर स्वस्थ हो जाता है।

२ औपसर्गिक मेहहर मिश्रण

बनावट—रौप्यभस्म १ तोला, प्रवालपिष्टी २ तोले और अमृतासत्व ४ तोले मिला देवें।

मात्रा—४ से ८ रत्ती तक दिन में २ या ३ बार मलाई के साथ।

उपयोग—इस मिश्रण के सेवन से पूयमेह जनित जीर्ण विकार दूर होते हैं। सुजाक के हेतु से उत्पन्न मूत्रप्रसेक नलिका में प्रदाह, पेशाब करने के समय जलन होना, बूंद बूंद मूत्र

टपकना, कुछ कुछ पूय आना, सांधों सांधों में दर्द होना, नेत्र दृष्टि निर्बल हो जाना, स्वप्नदोष, शुक्र की उष्णता, शुक्र का पतलापन, और मंद २ ज्वर बना रहना आदि विकार थोड़े ही दिनों में दूर होजाते हैं ।

३ औपसर्गिक मेहहर योग

(१) गीला बिरोजा २० तोले को एक कपड़े की पोटली में बांधें । फिर एक बड़ी हांडी में ४ सेर गोमूत्र भर उसमें दोला यन्त्र विधि से बिरोजा को पकावें । चतुर्थांश गोमूत्र रहने पर हांडी को उतार बिरोजा को निकाल लेवें । पश्चात् एक परात में डाल २१ बार शीतल जल मिला मिला कर धोवें । बाद में छोटा इलायची के दाने और मिश्री ५-५ तोले मिला लेवें ।

उपयोग—३ से ६ माशे प्रातः काल कच्चे दूध के साथ सेवन कराने से थोड़े ही दिनोंमें सुजाक रोग दूर हो जाता है । रोग प्रबल होने पर औषधि संध्या को भी दूसरी बार देनी चाहिये ।

सूचना—इस औषध के सेवन काल में खटाई गुड़, तेल, लाल मिर्च और पक्के भोजनका त्याग कर देना चाहिये, ब्रह्मचर्य का आग्रह पूर्वक पालन कराना चाहिये तथा रसतन्त्रसारमें कहे हुए मूत्र शोधक क्वाथ की पिचकारी से मूत्र नलिका को दिन में २-३ बार धोते रहना चाहिये ।

पलाश मूलका अर्क और गिलाई का स्वरस १-१ तोला, शहद ६ माशा और मिश्री ३ माशे मिलाकर सुबह और इसी तरह शाम को भी लेवें । १५-२० दिन लेने पर जो नया सुजाक विशेष नहीं फैला है, वह दूर हो जाता है । एवं यह जीर्ण सुजाक के लीनविष को जलाकर नष्ट कर देता है ।

३. लाल मिर्च के बीज को कूट कर कपड़ छान चूर्ण करलें ।

इसमें से दिन में २-३ बार ४ से ६ माशे चूर्ण जल के साथ पीस ठण्डाई की तरह छान कर पिलाते रहने से एक सप्ताह में सुजाक शमन हो जाता है। यह निर्भय, सरल और उत्तम उपाय है।

- देशी लाल मोटी सूखी मिर्च ५ तोले तथा हरी दूब और कीस १-१ तोला लेवें। मिर्च के डंठल को तोड़ दें और भीतर से बीज निकाल दें फिर मिर्चा को १ सेर जल में मिला मिट्टी या कांच के बर्त्तन में रात्रि को भिगो देवें। सुबह मिर्चों को मसल कर खूब धोवें। जबतक जल साफ न निकले, तब तक धोते रहना चाहिये। फिर तीनों औषधियों को मिला सिल लोड़ीपर चटनी की भांति पीसें। पश्चात् ताजे आध सेर दही में मिलाकर रोगी को पिला देवें।

प्रातः काल पुनः मिर्च को जल में भिगो दें। फिर सायंकाल को उपरोक्त विधि से घोल तैयार कर पिला देवें। इस तरह दोनों समय देते रहने से थोड़े ही दिनों में भयंकर बढा हुआ सूजाक रोग निवृत्त हो जाता है।

यह औषध अत्यन्त साधारण ज्ञात होती है, और इसकी मात्रा अत्यधिक प्रतीत होती है। परन्तु यह हमारा हजारों बार का परीक्षित प्रयोग है। (श्री० डा० रामजीवन जी त्रिपाठी)

डाक्टर साहब इस औषध के सेवन के साथ तीसरे तीसरे दिन पर सोल्युशन ट्राइपाफ्लेविन (Solution Trypa Flavin) १० सी०सी० का इञ्जेक्शन शिराओं (Intra-venous) में करते हैं। इस इञ्जेक्शन से मलमूत्र शुद्ध होने पर पुनः सूची वेध करते हैं। यदि यह सूची वेध क्रिया न की जाय, तो रोग शमन में कुछ दिन अधिक लगते हैं।

इसरोग में मूत्र प्रसेक नलिका पूय पूर्ण बनी रहती है। इस

हेतु से दिन में २-३ बार उसे धोते रहना चाहिये। अन्यथा भीतर शोथ और घाव बढ़ जायेंगें फिर दोनों ओर की वंक्षणीय ग्रन्थियों (Inguinal glands) का प्रदाह (Gonorrheal Cubo) गुद द्वार में वेदना, पौरुष ग्रन्थियों का प्रदाह (Prostatitis) और मूत्र कृच्छ्रता आदि विविध उपद्रव (Complications) उपस्थित हो जायेंगें। अतः कांच की पिचकारी (Urethral) से निम्न कषाय द्वारा धोते रहना चाहिये।

मूत्रशोधक कषाय—हरड़, बहेड़ा, आंवला, फिटकरी, का फूला, सोहागा का फूला और रसोत, ये ६ ओषधियाँ २-२ तोले, नीला थोथा और कपूर १-१ तोला, अफीम ६ माशे तथा जल २ सेर लेवें। पहले त्रिफला को कूट जल में उबालें। जल उबलने पर फिटकरी और सोहागे को मिलावें। फिर अच्छी तरह उबल जाने पर बरतन को उतार लेगें। रसोंत को थोड़े अलग जल में मिलावें, उसमें नीला थोथा और कपूर को पीस कर मिला देवें। पश्चात् सब को छान मिला कर बड़ी बोतल में भर लेवें।

इस कषाय में से थोड़ा थोड़ा निकाल २-२ पिचकारी दिन में ३ समय सूत्रनलिका में लगाते रहने से सूत्रनलिका में संगृहीत पूय दूर हो जाता है, प्रदाह शमन होता है; घाव भर जाता है और कीटाणु नष्ट हो जाते हैं। केवल तीन रोज में ही यह औषध अपना चमत्कार दर्शा देती है; और थोड़े ही दिनों में सुजाक रोग को दूर कर देती है।

श्री डा० रामजीवन जी त्रिपाठी.

इस धोने की क्रिया के साथ डॉक्टर साहब डाक्टरी यन्त्र द्वारा सेक की क्रिया भी करते रहते हैं। सामान्यरीति से एक बर्तन में निवाया जल भर कर उसमें मूत्रेन्द्रिय को प्रातः = सायं १०-१० मिनिट डुबो रखने से भी अच्छा लाभ पहुँच जाता है।

४. पूयमेह हर गुटिका।

विधि—५ तोले हिंगुल तथा सूखा गन्धाविरोजा, कुन्दरू, रूमी मस्तंगी और भैंसागूगल १०-१० तोले लें सबको मिला कर कूटें। फिर किञ्चित् जल मिलाकर १-१ रत्ती की गोलियां बना, सेलखड़ी के चूर्ण में डालते जायं। जिससे एक दूसरी को लग कर न मिल सके।

उपयोग——२ से ४ गोली जल के साथ दिन में ३ बार देते रहने से ५-७ दिन में सूजाक दूर होजाता है। जीर्ण रोग में, प्रातः सायं २-२ गोली एक मास तक सेवन करानी चाहिये।

५ रक्तशोधक अर्क

बनावट—चोपचीनी, उशवा, काली अनन्त मूल,सनाय, सौंफ, हरड़ का छिलका, गोरख मुण्डी, बीज निकाले हुए उन्नाव, गुलाब के फूल, इंद्रायण की जड़, छोटे बेर की जड़ की छाल, मजीठ, रक्त चन्दन और असगंध, ये १४ औषधियां १-१ तोला, लौंग, दाल चीनी, छोटी इलायची के दाने और केशर ३-३ माशे लेवें। सब को मिलाकर कूट लेवें। फिर आठ गुने जल में मिलाकर अर्क निकाल लेवें। अथवा क्वाथ कर मसल छानकर बोतल में भर लेवें। क्वाथ करें तो शहद मिलाकर बोतल में भरें।

मात्रा—१-१ औंस दिन में दो बार पिलाते रहें।

उपयोग—इस अर्क या क्वाथ के सेवन से सब प्रकार के रक्त विकार दूर होते हैं। उपदंश, सुजाक, कुष्ठ दूषित पारद सेवन, मकड़ी आदि जन्तुओं से उत्पन्न रक्तदोष, अपथ्य जनित विकार, जीर्ण त्वचा रोग, पुराने सड़े हुए घाव, जीर्णकोष्ठ-बद्धता और अग्निमान्द्य आदि दूर होकर शरीर स्वस्थ होजाता है।

कुष्ठाधिकार प्रकरण

१—स्वर्ण क्षीरी रस

बनावट—सत्यानाशी की जड़ २० तोले को दौला यन्त्र से ३२० तोले मट्ठे में उबालें। फिर धोकर ३२० तोले दूध में दौला यन्त्र विधि से पाचन करें। मट्ठा और दूध हांडी में थोड़े-थोड़े परिमाण में डालें। जैसे-जैसे जलते जांय, वैसे-वैसे डालते रहें। दूध गाढा हो जाने पर सत्यानाशी को निकाल धो कुचल कर छाये में सुखा देवें। फिर कूट कर कपड़ छान चूर्ण करें। पश्चात् यह चूर्ण २० तोले काली मिर्च ८ तोले और रस सिन्दूर ४ तोले मिला कर मर्दन कर लेवें।

(शा० सं०)

मात्रा—२ से ४ माशे तक मंजिष्ठादि क्वाथ या जल के साथ प्रातःकाल देवें; और सहन हो सके तो रात्रि को भी देवें।

उपयोग—यह रसायन रक्तशोधक और कीटाणुनाशक है। इस रस का २ मास तक सेवन करने पर सुप्त कुष्ठ (सुन बहरी) नष्ट हो जाता है।

२—गलत् कुष्ठारि रस

बनावट—सोमल, रस कपूर, सिंगरफ और दाल चिकना १-१ तोला और जमाल गोटा (ऊपर से छिलके और भीतर से जिह्वी निकाले हुए) ४ तोले लेवें। सब को खरल में मिला कर दो अण्डों की जरदी डाल कर मर्दन करें। बाद में एनेमल (लोहे के सफेदी लगे हुए) के बर्तन में डाल निर्धूम उपलों की मन्द अग्नि पर चढ़ा कर लकड़ी से चलाते रहें।

जरदी पक कर तैल छूटने लगे, तब पात्र को उतार लें। शीतल होने पर औषधि को खुले मुँह की मजबूत डाट वाली शीशी में भर लवें। (स्वा० जगदानन्द गिरिजी)

मात्रा—१-१ रत्ती प्रातः काल १० साल के पुराने गुड़के साथ अथवा २-४ मुनक्का में रखकर निगलवा देवें। दांत को नहीं लगनी चाहिये।

सूचना—इस औषध के सेवन से पहले रोगी को निम्न विरेचन (मुंजिस) देना चाहिये।

मुंजिस—गुलाब के फूल और जौ कूट सौंफ १०-१० तोले मिलाकर ५ सेर जलके साथ उबालें। चतुर्थांश जलशेष रहने पर उतार मसल कर छान लेवें। इस जलमें से आधे जल को रहने दें; और आधे जल में २ छटांक चांवल डाल पका कर पतले चांवल बना लेवें। उसमें मुनक्का, काली मिर्च, शक्कर और घी मिला कर खा लेवें। शामको शेष जलमें उपरोक्त विधि से चावल बनाकर सेवन करें। ४-६ रोजमें उदर नरम हो जाने पर सुबह उपरोक्त औषधि लेवें। शामको नमकीन खिचड़ी बिना घी मिलाये खायँ। उसदिन भोजन एक ही समय दिया जायगा। पुनः दो दिन तक उपरोक्त विधि से मुंजिस के क्वाथ में बनाये हुए मीठे चावल खायँ। चौथे रोज औषधि लेवें। इसतरह ५-७ समय औषधि लेने से सब प्रकार के गलत् कुष्ट और विद्रधि दूर होते हैं।

उपयोग—विशेष कर यह रसायन उपदंशज गलत् कुष्ठ, उपदंशजनित रक्तविकार, न सूखने वाले पूयमय विद्रधि आदि को २१ दिन के भीतर सुखा कर दूर करते हैं। यह गलत् कुष्ठ के घाव को बहुत जल्दी सुखाता है।

कान, नाक, अंगुलियां आदि गल गये हों; देह बिल्कुल सड़गया हो, स्थान स्थान से रस चूता रहता हो; मक्खियां भिन भिना रही हो, देहमें से मुर्दे के समान दुर्गन्ध निकलने के हेतु से दूसरे व्यक्ति पास नहीं आसकते,रोगी भयंकर कष्ट भोग रहा हो, ऐसी परिस्थिति वाले अनेक रोगियों को इस रसायन ने जीवन दान दिया है! यह स्व० स्वामी जगदानन्दजी का परीक्षित है।

सूचना—अनेक रोगी ४ रत्ती तक मात्रा सहन कर जाते हैं। ऐसा प्रयोग दाता का कथन है। अधिक मात्रा से किसी को हानि न पहुँच जाय, इस विचार से हमने मात्रा कम लिखी है।

औषध सेवन के दिन घी पहले नहीं देना चाहिये। मुञ्जिसके दिनों में तो देना ही पड़ता है; किन्तु अनेक रोगियों को जब दाह बहुत बढ़ जाता है, तब घी कुछ अंश में देना पड़ता है। जब तक दाह अधिक न बढ़े तब तक घी देवें मुञ्जिस के दिनों में ५-१०-१५-२० और ३० तोले तक घी खिलाना पड़ता है। क्योंकि जुलाब से पीछे कोष्टको स्निग्ध करने के लिये स्नेह पान की आवश्यकता होती है अतः चांवल मूंग की खिचड़ी और घृत पाचन शक्ति के अनुसार देते रहना चाहिये। परन्तु जुलाबके दिन घृत देना वर्ज्य है। कुष्ठकुठार रसका एक पाठ रसतन्त्रसार प्रथमखण्ड में दिया है। वह भी गलत्कुष्ठ के ऊपर हितकारक है। उसकी अपेक्षा यह अति तीव्र है। अतः इसका प्रयोग अति सम्हाल पूर्वक करना चाहिये।

३ वीरचण्डेश्वर रस।

विधि—शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, शुद्धवच्छनाग लोह भस्म, बावची, हरड़, बहेड़ा, आंवला, नीम की अन्तर छाल, चित्रकमूल और गिलोय, इन ११ औषधियों को समभाग लें। पहले पारद गन्धक की कज्जली करें। फिर लोह भस्म, वच्छनाग

और शेष ओषधियों का कपड़छान चूर्ण क्रमशः मिला भांगरे के स्वरस और बावची के क्वाथ में ३-३ दिन मर्दन कर २-२ रत्ती की गोलियां बना लेवें। (र० रा० सु०)

मात्रा—१ गोली या अधिक; रोगी और रोग के बलानुसार जलके साथ दें।

उपयोग—यह वीर चण्डेश्वर रस ऋष्यजिह्वक और इतर सबकुष्ठोंका नाशकरता है। एक मासमें ऋष्यजिह्वक और ६ मास में समस्त कुष्ठों को नाश करता है।

ऋष्य जिह्वक की गणना सप्त महाकुष्ठों में की है। यह कुष्ठ वातपित्त प्रधान होता है। यह कठिन, किनारों पर लाल, मध्य में काले रंग का, वेदना युक्त और गाय की जिह्वा के समान खरदरा होता है। इस कुष्ठ पर इस वीर चण्डेश्वर का निर्माण किया है।

इसका प्रयोग श्वेतकुष्ठ पर भी लाभदायक है। शान्तिपूर्वक कुछ समय तक सेवन करना चाहिये। साथ में बावची का चूर्ण ६-६ माशे और दे दिया जाय, तो जल्दी लाभ हो जाता है।

सूचना—आरोग्यवर्द्धिनी और वीर चण्डेश्वरी दोनों कुष्टों पर हितकारक है। आरोग्य वर्द्धिनी में ताम्र और कुटकी है अनेकों से ताम्र और कुटकी सहन नहीं होती। उनके लिये लोहे और वच्छनाग प्रधान यह वीर चण्डेश्वर हिता वह है। इसमें वच्छनाग होने से कम मात्रा में अधिक काल तक देना चाहिये। अधिक मात्रा देने से वच्छनाग के हानिकर लक्षण उपस्थित होते हैं।

४. तालकेश्वररस।

प्रथमविधि—शुद्ध हरताल को ४ प्रहर कांजी के साथ दोलायन्त्र में स्वेदित कर फिर उसका सत्व उड़ा लेवे। सत्व

उड़ाने की विधि रसतन्त्रसार व सिद्ध प्रयोग संग्रह प्रथम खंडमें दी है। इस हरताल पुष्प १६ तोले के साथ समभाग शुद्ध पारद मिला आक और थूहर के दूध में ११ दिन मर्दन कर आतशी शीशी में भर वालुका यन्त्र में रखकर १२ प्रहर की अग्नि देवें। ३ घंटे के पश्चात् डाट लगावें। फिर ४८ घण्टे तेज अग्नि देने से रसायन कण्ठ नलिका में लगकर परिपक्व हो जाता है। स्वाङ्ग शीतल होने पर निकाल कर बोतल में भर लेवें। (र० यो० सा०)

मात्रा—१ से २ रत्ती तक दिन में दो बार त्रिकटु, त्रिफला, जायफल, लौंग और छोटी इलायची के दाने, इन ६ औषधियों के १॥ माशे चूर्ण के साथ देवें।

उपयोग—यह रसायन सब प्रकार के कुष्ठ, इन में भी खास कर गलत्कुष्ठ को नष्ट करता है। कितनेक चिकित्सकों की राय है कि, अनुपान रूप से खुरेसानी अजवायन १-१ माशा मिला देना चाहिये।

द्वितीयविधि—शुद्ध हरताल, सुवर्ण माक्षिक भस्म, शुद्ध मैनशिल, शुद्ध पारा और सोहागा का फूला ४-४ तोले, शुद्ध गन्धक ८ तोले तथा ताम्रभस्म ८ तोले लें। पारद गन्धक की कज्जली कर, हरताल का कपड़छान चूर्ण मिला कर मर्दन करें। फिर शेष औषधियाँ मिला नीम के पत्तों के स्वरस की भावना दे, गोला बना, सूर्य के ताप में सुखा, सराव सम्पुट कर, गजपुट के भीतर गड्ढा खोद, उसमें सम्पुट रख कर मिट्टी से अच्छी प्रकार दबा, ऊपर ५ सेर गोबरी की अग्नि देवें। स्वाङ्गशीतल होने पर निकाल, पुनः उसी तरह भावना देकर, गजपुट के नीचे गड्ढे (भूधरयन्त्र) में रख अग्नि देवें। इस तरह ९ पुट देवें।

अर्श, श्वेतश्वित्र, आठ प्रकार के उदररोग, क्षय, मूत्र कृच्छ्र, पाण्डुरोग, कण्ठ विकार, सब प्रकार के प्रमेह, उन्माद, ज्वर, नेत्ररोग, नासारोग, पांचप्रकार के गुल्म, ७० प्रकार के वात रोग, पित्तप्रकोप से उत्पन्न ४० रोग और २० प्रकार के कफ-रोग आदि दुष्ट व्याधियों का विनाश होता है। मनुष्य तेजस्वी और गौर वर्ण का हो जाता है। १०० वर्ष तक जीवित रहता है। कठिन रोगों में इनका सेवन ३ से ६ मास तक करने से रोग का निवारण हो जाता है, तथा युवति के मदको हरने में सवल और हृष्ट पुष्ट बन जाता है इस चूर्ण का सेवन धैर्य और श्रद्धासह करने से सफेद कुष्ठ के दाग, नये और पुराने, तथा समस्त शरीर में दृढ बने हुए विकार नष्ट हो जाते हैं। यू० पी० के एक नगर निवासी महात्मा जी ने इस प्रयोग से अच्छी ख्याति प्राप्त की है। ६ माशे से १ तोला मात्रा अधिक भासती है। परन्तु सहन हो सके, तो कम नहीं करनी चाहिये।

कुष्ठरोग की उत्पत्ति विशेषतः कृमिप्रकोप से होती है। यदि कोष्ठशूल, शीर्षशूल, ज्वर और तृषा लक्षण हो और रात्रिको कष्ट अधिक होता हो तो कृमि विकार मानकर इस औषध के सेवन काल में विडङ्गारिष्ट और खदिरारिष्ट, दोनों को मिला, दिन में दो बार भोजन करने पर तुरन्त देते रहना चाहिये।

६ श्वित्रारि योग।

(१) बड़ी बावची का चूर्ण १ सेर लेकर उसे असन वृक्ष और खैर की छाल के क्वाथ को ७-७ भावना देकर सुखा लेवें। फिर हरड़, चित्रकमूलकी छाल, शहद और घी, ये चारों १-१ सेर तथा लोह भस्म ८ तोले मिलाकर चाटण बना लेवें।

(भा० भै० र०)

मात्रा—१ से २ तोले दिनमें एक या दोवार देवें।

उपयोग—यह योग जीर्ण और दृढ श्वित्र कुष्ठ के लिये उत्तम है। मंदाग्नि और कोष्ठ बद्धता युक्त कुष्ठ रोगी के लिये लाभदायक है। इसके सेवन से कोष्ठाग्नि प्रदीप्त होती है। आम, कृमि, और कीटाणु नष्ट होते हैं। अन्न निर्दोष बनती है तथा रक्त प्रसादन होकर श्वित्र रोग दूर हो जाता है।

(२) शुद्ध गन्धक, हरड़, बहेड़ा, आंवला, भांगरा, भिलावा और नीम की निम्बोली की गिरी, इन सबको कूट कपड़छान चूर्ण कर भांगरे के रस में ३ दिन खरल करके सुखा, चूर्ण बना लेवें; या १-१ रत्ती की गोलियां बना लेवें। (भा० भै० र०

मात्रा—२ से ३ रत्ती रात्रि को अथवा दिन में २ बार मी शक्कर के साथ।

उपयोग—यह सफेद कोढ को सत्वर दूर करता है। वात और कफ प्रधानप्रकृति वालों के लिये, जिनका यकृत् निर्बल होने से योग्य पित्त स्राव न होता हो, मलावरोध, उदरकृमि, अग्नि मान्द्य, अर्श आदि लक्षण भी रहते हों, उनके लिये यह हितकारक है।

वक्तव्य—इस योग के सेवनकाल में जमीकंद, दूध, बैंगन, मछली, मांस, और खट्टे शाकों का त्याग करना चाहिये।

७ श्वितारि रस।

विधि—कासीस, शुद्ध पारद और शुद्धगन्धक, तीनों को ५-५ तोले मिला कज्जली कर तुलसी के स्वरस में ३ दिन खरल करके पेडा बनावें। फिर छाया में सुखा नीचेऊपर चांगेरी (अम्लोनिया) का कल्क रख दृढ सराव संपुट करें। फिर ५ सेर गोवरी की अग्नि देवें। (र० र० स०)

मात्रा—१ रत्ती से प्रारम्भ करके ४ रत्ती तक बढावें।

अनुपान—शहद और घी, दही और घी, मक्खन, आंवलों का रस, अदरख का रस, तिन्दुकफल या केले का फल।

उपयोग—यह रसायन श्वित्ररोग के लिये अति लाभदायक है। आम की अधिकता और कफ की प्रधानता वाले रोगियों के लिये यह उपयोगी है। इस रसायन के साथ निम्ब पत्र, हल्दी, पीपल, और बावची का चूर्ण बना कर ३-३ माशे दोपहर को भोजन कर लेने पर तुरन्त लेते रहना, तथा ऊपर दूध पीना विशेष लाभदायक है। बाहर लगाने के लिये महातिक्त घृत में बावची का चूर्ण मिलाकर उपयोग में लेना चाहिये।

वक्तव्य—औषध प्रारम्भ करने के पहले वमन, विरेचन आदि शोधन से शुध्द कर लेने पर योग्य लाभ सत्वर मिलता है।

८ भल्लातकअवलेह।

प्रथमविधि—ताजे, मोटे, जो भारी हों, वृन्तरहित, साबूत १ सेर भिलावे को २० सेर जल में डाल कर मंदाग्नि से पकावें। चतुर्थांश जल रहने पर जल को फैंकदें। फिर भिलावों को ४) सेर दूध में डालकर पकावें। चतुर्थांश दूध शेष रहने पर दूध को अलग कर भिलावे को निकाल ले। उसे २० तोले गोघृत में मंदाग्नि पर भूनें। फिर शिला पर मक्खन के सदृश बारीक पीसें। उसमें बंगभस्म, रस सिंदूर, सुवर्णभस्म, तीनों ७॥-७॥ माशे मिलावें। दाल चीनी, वंशलोचन, मेंहदी के फूल ता० २१ वार गोमूत्र में बुझाया हुआ मैनसिल १।-१। तोला, रतन जोत, लौंग, केशर, सौंफ, दाल चीनी, जावित्रि, २॥-२॥ तोले, सफेद चंदन का चूर्ण ५ तोले, कस्तूरी ७॥ माशे, छोटी इलाइची के दाने, भोजपत्र, तेजपान, सौंठ, पीपल, काकड़ासिंगी, मेंढासिंगी, छोटी हरड़, बड़ी हरड़, आंवला,

कालाजीरा, सफेदजीरा, कालीजीरी, कालीमिर्च, धनिया और तिल ये १६ औषधियां १।-१ तोले लें।

इन सबका कपड़ छान चूर्ण कर मिलावें। फिर गरम कर झाग निकाल साफ किया हुआ शहद २ सेर मिला अमृत बाम (जार) में भर ७ दिन तक धान्यराशि में दबा देवें। पश्चात् निकाल कर उपयोग में लेवें। (र० यो० सा०)

वक्तव्य—जो दूध निकाल दिया है, उसका खोवा बना घी में, भूनकर पाक बना लेने पर कुष्ठ, वातरक्त, अर्श, वातरोग और श्वास आदि व्याधियों पर लाभ पहुँचाता है। इस पाक में उग्रता रह जाने से मात्रा का वृद्ध होने पर कण्डू उत्पन्न होती है। उसके लिये तैल का सेवन और मर्दन कराया जाय तो लाभ मिल जाता है।

मात्रा—६-६ माशे प्रातःकाल को देवें।

उपयोग--यह पाक (अवलेह) वातरक्त, गलित्कुष्ठ (जिसमें हड्डी, पैर और हाथों के नख, गल गये हों तथा दाह और पिडिकाओं से युक्त हो), पामा, स्फोट, विचर्चिका, किट्टिभ, कण्डू, प्रचण्ड दाह युक्त कुष्ठ, शुक्र और रजो दोष, भयकर वात रोग, नेत्ररोग, मस्तिष्कविकार, श्वास और कास आदि को नष्ट करता है।

यह अवलेह रसयोग सागर कार का परीक्षित उत्तम योग है। वातरक्त, कुष्ठ, पक्षवध और अर्श आदि रोग पर अति लाभदायक है। वात और कफ प्रधान प्रकृति वालों को दिया जाता है। इसका, सेवन शीतकाल में कराने से उष्णता नहीं दर्शाता।

अपथ्य—सूर्य के ताप और अग्निका सेवन, धूम्रपान, अति गरम चाय, गरम दूध, गरम गरम भोजन, गरम जलसे स्नान, अधिक मिर्च, अधिक खटाई और अधिक नमक।

द्वितीयविधि—नीम की अन्तर छाल, सफेद सारिवा, अतीस, कुटकी, त्रायमाण, हरड़, बहेड़ा, आंवला, नागरमोथा, पित्तपापड़ा, बावची, धमासा, बच, खैर सार, रक्त चन्दन, पाठा, सोंठ, कचूर, भारंगी, वासा, चिरायता, कूड़ेकी छाल, कालीसारिवा, इन्द्रायण, मूर्वा, वायविड़ङ्ग, अतीस चित्रकमूल, हस्तिकर्ण, (पलाश की छाल), गिलोय, बकायन की छाल, कड़वे परवल, हल्दी, दारुहल्दी, पीपल, अमलतास का गूदा, सतौने की छाल शिरीस की छाल, जिब्बी रहित लालचिरमी, मजीठ, कलिहारी, रास्ना करञ्ज की छाल, सफेद सांठी की जड़, शुद्ध जमालगोटा, विजयसार, भांगरा, पियावांसा, इन ४८ औषधियों को ८-८ तोले लेकर जौ कूट चूर्ण करें। फिर ४०९६ तोले जल में मिलाकर क्वाथ करें। (अष्टमांश ५१२ तोले जल शेष रहने पर उतार कर कपड़े से छानलें। पश्चात् १००० भिलावें को ३०७२ तोले जल में मिलाकर छान लें चौथा हिस्सा (७६८ तोले) जल शेष रहने पर उतार कर छान लें। भिलावें का क्वाथ करने के समय बाष्प न लगे, यह सम्हालना चाहिये। इन दोनों क्वाथों को मिलाकर चूल्हे पर चढ़ावें। चौथाई जल शेष रहने पर ४०० तोले गुड़ डालकर पाक करें। इस पाकके साथ १००० भिलावें की गिरी (गोडंबी) पीसकर मिलादें; तथा सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, हरड़, बहेड़ा, आंवला, नागरमोथा, बाय विड़ङ्ग, चित्रक मूल, सैंधा नमक, सफेद चन्दन, कूठ, अजवायन, दालचीनी, तेजपात, नागकेसर, और छोटी इलायची, इन १७ औषधियों का कपड़ छान चूर्ण ४-४ तोले मिलाकर अवलेह बना लेवें।

सूचना—भिलावों का क्वाथ करते समय बाष्प नहीं लगनी चाहिये। और गरम-गरम को हाथ से मसलना नहीं चाहिये। ठंडा होने पर मसलें। यदि गरम को मसलना हो, तो पहले हाथों

को खोपरे के तैल से चुपड़ लेवें। अगर गरम गरम को हाथों को बिना नारियल तेल के लगाये मसला जयगा अथवा क्वाथ करते समय धुआं लग जायगा तो विस्फोटक हो जायगा।

मात्रा—६ माशे से १ तोला तक दिन में दो वार देवें। फिर ऊपर गिलोय का क्वाथ या दूध पिलायें। भोजन में नमकीन खट्टे और चरपरे पदार्थों का सेवन नहीं कराना चाहिये।

उपयोग-इस अवलेह के सेवन से श्वित्र और औदुम्बरकुष्ठ, दाह, ऋष्य जिह्वकुष्ठ, काकणकुष्ठ, पुण्डरीक कुष्ठ, चमकुष्ठ, विस्फोटक, रक्तमण्डल, कण्डू, कापालिका कुष्ठ, पामा, विपादिका, वातरक्त, ६ प्रकार के अर्श, पाण्डु रोग, व्रणविकार, कृमि, रक्तपित्त, उदावर्त, कास, श्वास, भगन्दर, पलित (बाल सफेद होजाना), और दुस्तर आमवात आदि सब नष्ट होजाते हैं।

यह अवलेह कुष्ठ आदि रोग नाशार्थ अतिहितावह है। यदि रोगी को इस अवलेह के सेवन के साथ रसकर्पूर और नीलाथोथा चौथाई-चौथाई रत्ती मुनक्का में डालकर निगलवा देवें, तो अधिक गुण करता है।

९ महातिक्तक घृत।

विधि—सतौना की छाल, अतीस, अमलतास का गूदा कुटकी, पाठा, नागर मोथा, खस, हरड़, बहेड़ा, आंवला, कड़वे परवल के पत्ते, नीमकी अन्तर छाल, पित्तपापड़ा, धमासा, रक्तचन्दन, पीपल, पद्माख, हलदी, दारुहलदी, वच इन्द्रायण की जड़, शतावरी, काली सारिवा, इन्द्रजौ, अडूसा की जड़ की छाल, धमासा, मूर्वामूल, गिलोय, चिरायता, मुलहठी और

त्रायमाण, ये ३१ औषधियां १-१ तोला लेकर कल्क करें। फिर कल्क और कल्क से ४ गुना घी, घृत से दुना आंवलोंका रस या क्वाथ, तथा घी से ७ गुना जल लें। सबको मिला मंदाग्निपर घृत सिद्ध करें। (च० सं०)

मात्रा—आधसे १ तोला तक दिनमें दो वार दें।

उपयोग—इस महातिक्तक घृत का सेवन करने से रक्त और पित्तप्रधान कुष्ठ, रक्तार्श, विसर्प, अम्लपित्त, वातरक्त, पाण्डु रोग, विस्फोटक, पामा, उन्माद, कामला, ज्वर, कण्डु, हृद्रोग, गुल्म, पिड़िकायें, रक्तप्रदर, गण्डमालाआदि रोग तथा सैंकड़ों प्रयोगोंके सेवनसे भी न जीते जाने वाली घोर व्याधियां, सब नष्टहोजाती है।

वक्तव्य—पहले कुष्ठ और वात रक्त के रोगी को संशोधनों द्वारा दोषमुक्त करावें; एवं शिराव्यध आदि द्वार दूषित स्थानमें से रक्त निकालें; फिर आभ्यन्तर संशमन चिकित्सा प्रारम्भ करने पर प्रकृति और समयानुरूप इस महातिक्तक घृत का सेवन करायाजाय, तो सब प्रकार के साध्य कुष्ठ और वातरक्त रोग नष्ट होजाते हैं।

श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य लिखते हैं कि, जो रोगी इस घृत का सेवन न कर सके, उसे कल्कके द्रव्यों का क्वाथ करके पिलावें। अथवा निम्नानुसार महातिक्तासव तैयार करके सेवन करावें।

वैसे कल्क द्रव्यों के समान (३१ तोले) खैरकी लकड़ी का बुरादा मिला, जौकुटकर चौगुने जलमें पकावें। चौथाई जल शेष रहने पर कपड़े से छान, क्वाथ से आधी चीनी तथा ३२-३२ वां हिस्सा अनन्तमूल और धाय के फूल का चूर्ण मिला अमृतवान या सागौन के पीपे में भरकर १ मास रख दें। १ मास के

पश्चात् आसव पक जाने पर छान लेवें। इसकी मात्रा ४ तोले हैं। समान जल मिलाकर दिनमें दो बार सेवन करावें।

श्वित्र कुष्ठ में इस घृत के साथ बावची का चूर्ण मिलाकर मालिश करते रहने से बाहर से भी लाभ पहुँचता है।

१० महाखदिरादि घृत।

विधि---काले खैर की अन्तर छाल या लकड़ीका बुरादा २००० तोले, शीशम की अन्तर छाल या बुरादा ८०० तोले, असन (विजयसार) की छाल-८०० तोले तथा करञ्ज की छाल, नीम की अन्तर छाल, बेंत, पित्तपापड़ा, कुड़े की छाल, वासामूल की छाल, वायविड़ङ्ग, हल्दी, दारुहल्दी, अमलात सकागूदा, गिलोय, हरड़, बहेड़ा, आंवला, निसोत, सतौने की छाल, ये १६ औषधियां २००-२०० तोले लें। इन सबको जौकूट चूर्ण कर २० द्रोण (२०४८० तोले) जल में मिलाकर पाक करें। जब आठवां भाग (२॥ द्रोण-२५६० तोले) जल शेषरहे, तब उतार कर छान लें। फिर आंवलों का रस, गोघृत ५१२ ५१२ तोले मिलाकर मन्दाग्निसे पाक करें। इस घृत में पाक समय महातिक्तक घृत में कही हुई औषधियाँ प्रत्येक ४-४ तोले का कल्क मिलावें। पाक होने पर कड़ाही को उतार तुरन्त घी निकाल लेवें। (च० सं०)

मात्रा—आधसे १ तोला तक दिनमें दोबार दें।

उपयोग—इस घृत के पान और मर्दन करने से सब प्रकार के कुष्ठ नष्ट जाते हैं।

११. गलित् कुष्टहर योग।

बड़ी चंपा (इसको बड़ो कनेर और कहीं कहीं गुल चीनी भी कहते हैं यह समान पत्ते वाली किन्तु कई प्रकार

१२. मदयन्त्यादि चूर्ण।

विधि—छाया में सुखाए हुए मेंहदी के बीज या पान का कपड़ छान चूर्ण १० तोले और भाँगरे के रस में शुद्ध किया गन्धक ५ तोले मिला ३ घण्टे खरल करें।

(श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्रा—१ से २ माशे दिन में २-३ बार जल या सारिवादि हिम के साथ देवें।

उपयोग—यह चूर्ण कण्डू (खुजली), पामा और फोड़े-फुन्सी आदि रोगों को दूर करता है।

१३. सारिवादि हिम।

विधि—अनन्तमूल, उशवा, चोपचीनी, मजीठ, गिलोय, धमासा, रक्तचंदन, गुल बनफशा, खस, गोरखमुण्डी, शाहतरा, कमल के फूल, गुलाब के फूल, और शंखाहुली, ये १४ औषधियाँ समभाग मिला कर चूर्ण करें।

(श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्रा—१ तोले चूर्ण को रात्रि को ६ तोले गरम जल में चीनी मिट्टी या कांच के बरतन में भिगोदें। सुबह मसल छान कर पिलादें। फिर उसी में ५ तोले गरम जल डाल कर रखदें। शाम को मसल छानकर पिलावें।

उपयोग—यह हिम सर्व प्रकार के रक्तविकार, कण्डू, पामा, हाथ पैरों का दाह, अम्लपित्त, जीर्णज्वर तथा पित्त और रक्त दुष्टि अधीन सब रोगों में लाभदायक है।

१४. तुवरक तैलयोग।

विधि—तुवरक तैल (चालमोगरा तैल) को अतिमंद अग्नि देकर उसमें रहे हुए जलको जला डालें। फिर कपड़े से

छान ३ गुने खैर के बुरादे या छाल के क्वाथ में मिला पका कर तैल सिद्ध करें। फिर तैल को बोतल में भर १५ दिन तक कण्डों के चूर्ण में रख दें। आवश्यकता पर प्रयोग में लेवें।

(श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्रा—प्रातः सायं दिनमें दो बार ५ बूंद से २०० बूंद (१ तोला) तक। पहले ५ बूंद से प्रारम्भ करें। प्रति चौथे दिन ५ बूंद बढ़ाव। इस तरह सहन हो उतनी मात्रा बढ़ावें। मात्रा अधिक होने पर चक्कर आता है, जी मिचलाने लगता है और वमन होती है; ऐसा हो तो तैल की मात्रा घटादें।

अनुपान—गौ का ताजा मक्खन या दूध की मलाई।

उपयोग—यह तैल कीटाणुनाशक, वेदनाहर, रक्तशोधक और व्रणरोपण है। सब प्रकार के महाकुष्ठों पर व्यवहृत होता है। एवं यह वातरक्त, क्षय, कण्ठमाल, जीर्ण सन्धिवात, अस्थि-व्रण, नाड़ीव्रण, जीर्ण फुफ्फसशोथ आदि पर लाभदायक है। उदर सेवन के अतिरिक्त स्नान करने के पश्चात् इसका अभ्यंग भी कराया जाता है। इस तरह ६ मास या कुछ अधिक समय तक पथ्यपालन सह प्रयोग करने से रोगी स्वस्थ होजाता है। इस तैल में कपड़ा भिगो कर व्रण पर बांधने से व्रण शीघ्र भरता है। पामा, कण्डू आदि पर भी यह तैल लगाया जाता है।

पथ्य - रोगी प्रातः सायं केवल दूध लें। दो पहरको मोसम्बी मीठे नीबू, मीठा अनार, सेब, केला, मीठा अंगुर आदि मीठे फल लें। दूध और फलों के बीच ३ घण्टे का या अधिक अन्तर रक्खें। इस तरह पथ्य पालन हो सके तो लाभ सत्वर मिलता है। कदाच यह पथ्य पालन न हो सके तो पुराने चावल का

भात तथा जौ या गेहूँ की रोटी थोड़ा घी लगायी हुई दूध के साथ लेवें। अम्ल, लवण और कटु रस वाले (चरपरे) पदार्थ निषिद्ध हैं।

१५. वाकूची योग।

विधि—वावची के बीजों का प्रयोग श्वित्र (गौण कुष्ट) पर होता है। पहले दिन ५ दाने से प्रारम्भ कर प्रतिदिन १-१ दाना बढ़ा कर २१ पर्यन्त बढ़ावें। फिर १-१ दाना घटावें। इस तरह १ मास में एक आवृत्ति पूरी होती है। आवश्यकता अनुसार रोग शमन होने तक इस तरह अनेक आवृत्ति करें (या २१ दाने होने पर उतनी ही मात्रा में रोज सुबह शीतल जल से निगलते रहें) साथ साथ केवल वावची तैल अथवा वावची और तुवरक का तैल श्वित्र पर लगाते रहें।

(श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

तुवरक तैल २ भाग, वावची का तैल और चंदन का तैल १-१ भाग मिला कर लगाने पर कण्डू, पामा और विचर्चिका में भी लाभ होता है।

पथ्या पथ्य—रोगी को अम्ल, लवण और कटु रस (चटपटे पदार्थ) का त्याग करना चाहिये। चावल, जौ या गेहूँ की रोटी, विना खटाई, नमक, और गरम मसाले डाले मूंग के यूष और मीठे फल पर रह कर औषध प्रयोग करें।

१६ पथ्याभल्लातक मोदक।

विधि—वजनी लम्बी काबुली हरड़ की छाल तुषरहित काले तिल, पुराना गुड़ और भिलावां, इन सबको समभाग मिला खरल वर्त में कूट कर १॥-१॥ माशे के मोदक

गहराई में प्रवेशकर जाते हैं। फिर अधिकाधिक फैलते जाते हैं। त्वचाबिल्कुल शुष्क हो जाती है। खुजाने पर त्वचा के अणु निकलते रहते हैं। ऐसी अवस्था में केवल वाह्योपचार करने मात्र से कार्य सिद्धि नहीं होती। वाह्योपचार से कीटाणु मूर्च्छित होजाय या उपरिस्तर पर रहे हुए नष्ट हो जाय तोभी भीतर वाले जीवित रह जाते हैं। जो थोड़े ही दिनों में फिर विप को ऊपर तक पहुँचा देते हैं। अतः उस अ स्था में वाह्योपचार के साथ इस पथ्याभल्लातक मोदक का सेवन कराने पर सच्चा लाभ होजाता है। वाहर लेपार्थ कांपला, वायविडंग, और वावची १-१ तोले और मनःशिल ३ माशे को मट्ठे के साथ मिलाकर लगाते रहें।

दद्रूके समान अन्य व्युची आदि कुष्ठ रोगों में भी उदर सेवनार्थ औषधि लीजाय, केवल वाह्य तीव्र कुष्ठघ्न लेपका ही प्रयोग किया जाय, तो लाभ न होते हुए रोग विशेष दृढ होजाता है। किन्तु वाह्योपचार के साथ इस मोदक का सेवन कराया जाय तो लाभ सत्वर पहुँचता है एवं दद्रू, व्युची, कण्डू आदि रोग दूर होने परभी जब तक त्वचा मुलायम सुन्दर कान्ति युक्त न हो जाय, तब तक चर्मरोगनाशक तैल या अन्य तैल की मालिश रोज करते रहना चाहिये।

शास्त्रमर्यादानुसार कुष्ठरोग में गुड़ और तिल अपथ्य माने जातेहैं। कारण गुड़ उदरकृमि को परिपुष्ट बनाता है, और तिल से अभिष्यंद वृद्धि होकर-मार्गावरोध होकर रस रक्तकी दुष्टी होती है। एवं भिलावा त्वचा की छिद्रों द्वारा वाहर निकलने के समय विनिमय क्रिया वृद्धि करा अधिक प्रस्वेद लाता है। फिरत्वचाको शुष्क बनाता है। जिससे शुष्क त्वचा वालोंको भिलावा नहीं दिया जाता। तथापि भिलावे का संयोग तिल के

हिला लेवें। फिर थोड़ा निकाल निवाया कर पीड़ित स्थ मर्दन करें। इस तरह दिनमें ५-७ समय मर्दन करते रहने से भयङ्कर चर्मदलका भी विनाश हो जाता है। चर्मदल के लिये यह दिव्य औषध हैं।

सूचना—चर्मदल दृढ होने पर उस स्थान के रोमकूप वहुधा कार्य करने में असमर्थ हो जाते हैं। ऐसी अवस्था में औषधि का वाह्य प्रयोग विशेष लाभ नहीं पहुंचा सकता। अत: पहले ८-१० दिन तक ईसवगोल की पुल्टिस बांध कर स्थान को मृदु बना लेवें। फिर इस तैल का प्रयोग करने पर ओषधि भीतर प्रवेश कर प्रस्वेद को बाहर निकाल कर रोग को दूर कर सकती हैं।

२१. दद्रुहर लेप।

बनावट—छना गीला बिरोजा १० तोले, दण्डागन्धक ५ तोले, चौकिया सोहागा १। तोला और राल १। तोला लें। पहले बिरोजा और गन्धक को मिला कड़ाही में डाल रस करें। लोहे की सलाई से चलाते रहें। दोनों मिल जाने पर सोहागा और राल का चूर्ण डाल कर तुरन्त कड़ाही को नीचे उतार पत्थर की शिला पर डाल देवें और औषधि गरम रहते रहते वर्तियां बना लेवें। कारण औषधि शीतल हो जाने पर ही कड़ी हो जाती है।

उपयोग—इस वर्त्ति को पत्थर पर जल के साथ घिस कर दिन में दो तीन बार लेप करते रहने से २-३ दिन में दाद मिट जाता है।

२२. गुलाबी मलहम।

विधि—पुष्पांजन (सफेदा-जिंक ऑक्साइड), सिन्दूर, कपूर और चन्दन का तैल १-१ तोला, रसकपूर ६ माशे और

धोया हुआ घी या वैसलिन १० तोले लेवें। सबको मिला कर मलहम बना लेवें। (श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

उपयोग—यह मलहम खाज, पामा, अग्निदग्ध स्थान और अर्श के मस्से पर लगाने से वेदना और दाद रोगकी निवृत्ति होती है।

२३. करंजतैलादि मलहम।

विधि—करंज का तैल मोम और शहद १०-१० तोले, काली मिर्च और काली जीरी का चूर्ण ५-५ तोले, नीलेथोथे का फूला २॥ तोले और कपूर १। तोला लेवें। पहले तैल और मोम मिलाकर गरम करें। फिर कड़ाही को उतार उष्णता कम होने पर औषधियों का कपड़ छान चूर्ण मिलावें। पश्चात् शहद मिलाकर डिब्बों में भर लेवें।

उपयोग—इस मलहम की पट्टी लगाने से, सूखा और द्रव्ययुक्त च्युची, दाद तथा खुजली आदि विकार नष्ट हो जाते हैं।

२४. पारदादि चूर्ण।

विधि—पारद १ तोला, गन्धक २ तोले, मुर्दासङ्ग १ तोला, कपूर १ तोला, काली मिर्च २ तोले, नीले थोथे का फूला ६ माशे और सेलखड़ी, का चूर्ण १० तोले लेवें। पहले कज्जली बना फिर मुर्दासंग, काली मिर्च और नीला थोथा मिलावें। पश्चात् कपूर के साथ मर्दन करें। अन्त में सेलखड़ी मिलावें।

उपयोग—इस चूर्ण में से ६ माशे चूर्ण को २ तोला सरसों के तैल के साथ मिला ताम्बे या पीतल के भगोने में खरल करें। फिर सारे शरीर पर मर्दन करें। एक घण्टे पश्चात् निवाये जल

से स्नान करें। इस तरह ३ दिन तक करने से खुजली दूर होती है। खुजली के पीले फाले (पामा) पर लगाने के लिये चूर्ण को मक्खन में मिला लेना चाहिये। इसी चूर्ण के प्रयोग से ३ दिनमें हो कण्डू और पामा दूर हो जाती है।

इनके अतिरिक्त जो फोड़े फूट गये हों, उन पर सूखा चूर्ण दबा देने से फोड़े भर जाते हैं। कर्णस्राव में १-१ रत्ती चूर्ण फूंक देने से पूयस्राव जल्दी बन्द हो जाता है।

२५. पामाहर मलहम।

विधि—रुई निकाले हुए कपास के फलों को जला, राख कर कपड़े से छान लेवें। यह भस्म १० तोले, कपूर और नीला थोथा ३-३ माशे, धतूरा के पान २॥ तोले, तिल तैल १० तोले और मोम ६ माशे लेवें। पहले तैल में धतूरा के पत्तों का भून कर तैल को छान लेवें। फिर चूल्हे पर चढ़ा मोम मिलावें। पश्चात् उतार कुछ शीतल होने पर कपूर और नीला थोथा मिलावें फिर कपास के फलों की राख मिला कर मलहम बना लेवें।

उपयोग—यह मलहम कुछ जलन करता है, किन्तु इसके लेप से सब प्रकार के पामा और असाध्य व्युची एक सप्ताह में दूर हो जाते हैं। एवं खुजली आदि को भी सत्वर दूर करता है। सूखी खुजली और शीतपित्त में इस मलहम को गरम कर ४ गुना तिल का तैल मिला कर मालिश कराने से लाभ हो जाता है।

२६. विपादिकाहर मलहम।

विधि—जीवन्ती (डोडी शाक) के मूल, मजीठ, दारू हल्दी और कपीला १६-१६ तोले तथा नीला थोथा ४ तोले मिला जल में पीस कर कल्क करें। फिर कल्क, गोघृत १२८ तोले, तिल तैल १२८ तोले, गोदुग्ध २५६ तोले, जल १०२४ तोले मिला

कर मंदाग्निपर पाक करें। फिर स्नेहको कपड़ेसे छान,पुनः थोड़ा गरम कर राल और मोम ३२-३२ तोले मिला लेवें। (च॰ सं॰)

उपयोग—इस मलहम को लगाते रहने से विपादिका (हाथ पैर की त्वचा फटना). चर्मकुष्ठ, एककुष्ठ, किटिभ और अलसक आदि कुष्ठ नष्ट होते हैं।

विपादिका रोग चाहे उतना पुराना हो, त्वचा टूट कर रक्त आता हो,चाहे पूयोत्पतिहो जानेसे कण्डू,वेदना स्पर्शासहत्व और शोथ आदि लक्षण हों, इन सब लक्षणों सह रोग को दूर कर देता है। अधिक शोथ और शूल होने पर गेहूँ के आटे की पुल्टिस बांध कर (पुल्टिस में ४-४ रत्ती खोरासानी अजवायन चूर्ण मिलाकर) शोथ-शूल को कम कराना चाहिये। फिर इस मलहमका उपयोग करनेपर सत्वर लाभ पहुँचता है। जीर्ण रोग होने पर साथ-साथ आरोग्य वर्धनी त्रिफला के फाण्ट के साथ रोज सुवह सेवन कराते रहने से विशेप लाभ पहुँचता है।

वक्तव्य—स्थानिक रक्त विकृति अधिक हो तो जलौका द्वारा रक्त खिंचवा कर दोप को निकाल देना चाहिये।

इस मलहम को १०० वार जल से धोकर अग्निदग्धव्रण, कण्डू, पामा, और अर्श के मस्से पर लगाया जाता है। अग्नि दग्धव्रण पर लगाने से वेदना शमन होती है। और घाव सत्वर भर जाता है।

२७ कण्डूनाशक योग

विधि—दंडागंधक, दालचीनी और काला नमक तीनों एक २ तोला मिलाकर चूर्ण करें। फिर १०० तोले सरसों के तेल में मिलाकर घोट लें। पश्चात् सूर्य के ताप में बैठकर सारे शरीर में मालिश करें। सहन हो सके तब तक २-२ घंटे धूप में बैठें। जिससे प्रस्वेद आकर विप वाहर निकल जाता

है। फिर आध घंटे छाये में विश्रांति लेवें। पश्चात् आंवलों का चूर्ण रगड़ कर निवाये जलसे स्नान करें। इस प्रयोग से एक या दो दिन में खुजली चली जाती है।

सूचना—भोजन ३ दिन तक हल्का करें। नमक, मिर्च न खायँ। हो सके तो ३ दिन केवल दूध पर रहें।

२८ माणिभद्र योग

विधि—वायविडंग की गिरी, आंवले और हरड़ तीनों ४-४ तोले, निसोत की छाल १२ तोले और गुड़ पुराना २४ तोले मिलाकर ३-३ माशे के मोदक बना लेवें। (अ० हृ०)

मात्रा—१ से २ मोदक जल के साथ सेवन करें।

उपयोग—यह योग उदरशोधनार्थ अति हितकारक है। कुष्ठ, श्वित्र, श्वास, कास, उदररोग, अर्श, प्रमेह, प्लीहावृद्धि, ग्रन्थि, उदरशूल, कृमि और गुल्मादि रोग की उत्पत्ति और वृद्धि, अन्त्र में मल, आम और कीटाणुओंके संग्रह से होती है। अतः मल संग्रह जनित कुष्ठ आदि रोगों में इस योग का सेवन अति लाभदायक है।

चक्रदत्त, वंगसेन, भैषज्य रत्नावली और गदनिग्रह आदि ग्रन्थकारों ने इस योगको अर्श प्रकरण में लिखा है। एवं क्षय, भयंकर जलोदर आदि पर भी गुणकारक दर्शाया है। कुष्ठ आदि रोगों में जिनको मलावरोध रहता हो; उनके लिए आवश्यकता पर इसका उपयोग किया जाता है। कुष्ठ और जलोदर में अति कोष्ठबद्धता होने पर ४ मोदक या अधिक देने में भी हानि होने का भय नहीं है।

२९ कण्डूनाशक तैल

प्रथम विधि—पारद और द्विगुणगंधक मिलाकर की हुई कज्जली २० तोले, नीले थोथे का फूला १ तोला तथा काली

मिर्च का कल्क ४० तोले, सरसों का तैल २ सेर और धतूरे के पत्तों का रस ८ सेर लेवें। सबको मिला मंदाग्नि पर तैल पाक करें। धतूरे का रस जल जाने पर ऊपर ऊपर से तैल को निकालें। फिर खरल या किसी दूसरे पात्र में किट्ट का मर्दन करें। पश्चात् थोड़ा थोड़ा तैल मिला सबको एक रस बना कर बोतलों में भर देवें।

उपयोग--इस तैल का उपयोग करने के समय बोतल को चलाकर थोड़ा तैल कटोरी में निकाल लें। उसमें से मालिस करने से एक सप्ताह में असाध्य गजचर्म, कण्डु, दाद, कुष्ठ रोग, संधिवात आदि नष्ट होजाते हैं; और त्वचा मुलायम बन जाती है।

सूचना रोगी को तैल लगाने के पश्चात् निवात स्थान में बैठाकर स्वेद देवें। त्रिफला, वायविडंग और अजवायन डालकर उबाले हुए जल की बाष्प देवें। प्रस्वेद आजाने के आधे घंटे बाद साबुन लगा निवाये जल से स्नान करावें।

द्वितीय विधि--पारद और द्विगुणगंधक मिलाकर की हुई कज्जली ३ तोले, काली मिर्च, कपूर और मुर्दासंग एक-एक तोला तथा कपीला ६ तोले मिलाकर मर्दन करें। फिर २० तोले सरसों के तेल में मिलालें।

इस तैल की सारे शरीर पर मालिस करावें। एक घंटे बाद त्रिफला, वायविडंग और अजवायन डालकर उबाले हुए जल से साबुन लगाकर स्ना करावें। इस तरह ३-४ दिन करने से खुजली बिल्कुल चली जाती है, और रात्रि को शांति से निद्रा आजाती है। अधिककोष्ठबद्धता होने पर विरेचन देकर उदरशुद्धि भी करानी चाहिए।

झिंक ऑक्साइड Zinc Oxide २० ग्रेन
लाइकर कार्बोनिस डेटरजेन्स Liq. Carbonis Detergens
१ ड्राम
अंगवेण्टम पाइसिस लिक्विड Ung. Picis Liquide २ ड्राम
विशुद्ध वराह वसा Lard ad २ औंस तक

इन सबको मिलाकर मलहम बना लेवें। इसके प्रयोग से व्युची (एक्जिमा) आदि विविध चर्मरोगों का निवारण होता है।

३३ उद्वर्त्तन।

विधि—हल्दी, चिरौंजी, पोस्त के दाने, कमर्द (पंवाड़) के बीज, गुलाब के फूल, सोना गेरू (गीले अरमानी), करंज को गुद्दी लाल चंदन, चमेली की पत्ती २-२ तोले, खस १ तोला तथा पीली सरसों १० तोला इन सब को कूट कर चूर्ण करें।

वक्तव्य—करंज दो प्रकार के होते हैं। एक के फल गोल तथा दूसरे का चिपटा होता है। गोल फल वाले करंज की गुल्म होती है और फली पर तथा सर्वाङ्ग में काँटे होते हैं, चिपटे बीज वाले का वृक्ष ५०-६० फीट ऊंचा होता है। उसे हिन्दी में डिठोहरी और बंगला में डहर करंज कहते हैं। इस प्रयोग में डिठोहरी के फलों की गिरी लेना चाहिये।

उक्त चूर्ण में से आवश्यकतानुसार लेकर गाय के दूध के साथ सिल पर चटनी सदृश पीसें। फिर थोड़ा सा दूध पुनः मिलाकर पकावें। पकते पकते जब उद्वर्त्तन योग्य होजावे तब किञ्चित् गर्म रहते ही शरीर के उपद्रुत भाग पर मलकर छुड़ादें। व्याधि की उग्रावस्था में और अधिक जीर्णावस्था में गोदुग्ध के स्थान पर गोमूत्र का प्रयोग करना विशेष हितावह माना जायगा।

आदि स्निग्ध पदार्थों का सेवन न होना, दीर्घकाल तक ज्वर पीड़ित रहना एवं मिर्च आदि दाहक पदार्थों का अति सेवन होने या विविध कीटाणुओं का आक्रमण होने पर पित्त प्रकोप होना आदि कारणों से त्वचा शुष्क हो जाती है। उस पर इस उद्वर्त्तन को दुग्ध के साथ मिलाकर लेप और मर्दन करने से सत्वर लाभ पहुँचता है। त्वचा मुलायम और स्निग्ध बनती है एवं त्वचागत रक्ताभिसरण प्रबल होकर त्वचा तेजस्वी भी बन जाती है। शुष्क त्वचा पर प्रयोग करने पर सुगन्धित तेल भी थोड़ा मिलाना हो, तो वह भी सहायक होता है।

श्री० वैद्य माधव प्रसादजी पाण्डेय वैद्य-भूषण

३७ शीतपित्त प्रकरण।

१ शीतपित्तभञ्जन रस।

विधि--शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, कासीसभस्म ताम्र-भस्म, ये चारों ओषधियां २-२ तोले लें। पहले कज्जली करें। फिर भस्में मिलावें। पश्चात् भांगरा और सरफोंका के रस या क्वाथ के साथ ७-७ दिन खरल कर गोला बनाकर सूर्य के ताप में सुखावें। तत्पश्चात् सराव संपुट कर दृढ़ कपड़ मिट्टी करें। फिर संपुट को सुखा कुक्कुटपुट देवें। स्वाङ्गशीतल होने पर भांगरा और सरफोंका के रस में १-१ दिन मर्दन कर पुनः अग्नि देवें। इस तरह ३ कुक्कुटपुट देवें। (र० यो० सा०)

मात्रा---२-२ रत्ती ६-६ माशे गुड़ के साथ दिन में दो बार देवें।

उपयोग शीतपित्त भञ्जन रस शीतपित्त आदि रोगों को बहुत जल्दी दूर कर देता है। एवं यह सब प्रकार के कुष्ठ और वातरक्त को भी नष्ट करता है।

पीपल, सोंठ, दालचीनी, तेजपात, छोटी इलायची के दाने, वायविडङ्ग, गिलोय, वासा के मूल की छाल, कूठ, हरड़, बहेड़ा आंवला, चव्य, धनिया, लोह भस्म और ताम्र भस्म, ये २३ ओषधियां ६-६ माशे लेवें। मिश्री की चाशनी कर के शेष ओषधियों का कपड़ छान चूर्ण मिला कर घी चुपड़े हुए थाल में जमा देवें। (भै० र०)

मात्रा—२ से ६ माशे दिनमें दो बार निवाये जलके साथ।

उपयोग—यह हरिद्रा खण्ड शीतपित्त, उदर्द, कोठ, कण्डू, पामा, विचर्चिका, जीर्ण ज्वर, कृमि, पाण्डु और शोथ आदि रोगों का नाश करता है।

यह पाक उत्तम रक्तप्रसादक औषध है। यदि शीतपित्त के रोग में इस खण्ड का सेवन करने पर भी मलावरोध रहे, तो साथ में पंचसकार या मंजिष्ठादि चूर्ण का सेवन भी कराना चाहिये। कितनेक रोगियों को पतले दस्त लगते हों या उष्णता रहती हो, तो यह खण्ड सहन नहीं होता, उनको निम्न हरिद्रा खण्ड देना चाहिये।

४. हरिद्रा खण्ड।

विधि—हल्दी ३२ तोले, घी २४ तोले, दूध ५१२ तोले, शक्कर २०० तोले तथा सोंठ, काली मिर्च, पीपल, तेजपात, छोटी इलायची, दालचीनी वायविडङ्ग, निसोत, हरड़, बहेड़ा, आंवला, नागकेशर, नागर मोथा और लोहभस्म ४-४ तोले लें। पहले चूर्ण को दूधमें मिलाकर खोवा बनावें। फिर उसे घी में भूनें। पश्चात् शक्कर की चाशनी करें। उसमें खोवा तथा शेष ओषधियों का कपड़ छन चूर्ण मिला कर पाक बना लेवें।

मात्रा—६-६ माशे दिन में दो बार दें।

उपयोग—इस खण्ड के सेवन से शीतपित्त, कण्डू, विस्फोटक, दद्रु दूर हो जाते हैं। शीतपित्त, उदर्द और कोठ रोग केवल १ सप्ताह में नष्ट होते हैं और देह सुवर्ण समान तेजस्वी बनती है। यह शीतपित्त और कण्डू रोग की उत्तम ओषधि है।

उपयोग—यह चूर्ण अम्लपित्त, भोजन कर लेने पर थोड़े समय में वान्ति होजाना, कण्ठ में दाह, छाती में जलन, शिर में दर्द, सगर्भा की वमन, घबराहट, प्रदर, रक्तातिसार, पेचिश आदि को दूर करती है।

चतुर्थविधि—सोरा ८ तोले और नौसादर १ तोला ले कर चूर्ण कर लेवें।

मात्रा—४ से ६ रत्ती दिन में २ वार जल में मिलाकर पिलादें।

उपयोग—इस चूर्ण के सेवन से आमाशय के पित का रूपान्तर होता है। अम्लपित्त छाती में जलन, खट्टी डकार और अपचन आदि दूर होते हैं। नये विकार में यह चूर्ण हितकारक है। इसका उपयोग अधिक दिनों तक नहीं करना चाहिये।

४१—विसर्प प्रकरण।

१. काशीशादि वटी।

विधि—कासीस भस्म, चित्रकमूल, पाठा, गिलोय, रक्तचंदन, रसोंत, धतूरा के शुद्ध बीज और नागरमोथा, इन ८ औषधियों को समभाग मिला विष्णु क्रान्ता (अपराजिता) के स्वरस में ३ दिन तक मर्दन कर १-१ रत्ती की गोलियां बनावें। (भै० र०)

मात्रा—१ से २ गोली दिन में २ वार अदरख के रस और शहद के साथ दें।

उपयोग—इस वटी के उपयोग से दुःसाध्य विसर्प और उसके साथ रहे हुए ज्वर, दाह आदि लक्षण सब नष्ट हो जाते हैं।

२. मुक्ता मिश्रण।

योग—मुक्तापिष्टी और रस सिंदूर १-१ रत्ती, प्रवाल पिष्टी २ रत्ती और गिलोय सत्व ४ रत्ती सब को मिलाकर २ पुड़ी बनावें। सुबह शाम शहद के साथ सेवन करें; और ऊपर निम्न पटोलादिक्वाथ पिलावें, तो ज्वर, दाह और वेदना सह विसर्प रोग निवृत्त हो जाता है।

कभी-कभी व्रण-विद्रधि में कीटाणुओं का प्रवेश होकर विसर्प की संप्राप्ति होती है। उसमें शोथ, ज्वर, सिर दर्द, बद्धकोष्ठ और वेदना आदि लक्षण होते हैं। ऐसे विकार वाले, विसर्प में पहले जलौका लगाकर रक्तमोक्षण कराना चाहिये। फिर इस मुक्तामिश्रण का प्रयोग करने पर लाभ हो जाता है।

३. पटोलादि क्वाथ।

विधि—परवल के पत्ते, गिलोय, चिरायता, अडूसाके पत्ते, नीमकी अन्तर छाल, पित्त पापड़ा, खैर की छाल, और नागरमोथा, इन ८ औषधियों को समभाग मिलाकर जौ कूट चूर्ण करें। (भै० र०)

मात्रा—२-२ तोले चूर्ण को १६ गुने जल में मिला चतुर्थांश क्वाथ कर दिन में दो बार पिलाते रहें।

उपयोग—इस क्वाथ के सेवन से विसर्प और विस्फोटक ज्वर सहित निवृत्त हो जाते हैं। यदि रोगी को कब्ज भी हो तो क्वाथ में कुटकी और त्रायमाण मिला देने से सत्वर लाभ पहुंचता है।

४. विसर्प हर तैल।

प्रथम विधि—हिन्दी और मराठी में पांगारा, संस्कृत में पारिभद्र, बहुपुष्प, गुजराती में पांडेरवो, बंगाली में पलिता मंदार, तैलंगी में वारिजम्, वारिद्मु और लेटिन में एरिथ्रिना इण्डिका (Erythrina indica) कहते हैं। यह पादपसंज्ञा का वृक्ष वरुण से मिलता जुलता होता है। इसकी उपजाति की कल्पना पुष्पों के रंग से होती है। वसन्त ऋतु में जब पूरापतझड़ होकर वृक्ष लकड़ी मात्र रह जाता है। फिर फूल आते हैं। यह फूल, श्वेत, लाल, पीले होने से तीन प्रकार के होते हैं। श्वेत फूल वाला विशेष गुणवान है। उसे आन्ध्रभाषा में तिल्लवारिजम् कहते हैं। इसका यथा लब्ध पंचांग लेकर कल्क करें। (किंवा पत्ते, छाल और मूल ही पर्याप्त हैं) फिर चौगुने नारियल के तेल में यथा विधि सिद्ध कर कल्क को भी तेल में ही रगड़ दें।

उपयोग—इस तैल को विसर्प पर लगाने से चमत्कारी लाभ होता है। चाहे सैकड़ों प्रयोगों से सफलता न मिली हो, ऐसे अत्यन्त बढे हुए विसर्प पर भी यह तैल आश्चर्यान्वित लाभ कर देता है। छोटे बच्चे, जिनका एक अङ्ग वा सर्वाङ्ग सड़ जाता है। उसे प्रायः स्त्रियां, परछावां, पल्लकी बीमारी या छूत की बीमारी कहती हैं। उसमें स्पर्श जन्य व्रण हो जाते हैं। उस पर यह प्रयोग जादू-सा प्रभाव दिखाता है। यह अनेक वर्षों का अनुभव सिद्ध योग है।

अत्यन्तदाह और उष्णता पूर्ण विसर्प अथवा किसी भी प्रकार के पित्त-रक्त प्रकोप पर इस पांगारा की छाल का रस १-२ तोला गोदुग्ध में मिला मिश्री के साथ (या छाल का चूर्णघी शक्कर के साथ) देने से ३-४ मात्रा में ही अपरिमित लाभ दर्शाता है।

—श्री पण्डित राधाकृष्णजी द्विवेदी

२. शीतलाशामक वटी

विधि—ब्राह्मी, काली मिर्च, हंसराज, तुलसी के पान २-२ तोले और गोरोचन ३ माशे लेवें। सब को मिला तुलसी के रस में १८ घंटे खरल कर आध-आध रत्ती की गोलियां बनालें।

श्री. वैद्य गोपालजी कुँवरजी ठक्कुर।

मात्रा--१ से २ गोली ४-४ घंटे पर दिन में ३ बार तुलसी के रस के साथ देवें।

उपयोग--इस वटिका सेवन कराने से शीतला और रोमान्तिका के दाने जल्दी बाहर निकल आते हैं।

३. गोरोचन मिश्रण

विधि—गोरोचन १ तोला, प्रवालपिष्टी, शृङ्गभस्म और अमृतासत्व २-२ तोले तथा ३ माशे सोनागेरू लें। सबको मिला कर घोट लेव।

मात्रा--१ से ३ रत्ती दिन में ३ बार शहद या तुलसी के रस के साथ।

उपयोग—यह मिश्रण मसूरिका आदि रोगों के विषको नष्ट करता है, और मसूरिका आदि को निर्विघ्न दूर कर देता है।

४. मसूरिकान्तक रस

विधि—षड्गुण बलिजारित रस सिंदूर ५ तोले, कलौंजी ५ तोले और बड़े पक्के रुद्राक्ष १० तोले लें, सबको मिला करेले के फलों के छिलकों के रस की १ भावना, ब्राह्मी (यथार्थ में मंडूकपर्णी) के स्वरस या क्वाथ की २ भावना और शिरस के स्वरस की एक भावना देकर एक एक रत्ती की गोलियां बना लेवें।

मात्रा—आध से एक रत्ती बालक को २ से ३ रत्ती, युवा को दिन में ४-६ बार गंगाजल में घिसकर पिलावें।

चाहिये। यथा-उष्णकाल में शीतल जल, शीत काल में गरम करके शीतल किया हुआ जल और शरद् ऋतु में ताजा कूपोदक, गेहूँ, चना, गुड़, मिश्री, तिल-गुड़, तिल-खाण्ड की गजक आदि पथ्य देवें। धूपन प्रयोग, नेत्ररक्षा प्रयोग और विशेष अवस्था में तन्त्र प्रयोग भी किये जाते हैं। एक लक्ष से अधिक रोगियों की चिकित्सा करके अनुभव प्राप्त किया है।

श्री० पं० राधकृष्णजी द्विवेदी।

(२) बहेड़ा की मज्जा और निम्बोली की मज्जा १-१ तोला तथा हल्दी २ तोले मिला हुलहुल, छोटी दूधेली (नागार्जुनी) और ब्राह्मी के स्वरस की १-१ भावना देकर २-२ रत्ती की गोलियां बना लेवें। (शीतकाल में इस योग के साथ ६ माशे रस सिंदूर मिलाया जाय तो अधिक और त्वर लाभ करता है) इन गोलियों में से १-१ गोली ६-६ घंटे पर दिन में २-३ बार देते रहने से मसूरिका रोग उपद्रव सह नष्ट होजाता है।

श्री पं० राधाकृष्णजी द्विवेदी।

द्विवेदीजी ने इस रोग का विशेष अनुभव प्राप्त किया है। आपकी इच्छा है कि इस रोग पर स्वतंत्र पुस्तक लिखकर जनता की सेवा में समर्पित की जाय।

६ एलाद्यरिष्ट

विधि--छोटी इलायची के दाने २०० तोले, वासा के मूल की छाल ८० तोले, मजीठ, इंद्र जौ, दन्ती मूल, गिलोय, हल्दी, दारू हल्दी, रास्ना, खस, मुलहठी, सिरस, खैर की छाल, (या लकड़ी का बुरादा), अर्जुन छाल, चिरायता, नीम की अन्तर छाल, चित्रक मूल की छाल, कूठ और सौंफ, ये १७ ओषधियां ४०-४० तोले लें। सबको मिलाकर जौ कूट करें। फिर २०५ सेर जल में मिलाकर अष्टमांश क्वाथ करें। जब २५॥। सेर जल शेष रहे, तब उतार कर छान लें।

सूचना- छोटा इलायची के दाने विषनाशक और रक्तशोधक हैं अतः छिलकों को फैंकना नहीं चाहिए किंतु अवश्य ले लेना चाहिए। इससे इसकी गुण वृद्धि होती है।

हम छोटी इलायची को चौगुने जल में मिलाकर अर्धावशेष क्वाथ करते हैं। शेष ओषधियों को अलग १५२ सेर जलमें उबालकर २१ सेर शेष रखते हैं। फिर दोनों जल को मिला लेते हैं।

फिर धाय के फूल ६४ तोले, शहद १२०० तोले, दालचीनी तेजपात, नागकेशर, छोटी इलायची, सौंठ, काली मिर्च, पीपल, सफेद चन्दन, रक्त चन्दन, जटामांसी, मुरामांसी (तगर) नागर मोथा, छरीला, सफेद सारिवा, कृष्ण सारिवा, इन १५ ओषधियों के ४-४ तोले का चूर्ण उक्त क्वाथ में मिला पात्र में भर मुख मुद्रा कर एक मास तक रहने देवें। परिपक्व होने पर छान कर बोतलों में भर लेवें। (भै० र०)

मात्रा—१। सेर २॥ तोले तक दिन में दो बार समान जल मिला कर देवें।

उपयोग -इसके सेवन से विसर्प, मसूरिका, रोमान्तिका, शीतपित्त, विस्फोटक (फोड़े), विषम ज्वर, नाड़ी व्रण, दुष्टव्रण, दारुण कास, दारुणश्वास, भगंदर, उपदंश और प्रमेहपिडिका रोग नष्ट होते हैं।

यह अरिष्ट शीतवीर्य, मूत्रल, दीपन-पाचन, विषघ्न और बल्य है। इसके सेवन से मूत्रोत्पत्ति कुछ अधिक होती है; तथा रक्त में संगृहीत विष पेशाब द्वारा बाहर निकल जाता है। एवं यह यकृत्पित्त स्राव की वृद्धि करा अन्त्र में रहे हुए आमविष और कीटाणुओं को नष्ट करता है।

विसर्प, मसूरिका, रोमान्तिका, शीतपित्त, प्रमेह पिड़िका आदि अनेक व्याधियों की उत्पत्ति रक्त में कीटाणु या विष वृद्धि

होने पर होती है। एवं इन रोगों की वृद्धि भी विष प्रकोप से ही होती है। यह अरिष्ट इन रोगों की उत्पत्ति और वृद्धि कराने वाले मूल विष को ही बाहर निकाल देता है। और नयी उत्पत्ति को रोक देता है। जिससे ये रोग नष्ट हो जाते हैं।

एलाद्यरिष्ट के सेवन से ज्वर जनित दाह और धातुशोष से उत्पन्न दाह शमन होता है। मसूरिका रोग में नेत्र का संरक्षण होता है; घबराहट दूर होकर मानसिक प्रसन्नता बनी रहती है। मसूरिका की सर्व अवस्थाओं में बालक और बड़े के लिये यह हितावह है। मुख्य औषधि के साथ यह अनुपान रूप से दिया जाता है। उपदंश और सुजाक जिनको होते हैं; उनमें से कितनेक व्यक्तियों को रक्त में लीन विष कुछ अंश में रह जाता है। फिर उस विष के हेतु से उनकी सन्तानों की देह में भी कुछ कुछ उपद्रव होते रहते हैं। ऐसे उपदंश सुजाक पीड़ित माता पिता की संतानों को और अति निर्बल बच्चों को शीतला होने पर विशेष सम्हाल न रक्खा जाय, तो रोग भयंकर रूप धारण कर लेता है। अतः उन रोगियों को शीतला (रोमान्तिका या विसर्प आदि) रोग प्रारम्भ होते ही इसका सेवन कराया जाय, तो रोग सरलता से निवृत्त होजाता है।

---

४३. क्षुद्र रोग प्रकरण।

१. किंशुकादि तैल

विधि - ढाक के फूल, रक्त चंदन, लाख, मजीठ, मुलहठी, कुसुम, खस, पद्माख, नील कमल, बड़ की जटा, पाकरके मूल, कमल केसर, मेंहदी, हल्दी, दारू हल्दी और अनन्त मूल, ये १६ द्रव्य ४-४ तोले लें; जो कूट कर २५६ तोले जल में मिला

२. रक्तदन्तमञ्जन

प्रथम विधि—कुचला, तमाखू, भिलावा, तीनों ५-५ तोले दक्षिणी सुपारी १० तोले, सोना गेरु ४० तोले, सेलखड़ी, मोलसरी की छाल और माजूफल २०-२० तोले, हरड़, सैंधानमक, अकलकरा, दालचीनी, लौंग और कालीमिर्च १०-१० तोले तथा छोटी इलायची के दाने ५ तोले लें। कुचला, तमाखू, भिलावा और सुपारी, चारों को जलाकर अन्तर्धूम विधि से कोयला बना लेवें। फिर सब औषधियों को मिला कूट कपड़ छान चूर्ण कर लेवें।

उपयोग—इस मञ्जन का उपयोग करते रहने से दांत उज्वल बने रहते हैं; मुख, कण्ठ और अन्ननलिका में रहा हुआ मल (कफ) निकल जाता है; तथा मसूढ़े दृढ़ हो जाते हैं।

द्वितीयविधि—कुंदरु ४० तोले और सोना गेरू १० तोले मिला कूट कर कपड़ छान चूर्ण बना लेवें। (आ० नि० मा०)

उपयोग—इस मञ्जन में से २-३ रत्ती लेकर रुई में लपेट सूजे हुए मसूढ़े पर दबा देने से एक ही दिन में मसूढ़े फूटकर दर्द कम हो जाता है।

तृतीयविधि—हीरा दोखी गोंद (दम उलखवीन), शीतल मिर्च, छोटी इलायची, छोटी हरड़, फिटकरी का फूला, कत्था सफेद, सेलखड़ी, सफेदा, और कपूर, ये ९ औषधियां १-१ तोला और सोनागेरू ९ तोला लें। सबको मिलाकर कपड़छान चूर्ण करें।

(आ० नि० मा०)

उपयोग—इस मञ्जन में से १-२ माशे जीभ पर रखकर मुंह में चारों ओर फिराकर लार टपकाते रहने से जिह्वा फट

६, खदिरादि तैल

विधि—खैर की छाल और बकुल की छाल २००-२०० तोले को जौ कूट कर २०४८ तोले जल में मिलाकर चतुर्थांश क्वाथ करें। फिर खैरकी छाल, लौंग, गेरु, अगर, पद्माख, मजीठ लोध. मुलहठी, लाख, वड़ की छाल, नागर मोथा, दालचीनी, जायफल, शीतल मिर्च, अकरकरा, पतंग, धाय के फूल, छोटी इलायची के दाने, नाग केशर और कायफल की छाल, इन २० द्रव्यों को १-१ तोला लेकर कल्क करें। पश्चात् कल्क, क्वाथ और १२८ तोले तिल तैल को मिला कलई दार वर्तन में डाल मंदाग्नि पर पाक करें और खैर के डंडे से चलाते रहें। तैल सिद्ध होने पर कपूर १ तोला मिला कपड़े से छान कर बोतल में भरें। – (श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

उपयोग—इस तैल के प्रयोग से मुख पाक, मसूढ़ों का पाक और उनमें से पूय निकलना, दांतों का सड़ना दांतों में छिद्र होना, दांतों में कृमि होना दांत काले मृत सा हो जाना, मुँह से दुर्गन्ध निकलना तथा जिह्वा तालू और ओष्ठ के रोग सब नष्ट होते हैं। पायरिया में इस तैल के कुल्ले धारण करने पर लाभ होता है।

७. बकुलाद्य तैल (पायोरिया प्रहार)

विधि—मौलसिरी के फल, लोध्रपठानी, हाडजोड़ (संस्कृत में अस्थिसंधान वज्रवल्ली, तैलङ्गी में नल्लेडा, मराठी में कांडवेल और लेटिन में विटिस क्वॉड्रेङ्ग्युलेरिस vitis Iuadrangularis कहते हैं। किन्तु यह दुग्ध रहित, चार धारी वाली ४-५ इंच पर गांठ वाली और पत्रवाली होती है), पीया बांसा, अमलतास की छाल, बबूल की छाल, शाल वृक्ष की छाल और दुर्गन्ध खैर (तै० मुरकी तुम्मा), १०-१० तोले;

उपयोग—इस प्रवाही में फुरेरी डुबोकर मुँह और कंठ में फिराने से मुखक्षत, फाला, गल ग्रन्थिविकार, उपजिह्वा (कौए) की शिथिलता, जिह्वाफट जाना आदि दूर होते हैं।

६ मुखपाक हर योग।

(१) सफेद कत्था ५ तोले, छोटी इलायची छिल्टेसहित और शीतल चीनी २॥-२॥ तोले, कपूर ६ माशे तथा संगखड़ी १० तोले लेवें। सब को मिला कूट कर कपड़ छान चूर्ण करें। यह चूर्ण दाह युक्त जिह्वा के क्षत, मुखपाक आदि को दूर करता है। इस चूर्ण में से चुटकी चुटकीभर दिनमें ८-१० या अधिक बार मुँह में डालें। मुँह में थूंक एकट्ठा होने पर बाहर निकाल डालें। इस तरह प्रयोग करने पर मुखपाक जल्दी निवृत्त हो जाता है।

वक्तव्य--यदि मुखपाक चिरकाल का हो, तो स्वादिष्टविरेचन, मंजिष्ठादि चूर्ण, गुलकंद या इतर मृदु विरेचन से उदर शुध्दि करते रहना चाहिये। एवं साथ साथ काम दूधा प्रवालपिष्टी, शतपत्र्यादि चूर्ण या सारि वादि हिम जैसी सौम्य और आमाशयिक रसकी तीव्रता को शान्त करने वाली ओषधि भी सेवन करनी चाहिये।

जीर्ण मुखपाक विकार में १। तोला नीले थोथे का फूला मिला दियाजाय,तो विशेष हितावह माना जायगा। नीलाथोथा वामक है। अतः थूंक कण्ट से नीचे न चला जाय, इस बात की सम्हाल रखना चाहिये।

यह चूर्ण मुखपाक के अतिरिक्त शरीर के किसी भी भाग में फूटे हुए व्रणोंपर बुरकाया जाता है। एवं धोये घी के साथ मिलाकर लगाया जाता है। अग्नि दग्ध व्रणपरभी लाभदायक है।

(२) नीलाथोथा का फूला, चिरमी के पत्ते, इलायची के छिलटे तीनों आध आध रत्ती कत्था व चूना लगे हुए पान में डालकर खायँ। और चवा चवाकर थूंकते जांय। थोड़ी देर

(३) तमाखु, अफीम, कपूर और वीजाबोल, चारों को समभाग मिला जल में पीस आध आध रत्ती की गोलियां बना लें। दांत और डाढ का दर्द होने पर उसके गड्ढे में एक गोली रखने पर तत्काल दर्द दूर हो जाता है। मुंह में जो थूंक आजाय, उसे बाहर थूंक देवें। आवश्यकता पर दूसरी और तीसरी बार गोली रक्खी जाती है।

(४) इन्द्रजो (कूड़ा) के पत्ते चबाचबा कर थूंकें। २-३ बार में पीड़ा शान्त होती है।

(५) सोहागा (शाखोट) की छाल का मंजन करें या इस की दातुन करने से मसूढ़ों के रोग शीघ्र शमन होते हैं।

११ कण्ठरोहिणी नाशक मिश्रण

टिञ्चर मर्ह	Tinct. Murrh	१ ड्राम
ग्लिसरीन	Glycerine	२ ड्राम
जल	Aqua	४७ ड्राम

सब को मिला लेवें। मात्रा १॥ से ४ ड्राम तक दिन में ३ बार। इसके सेवन से कंठरोहिणी (Diphtheria) का निवारण होता है। इसके सेवन के साथ निम्न मिश्रण से कुल्ले कराते रहे।

१२ कंठशोधक गंडूप।

टिञ्चर क्रामेरी	Tinct. Krameria	१ औंस
,, मर्ह	,, Murrh	१ औंस
,, सिंकोना	,, Cinchona	१ औंस
,, काइनो	,, Kino	१ औंस

इन सबको मिला लेवें। इसमें १-१ ड्राम १-१ औंस निवाये जल में मिला कर सुबह शाम कुल्ले कराते रहें। एक समय में

५-७ कुल्ले कराना चाहिये। इस गण्डूष से जिह्वा और कंठ में लगे हुए कफ, कीटाणु, कृत्रिम श्लैष्मिक कला रूप पर्दा और विष आदि नष्ट हो जाते हैं।

४५. कर्णरोग प्रकरण

१ कर्णरोग हरोरस

बनावट -अभ्रक भस्म, लोह भस्म, शुद्ध गंधक, ताम्र भस्म, और बकरे के मूत्र में २१ दिन तक खरल किया हुआ पारद, इन पांच औषधियों को सम भाग लें। पहले पारद गंधक की कज्जली करें। फिर भस्म मिला त्रिफला के क्वाथ और अदरख के स्वरस में ३-३ दिन खरल कर १-१ रत्ती की गोलियां बना लेवें। (र० यो० सा०)

मात्रा—१ से २ गोली अदरख या तुलसी के रस के साथ दिन में दो बार सेवन करावें।

उपयोग—इस रसायन के सेवन से सब प्रकार के कर्ण रोग की निवृत्ति होती है। कान में गुञ्ज होना, कर्णशूल, कर्णपाक और वाधरता आदि रोगों पर यह रस लाभदायक है।

सूचना- दही, खटाई, गुड़, शक्कर, पक्का भोजन, शीतल वायु का सेवन, शीतल जल से स्नान, जोर से बोलना और स्त्री समागम आदि अपथ्य आहार विहार का त्याग करना चाहिए।

२ निशातैल

विधी—सरसों का तैल १ सेर, धतूरे के पानों का स्वरस ४ सेर, हल्दी ८ तोले और गंधक ८ तोले लें। हल्दी और

गंधक को पीस कर धतूर के साथ कल्क करें। फिर सबको मिला मंदाग्नि पर यथा विधि तैल सिद्ध करें। (भै० र०)

उपयोग--इस तैल की ४-४ बूँद कान में डालते रहने से १०-१५ दिन में कान का नाड़ीव्रण दूर होजाता है।

सूचना--शीतल जल से स्नान करना, शक्कर गुड़ अधिक खाना, कान को शीतल वायु लगाना ये सब हानिकारक हैं।

तैल डालने से पहले रुई की फुरेरी से पोंछ लेना चाहिए। बाहर पीपलगा हो, तो उसे त्रिफला क्वाथ के गरम जल में या कार्बोलिक लोशन में कपड़ा भिगोकर पोंछ लेना चाहिए। बार बार कान को धोना नहीं चाहिए।

३ कुम्भीतैल

विधि--जलकुम्भी (सं० आकाशमूलि) बं० टाकापाना ले० पिस्टिया स्ट्रेटियोटस (*Pistia Stratiotes*) जो जल पर फैलने वाली स्कंधरहित वनस्पति है। इसके पान १ से ५ इंच तक लम्बे और विविध चौड़ाई वाले होते हैं। मूल सादा सफेद तन्तुओं वाला होता है। कलिका (Spathe) लगभग आध इंच लम्बा और सफेद होती है। इसका कल्क १६ तोले, तिल तैल ६४ तोले और जलकुम्भी का स्वरस २५६ तोले मिला मंदाग्नि देकर तैल सिद्ध करें। फिर कपड़े से छानकर बोतल में भर लेवें। श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य।

उपयोग--इस तैल को डालने से कान का दर्द, पीव आना, नाड़ीव्रण सब दूर होते हैं। तैल डालने के पहले कान को साफ कर लेना चाहिए।

४ कर्णपाक हरयोग

(१) लोहे की एक कुड़छी को अग्नि में तपाकर लाल करें

फिर उसमें १-२ माशे भैंसा गूगल डालें. और तुरन्त चिलम को ऊपर ढकदें। चिलम के ऊपर के हिस्से को कान में लगा दें। जिससे सब धुआं कान में चला जाय। इस रीति से प्रातः सांय दिन में दो बार एक सप्ताह तक प्रयोग करने से कर्णपाक और वेदना शमन होजाते हैं। २-२ वर्ष के पुराने रोगियों को भी इस सरल प्रयोग से लाभ हो जाने के उदाहरण मिले हैं।

(२) कटेली के बीज को लोहे की लाल की हुई कुड़छी में डाल उस पर चिलम रख कान के भीतर धुँआ देने से कान में कीड़े होगए हों. तो वे तुरन्त बाहर निकल जाते हैं। फिर वेदना शमन हो जाती है। और कान में से पूय निकलता हो, तो वह भी सरलता से दूर हो जाता है।

(३) शुद्ध तार्पिन के तैल की ४-४ बूंद प्रातः सायं कान में डालते रहने से पूयस्राव बन्द होजाता है। कान के नाड़ीव्रण के पुराने रोगियों को भी इस प्रयोग से लाभ होता है।

(४) निर्गुण्डी के पत्ते का कल्क १० तोले, तिल तैल ४० तोले और निर्गुण्डी का स्वरस (या क्वाथ) २ सेर मिला मंदाग्नि पर तैल सिद्ध करें। इस तैल के प्रयोग से असाध्य कर्ण पाक भी दूर होते हैं। कान में से भयंकर दुर्गन्ध युक्त पीला पूय दिनरात निकलता रहता हो, जो सैकड़ों औषधोपचार से अच्छा न हुआ हो, वह इस तैल के प्रयोग से अच्छे होगये हैं।

सूचना—धोने के लिए कान के लिए भीतर जल नहीं डालना चाहिए। त्रिफला के क्वाथ या कार्बोलिक लोशन में कपड़ा या रूई भिगो कर बाहर जहाँ २ पूय लगा हो, वहाँ पोंछ देना चाहिए। कान के भीतर धोने की आवश्यकता नहीं है। (कविराज उपेन्द्रनाथजी)

(५ जंगली सूरण (जिमीकंद) की डण्डी का रस पुटपाक विधि से निकाल कर कान में डालने से बहुत पुराने कर्णस्राव का भी निवारण होता है।

(६) मनुष्य की हड्डी को ४ गुने तिल तैल में उबाल लें। तैल अच्छी तरहपक जाने पर छान लेवें। इस तैल में से २-२ बूंद रात्रि को कान में डालने से पूयस्राव दूर हो जाता है।

(७) नर कपालास्थि को भली भांति मुलायम भस्म कर निगुंडी तैल के साथ मिला कर्ण पाकमें व्यहार करने पर अप्रतिम लाभकारी पाया है। इसका प्रयोग ना ी व्रण आदि में भी होता है। जो यथा स्थान वर्णित हैं।

श्री० पं० राधाकृष्णजी द्विवेदी।

(८) लोहे के तवे को तपा लाल कर उसपर मोम १ माशा, गूगल २ रत्ती और कपूर · रत्ती को मिला गोली करके रखें। फिर तुरन्त ऊपर चिलम से ढक कर ऊपर कान लगा दें। जिससे धुआं कान में जाय। इस प्रयोग से कर्ण शूल तुरन्त शमन हो जाता है। (श्री० पं० राधाकृष्ण द्विवेदी)

५. कर्ण बिन्दु।

विधि—समुद्रफेन १ तोला, आयडो फार्म ४ रत्ती बोरिक एसिड ६ माशा अफीम १।। माशा मिलाकर चीनी के खरल में १ पहर तक घोटें। फिर १० तोले बाष्पोदक अथवा ओटाया हुआ जल थोड़ा २ डालते जायँ और घोटते जायँ। दो प्रहर तक घुटाई करने पर २० तोले गिलसरीन और १ ड्राम कार्वोलिक एसिड डालकर एक प्रहर तक पुनः घोटें फिर कपड़े से छानकर शीशी में भरलें। यदि कान बहता हो, तो हाई ड्रोजिन पर ओक्साइड कानमें डालने से झाग उठकर पूय बाहर

निकल जायगा। ऐसे एक समयमें दो बार करें। बादमें कान को नीचेकी ओर कर पानी बाहर निकाल कपड़ेसे पोंछ उपरोक्त कर्ण बिन्दु की १०-१० बूंद प्रातः सायं डालने से कर्णशूल तत्काल मिटता है। इसके अतिरिक्त पुराने से पुराना दुर्गंध कर्ण स्राव, व्रण, कृमि, कण्डु, आदि प्रायः कान के समस्त रोग शीघ्र मिटते हैं। शतशो ऽनुभूत है। यदि इसकी दुर्गन्धि असह्य हो तो उत्तम संदली गुलाब का इत्र ६० बूंद मिलादें।

श्री० वैद्यराज रामचंद्रजी।

६. अहिफेन बिन्दु।

विधि—अफीम का अर्क (Tinct Opii) और ग्लिसरीन समभाग मिलालें। इसमें से २-४ बूंद कान में डालने से कर्णशूल शमन हो जाता है।

७. सूची बिन्दु।

विधि—सूची बूटी का अर्क (Tictt Blladona) १ भाग और ग्लिसरीन ४ भाग मिलालेवें। इसमें से २-४बूंद दिनमें दो बार कान में डालने पर कर्णशूल दूर होता है।

---

४६. नासा रोग प्रकरण।

१ प्रतिश्याय हर वटिका

बनावट—कालीमिर्च, लौंग, बहेड़े का छिलका, शीरखिस्त देशी और तुलसीपत्र, इन ५ ओषधियां को १६-१६ तोले लें। शीरखिस्त को छोड़ शेष वस्तुओं को कूट कपड़ छान चूर्ण करें। फिर शीरखिस्त को मिला लेवें। पश्चात् बबूल की ताजी छाल १ सेर को ४ गुने जल में क्वाथ कर चतुर्थांश

रहने पर उतार कर छान लेवें। इस क्वाथ में से थोड़ा-थोड़ा जल मिलाकर १२ घण्टे खरल कर २-२ रत्तीकी गोलियां बना लेवें।

मात्रा—२ से ४ गोली तक निवाये दूध के साथदिन में दो वार देवें।

उपयोग—यह वटी नये जुकाम और मंदज्वर के लिये रामबाण है। कब्ज हो, तो उसे भी दूर करती है। बिल्कुल निर्भय,उत्तम और सस्ती ओषधि है। हम अनेक वर्षोंसे इसका उपयोग कर रहे हैं।

२ प्रतिश्याय नाशक अवलेह।

विधि—उस्तखद्दूस ५ तोले गावजवाँ, हुबुलास, धनियां, तीनों १०-१० तोले, तुख्म काहु २० तोले, खसखस के डोडे और खुरासानी अजवायन ३०-३० तोले खसखस ४० तोले तथा मिश्री २० तोले लें। पहले मिश्री के अतिरिक्त सब ओषधियों कोकूट ४ सेर जलमें मिलाकर अर्धावशेष क्वाथ करें। फिर नीचे उतार मलकर छान लें। फिर चूल्हे पर चढ़ा मिश्री मिला कर चाशनी तैयार करें। पश्चात् गुलाब के फूल, धनिया, सत मुलहठी, कतीरा गोंद, बबूल का गोंद, पीपल और कालीमिर्च, ये ७ ओषधियां ५-५ तोले मिला कर अवलेह बना लेवें।

(हकीम उत्तमचन्दजी)

मात्रा—६-६ माशे अर्क गावजवाँ या जल के साथ दिन में दो वार सेवन कराने से जुकाम और नजला दूर होजाते हैं। १०-१० वर्ष के पुराने नजले भी इस औषध के सेवन से दूर हो गये हैं।

३ शिव गुटिका।

विधि—उत्तम एलुआ १४ माशे, सकमूनिया १४ माशे, इन्द्रायण के फल का गूदा १८ माशे, अफती मून, (छोटी-

अमखेल) २। माशे,गोंद कतीरा २। माशे कौडिया लोबान २। माशे, काली मिर्च ८ माशे केसर बढ़िया १ माशा, बीजा बोल २माशे, उसका गोंद २ माशे, तथा सूखा पोदीना ८ माशे लें। पहले खरल में केशर डाल कर सौंफ के अर्क या कषाय से घोटें। फिर एलुआ और सकमूनिया को मिलावें। पश्चात् शेष सब औषधियों का कपड़छान चूर्ण डाल १ प्रहर रगड़ कर बेर के परिमाण गोली बना लें (यह गोली १ माशा जैसी बनाने से ४ रत्ती की ही रहती है)

उपयोग यह दुष्ट प्रतिश्याय के लिये सिद्ध योग है। प्रतिश्याय की प्रत्येक दशा में सौंफ के अर्क, फांट या कषाय से देवें और शोथमें गोमूत्र अथवा पुनर्नवादि क्वाथसे देने से शोथ का एकांग और सर्वांग दोष शान्त होता है।

श्री० पं० राधाकृष्णजी द्विवेदी।

४. नासाकृमिहर नस्य

प्रथम विधि--एलवा, कड़वी तमाखू, वायविडंग, देवदाली के फल और शुद्ध हींग, सब एक-एक तोला लेवें। सबका कपड़छान चूर्ण कर जंगली तमाखू के स्वरस की १० भावना दें। पश्चात् सुखाकर कपड़छान चूर्ण करलें।

श्री० पं० महेन्द्रनाथजी शास्त्री वैद्यवाचस्पति।

उपयोग--इस चूर्ण का नस्य देने से नाक में से कीड़े गिरने लगते हैं। एक दो दिन में सब कृमि निकल जाते हैं। फिर नाक में से दुर्गन्ध आना भी बंद होजाता है।

दूसरी विधि--कपूर को समभाग तार्पिन तैल में मिला लेने से थोड़े समय में द्रव बन जायगा। उसमें से ४-४ बूंद प्रातः सायं नाक में डालते रहने से २-३ दिनमें ही पीनस, पूतिनस्य, कृमिज शिरोरोग आदि दूर होजाते हैं। (श्रीमहात्मा उदयलालजी

जिनका मुँह नाक और शिर फूला हुआ था। नाक में से दुर्गन्धयुक्त रक्त-पूय और जल गिरता था, और पौन पौन इञ्च के लम्बे कृमि सैंकड़ों की संख्या में गिरते थे; ऐसे कई रोगी इस योग से स्वस्थ हो गये हैं।

तीसरी विधि—हिंगोट (इंगुदी) के फल के बारीक चूर्ण का नस्य कराने से सफेद या लालकीड़े, जो मस्तिष्क में होंगे, वे सब गिर जाते हैं।

५ शिखरी तैल।

विधि—रसोईघर का धुआं, पीपल, देव-दारु, दारुहल्दी, जवाखार, करंज की छाल, सैंधानमक और अपामार्ग के बीज, ये द्रव्य २-२ तोले लेकर कल्क करें। फिर कल्क, ६४ तोले-तैल और २५६ तोले जल मिला कर तैल सिद्ध करें। (वृ० मा०)

उपयोग—इसतैल को फुरेरी से नाक के भीतर उत्पन्न मस्से पर लगाने से कुछ दिनों में मस्से जल जाते हैं।

---

४७ नेत्र रोग प्रकरण।

१ सप्तामृतलोह।

विधि—मुलहठी, हरड़, बहेड़ा, आंवला और लोहभस्म, इन पांचों औषधियों को समभाग मिला खरल करलें। (च० द०)

उपयोग—१-१ माशे औषध को ३ माशे घी और ६ माशे शहद के साथ मिलाकर दिनमें दो समय सेवन करते रहने औरऊपर गोदुग्ध पीते रहने से वमन, तिमिर, शूल, अम्लपित्त, ज्वर, ग्लानि, आनाह, मूत्राघात और शोथ आदि विकार दूर

होते हैं; तथा नेत्र की ज्योति बढ़ती है। नेत्रों की निर्बलता दूर करने के लिये यह सरल और उत्तम औषधि है।

इस रसायन को रसेन्द्रसार संग्रह कारने 'तिमिरहर लोह' संज्ञा दी है; और गुण वर्णन में लिखते हैं कि—"लोहं तिमिरकं हन्ति शुधांशुस्तिमिरं यथा", अर्थात् यह लोह तिमिररोग उस प्रकार दूर करता है, जैसे चन्द्र अन्धकार को।

२. कुकूणकनाशक बिन्दु।

बनावट - रसकपूर और सैंधानमक १-१ माशा, कपूर ४ रत्ती और नीलाथोथा २ रत्ती लें। सब को पीस एक शीशी में भरें। फिर गुलाब जल २० तोले मिलाकर १ दिन रहने देवें। दूसरे दिन फ़िल्टर पेपर से छान लेवें।

उपयोग—इसमें से १-२ बूंद प्रातःसायं डालते रहने से २-४ दिन में ही कुकूणक (रोहें) दूर होते हैं। इस औषध से एक मिनट तक कुछ जलन होती है। जलन से भय न माने, तो अच्छा लाभ होता है।

३. पोथकीहर अञ्जन।

प्रथम विधि—एरंड फलों की गिरी निकाल, उसका तैल निकालें। तैल निकालने की विधि रसतन्त्रसार व सिद्ध-प्रयोग संग्रह प्रथम खण्ड में लिखी है। इस नितरे हुए साफ तैल में से १ सेर लेकर मंदाग्नि पर उबालें। उबलनेपर नीला-थोथा ४ तोले का बारीक चूर्ण डालकर आध घण्टे तक मंदाग्नि देते रहें। फिर कड़ाही स्वाङ्ग शीतल होने पर तैल छान लेवें।

उपयोग—इस तैल के अञ्जन से चिरकारी जीर्ण रोहें दूर होते हैं। पलक के नीचे के दाने, शिरदर्द, सफेदी, और नेत्र से जल गिरते रहना आदि लक्षण शमन होते हैं। यह अति सौम्य औषधि है। किसी को भी हानि नहीं पहुँचाती।

द्वितीयविधि—समुद्र फेन को सुरमा के सदृश पीस शहद में मिलालें। फिर प्रातः सायं अंजन करते रहने से बालकों के और बड़े मनुष्यों के रोहे दूर हो जाते हैं

तृतीय विधि- (रोहों पर रगड़ा) फिटकरी की भस्म, चाकसु के शुद्ध बीज, जसद की भस्म, अफीम, लोध, छोटी इलायची के बीज, इन ६ ओषधियों को १-१ तोला और गोघृत ६ तोले लेवें। सबको ताम्र की कड़ाही में नीमके दण्डे से खूब घोंट कर अञ्जन तैयार कर लेवें।

फिटकरी भस्म विधि—फिटकरी के चूर्ण को गोघृत में मला रबड़ी जैसा बना लोहे की कड़ाही या तवे पर डाल कर चूल्हे पर चढ़ावें। अग्नि तीव्र दें और कुड़छी से चलाते रहें। जब घी उड़ जाय और फिर काली भस्म बन जाय, तब उतार लेवें।

चाकसू शोधन विधि—चाकसू के बीजों को नीम के रस में एक प्रहर तक दोला यन्त्र में उबालकर शुद्ध करें। फिर ऊपर से छिल्टे को दूर कर भीतर से मिंगी निकाल देवें। अथवा मट्ठे में १२ घण्टे भिगो) मिंगी निकाल कर उपयोग में लेवें। (श्री पं० जाहरसिंहजी आयुर्वेदाचार्य)

उपयोग—इसका अञ्जन करने से रोहे, नेत्र की लाली और अश्रु स्राव दूर होते हैं। विशेषतः इसका अञ्जन रात्रि को सोने के समय किया जाता है।

सूचना—प्रातः काल नेत्रों को कीटाणु नाशक धावन (बोरिक धावन या त्रिफला फाण्ट या रसकपूर के धावन १ रत्ती, रसकपूर और ५० तोले जल मिले हुए) से धो देना चाहिये।

४. काला नेत्राञ्जन।

प्रथमविधि—काला सुरमा २० तोले का कपड़ छान चूर्ण,

बहेड़े की गिरी २ तोले, वराटिका भस्म, मौक्तिक पिष्टी और मनःशिल १-१ तोला लें। सब को मिलाकर खरल करलें। फिर नीलाथोथा १ तोला लेकर ४० तोले जल में मिला लेवें। इस जल को थोड़ा थोड़ा मिलाकर खरल करें।
फिर २॥ सेर गुलाब जल मिलाकर खरल करें। गुलाब जल में २ तोले कपूर मिला लेवें। गुलाब जल समाप्त होने पर और नेत्राञ्जन सूखने पर बोतल में भर लेवें (आ० नि० मा०)

उपयोग—इस नेत्राञ्जन के अञ्जन से नेत्र के फूले, मांस वृद्धि, कुकूणक, तिमिर और नेत्रव्रण आदि रोग दूर हो जाते हैं। यदि सलाई को बबूलादिस्वरस में डुबो फिर इस अञ्जन को लगाकर नेत्र में डाला जाय, तो लाभ अधिक होता है। यह अनेक वर्षों का परीक्षित उत्तम प्रयोग है।

बबूलादिस्वरसका पाठ रसतन्त्रसार व सिद्ध प्रयोग संग्रह प्रथम खण्ड में दिया है।

द्वितीय विधि--काला सुरमा ४० तोले को नीबू के रस में ३ दिन खरल करके सूर्य के ताप में सुखावें। पश्चात् त्रिफला के फाण्ट में ७ दिन तक खरल करें। फाण्ट के लिये आध सेर जल गरम करें, जल उबलने पर १० तोले त्रिफले का मोटा चूर्ण डाल हांडी को नीचे उतार कर ढक देवें। स्वाङ्गशीतल होने पर छानकर उपयोग में लेवें। पश्चात् मोतीपिष्टी, सफेद मिर्च का कपड़छान चूर्ण, छोटी इलायची के दाने का चूर्ण ३-३ माशे और कपूर ६ माशे मिलाकर ६ घंटे मर्दन कर बोतल में भर लेवें।

उपयोग—इस नेत्राञ्जन के नित्य-प्रति अञ्जन करते रहने से नेत्रज्योति बलवान बनती है। नेत्र के रोग दूर होते हैं, और नये विकार उत्पन्न नहीं होते।

५ काजल ।

प्रथमविधि—एरण्डतैलकी बत्ती जलाकर वायु मिल सके उस तरह उस पर तवा रख कर ४ तोले काजल इकट्ठा करें। फिर नीलेथोथेकाफूला और फिटकरी का फूला६-६ माशे लें। बच और आंवला १-१ तोले को जलाकर कोयले करें। पश्चात् सबको मिला उसमें ४ तोले गोघृत मिलाकर १ दिन तक मर्दन करें। दूसरे दिन खरल में १० तोले जल मिलाकर मर्दन करें। जल मैला होने पर निकाल डालें और नया डालें। इस तरह जब तक मैला जल निकले, तब तक निकालते रहें। साफ जल निकलने पर १ तोला कपूर मिला खूब मर्दन कर खुले मुंह की शीशी में भर लें। (आ० नि० मा०)

उपयोग इस काजल के अञ्जन से नेत्रज्योति बढ जाती है। सौभाग्यवती स्त्रियां और बालकोंके चक्षुमें नित्यप्रति डालने के लिये यह उपयोगी है। इसके अञ्जन से नेत्र में से मैल दूर हो जाता है, गर्मी नहीं बढ़ती शीतलता बनी रहती है, तथा नेत्र निर्मल और तेजस्वी रहते हैं।

यद्यपि इस काजल में नीलाथोथा आदि दाहक पदार्थ मिलाये हैं, तथापि जलसे धोने से वे सब निकल जाते हैं। केवल उनका प्राभाविक गुण रह जाता है।

द्वितीयविधि--फिटकरी का फूला ४ तोले और छोटी इलायची छिलके सह ८ तोले लें। दोनों को मिला कूट कपड़ छान चूर्ण कर १६ तोले गोघृत मिलावें। फिर हाथ से बनाये हुए स्वदेशी मोटे कागज पर घृत मिश्रित चूर्ण लगावें, और नली के समान गोल लपेट लेवें। जितने कागज हो सबको पृथक् पृथक् लपेट देवें, फिर १-१ कागजको चिमटे से पकड़ कर एक सिरेसे जलावें। उसमें से जो घी टपके, उसे ताम्बे की कटोरी में

इकट्ठा करते जायं। राख भी उसमें गिरती रहेगी। इस तरह सब कागजों को जला दें। फिर राख मिश्रित घी को खरल में डाल ८ घंटे तक घोंटे। यदि घी अधिक जल जाने से काजल शुष्क हो गया हो, तो थोड़ा गोघृत और मिला लेवें। अच्छी तरह मिश्रण हो जाने पर डिब्बी में भर लेवें। (आ० नि० मा०)

वक्तव्य—हम कागज के स्थान पर ४ तोले रुई मिला पीतल, या लोहे की चालनी में रखकर जलाते हैं। जिससे कुछ घी नीचे टपक जाता है। और ऊपर काली राख हो जाती है। इन दोनों को मिलाकर काजल बना लेते हैं।

उपयोग—इस काजल में से थोड़ा-सा अंगुली पर लगा कुकूणक पर और पूयस्राव होने वाले नेत्रों में प्रति दिन एक समय अञ्जन करते रहने से थोड़े ही दिनों में नेत्र निर्मल बन जाते हैं। नेत्रपाक पर यह काजल अत्यन्त हितावह सिद्ध हुआ है।

६ श्वेत नेत्राञ्जन।

विधि—जसद पुष्प (झिंक आक्साइड) ५ तोले, मिश्री और बोरिक एसिड १०-१० तोले तथा कपूर १ तोला लेवें। सबको मिलाकर अच्छी तरह खरल कर लेवें।

उपयोग—यह नेत्रांजन अभिष्यन्द (आंख आना), नेत्र की लाली, रतौंधी, जल गिरना, मांसवृद्धि आदि पर उपयोगी है। सुबह और रात्रि को अथवा केवल रात्रि को सोने के समय डालते रहने से नेत्र रोग दूर होकर दृष्टि स्वच्छ होती है।

७ नागाद्यञ्जन।

विधि—शुद्ध शीशा २० भाग, शुद्ध गन्धक ५ भाग, शुद्ध ताम्र और शुद्ध हरताल २-२ भाग, शुद्ध वङ्ग १ भाग तथा सुरमा काला ३ भाग लें। इन सबको मिला अन्धमूषा में बन्द कर १२

घन्टे तक तीव्राग्नि देकर पकावें। फिर स्वांग शीतल होने पर औषध को निकाल कर खरल करलें। (अ० ह०)

उपयोग—यह अञ्जन तिमिर रोग पर लाभदायक है। श्री० वाग्भटाचार्य लिखते हैं कि "तिमिरान्त करं लोके द्वितीय इव भास्कर" अर्थात् तिमिर रूप अन्धकार को नष्टकरने में यह यह अंजन सूर्य के समान है इस अंजन से नेत्र विकार कट कर या दोष पतला होकर निकल जाता है और नेत्र निर्दोष बनते हैं।

८ नागार्जुनवर्ति।

विधि—हरड़, बहेड़ा, आंवला, सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, सेंधानमक, मुलहटी, नीलाथोथा का फूला, रसौंत, प्रपौण्डरीक (कमल का गट्टा की गिरि), वायविडंग, लोध और ताम्रभस्म, इन १४ ओषधियों को समभाग मिला तगर के फाण्ट से खरल कर वर्तियां बना लेवें। यह प्रयोग २०१० वर्ष पहले नागार्जुन ने पटना शहर में लिखवाया था। (र० का०)

उपयोग—यह वर्ति तिमिररोग और जालों को दूर करती है। स्त्री दुग्ध में घिसकर लगाने से नया नेत्रपाक (आंखों का दुखना) अवश्य नष्ट हो जाता है। पलास (टेसू) के फूलों के स्वरस में घिस कर अंजन करने से पिल्लरोग (नेत्रगीले गीले रहना), फूला और लाली का निवारण होता है। लोध के क्वाथ में अंजन करने से जल्दी उत्पन्न होने वाला नया तिमिर रोग निवृत होता है। नेत्र को बन्द कर अंजन को बकरे के मूत्र में घिसकर नेत्र भर देवें और शान्ति से नेत्र खोलें तो नेत्र स्वच्छ होकर तिमिर रोग दूर हो जाता है।

९ नेत्राभिष्यंद हरण रोग।

(१) अमरूद की ताजी पत्ती २॥ और २ रत्ती फिटकरी मिला

पीसकर पुल्टिस बना लेवें। फिर स्वच्छ पतले कपड़े की पट्टी के भीतर दो स्थानों पर रख कर दोनों नेत्रों पर बांध देवें। पट्टी बहुत कसकर न बांधें; साथ ही अधिक ढीली भी न रक्खें। रात्रि को बांधे उसे सुबह निकाल देवें। सुबह बांधें तो दोपहर को निकाल डालें। ३-४ बार पट्टा बांधने से नेत्र की भयंकर लाली भी दूर हो जाती है।

(श्री० पं० विश्वनाथजी द्विवेदी आयुर्वेद शास्त्राचार्य)

सूचना।—सूचना इस औषध की पट्टी के उपयोग के साथ यदि नेत्रों में रसतन्त्रसार प्रथम खण्डोक्त रसाञ्जनादि लेप डालते रहें, तो प्रदाह बहुत जल्दी शमन हो जाता है।

(२) नमक, सरसोंका तेल और कांजीको कांसीके बरतनमें मिला नीम के डण्डे से मर्दन करें। मिल जाने पर बकरी का दूध मिलावें; और निर्धूम गोबरी की अग्नि पर तपावें। निवाया रहने पर नेत्रों पर लेप करने से अभिष्यन्द, अधिमन्थ, नेत्रशूल नेत्रस्राव, शोथ आदि विकार दूर होते हैं।

(३) १माशा फिटकरी को २ तोले जल में मिलाव फिर रूई के दो फोहे बनाकर उसमें भिगोवें। ५-१० मिनट बाद फोहे को दो हथेलियों के बीच दबाकर जल निचोड़ देवें। फिर पूरी के समान घी में तल कर नेत्र पर बांध देने से नेत्र की लाली, दाह, शूल और वेदना दूर हो जाती हैं।

(४) २० तोले लाल फिटकरी को एक मिट्टी की खेलड़ी में डालकर अग्निपर द्रव करें।पश्चात् उस द्रवके बीचमें३माशा अफीम का चूर्ण डालकर भस्म बन जाय और फिटकरीका फूला होजाय तब तक अग्नि पर रक्खें बादमें उतार कर बारीक पीस चूर्ण कर लेवें। इसमें से थोड़ा थोड़ा गुलाब जल के साथ आंखोंमें अंजन करने से नेत्रोंकीलाली, शूल और वेदना आदि सत्वर दूर हो जाते हैं। (वैद्यराज श्री रामचन्द्रजी)

१० धान्यकावलेह ।

विधि – धनिया का मगज़ २४ तोले, चांदी के वर्क १ तोला, छोटी इलायची के दाने २ तोले और गुलकंद ४० तोले लें।

धनिये को मूसल से कूट कर ऊपर के छिलटे निकाल देवें। भीतर का मग्ज़ लेवें। उस मग्ज़ और छोटी इलायची के दाने को कूट कर कपड़छान चूर्ण करें। फिर उसमें चांदी के वर्क मिलाकर खरल करें। पश्चात् गुलकंद मिला अच्छी तरह मसल कर अमृतबान में भर लेवें।

मात्रा—२ से ३ तोले रात्रि को सोने के आधघण्टे पहले खिलावें।

उपयोग यह अवलेह नेत्र रोगी के लिये अतिहितकर है। जिनके नेत्र में लाली बनी रहती हो, या बार बार नेत्र आ जाते हों, जल गिरता रहता हो या कुकूणक हो गये हों उनको यह अवलेह दिया जाता है। इसके सेवन से उष्णता शान्त होती है, नेत्र ज्योति सबल बनती है तथा मस्तिष्क शान्त होता है।

११ हब्बे अयारिज़

विधि—अयारिज़ फैंकरा (मस्तिष्क रोग के भीतर पाठ दिया है) और निसोत की छाल ३-३॥ तोले, काला दाना, गारीकून शुद्ध (अर्थात् हलका गारीकून देखकर तार की चलनी के ऊपर इसको हलके हाथ से घिसना चाहिये इसमें से तंतु जो ऊपर रहे हों वे न लेवें नीचे आटा गिर जाता है वह लेना चाहिये) सौंफ रूमी, १॥-१॥ तोले और फल इन्द्रायण का गूदा १ तोला लेवें। सब को मिला जल में खरल कर १-१ रत्ती की गोलियाँ बना लेवें। श्री० वैद्यराज पं० रामचन्द्रजी शर्मा

मात्रा- ३से ६ माशे रात्रि में सोते समय १ बार गोलियों को शहद में लपेटकर सौंफ के अर्क के साथ निगल लेवें। गोली

अनेक हो जाती है। १० या २०-२०करके निगलनी चाहिये फिर जैसी सुविधा हो ले सकते हैं।

उपयोग—यह प्रयाग साम नेत्र विकार और उर्ध्वजत्रुगत शिरोरोगों में अति उपयोगी है। पित्त प्रकोप और मलावरोध को भी दूर करता है। नेत्रशूल (अधिमन्थ) में बहुधा व्याधि साम होती है। उस समय इसे देने से उदरशुद्धि हो जाती है, तथा स्वेद आकर और अन्य प्रकार से मस्तिष्क और नेत्र में से द्रवपदार्थ का दबाव कम करा देता है। अधिमन्थ चाहे आशुकारी हो या चिरकारी। नेत्रान्तर दबाव को कम कराने के लिये यह विशेष लाभदायक सिद्ध हुआ है। यदि इन गोलियों के पश्चात् दूसरे दिन से ६-६माशे कलौंजी १-१ तोला गुड़ में मिलाकर दिन में दो बार दिया गया, जिससे अनेकों के अधिमन्थज दबाव कम हो गये हैं और नेत्र बच गये हैं।

सूचना—यदि उदर में मल और रक्त दबाव वृद्धि दूर न हुआ हो, तो जब तक शमन न हो तब तक (४-८ दिन तक) रोग वा रोगी के बलानुसार इन गोलियों का सेवन कराना चाहिये तथा भोजन हल्का (लालमिर्च अधिक लवण घृत युक्त मिठाई राई आदि सिरका आदि तीक्ष्ण रहित) सत्वर पचन हो ऐसे देते रहना चाहिये।

यदि वृक्कविकार से नेत्रान्तर दबाव वृद्धि हो तो सारे शरीर में से स्वेद अधिक निकल जाय, ऐसा प्रबन्ध भी कराना चाहिये।

(अयारिज फैकरा शिरोरोग में देखें)

१२. पोथकी हर लेप,

बनावट—रसौंत, लोध पठानी और अमलतास की फली का गूदा २०-२० तोले और अफीम ५ तोले लें। पहले रसौंत, लोध और अमलतास को जल मिलाकर खूब घोटें। फिर

अफीम मिलाकर घोट लेवें। एक जीव हो जाने पर कांसी के बर्तन में भर कर एक रात्रि रहने देवें। प्रातः काल निकालकर खुले मुँह की बोतल या चीनी मिट्टी की बोतल में भर लेवें।

(श्री पं० जाहरसिंहजी आयुर्वेदाचार्य)

उपयोग—जो रोहें बड़े हो गये हों अनेक औषधोपचार से न गये हों, उनके लिये यह औषधि हितकारक है। पहले पलक को उलट कर रसकपूर के धावन से धोदेवें। फिर कलमी सोरे की नोकसे दानोंको फोड़ दें और बोरिक धावनसे धोकर साफ कर देवें। पश्चात् पलकों के ऊपर उपरोक्त लेप को निवाया कर लगा देवें। दो चार दिन तक लेप करते रहने से रोहें के विष का ध्वंस हो जाता है। फिर आवश्यकता अनुसार पोथ की हर अञ्जन कुछ दिनों या महिनों तक लगाते रहना चाहिये।

---

४८. शिरोरोग प्रकरण

१ शिरोरोगहर रस

विधि—शुद्धपारद, शुद्ध गंधक, अभ्रक भस्म, लोह भस्म, चारों १-१ तोला, सुवर्ण भस्म और दालचिकना ३-३ माशे लें। सबको मिला कज्जली कर भांगरे के रस में ३ दिन खरल करके आध-आध रत्ती की गोलियां बनाकर सूर्य के तेजताप में सुखा लेवें। (भै० र०)

उपयोग—१ गोली प्रातःकाल निगलकर ऊपर जलेबी, पेड़ा या मलाई-मिश्री खिलावें; अथवा मिश्री मिला दूध. पिलावें। पुनः एक दिन छोड़कर १ गोली देवें। इस तरह ३-४ या अधिक गोलियां देने से सब प्रकार के भयंकर शिरःशूल नष्ट होजाते

हैं। जब शिरःशूल न हो तब इस रसायन का सेवन करने पर पुनः शूलोत्पत्ति नहीं होती।

२ शिरःशूलादिवज्र रस

विधि—शुद्ध पारद, शुद्ध गंधक, लोहभस्म और निसोत ४-४ तोले, शुद्ध गूगल, १६ तोले, मिलित त्रिफला चूर्ण ८ तोले, कूठ, मुलहठी, पीपल, सोंठ, गोखरू, वायविडंग, ये ६ ओषधियां १-१ तोला तथा दशमूल मिले हुए १० तोले लें। पहले पारद गंधक की कज्जली करें। फिर भस्म मिलावें, गूगल को घी में कूट कर तथा काष्ठादि ओषधियों का कपड़छान चूर्ण करके मिलावें। पश्चात् दशमूल के क्वाथ के साथ ३ दिन खरल कर २-२ रत्ती की गोलियां बनावें। (भै० र०)

वक्तव्य—श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य के मतानुसार इस रसायन को भांगरे के रस की ३ भावना भी दी जाय, तो गुण अधिक करता है।

मात्रा—१ से २ गोली दिन में दो या तीन बार बकरी के दूध, गौ के दूध, शहद या पथ्यादि क्वाथ के साथ देवें।

उपयोग—यह शिरःशूलादिवज्र रस वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक और त्रिदोषज शिर दर्द को तत्काल इस तरह नष्ट करता है जिस तरह वज्र छोड़ने पर असुरों का नाश होता है। एक दोषज, द्विदोषज, और त्रिदोषज, सब प्रकार के शिरःशूल को शमन करता है।

तीव्र शिरःशूल पर आध रत्ती गांजा को गुड़ या मुनक्का में रख निगल जाने से वेदना शमन होजाती है। फिर इस रस का प्रयोग करने से मूल हेतु को नष्ट कर देता है। जिससे पुनः शिरःशूल नहीं उठता। तीव्र शूल पर शिरःशूलादिवज्र रस शृङ्ग भस्म और गोदन्ती भस्म के साथ मिलाकर देना विशेष हितकारक है। यदि कब्ज हो, तो पथ्यादि क्वाथ का सेवन भी

कराना चाहिए। मस्तिष्क में शुष्कता हो और वार वार शूल चलता हो, तो केशर और मिश्री को निवाये घी में मिलाकर नस्य भी कराना चाहिए। दोनों नासापुटों में ४-४ बूँद घी डालना चाहिए।

३. मिहिरोदय रस

विधि--लोह भस्म, अभ्रक भस्म, सुवर्ण भस्म, प्रवाल भस्म, और राजावर्त्तभस्म, ये ५ औषधियां १-१ तोला तथा रस सिंदूर २ तोले लें। सबको मिला एरंडमूल और जटामांसी के क्वाथ से ३-३ दिन खरल कर १-१ रत्ती की गोलियां बनावें।

(आ० वि०)

मात्रा--१-१ गोली दिन में दो या तीन बार पथ्यादि क्वाथ या हरड़ का क्वाथ या रोगानुसार अनुपान के साथ देने से शिरःशूल का निवारण हो जाता है।

विविध अनुपान—सूर्य के तापजन्य शिर दर्द—गुल और केवड़ा का शर्बत।

अधिक मानसिक श्रम से उत्पन्न—च्यवन प्राशावलेह या धमासा का क्वाथ।

अपस्मार, हिस्टीरिया क्रमजनित--कस्तूरी, शहद या जटामांसी का अर्क।

मस्तिष्क में कृमिजन्य--तृणकांत मणि (कहरवा) पिष्टी।

गर्भाशय विकारजनित -शर्बत बनफशा।

मस्तिष्क में रक्तवृद्धि जनित—(विरेचन)

जीर्ण अपचन जनित—शहद-पीपल।

नये अपचन से उत्पन्न—सोंठ और लवण मिश्रित हरड़ का क्वाथ।

सूर्यावर्त्त और अर्धावभेदक पर मक्खन मिश्री, पेड़ा, या जलेबी आदि।

तीव्रदर्द पर आधरत्ती गांजा और १ माशा गुड़ या मिश्री के साथ।

उपदंशज शिरदर्द—गन्धक रसायन या चोपचिन्यादि चूर्ण।

शुक्रक्षय या रजोनाशज—वंगभस्म और शतावर्यादि चूर्ण

वातजन्य मृदुवेदना दशमूलारिष्ट।

ज्वर सह शिरदर्द—रक्त चंदन, धनियां, मोथा, गिलोय और सोंठ का क्वाथ।

उपयोग—यह रसायन अर्धावभेदक, अनन्तवात, सूर्यावर्त्त, एक दोषज, द्विदोषज और त्रिदोषज साध्य और असाध्य सब प्रकार के शिरोरोगों को निःसंदेह दूर करता है, वातरेन्द्र और वात वाहिनियाँ आदि वात संस्था, पित्त विकार, रक्ताधिक्य, रक्तकी न्यूनता, कफ प्रकोप आदि विविध विकार से उत्पन्न शूल रोग और उपद्रव या लक्षण रूप से उत्पन्न शिरदर्द को निवृत्त करने में यह उपकारक है।

शिरदर्द में तीव्र और मंद, ऐसे दो विभाग हैं। अनेक बार यह केवल मानसिक परिश्रम या क्रोध आदि जन्य मानसिक आघात के हेतु से उपस्थित हो जाता है। इनके अतिरिक्त रक्त में से सेन्द्रिय विषवृद्धि या शुद्ध रक्त में दूषित रक्त मिल जाना, रुधिर की न्यूनता, वातरक्त, मधुमेह, विषमज्वर, उपदंश, मूत्र के ताप आदिका सेवन, तमाखू, शराब, सीसा आदि के विष का रक्तमें प्रवेश, मृगी, हिस्टीरिया, कम्प आदि वातविकार, नेत्र, कर्ण नासिका, दंत आदि की पीड़ा से प्रति फलित, अजीर्ण

जनित, गर्भाशय आदि जननेन्द्रिय की वेदना जनित तथा मस्तिष्क में विद्रधि, व्रण, प्रदाह, आदि स्थानिक विकार इत्यादि अनेक हेतु जनित शिर दर्द होता है।

अर्धावभेदक (Migraine) होने पर आधे भाग में स्पन्दन शील वेदना, अपचन, कोष्ट बद्धता और विष प्रकोप में भार रूप मृदु भाव से वेदना, वातवहानाड़ियोंकी निर्बलता (Neurasthenia) होने पर दवाव या बांधकर निचोड़ने के सदृश पीड़ा; मस्तिष्क में मलोत्पत्ति या रक्त की न्यूनता होने पर जलने के समान दर्द; हिस्टीरिया, मृगी और वातसंस्था के विविधविकार (Neurosis) में शूल चुभोने के सदृश वेदना होती है।

स्त्रियों के बीजाशय विकार जनित वेदना बहुधा सन्मुख कपालमें मंद रूप में होता है।

मस्तिष्कमें वेदना होने पर कभी हाथ पैर आदि शीतल और मस्तिष्क उष्ण होता है; क्वचित् इससे विपरीत होता है। किसी रोगीकी नाड़ी तेज, किसीकी मंद, सामान्यतः क्षुधानाश होना किन्तु क्वचित् क्षुधा वृद्धि और भोजन करलेने पर शिर दर्द शमन हो जाना, कभी मूत्र के परिमाण की वृद्धि कभी ह्रास, ऐसे विविध लक्षण होते हैं। यदि कर्ण, नासिका नेत्र, दाँत आदिकी तीव्र पीड़ा से शिर दर्द होता है, तो मूल कारण को दूर किये बिना सच्ची शान्ति नहीं मिलती।

कान, नाक या नेत्र में से कभी पूय का प्रवेश मस्तिष्क में होता है, तब भयंकर शिरः शूल होता है। वह पीड़ा सतत बनी रहती है। रोगी को निद्राभी नहीं आसकती। ऐसे समय पर कर्ण पाक हो तो कान के चारों ओर या पीछे जहां पीड़ा हो वहाँ पर गरम जल से २-३ दिन अहोरात्र सेक करना पड़ता है। इस तरह नाक के विकार से शिर दर्द उत्पन्न हुआ हो, तो

दोनों नासारन्ध्रों में निवाया षड्बिन्दु तैल ६-६ घण्टे पर २-३ बार डालना चाहिये और कपाल पर शिरःशूलान्तक बामकी मालिश करानी चाहिये। इस प्रकार बाह्य उपचार के साथ इस रसायन का सेवन चन्दनादि कषाय के साथ कराने से सत्वर लाभ पहुँचता है।

यदि मूल हेतु नेत्रस्थ पूय हो तो नेत्रों को त्रिफला जलसे धोकर रक्त नेत्राञ्जन और बबूलादि स्वरस का अंजन करना चाहिये; और साथ साथ इस रसायन का सेवन कराने से मस्तिष्कगत विष निवृत्त होता है और मस्तिष्क का संरक्षण होता है। एवं दांत या डाढ के शूल से मस्तिष्क पीड़ा होती हो, तो दंत दोषहर उपचार के साथ मिहिरोदय रस का सेवन कराने से मस्तिष्क गत विष,विकार और मस्तिष्क की निर्बलता सरलता से दूर होती है।

ऊर्ध्वजत्रुगत अवयव या इन्द्रियों के तीव्र विकार के अतिरिक्त कारणों से शीत लगना, सेन्द्रिय विष प्रकोप। अपचन सूर्य का ताप, मस्तिष्क का अधिक श्रम, जागरण या हिस्टीरिया जनित शिर दर्द हो, तब इस रसायन का उपयोग अधिक होता है। वात प्रकोपज विकार में शामक असर पहुँचा, तीव्रता को दबा और वेग को कम करा कर शिर दर्द को शमन कर देना, यह गुण इस औषधि में है। यह रसायन वातकेन्द्र और वात नाडियों की शिथिलता, रक्त की न्यूनता, मस्तिष्क की उष्णता, सेन्द्रिय विष प्रकोप आदि को दूर करता है। इस हेतु से अर्धावभेदक, अनन्तवात, सूर्यावर्त, शंखवात आदि प्रकोपज शिरो वेदना में इसके सेवन से लाभ होता है। इस रसायन के सेवन के साथ केशर और मिश्री को ४-८ बूंद निवाये गोघृत में मिलाकर नस्य देने से सत्वर लाभ पहुँचता है।

प्रमेह जन्य शिर दर्द हो, तो सफेद चंदन, रक्त चन्दन, खस, मुनक्का, गिलोय, मुलहठी और आंवलों का क्वाथ अनुपान रूप से देना चाहिए। विविध प्रमेहों में विशेषतः रक्त में विष संगृहीत होता है और मस्तिष्कस्थ केन्द्र दूषित होता है; तथा पचनेन्द्रिय संस्था के कार्य में विकृति होती है। इन सब स्थानों पर यह लाभ पहुँचा कर तथा रक्तप्रसादन करके शिर दर्द को नष्ट कर देता है।

मस्तिष्क में मल संग्रह या मूत्र विष जन्य विकृति और मस्तिष्क की निर्बलता पर चन्दनादि-क्वाथ अनुपान रूप से देने से भी लाभ सत्वर होता है।

इस रसायन में मिली हुई लोह भस्म रक्त और रक्ताभिसरण संस्था पर लाभ पहुँचाती है; और पित्त कफज प्रकोप का निवारण करती है। अभ्रक भस्म वात संस्था विकृति और मांस की शिथिलता पर अधिक प्रभावशाली है। अपस्मार, उन्माद, मानसिक निर्बलता आदि से उत्पन्न विकार को दूर करती है। सुवर्ण भस्म सेन्द्रिय विष या इतर विष आदि से रक्तदूषित होने पर रक्त प्रसादन कर और मस्तिष्क पर शामक असर पहुँचाकर वेदना का निवारण कराती है। प्रवाल और राजावर्त उष्णता को शान्त करतीं हैं; विषको दूर करतीं हैं, और मस्तिष्क की शक्ति को बढ़ातीं हैं। रससिंदूर रसायन, कीटाणुनाशक, कफघ्न और उत्तेजक है। एरण्डमूल और जटामांसी वेदना शामक हैं।

सूचना—एक प्रकारका सूर्यावर्त्त मलेरियाके रोगाणुओंसे उत्पन्न होता है और यहभी सूर्य बढनेपर बढता है और घटने पर घटता है। इसको स्थानीय ज्वर समझना चाहिये। इसमें घृत युक्त मिष्टान्न पदार्थ जलेबी आदि बृंहण चिकित्सा नहीं करनी चाहिये। क्योंकि इससे रोग बढ़ जाता है अतः ऐसे रोगी को

२ रत्ती क्वीनाइन रात्रि को सोते समय और २ रत्ती प्रातः काल सूर्योदय से पहले देवें। इसी भांति रात्रि को सोते वक्त से रोगारम्भ से २ घंटे पूर्व तक देवें। इस प्रकार रात्रि भर में कुल ६ मात्रा लेने पर शिर दर्द एक दिन में ही रुक जाता है। कदाचित् एक दिन में न रुके तो इसी भांति देने से निश्चय यह रोग नष्ट हो जाता है। यदि उदरशुद्ध नहीं होगा तो दवा का असर भी पूर्ण तया न होगा। अतः कोष्ठ शुद्धि के लिये त्रिफला चूर्ण अथवा स्वादिष्ट विरेचन चूर्ण की १-२ मात्रा ले लेनी चाहिये। श्री० वैद्यराज रामचन्द्रजी

४. अर्क पत्र योग।

बनावट—आक के एक नये निकले हुए अंकुर को ६ माशे गुड़ के भीतर रखकर गोली बना लेवें। फिर सूर्योदय के २ घण्टा पहले रोगी को निगलवा देने से (न निगल सके तो चबा देने से) सूर्यावर्त (सूर्योदय होने पर प्रारम्भ होने वाला शिर दर्द) एक ही दिन में दूर हो जाता है। यदि शिर दर्द कुछ शेष रह गया हो, तो दूसरे दिन फिर एक गोली खिला देवें। आवश्यकता पर तीसरे दिन भी दे सकते हैं इसी भांति नव कोंपल न मिले तो एक बिन्दु या दो बिन्दु अर्क दुग्ध को इसी भाँति गुड़ के साथ देदें।

सूचना—गुड़ को कम ज्यादा कर सकते हैं। गुड़ अच्छी तरह लपट सके उतना होना चाहिये।

सूर्योदय होने पर दूध जलेबी, बादाम का हलुआ या इतर मिठाई खिलावें।

५. सिद्धामृत रस

बनावट—फिटकरी का फूला ३ भाग और सोना गेरू एक भाग मिलाकर खरल कर लेवें। (र० यो० सा०)

मात्रा—१-१ माशा प्रातःकाल गरम कर ठंडे किए हुए गोदुग्ध के साथ देवें।

उपयोग—इस औषध के सेवन से शिरोभ्रम (चक्कर आना) शिरोरोग, अम्लपित्त और पित्तप्रकोपज, समस्त विकार नष्ट होजाते हैं।

सूचना—इस रसके सेवनकाल में पित्तवर्धक पदार्थ खटाई, लाल मिर्च, तेल, शराब, धूम्रपान, आदि का त्याग कर देना चाहिए। अग्नि और सूर्यके तापका सेवन भी नहीं करना चाहिये।

६ पथ्यादि क्वाथ

विधि—हरड़, बहेड़ा, आंवला, हल्दी, गिलोय, चिरायता और नीम की अन्तर छाल, इन ७ द्रव्यों को सम भाग मिला कर जौ कूट चूर्ण करें। (यो० र०)

मात्रा दो दो तोले का क्वाथ कर ६-६ माशे गुड़ मिला कर दिन में २ या ३ बार दें।

उपयोग—यह क्वाथ विविध प्रकार के सामरोग, शिरःशूल, भ्रू, शंख, कर्ण और नेत्रगत शूल और अर्धविभेदक को तत्काल दूर करता है।

यह क्वाथ अकेला या रौप्यभस्म अथवा गोदंती भस्म और विविध रसों के साथ अनुपान रूप से व्यवहृत होता है। सामान्य रूप से गोदंती भस्म १ माशा और १ माशा मिश्री के साथ तीव्र विकार में दिया जाता है।

७ चन्दनादि कषाय

विधि—श्वेत चन्दन, रक्त चंदन, मूर्वा, कालीनिसोत, सफेद निसोत, हल्दी, दारुहल्दी, लाख, वंशलोचन, सोना गेरू, जीवंती, शतावर, असगंध, वच, पीपल, काकोली, जीवक और ऋष-

भक इन १८ औषधियों को सम भाग मिलाकर जौ कूट चूर्ण करें।

मात्रा—२-२ तोले का क्वाथ कर पिलावें।

उपयोग—इस कषाय का उपयोग अकेला और अनुपान रूप से विविध प्रकार के शिर दर्द पर होताहै। जब कफ आम विष, या पूय प्रवेश मस्तिष्क में होता है; तब इस कषाय का उपयोग विशेष हितावह है।

८ वह्निभास्वर रस

बनावट—सुवर्णभस्म, अभ्रक भस्म, वैक्रांत भस्म और रजत भस्म ये चारों ६-६ माशे, लोह भस्म, शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक और सुवर्ण माक्षिक भस्म २-२ तोले लें। पारद-गन्धक की कज्जली कर फिर भस्म मिला, लाल चित्रक और ब्राह्मी (जल नीम) के क्वाथ की ७-७ भावना देकर एक-एक रत्ती की गोलियां बनालेवें। (र० यो० सा०)

मात्रा १ से २ गोली दिन में दो बार देवें।

उपयोग—इस रसायनका सेवन शीर्षाम्बु रोगकी प्रथमावस्था में लाभ पहुँचा देता है। यह रसायन शीर्षाम्बु रोग के समान मस्तिष्क और मस्तिष्क आवरण के अन्य रोगों को भी अग्नि घास को जलावे, उस तरह नष्ट कर देता है।

यदि इस रसायन के २१ दिन के सेवन से मस्तिष्कावरण में से सञ्चित रस का शोषण न होने लगे, तो शस्त्रचिकित्सा द्वारा जल को निकाल लेना चाहिए।

९ शिरःशूल हर तैल

विधि—कपूर, नीलगिरी तैल, नीबू का तैल लवंडर का तैल और सन्तरे का तैल १-१ औंस और सरसों का तैल

मूर्च्छित किया हुआ १० औंस लें। पहले सरसों के तेल को अलग रक्खें। शेष तेलों में कपूर मिला देवें। कपूर मिल जाने पर सरसों का तेल डालकर बोतल को अच्छी तरह चला लेवें।

सरसों के तैल की मूर्च्छन विधि रसतंत्रसार प्रथम खंड में दी है।

उपयोग—शिरः शूल और नेत्र शूल चलने पर रोगी के नाक में दो दो बूंद डाल दें और श्वास जोर से लेने को कहें। तैल डालने के लिए तकिया पर मस्तिष्क का झुका दें। जिससे तैल मस्तिष्क में सरलता से पहुँच जाय। दर्द अधिक हो, तो प्रातः सायं दिनमें दो बार तैल डालें। १०-१५ दिन तक तैल डालने से वर्षों का शूल निवृत्त हो जाता है।

किसी को मस्तिष्क में कृमि पड़ जाते हैं। फिर भयङ्कर दर्द होता है। नासिका से रक्त गिरता रहता है। ऐसा हो, तो तृणकान्त मणि पिष्टी (कहेरवापिष्टी) भी ४-४ रत्ती दिनमें ३ बार जल के साथ देते रहना चाहिये। जिससे नासिका से सब कीड़े निकल कर ३-४ दिन में ही मस्तिष्क हलका बन जाता है।

१० अर्धावभेदक हरयोग

विधि–उस्तखदूस ६ माशे, धनिया ३ माशे, कालीमिर्च २ रत्ती, प्रवाल पिष्टी २ रत्ती, गिलोय सत्व २ रत्ती और अभ्रक भस्म १ रत्ती, इन सबको मिलाकर प्रातः काल देवें। इसी तरह दोपहर और सायंकाल को भी देने से एक ही दिन में आधाशीशी दूर हो जाती है।

१२ शिरोरोग हर योग

(१) जमाल गोटा के बीज को पत्थर पर जल के साथ घिस, फिर सलाई से कपाल पर भ्रू भाग के ऊपर दर्द वाले स्थान पर एक सीधी पंक्ति रूप से लगावें। ५-७ मिनिट में शिरदर्द शमन होने पर उसे पोंछकर घी की अंगुली लगा लें।

(२) काली मिर्च को खूब बारीक पीस गुड़ मिला मटर के सदृश गोलियां बना कर २ से ४ गोली दिन में ३ बार निवाये जल के साथ देने से शिरदर्द, कण्ठशोष, मुंहका बेस्वादुपन, हाथ-पैरों की नसें खिचना, अपचन, उदरवात, उदर शूल मस्तिष्क का भारीपन और प्रतिश्याय आदि दूर होते हैं।

१३. अर्धावभेदकहर नस्य।

(१) बन्दाल (देव दाली) के फल के भीतर की जाली १ मासे को १ तोला जल में रात्रि को भिगोवें। प्रातः काल मसल कर छान लेवें। इस जल में से ५-७ बूंद शिरदर्द हो उस ओर के नासापुट में डालें। बूंद डालने के लिये रोगी को लेटा देवें। शिर को नीचा और नासिका को ऊंचा रखें। जिससे सरलता पूर्वक मस्तिष्क की ओर जल जा सके।

इसके सूंघाने से मस्तिष्क और नासिका में भारीपन मालूम पड़ता है; किन्तु थोड़ी ही देर में नाक से जलका बहना प्रारम्भ हो जाता है। धीरे धीरे बहुत सा तरलकफ निकल जाता है। परिणाम में आधा शीशी दूर हो जाती है।

सूचना यदि अधिक जल या तेज जल का नस्य दिया जायगा। तो जल स्राव अधिक होगा; और नासिका की श्लैष्मिक कला में दाह हो जायगा। ऐसा हो तो गोघृत का नस्य कराना चाहिये।

क्वचित् किसी को रक्तस्राव होने लगता है; और चक्कर आने लगते हैं। ऐसा होने पर गोघृत का नस्य देकर रोगी को लेटा देना चाहिये। फिर आध घन्टे बाद मिश्री मिला दूध, गरम करके ठण्डा किया हुआ पिलाना चाहिये।

(२) रीठा के छिलके को रात्रि को जलमें भिगो देवें। फिर प्रातः काल मसल छानकर ऊपर कही हुई विधिसे जल का ५-७ बूंद नासिका में डालने से दर्द का सत्वर निवारण हो जाता है। इस ओषधि से कफ आकर्षित होकर बाहर निकल जाता है। प्रथम योग के समान इस योग में भी सावधानी की आवश्यकता है। अन्यथा श्लैष्मिक कला पर प्रदाह हो जाता है।

(३) श्वासकुठार रस और प्रवालपिष्टी समभाग मिलाकर दिन में २-३ बार नस्य कराने से सूर्यावर्त और अर्धावभेदक दूर होते हैं।

१४. अयारिज फँकरा।

विधि—जटामांसी, दालचीनी, अगर, हब्बे बल्सां-तज, रूमी मस्तंगी, नेत्रवाला, केसर और एलुवा, इन ९ ओषधियों को समभाग मिलाकर कपड़ छन चूर्ण करें।

(करावादीन जुकाई)

मात्रा—१॥ से ३ माशे तक दिन में २ बार जल के साथ या रात्रि को ३ माशे मात्रा देवें।

उपयोग—यह चूर्ण मस्तिष्कगत (उर्ध्व जत्रुगतसामदोष) विकार को शमन वा अधोगत करने में अच्छा उपयोगी है। विशेषकर मस्तिष्क में कफ या द्रव वृद्धि हो तो उसे पिघला कर बाहर निकालता है और लीन द्रव को जला डालता है। मस्तिष्क पीड़ा, अर्धावभेदक, अर्धांगवात, अर्दित, बांयटे आना जिह्वाका लड़खड़ाना आदि पर लाभदायक है।

इसका उपयोग स्वतन्त्र रूपसे अथवा विशेषकर हब्बे अयारिज या अन्य शिरो रोगों उन्माद आदि रोगों के विवेचनी ओषधियों के मिश्रणों में आता है। जो सामरोगोंका शमन भी करता है।

१६ अक्सीर दिमाग

बनावट-उत्तम नवीन बादाम का तेल एवं चमेली का तेल, गुलरोगन तेल, खोपरे का तेल, काहू और कद्दू का तेल, सब समान भाग लें। इनमें से २० तोला तेल रूह खस २० बूंद, रूह केवड़ा ५ बूंद, रूह गुलाब १० बूंद, संदल का तेल ५ बूंद इन सबका सम्मिश्रण कर हरे रंग की शीशी में भर लकड़ी के तख्ते पर सूर्य की धूप और चंद्रमा की चांदनी में ४ रोज़ तक रखने से तैयार हो जायगा। (राजवैद्य रामचन्द्रजी शर्मा)

उपयोग—इसको शिर में लगाने से मस्तिष्क की क्षीणता से एवं गर्मी से होनेवाला शिरदर्द, दाह, आंखों के सामने अंधेरी या चक्कर आना, नेत्र की दाह, जूं, लीकका जमना और बालों का झड़ना आदि रोग मिटते हैं। यह अत्यन्त मनोहर सुगन्धित भी है। इसके निरन्तर सेवन से असमय पर बाल पकना और बाल झड़ना आदि भी रुक जाते हैं।

चिकित्सा में विशेष ध्यान देने योग विवेचन—हज़ारों रोगनाशक योग और अगणित पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं और हो रही हैं, जो जो उनमें अंकित योग हैं वे सब अनुभूत हैं। परन्तु किसी योग से किसी रोगी को सफलता और किसी को असफलता मिलती है इससे आशा व निराशा भी होती है यह सामान्य बात है। देश, काल और प्रकृति के अनुसार दोषों का तारतम्य समझना और तदनुसार औषध योजना करना, बस यही वैद्य का वैद्यत्व है। विचारवान उत्तम चिकित्सक को सफलता और इसके अतिरिक्त असफलता ध्रुवांक है और अकाट्य है। उदाहरण के लिये--मस्तिष्क की क्षीणता से होने वाला शिरदर्द मस्तिष्क पोषक बादाम एवं मगज आदि के द्वारा बने हुए बृंहण योग ही लाभकारी हैं। पथ्यादि क्वाथ

नहीं। बद्ध कोष्ठ से होने वाले शिरदर्द में कोष्ठ शुद्धि कर प्रयोग विरेचन आदि से ही लाभ होता है। नेत्रक्षीणता से होने वाला शिरदर्द नेत्रपोषक योग एवं चश्मा आदि के लगाने से ही लाभ होता है। स्त्रियों के मासिक धर्म की खराबी से होने वाला शिरदर्द में रजो विकार मिटाना वांछनीय है। ज्वरादि रोग विशेष के कारण होने वाले शिरदर्द उपद्रव रूप में होते हुए भी मूल रोग का हेतु होता है। अतः मूलव्याधि की चिकित्सा भी साथ साथ अनिवार्य होती है। अधिक लिखने की आवश्यकता नहीं समझता। उदाहरण रूप से निवेदन किया है आशा है पाठक वृन्द समझते होंगे या विचार करने से समझ सकते हैं विचार पूर्वक चिकित्सा करना वैद्य का वैद्यत्व है, चिकित्सक की सफलता है, यश प्राप्ति का मूल कारण है इत्यादि।

(किमधिकम्)

स्त्री रोग प्रकरण

१ लक्ष्मणा लोह

विधि—लक्ष्मणा पंचांग ४०० तोले, अशोक छाल, कुश की जड़, महुए का गर्भ (मग्ज), मुलहठी, खरैंटी की जड़, पाठा और बेलगिरी, ये ७ ओषधियां ४-४ तोले तथा लोह भस्म सब के समान लें। पहले लक्ष्मणा को जौकूट कर ८ गुने जल में मिलाकर चतुर्थांश क्वाथ करें। फिर मसल छानकर पुनः चूल्हे पर चढ़ाकर उसका घन बनावें। काष्ठादि ओषधियों को कूट कर कपड़ छान चूर्ण करें। पश्चात् घन, चूर्ण और सबके समान वजन में लोह भस्म मिला मर्दन कर २-२ रत्ती की गोलियां बना लेवें।

मात्रा -१ से २ गोली जल, अशोकारिष्ट या रोगानुसार अनुपान के साथ दिनमें दो बार देवें।

३ सौभाग्यादि गुटिका

विधि—सोहागे का फूला, भुनी हींग और कासीस १-१ तोला, अजवायन २ तोले, काली मिर्च ३ तोले और एलुवा ५ तोले लेवें। सबको मिला घी कुंवार के रस में ६ घंटे खरल कर १-१ रत्ती की गोलियां बनावें। हकीम उत्तमचन्दजी।

मात्रा—१ से ४ गोली तक निवाये जल या अर्क सौंफ अथवा रोगानुसार अनुपान के साथ देवें।

उपयोग—मासिक धर्म में कष्ट होना, मासिक धर्म कम आना, मासिक धर्म समय पर न होना, मासिक धर्म की विकृति से सिर दर्द, नेत्र की निर्बलता, और कमर में पीड़ा रहना आदि विकार होने पर दो-दो गोली निवाये जल के साथ रात्रि को सेवन करते रहने से १-२ मास में मासिक धर्म की शुद्धि होजाती है।

अपचन रहता हो तो १-२ गोली भोजन कर लेने पर देने से पचनक्रिया सुधर जाती है। मलावरोधज उदरशूल में दो से चार गोली अर्क सौंफ के साथ देने से दस्त की शुद्धि होती है, और उदरशूल का निवारण होता है। इसके अतिरिक्त गुल्म, आध्मान को भी नाश करती है। परन्तु इसके सेवन से दस्त अधिक होजाय तो मात्रा कम कर दें अथवा कुछ दिनों के लिए बन्द कर देनी चाहिए।

४-रजोदोषहरी वटी

विधि—मुश्कतरामसी, रेवंद चीनी, तगर, तुख्म हरमल, सौंफ, अनीसून, तुख्म करफ्स, अजखर, नरसलमूल, सोया और बांस की जड़, ये १२ द्रव्य १०-१० तोले और उलट कंवल

मात्रा—२-२ गोली सुबह और रात्रि को भोजन के आध घण्टे बाद जल से।

उपयोग— यह वटी स्त्रियों के मासिक धर्म की विकृति को दूर करती है। अनेक बालक होने या अन्य कारण से गर्भाशय शिथिल हो जाने पर मासिक धर्म में थोड़ा और काला रक्त गिरता है। मासिक धर्म शुद्धि नहीं होती, कमर में वेदना होती है। नेत्रों में निर्बलता आजाती है। उसके लिए यह वटी अति हितकर है। १-२ मास सेवन करने पर रजोदर्शन नियमित बन जाता है।

६ कुमारिका वटी।

विधि— एलुवा, शुद्ध कासीस, अफीम, वङ्गभस्म और शीतल मिर्च, इन ५ औषधियों को समभाग मिला घीकुमार के रस में ६ घण्टे खरल कर १-१ रत्ती की गोलियां बनावें।

(भै० र०)

मात्रा—१-१ गोली प्रातः और सायं अथवा केवल रात्रि को एक बार जल के साथ देवें। तीव्र शूल के समय २-२ घण्टे पर दो या तीन बार ४ रत्ती कपूर के साथ या शराब के साथ देवें।

उपयोग—यह वटी विविध प्रकार के योनिरोग, बाधक वेदना, गर्भाशय भ्रंशजनित शूल, मक्कल शूल और मासिक धर्म के समय शूल तथा प्रदर आदि रोगों को दूर करती है, और मासिक धर्म को साफ लाती है।

बाधक वेदना होने पर कटि व्यथा, नाभि के पास में और नीचे भारीपन, मासिक धर्म अनियमित समय पर आना, शूल चलना, नेत्र, हाथ और पैरों के तलों में दाह, शिर दर्द और बेचैनी आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। ये सब इस वटी के सेवन से शान्त होजाते हैं।

गर्भाशय में किसी भी प्रकार का शूल चलता हो, शूल ठहर ठहर कर चलता हो, वेदना के हेतु से निद्रा न आती हो, उस पर यह वटी दी जाती है। इस वटी में अफीम आती है, अतः मात्रा अधिक नहीं देनी चाहिए। तथापि पीड़ा शमनार्थ पूर्ण मात्रा देने में भी आपत्ति नहीं मानी जाती। यदि विशेष कब्ज हो और सुविधा हो, तो एरण्ड तैल की बस्ति देकर मलाशय को साफ करलेना चाहिए। सगर्भावस्था में यह ओषधि नहीं दी जाती, तथापि सगर्भावस्था के अन्त में प्रसवावस्था उपस्थित होने पर किसी आघात के हेतु से गर्भ संरक्षक जल का स्राव होगया हो और गर्भाशय का मुख विकसित न हुआ हो, तो संतान का मुख गर्भाशय के अविकसित मुख को लग जाता है। जिससे गर्भाशय का सबल संकोच होता है और तीव्र वेदना उपस्थित होती है। यदि उसका निवारण तत्काल न किया जाय, तो संतान की मृत्यु होती है और माता का जीवन भी दुखदायक बन जाता है। ऐसी विषमावस्था में यह ओषधि शराब के साथ देने पर अमृत के समान उपकार करती है। आवश्यकता पर गर्भिणी को उष्ण जल के टब में भी बैठाया जाता है।

प्रसव के पश्चात् मक्कलशूल (after pain) उत्पन्न होता है। उस पर यह वटी ४ रत्ती कपूर मिलाकर देने से तत्काल लाभ होजाता है। कभी प्रसवावस्था में गर्भाशय के भीतर प्रदाह हो जाने के हेतु से वातप्रकोप होकर उन्माद के लक्षण उपस्थित होते हैं। निद्रा भी नहीं आती। ऐसे प्रसंग पर इस वटी का सेवन कराने से वेदना शमन होती है और शांत निद्रा आ जाती है।

इस वटी में अफीम और एलुवा का मिश्रण होने से अफीम की मलावरोध करने वाली शक्ति का ह्रास होता है; वेदना

शामक होने में अच्छी सहायता मिल जाती है। कासीस आम का शोषण करती है; और गर्भाशय को सबल बनाती है। वंगभस्म मूत्र संस्था और प्रजननयंत्र के सब अवयवों को लाभ पहुंचाती है;तथा रक्त को विशुद्ध बनाता है। शीतल मिर्च उत्तेजक,पाचक और वातहर है। गर्भाशय की श्लैष्मिक कला में से अधिक स्राव कराता है; कीटाणुओं को नष्ट करता है; तथा वृक्क स्थान के कार्य को उत्तेजित करता है। सुजाकजनित विकृति हो, तो उसे भी दूर करता है। और मूत्र में होने वाली जलन को शांत कर पेशाब को साफ लाता है।

७. अश्वगन्धादियोग

विधि—अश्वगंध और विधारे का चूर्ण ८-८ तोले, बड़ी इलायची का चूर्ण और कुक्कुटाण्डत्वक् भस्म दो-दो तोले, वंग भस्म एक तोला और मिश्री आठ तोले लें। सबको मिलाकर खरल कर लेवें। (श्री॰ पं॰ यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्रा—३ से ४ माशे प्रातः सायं गौ दुग्ध के साथ।

उपयोग यह चूर्ण नये और पुराने श्वेतप्रदरको दूर करता है। जीर्ण रोग में ४-६ मास तक शांति पूर्वक इसका सेवन कराना चाहिए।

मायाफलादि चूर्ण।

बनावट —माजूफल ५ तोले, अश्वगन्धा २॥ तोले, आंवले की मज्जा का चूर्ण २॥ तोले,फिटकरी का फूला १। तोले,कुक्कुटाण्डत्वक् भस्म १। तोले, इन सबकी बराबर मिश्री अथवा शक्कर मिलाकर बोतल में भर लेवें।

मात्रा—३-३ माशे दुग्ध अथवा शीतल जल के साथ दें।

उपयोग—इसके सेवन से श्वेतप्रदर, योनिभ्रंश एवं निर्बलता मिटती है।

८. पत्रांगासव

विधि—पतंग की लकड़ी का बुरादा, खैरसार, अडूसे का मूल, सेमल के फूल, खरैंटी मूल, भिलावां, अनन्त मूल सफेद, अनन्त मूल काला, जपाकुसुम, (गुडहर) की कलियां, आमकी गुठली की गिरी, दारुहल्दी, चिरायता, पोस्त के डोडे, जीरा, अगर, रसौंत, बेलगिरी, भांगरा, दालचीनी केसर और लौंग, ये २१ औषधियां ४-४ तोले मिला कर जौकूट चूर्ण करें। यह सब चूर्ण, मुनक्का १ सेर और धाय के फूल ६४ तोले को २०४८ तोले जल में मिलावें। उसमें शक्कर ४०० तोले और शहद २०० तोले डालें। एक मास तक बन्द रखें। आसव परिपक्व होने पर छानलें। (भै० र०)

मात्रा—२॥-२॥ तोले समान जल के साथ दिन में दो बार।

उपयोग—यह आसव वेदनायुक्त, उग्र श्वेत, और रक्त प्रदर का नाश करता है एवं प्रदर के साथ उपद्रव रूप से उत्पन्न ज्वर, पाण्डु, शोथ, अग्निमान्द्य और अरुचि को भी दूर करता है।

प्रदर में पतला और उष्ण स्राव अधिक होता है, गर्भाशय शिथिल हो गया हो, फूला हुआ सा प्रतीत होता हो, शूल भी चलता हो, उसके लिये यह आसव हितकारक है। इस आसव के साथ चन्द्रकला रस का सेवन कराने से सत्वर लाभ होता है।

९. असृग्दर योग

(१) लजवन्ती पञ्चाङ्ग का कपड़छान चूर्ण १-१ माशा दिन में ३ बार शीतल जल या गोघृत के साथ देने से रक्त प्रवाह एक ही दिनमें बन्द होजाता है अति भयंकर बढ़ा हुआ और असाध्य रोग भी दूर हो जाता है। मासिक धर्म में अत्यधिक रजः स्राव

होना और रक्तप्रदर, दोनों पर यह औषध लाभ पहुँचाता है। रक्तप्रवाह बन्द होजाने पर दूसरे दिन आधी मात्रा दो बार देवें।

सूचना—मात्रा अधिक होने पर वमन हो जाती है। अतः मात्रा कम ही देवें। भोजन पौष्टिक और शीतल गुण युक्त देवें।

(२) लगभग ६ माशे से १ तोला तक कैरोंदे के मूल को घिस कर दूध के साथ पिलाने से भयंकर रक्तप्रदर तथा मासिक धर्म में अति रक्तस्राव होना, दोनों दूर हो जाते हैं विशेषतः २-३ दिन में ही लाभ हो जाता है। कदाच कसर रह जाय, ३ दिन औषध बन्द रखकर फिर ३ दिन देने से पूर्ण आराम हो जाता है।

(३) संगमर्मर को कूट कपड़ छान चूर्ण कर उसमें १६ वां हिस्सा सोना गेरू मिला कर ३ घण्टे खरल करें। इसमें से आध से १ माशा घी शक्कर के साथ दिन में ३ बार देने से रक्तप्रदर शमन हो जाता है। यदि संगमर्मर अर्थात् मकराणे का पत्थर की भस्म बना लें अर्थात् चूना बना लें फिर उपरोक्त योग में मिलाया जाय तो आधी मात्रा से ही पूरा गुण करता है।

१०. आर्तवप्रद योग

(१) बीजाबोल और एलुवा, दोनों समभाग मिला जल में पीस बेर के समान गोली या वर्त्ति बनाकर योनि में धारण करने से मासिक धर्म आने लगता है। आवश्यकता पर दूसरे दिन पुनः वर्त्ति धारण करें

(२) रीठे की गिरी के चूर्ण को समभाग गुड़ में मिला जामुन जैसी वर्त्ति बना कर धारण करने से मासिक धर्म आने लगता है।

१ गर्भधारक योग

बनावट—रस सिंदूर, जायफल, जाविश्री, लौंग, कपूर,

केशर और रुद्रवन्ती, सबको समभाग मिला शतावर के क्वाथ में ३ दिन खरल कर १-१ रत्ती की गोलियां बना लेवें।

उपयोग—मासिक धर्म आने के पश्चात् चौथे दिन से दिन में २ बार ३ दिन तक १-१ गोली खाकर ऊपर दूध पीवें। इस तरह तीन ऋतु पर्यन्त करने से गर्भ धारण होजाता है। यदि इसमें जीया पोता जिसका नाम पुत्र जीवक अथवा पुत्रदा भी है वह भी मिलाया जाय तो विशेष गुणकारी है।

१२. प्रदरान्तक योग

(१) एरण्ड की लकड़ी को जला कर राख करें। फिर उसके समान आंवलों का चूर्ण मिलाकर अच्छी तरह खरल कर लेवें। इस चूर्ण में से ६-६ माशा चूर्ण शीतल जल के साथ प्रातः सायं देते रहने से रक्तप्रदर और श्वेतप्रदर, दोनों दूर होते हैं।

(२) दूध वच का चूर्ण ४ से ६ रत्ती तक दिन में ३ बार देवें। प्रातः सायं दूध से और दोपहर को जल के साथ देवें। इस तरह ३-४ दिन प्रयोग करने से नया रक्तप्रदर शमन हो जाता है।

(३) सोना गेरू को आंवले के रस में भिगो कर छाये में सुखावें। इस तरह २१ भावना देवें। फिर ३ से ६ रत्ती दिनमें २ बार दूध के साथ देने से रक्तप्रदर, रक्तस्राव और पाण्डुता दूर होते हैं।

(४) सोनागेरू १ तोला और फिटकरी का फूला ४ तोले मिला कर खरल करलें। उसमें से ६-६ रत्ती शक्कर के साथ देकर ऊपर बकरी का दूध पिलाने से रक्तस्राव और रक्तप्रदर सत्वर शमन हो जाते हैं।

१३. अशोकादि कषाय

विधि—अशोक की छाल १० तोले, आम की छाल,

जामुन की छाल और बेर (झड़बेर) की छाल ५-५ तोले लेकर जौकूट चूर्ण करें।

मात्रा—२-२ तोले का क्वाथ कर १-१ तोला गोघृत और ६-६ माशे मिश्री मिला कर भोजन के तीन घण्टे बाद तीसरे पहर को पिलावें। या सुबह शाम दो वार देवें।

उपयोग—इस कषायके सेवनसे रक्तप्रदर नया और पुराना शमन हो जाता है। गर्भाशय की श्लैष्मिक कला का प्रदाह, रक्तवाहिनी फटना, गर्भाशय की दुष्टि, इन सब पर यह हितावह है।

१४. योनिसंकोचन योग

(१) कूठ, धाय के फूल, बड़ी हरड़, फिटकरी, माजूफल, लोध, भांग और अनार की छाल, इन ८ औषधियों को १-१ तोला मिला चूर्ण कर ४० तोले शराब में डाल कर ७ दिन रहने दें। दिन में २-३ बार बोतल को चला लें। फिर छान कर उपयोग में लें। इस अर्क में फुरेरी डुबो कर योनि के भीतर चारों ओर लेपकर देनेसे शिथिल योनि दृढ़ हो जाती है।

(२) माजूफल ३ तोले, कपूर और फिटकरी ३-३ माशे मिला कर कपड़छान चूर्ण करें। फिर पतले कपड़े की छोटी छोटी पोटली बनाकर योनि में चढ़ावें। पोटली का एक डोरा लम्बा बांधें; जिससे इच्छा होने पर पोटली को निकाल सकें। इस प्रकार पोटली रखने से योनि तंग होजाती है। कमल नीचे गिर जाता हो और नया रोग हो, तो वह भी अपने स्थान पर स्थिर हो जाता है।

(३) भांग की पोटली ३ घंटे तक योनि में रखनेपर अनेक बार प्रसूता हुई नारी की योनि भी कन्या के समान हो जाती है।

(४) माजुफल, मांई, फिटकरी और राल, चारों को सम

भाग मिला पोटली कर धारण करने से योनि संकुचित हो जाती है। (हकीम उत्तमचंदजी)

१५. योनि कण्डूहर योग

(१) फिटकरी कच्ची ६ माशे को १ सेर जल में मिला कर दिन में ३ समय धोने से खुजली दूर हो जाती है।

(२) तेज शराब का फोहा कण्डू स्थान पर रख देने से कीटाणु नष्ट होकर तीव्र कण्डू निवृत हो जाती है।

(३) कपूर, अफीम, मुर्दासंग, चन्दन का तैल और सोहागे का फूला, पांचों १-१ माशा, नील गिरी तैल ५ माशे और वेसलीन या धोया घृत २॥ तोला लेकर मलहम बना लेवें। इस मलहम का लेप करने से कण्डू शमन हो जाती है।

(४) त्रिफलाघन सत्व या उदुम्बरघन सत्व को जल में मिला कर योनि को धोने से कण्डू व उससे उत्पन्न पिड़िकायें नष्ट हो जाती हैं।

१६. सूतिकावल्लभ रस

बनावट—शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, सुवर्ण माक्षिक भस्म अभ्रकभस्म, कपूर, सुवर्णभस्म, शुद्ध हरताल, रौप्य भस्म, अफीम, जावित्री और जायफल, ये ११ औषधियां सम भाग लें। पहले पारद गन्धक की कज्जली कर फिर शेष द्रव्य मिलावें। पश्चात् नागरमोथा, खरैंटी, और सेमल की छाल के क्वाथ में क्रमशः २-२ दिन खरल करके आध आध रत्ती की गोलियां बनावें। (भै० र०)

मात्रा—१-१ गोली दिन में ३-४ वार जल, बकरी के दूध मट्ठे या रोगानुसार अनुपान के साथ देवें।

उपयोग—यह रसायन सूतिका की भयंकर ग्रहणी, घोर अतिसार, प्रवाहिका, दुर्बलता, अग्निमान्द्य आदि को नष्ट करता

है; तथा तुरन्त पुष्टि, कान्ति, मेधा और धृति को उत्पन्न करता है।

प्रसव के कुछ दिनों बाद अपथ्य सेवन होने पर अतिसार या ग्रहणी रोग हो जाते हैं। फिर तुरन्त न सम्हालने से रोग उग्र रूप धारण कर लेता है। प्रति दिन २५-५० बार मरोड़ा आकर दस्त लग जाते हैं। उदर में ऐंठन होती रहती है; दस्त होने पर अति निर्बलता आजाती है। बार बार चक्कर आना, कर्ण गुँज, हृदय में धड़कन वृद्धि, अरुचि, अति अग्निमान्द्य, खाया हुआ कुछ भी न पचना, आम और रक्तमिश्रित दस्त होना, प्यास अधिक लगना, ज्वर बना रहना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। ऐसे समय पर यह सूतिका वल्लभ रस अमृत के समान कार्य करता है।

इस औषधि में अफीम आती है अतः अधिक मात्रा नहीं देनी चाहिये। अफीम का असर स्तन्य द्वारा शिशु पर भी होता है। यदि शिशु को भी प्रवाहिका या अतिसार हो, तो वह भी नष्ट हो जाता है। यदि बालक को अफीम का अधिक असर पहुँचता हो, बालक को अधिक कब्ज रहता हो, तो बालक को प्रसूता का स्तन पान छुड़ा देना चाहिये। या औषधि की मात्रा कम कर देनी चाहिये।

सूचना--जब तक अफीम रहित औषधि से लाभ हो तब तक इसका उपयोग नहीं करना चाहिये प्रवाहिका ने उग्र रूप धारण कर लिया हो, तो ही इसे प्रयोजित करें।

१७. कुमार वटी

बनावट—शुद्ध हिंगुल, शुद्ध बच्छनाग, छोटी इलायची दाने, जायफल, जावित्री, केसर, काली मिर्च, ये ७ औषधियां १-१ तोला तथा शुद्ध कुचिला ५ तोले लें। सबको मिला नागर-

१८. कुङ्कुम रस (केशरादि वटी)

बनावट—केशर, कालीमिर्च, चित्रकमूल, जायफल, जावित्री, शुद्धसिंगरफ, शुद्ध वच्छनाग और अभ्रकभस्म, ये ८ ओषधियां १-१ तोला, तथा एरण्ड तैल से शुद्ध किया हुआ कुचिला ४ तोले लेवें। पहले सिंगरफ, वच्छनाग और अभ्रक भस्म को मिला लें। फिर केशर मिला नागरबेल के पान के रस में ३ घण्टे खरल करें पश्चात् अन्य ओषधियों का कपड़ छान चूर्ण मिला कर खरल करें। सब एक जीव होजाने पर नागर-बेल के पान के रस में १२ घण्टे खरल करके १-१ रत्ती की गोलियां बना लेवें।

मात्रा—१ से २ गोली दिन में दो बार अदरख के रस और शहद के साथ।

उपयोग—यहवटी सूतिका के तीव्रज्वर, श्लैष्मिक सन्निपात और वात प्रकोप को दूर करने में अति हितावह है। यह वटी गर्भाशय में संगृहीत दोषको फेंकदेती है; और उससे उत्पन्न ज्वर को नष्ट करती है। यदि अफ़ारा, शोथ, अपचन पतले दस्त, हृदयकी क्षीणता, और वात विकार आदि उपद्रव हों, तो उनको भी दूर करती है।

१९ स्तन्य शोषक लेप।

विधि—कालीजीरी का चूर्ण १ तोले, एलुवा और डिका-माली, दोनों ६-६ माशे लें। सबको मिला जल में पीसकर लेप कर देने से स्तनमें दूध भरजाने से जो वेदना होती है वह दूर होजाती है। यह प्रयोग विशेषतः जिनका बालक गुजर गया हो, उनके लिये उपयोगी है। क्वचित् जीवित बालक की माता के लिये भी स्तनमें विकार हो जाने पर लेप लगाया जाता है। लेप लगाने पर रोग हो तब तक उस स्तन का दूध बालक को नहीं पिलाना चाहिये।

२० अबलासंजीवन अर्क।

विधि अशोकछाल, कालीसारिवा, मजीठ और दारुहल्दी, इन चारों को १-१ सेर लेकर जौकूट चूर्ण करें फिर ८ गुने जल में भिगोकर अर्क खिच लेवें।

मात्रा -१ से २ औंस दिनमें २-३ बार पिलावें।

उपयोग—यहअर्क स्त्रियों के विविधरोगों पर व्यवहृत होता है। अति रजःस्राव, रक्तप्रदर, प्रसव के पश्चात् गर्भाशय की शिथिलता गर्भाशय दाह-शोथ गर्भाशय विकारसे उत्पन्न चक्कर आना, घबराहट, हाथपैरों में दाह, कमरमें वेदना और निर्बलता को दूर करता है।

रक्तप्रदरमें बीजाशय को विकृति होनेपर रक्त थोड़ा थोड़ा बार बार गिरता है, कष्टका भी अनुभव होता है साथमें घबराहट भी होती है। किसी किसी को नेत्रमें निर्बलता आजाती है। उस पर चन्द्र प्रभावटी के साथ यह अर्क देने से रोग निवृत हो जाता है।

सूजाक होनेपर कभी कभी मूत्रनलिकामें से शोथ गर्भाशय और बीजाशय तक फैलजाता है। फिर पेशाब में जलन, श्वेतप्रदर और सांधों सांधों में वेदना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उस पर भी यह अर्क लाभ पहुँचाता है। साथ में मूत्रदाहान्तक चूर्ण देते रहना चाहिये।

२१ श्रीपर्णी तैल

विधि—गंभारी छाल का कल्क २० तोले, गंभारी छाल ८० तोले का १२८० तोले जलमें किया हुआ चतुर्थांश क्वाथ और तिलतैल ८० तोले मिलाकर मंदाग्नि पर पाचन करें। इस तरह इस तैल को गंभारी कल्क और क्वाथ में ३ बार पचन करें। तीसरी बार तैल छानने के पहले १। तोला मोम मिला लेवें। (भै० र० के आधारसे)

उपयोग—इसतैलमें पट्टी भिगोकर स्तन पर रक्खें। ऊपर नागरवेलका पान बांधे। इस तरह रोज रात्रिको तैल लगाते रहने से पतित और शिथिल स्तन कुछ दिनों में दृढ होजाते हैं।

२२ शिखर्यादिवर्ति

विधि—अपामार्ग मूल का चूर्ण, गेहूँ का आटा, कत्था और अफीम, ये ४ ओषधियां ३-३ माशे मिला जल के साथ मसलकर ४-४ रत्ती की वर्ति बना लेवें। (भै० र०)

उपयोग—इस वर्ति को घृत से स्निग्धकर योनि में चढाने से गर्भाशय में से होने वाले अत्यन्त रक्तस्रावका तत्काल रोध होजाता है।

मासिक धर्म का रक्त दिनों तक चलता रहने या अत्यन्त रक्तस्राव होने पर स्त्री अति शक्ति हीन होजाती है। ऐसेही प्रसव होने के पश्चात् रक्तस्राव बन्द न होता हो, तो प्रसूता का जीवन भयमें आजाता है। ऐसे प्रसङ्गों पर शुद्ध रक्त का स्राव होरहा हो, तो रोकने के लिये इस वर्त्तिका उपयोग किया जाता है। एवं उदर सेवनार्थ चन्द्रकला रस, तृणकान्तमणि पिष्टी, कामदूधा रस या अन्य ओषधि दी जाती है।

२३ रजःस्रावकयोग।

(१) कपास के मूल, अमलतासकी फलीका छिल्टा, काले तिल, गोखरू, इन्द्रायण का मूल, सोंफ का मूल, बांस का मूल, गाजर के बीज, मूली के बीज, ककड़ी का मग्ज़ और निर्गुण्डी, इन ११ ओषधियों को समभाग मिला कर जौ कूट चूर्ण करें।

मात्रा—२ से ४ तोले चूर्ण का अष्टावशेष क्वाथ करें। फिर छान २ तोले गुड़ मिला कर पिला देवें। यह क्वाथ रोज सुबह १ बार देवें।

उपयोग -- यह क्वाथ बन्द मासिकधर्म को खोल देता है। कितनीक युवा स्त्रियों को गर्भाशय में चर्बि बढ़ कर या अन्य किसी हेतु से मासिक धर्म रुक जाता है। फिर उसी हेतु से विविध प्रकारके उपद्रव मस्तिष्क में भारीपन, नेत्र का निर्बलता, नासिका से रक्त स्राव कमर में वेदना, शरीर फूलना और निर्बल हो जाना, एवं किसी को उदरशूल पैरों पर शोथ गर्भाशय पर दबाने से वेदना होना, क्षुधानाश आदि उपस्थित होते हैं। उस पर यह क्वाथ ५--७ दिन देने से मासिक धर्म फिर से आने लग जाता है। यह प्रयोग २० वर्ष से ४० वर्ष तक की आयुवाली बलवान स्त्रियों के लिये हैं। देह में रक्त कम हो जाने से मासिक धर्म चला गया हो, तो उन स्त्रियों को यह क्वाथ नहीं देना चाहिये। अथवा गर्भवती हो उसको भी न दें।

(२) छोटी कटेला के बीजों का चूर्ण ६ माशे निवाये जल के साथ रोज प्रातः काल देने से ३ दिन में मासिक धर्म खुल कर साफ आ जाता है।

(३) ५--५ तोले तिल का क्वाथ कर दिन में २ बार पिलाने, तथा सोंठ और भारंगमूल का चूर्ण ६--६ माशे गुड़ और घी के साथ देतेरहते से २-४ दिनमें मासिक धर्म आने लगता है।

२४ अर्गट मिश्रण।

(गर्भाशयसंकोचार्थ)

क्विनाईन सल्फ Qunine Sulph २॥ ग्रेन।
एसिड सल्फ डिल Acid Sulph bil २० बूंद।
टिंक्चर डिजिटेलिस Tincr Digitalis ५ बूंद।
एक्स ट्रेक्ट अर्गट लिक्विड Exr Ergot lip ३० बूंद।
एक्वा सिनामोम Apua Cinnamom ad १ औंस।
इन सबको मिला लेवें। यह एक समय की औषधि है।

इस तरह दिन में ३ बार औषधि पिलाते रहने से बाह्य अग्नि के सेवन की आवश्यकता नहीं रहती। इस औषध सेवन से गर्भाशय का संकोच हो जाता है; और सूतिका आदि रोग की उत्पत्ति भी नहीं होती। प्रसव होने पर कुछ दिनों तक इसका सेवन कराया जाता है।

२५ गर्भाशय शोथघ्नयोग।

(गर्भाशय मुख प्रदाह पर)

एक्स ट्रैक्ट वेलेडोना Exr Belladona	१ औंस।
ईक्थिअल Ichthyol	१ औंस।
ग्लिसरीन Glycerin	१ औंस।

इन तीनों को समभाग मिला फिर उसमें फोहा भिगो, जननेन्द्रिय में प्रवेश करा ४-५ घण्टे तक रक्खा रहने से बहुत जलस्राव होकर गर्भाशय मुख का दाह-शोथ शमन होजाता है।

५० बालरोग प्रकरण।

१. मुक्तादि वटी।

विधि—मोतीपिष्टी २ तोले, सुवर्ण के वर्क, चांदी के वर्क, कमल केशर, गुलाब केशर (पुष्पों के भीतर का जीरा), कहरुवा, जहर मोहरा खताई, संग यशब और गोरोचन, ये ८ औषधियां १-१ तोला नाग केशर २ तोले, केशर ६ माशे, कपूर ३ माशे और गोदन्ती भस्म १२॥। तोले लेवें। वर्क के अतिरिक्त औषधियों के चूर्ण का मिला फिर १-१ वर्क मिला कर मर्दन करें। पश्चात् गुलाब के अर्क में ८ दिन खरल करके १-१ रत्ती की गोलियां बना लेवें। (श्री पं यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्रा—१ से ४ गोली तक माता के या गौ के दूध में मिलाकर दिन में दो बार देवें।

इस चूर्ण के उपयोग से बालशोष रोग थोड़े ही दिनों में दूर हो जाता है। यदि बालक को पतले दस्त लगते हों, तो पहले सप्ताह में चावल धोवन के साथ, दूसरे सप्ताह में मट्ठे के नितरे हुए जल के साथ और तीसरे सप्ताह में शहद के साथ सेवन कराना चाहिए। ३ सप्ताह के पश्चात् भी जब तक रोग निवृत्ति न हो जाय, तब तक शहद, माता का दूध या जल के साथ देते रहें।

यदि बाल शोष के साथ ज्वर रहता हो, तो इस चूर्ण को शहद या जल के साथ १ मास तक देते रहने से बालक रोगमुक्त होकर पुष्ट बन जाता है। अस्थिमार्दव रोगमें मालती चूर्ण प्रवाल पिष्टी और मण्डूर भस्म मिलाकर सेवन करने से सत्वर रोग निवृत्ति हो जाती है।

जो स्त्री प्रसव काल में जीर्ण ज्वर से कृश होगई हो उसे दिन में दो बार मालती चूर्ण ३ से ६ रत्ती तथा गोदन्ती भस्म ३ से ६ रत्ती मिलाकर देते रहने से वह भी पुष्ट बन जाती है।

३. बालवटी

विधि - जीरा, छायामें सुखाया हुआ पोदीना, हरड़ बायविडङ्ग, लौंग, अतीस, सौंफ, जायफल, भांग, रूमीमस्तंगी, कछुएकी पीठ की भस्म, कोयल (गोकर्णी) के बीज, जहरमोहरा पिष्टी और केशर, ये १४ औषधियां समभाग ले कपड़छान चूर्ण कर घी कुंवार के रसमें १२ घण्टे खरल करके १-१ रत्ती की गोलियां बनावें। (श्री पं० यादवजी त्रिकमजी आचार्य)

मात्रा – १ से २ गोली प्रातः सायं दूध मिलाकर पिलावें।

उपयोग—इस गोलीका सेवन कराने से बालकों को दूध का पचन अच्छी तरह होता है, शान्त निद्रा आती है; रक्त आदि धातु बलवान बनती है और बालक का स्वास्थ्य बना रहता

उपयोग—यह गुटिका बालकों के लिये महौषध है। १-१ गोली दिन में ३ बार जल या दूध के साथ देने से बाल शोष अस्थिमार्दव, जीर्ण ज्वर कास, अतिसार आदि रोग दूर होते हैं। यह बड़े मनुष्यों की निर्बलता को दूर करने में भी हितावह है। बड़े मनुष्य को ४-४ रत्ती की मात्रा दिन में दो बार देनी चाहिये।

६. हिंगुलादि गुटिका।

विधि—शुद्धसिंगरफ, जायफल, जावित्री, गोरोचन, इन चारों को १-१ तोला और शुद्ध जमालगोटा ४ तोले मिलाकर नीबू के रस में ३ दिन खरल कर चौथाई रत्ती की गोलियां बनालेवें। (सि० भे० म०)

मात्रा—१ गोली जल के साथ दें। आवश्यकता पर ३-४ घण्टे पर पुनः एक गोली देवें।

उपयोग यह गुटिका एक दो दस्त कराकर बालकों के डब्बा रोग को दूर करती है। एवं शोष और जलोदर हो गया हो, तो उनको भी शमन कर देती है। यदि डब्बे की बिमारी में पहले ही पतले दस्त हो रहे हों अथवा विशेष कब्ज न हों तब इस औषध का प्रयोग न करें।

७. बाल यकृदरि लोह।

विधि—सहस्र पुटी अभ्रकभस्म, लोह भस्म, पारदभस्म, (रससिन्दूर) जम्भीरी नीबूके बीज,अतीस सरफों का की जड़, रक्त-चंदन और पाषाण भेद, इन ८ औषधियोंको समभाग मिला गिलोय के स्वरस के साथ १ दिन खरल कर २-२ चावल जितने वजन की गोलियां बना लेवें। (आ० नि०)

मात्रा—१से२ गोली तक रोगानुसार अनुपानके साथ देवें।

उपयोग—यह रसायन बालकों को घोर यकृद्वृद्धि, ज्वर, प्लीहावृद्धि, शोथ, विबंध, पाण्डुरोग, कास, मुखरोग और उदर रोगों को ऐसे नष्ट करता है; जैसे सूर्य अन्धकार को।

८. अम्बुशोषण चूर्ण (शीर्षाम्बुपर)

विधि:—रससिंदूर, यवक्षार, रेवतचीनी, छोटी इलायची के दाने, भारंगी, तेजपात, दालचीनी, छोटी इलायची के दाने, हरड़ और इन्द्रायण का मूल, इन सबको समभाग मिलाकर खरल कर लेवें। (भै० र०)

इस रसायन के साथ अभ्रक भस्म और ताम्रभस्म मिला देने पर गुण सत्वर दर्शाता है।

मात्रा—१ से २ रत्ती दूध के साथ दिन में दो बार देवें।

उपयोग—यह रसायन मस्तिष्क में संगृहीत जल के शोषणार्थ प्रयोजित होता है। कुछ दिनों तक शान्ति पूर्वक सेवन कराने पर रोग निवृत्त हो जाता है।

अधिक कब्ज रहती हो, तो इस चूर्ण के सेवन कराने पर भी उदरशुद्धि न होती हो, तो पीतमूल्यादि कषाय का सेवन कराते रहना चाहिये।

९. पीतमूल्यादि कषाय।

विधि—रेवन्दचीनी, शठी, काली निसोत, सफेद निसोत; आंवला हरड़, काली अनन्तमूल, धनिया, मुलहठी, कुटकी, नागरमोथा, हल्दी, दारुहल्दी, तेजपात, दालचीनी और छोटी इलायची के दाने, इन १९ औषधियों को मिला कर जौकूट चूर्ण करें। (भै० र०)

मात्रा—३-३ माशे चूर्ण का क्वाथ कर आध रत्ती यवक्षार मिलाकर पिलावें। दिन में १ या २ बार।

उपयोग—यह कषाय मस्तिष्क में जल की वृद्धि को कम कराता है। कितनेक बालकों को दांत आने के समय, या उदर में कृमि होने पर या वायु प्रकोप से मस्तिष्क में जल भरने लगता है। तब मस्तिष्क का बड़ा दीखना, जिह्वा मल से आवृत रहना, अति निद्रा आना, शरीर दुर्बल हो जाना, मल अति गाढा हो जाना, श्वास में दुर्गन्ध आना, फिर शिर में वेदना, मल-मूत्र में काला पन, त्वचा में रूक्षता और कालापन, निस्तेज मुख मण्डल, निद्रा में दाँतों का चबाना, लालनेत्र, ओष्ठ पर खुजली चलना, नासिका में आक्षेप होना, नेत्र की पुतली विषम भासना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। इस रोग पर मलमूत्र को विरेचन कराने वाली और रक्त प्रसादक ओषधि दी जाती है। ये गुण इस कषाय में होने से इसका सेवन कराने पर रक्त में से जल बहुत बाहर निकल जाता है तथा कीटाणु नष्ट हो जाते हैं। फिर मस्तिष्क में से रक्त के भीतर जलका आकर्षण हो जाने से शीर्षाम्बु रोग शमन हो जाता है। इस रोग में से ओषधि माता के पथ्य पालन सह दिनों तक बालक को देते रहना चाहिये। बालक को गरम वस्त्र से लपेट कर रखना चाहिये।

सुबह यह कषाय और शाम को अम्बुशोषण चूर्ण का सेवन कराते रहना विशेष लाभ दायक है।

१०—वचा हरिद्रादि कषाय।

विधि—वच, नागरमोथा, देवदारु, सोंठ, अतीस, हल्दी, दारुहल्दी, मुलहठी, पृश्नपर्णी, इन्द्रजौ, इन ओषधियों को समभाग मिलाकर जौ कूट कर चूर्ण करें।

मात्रा—३-३ माशे का क्वाथ बालक के लिये। माता के लिये २-२ तोले का क्वाथ। दिन में ३ बार।

उपयोग—यह कषाय बालक को देने से आमातिसार शमन होता है, तथा कफ मेद का शोषण होता है। साथ में बच्चे की माता को देने से स्तन्य (दूध) का शोधन होता है।

११. कासान्तक कषाय।

विधि—बनफसा के फूल गुलाब के फूल, उन्नाब, छोटी हरड़, कालीमुनक्का, अमलतास का गूदा और मुलहठी, इन सबको समभाग मिलाकर जौकूट चूर्ण करें।

उपयोग—६ माशे चूर्ण को ४ तोले जल में उबाल कर अर्धावशेष क्वाथ करें। फिर उसमें से आध आध तोला कषाय दिन में ४ बार देते रहने से बालकों की काली खांसी शमन हो जाती है। यदि इस कषाय के साथ काम दूधा रस १-१ रत्ती देते रहे, तो लाभ सत्वर होता है।

१२ बाल शोषहर तैल।

विधि—केंचुवा गीले २० तोले को ६० तोले तिलतैल में मिलाकर अतिमन्द अग्नि पर उबालें। तैल पक जानेपर कड़ाही को उतार कर तुरन्त छान लेवें।

उपयोग—यह तैल बालशोष (सूखारोग) पर अति लाभ दायक है। प्रति दिन रात्रि को इसकी सर्वाङ्ग में मालिश करते रहने और बालशोषहर गुटिका का सेवन कराते रहने से २१ दिन में सूखारोग निःसंदेह दूर होजाता है।

१३. महाभूतराव घृत।

विधि—तगर, मुलहठी, कांटेदार करञ्ज के पान, लाख, पटोल, लजालु, बच, पाढल, हींग, सरसों, बड़ीकटेली, हल्दी, दारुहल्दी, प्रियंगु, गम्भारी, बेर, सौंठ, कालीमिर्च, पीपल, हरड़ बहेड़ा, आंवला, चौधारा थूहर, देवदारू, वायविडङ्ग, जंगली-तुलसी, गिलोय, अंकोल, कडवी तोरई का फल, सुहिंजने की

विशेषतः रात्रि को किञ्चित् इपेकाक्युआना (या वच) के साथ उपयोग किया जाता है, और प्रातः काल मृदुविरेचन दिया जाता है।

कभी बालकों को मिट्टी के समान मल हो जाता है, उदर में आफरा या वमन और बेचैनी आदि लक्षण प्रातः काल भोजन के पहले प्रतीत होते हैं। इस अवस्थामें $\frac{1}{4}$-$\frac{1}{4}$ रत्ती चूर्ण दिन में ३ बार देने से रोग सत्वर दमन होजाता है।

इसके अतिरिक्त माता-पिता से प्राप्त फिरंग के उपद्रव रूप विकार में रक्त शोधनार्थ यह चूर्ण अति उपयोगी है। माता-पिता को उपदंश होनेपर जन्मने वाले शिशुको उपदंश विकार होता है, उसे जन्मजात, उपदंश कहते हैं। इस विकार में जन्म के समय कुछ भी लक्षण नहीं होते। २-३ सप्ताह होनेपर सारे-शरीरपर फाले होजाते हैं। पैरों के तल, हाथ, तालु, मूत्रेन्द्रिय, नासिका के भीतर और पीठ आदिपर पिड़िकाएं उत्पन्न होती हैं। एवं गुदा के चारों ओर भी लालरंग की पिड़िकाएं होजाती हैं। फिर इनमें से कुछ कुछ रक्त झरता रहता है। इस विकारकी चिकित्सा न होने पर गुदा के भीतर फैल जाता है। फिर गुद शूक-गुदा के बाहर पुष्प-पल्लव के सदृश सफेद पतली त्वचा को वृद्धि (condyloma) हो जाती है। नासिका में पिटिकाएं हो जाने से निःश्वास छोड़ने में कष्ट होता है। फिर रोग वृद्धि होने पर त्वचामें झुर्रियां पड़जाती है, और बालक वृद्ध के समान बनजाता है इस रोगपर यह खटिका चूर्ण अमृत के समान कार्य करता है। विशेषतः इस रोग पर खटिका चूर्ण आध रत्ती सोडाबाई कार्ब आध रत्ती और दूध की शक्कर (मिल्कसुगर) २ रत्ती मिलाकर ८ पुड़ी करें। इनमें से १-१ पुड़ी दिन में ३ बार देवें; तथा मालिश करने के लिए पारद मलहम को ७ गुने वेसिलिन में मिलाकर उपयोग में लेवें।

५१. विष प्रकरण

१. कृष्णविषहरण ।

बनावट—एसीड कार्बोलिक २॥ तोले, तृण तैल १ तोला, पीपरमेण्ट का फूल ५ तोले, कपूर १० तोले और मिट्टी का सफेद तैल (केरोसीनऑइल) २० तोले लेवें । पहले पीपरमेण्ट का फूल और कपूर को मिलावें । बाद में एसीडकार्बोलिक मिलावें । जल हो जाने पर मिट्टी का तैल और तृणतैल (रोसे का तैल-ऑइल जिरे नियम) मिला लेवें ।

(श्री० पं० कृष्णप्रसादजी त्रिवेदी B. A. आयुर्वेदाचार्य)

मात्रा—२ से ५ बूंद तक दिन में ३ समय २॥-२॥ तोले जल में मिलाकर पिलावें । अथवा रोगानुसार अनुपान के साथ देवें । मालिश के लिये दुगुना सरसों का तैल तथा व्रण को धोने और कुल्ले करने के लिये १६ गुना जल मिला लेवें ।

उपयोग—यह औषधि सर्प बिच्छू आदि के विविध प्रकार के विष तथा विसूचिका, प्लेग, सन्निपात आदि अनेक व्याधियों का नाश करती है । पशुओं के व्रण सींग में कृमि गिर कर टूट जाना, उन पर भी यह लाभ पहुँचाता है । इस का व्यवहार निम्नानुसार किया जाता है ।

अनुपान–विसूचिका में —आध आध घण्टे पर २-२ बूंद रोग काबू में आवे, तब तक बताशे में या शक्कर के साथ देते रहें ।

प्लेग में—५-५ बूंद शक्कर के साथ दिन में ३-४ समय देवें । गिल्टी पर अर्क का फोहा बांधे; और २-२ घण्टे पर बदलते रहें ।

वात प्रकोप जन्य प्रलापक सन्निपात और शीताङ्ग सन्निपात में —अदरख या तुलसी का रस मिलाकर दिन में ३-४ समय अथवा ३-३ घण्टे पर देते रहें ।

श्वासावरोध में—सरलता से कफ बाहर निकालने के लिये २-२ बूंद जल के साथ देवें।

कर्णस्राव में—गरम करके ठंडे किये हुए १ तोला तेल में ३ माशे यह तेल मिलाकर उसमें से २-२ बूंद रात्रि को कान में डालें।

नारुपर—अफीम और रीठे के कल्क के साथ मिलाकर लेप करें और ऊपर धतूरे का पत्ता अथवा कलिहारी का पत्ता बांधें।

अर्श के मस्से—तेल लगाते रहने पर कुछ दिनों में मस्से मुर्झा कर झड़ जाते हैं।

विसर्प और शीतपित्त पर—दुगुने सरसों के अर्क के साथ मिलाकर लगावें।

फोड़ा फुन्सियों पर—रूई में तर कर फोहा बांधें। तेल प्रयोग से त्वचा काली पड़ जाती है; वह मक्खन या घी लगाने से ठीक हो जाती है।

शिर दर्द—तेल की कुछ बूंदें रुमाल पर डालकर सुंघावें और चार गुने धोये घी में मिला मलहम बना कर कपाल पर लगावें

उदर शूल, परिणाम शूल पर—२ से ४ बूंद २॥ तोले जल में या सौंफ के अर्क में मिला कर एक एक घण्टे पर पिलाने से दर्द सत्वर शमन हो जाता है। आवश्यकता पर कुछ बूंद वेदना वाले भाग पर मल देवें।

श्वेत कुष्ठपर—तेल को बावची के कल्क या बावची के तैल में मिलाकर लेप करें।

पशुओं के व्रण—जिसमें कीड़े पड़े हों उस पर, तथा पशुओं के किसी भी चर्म रोग पर, समान नीलगिरी तैल या तार्पिन तैल मिला कर फोहा बांध देवें।

वृश्चिक ततैया आदि जन्तुओं के विष पर—तेल लगा कर १-२ मिनिट तक मलें। जो उतने से लाभ न हो तो मुर्गी की विष्ठा में मिलाकर लेप करें।

सर्प विष में— दंश स्थान को चीरकर दूषित रक्त निकाल दें। पश्चात् थोड़े थोड़े समय पर तेल का नया फोहा रखते जाँय; जितने भाग में विष चढ़ गया हो; उसके ऊपर बंधन कसकर बांध दें; फिर उतने भाग में नीलगिरी तैल और अर्क मिलाकर मालिश करें। अलावा २० बूंद १० तोले निवायें गोघृत में मिलाकर पिलावें। १५ मिनिट पश्चात् जितना पी सकें, उतना निवाया जल पिला देवें। जिससे तत्काल वमन और दस्त होकर आमाशय में से विष बाहर निकल जायगा।

दाद, ब्युचों खाज आदि पर--इसे लगाने पर थोड़े ही समय में फायदा हो जाता है। २-४ बार सरसों के तैल में मिलाकर लगाने पर रोग समूल नष्ट होजाता है।

खुजली आदि त्वचा रोग में—८ गुने सरसों के तैल में मिला कर मालिश करें।

नासा कृमिपर—२-४ बूंद नाक में डालने से समस्त कृमि गिर जाँयेंगें।

दांत और दाढ़ के दर्द में दर्द के स्थान पर अर्क का फोहा रक्खें; अथवा अर्क में १६ गुना जल मिला कर कुल्ले करें।

संधिस्थानों में पीड़ा, और वात जन्य शूल में—समान तार्पिन तैल मिलाकर मालिश करें। इस रीति से अन्य अनुपानों की योजना करें।

सूचना—यह तेल पित्त प्रधान रोगी, सगर्भा स्त्री तथा बालक को नहीं देना चाहिये; या सम्हाल पूर्वक कम मात्रा में दें।

५२. रसायन-वाजीकरण प्रकरण।

१. ब्राह्म रसायन

विधि—१००० नग (१२½ सेर) ताजे, मोटे और पक्के आँवलों को दूध की बाष्प से (एक भगोने में दूध भर कर उस पर तारकी चालनी रख उसमें आँवले भर कर मंद मंद आँच देकर) सिजोवें। आँवले नरम होने पर गुठली निकाल शेष गूदा को छाया में सुखा कर चूर्ण करें। उसे १००० आंवलोंके रसकी भावना दें। फिर शालपर्णी, पुनर्नवा, जीवन्ती, नागबला (गंगेरन), ब्राह्मी (जलनीम), मण्डूकपर्णी, शतावर, शंखपुष्पी, पिप्पली, बच, वायविडंग, कौंच के बीज, गिलोय, सफेद चन्दन, अगर, मुलहठी, महुएके फूल, नीलोफर, कमल, मालती, गुलाब और चमेली के फूल, इन सबको समभाग मिला कर कपड़छान चूर्ण करें। पश्चात् आंवलों के चूर्ण में शालपर्णी आदि के चूर्ण का आंठवां भाग मिला नागबला के रस की भवना देकर छाया में सुखालें। नागबला का रस ८। मण इस तरह पचन करावें। फिर चूर्ण कर आंवलों के वजन से दूने दूने घी और शहद मिला अमृत बान में भर मुख मुद्रा कर जमीन में गड्ढा खोदकर उसके भीतर राख डाल कर १५ दिन बाद निकाल लें। पश्चात् सुवर्ण भस्म, रौप्यभस्म, ताम्रभस्म, प्रवाल भस्म, और लोहभस्म समभाग लेकर आँवलों के वजन से आंठवां हिस्सा (वर्तमान समय में ३२वां हिस्सा) मिला लेवें।

मात्रा—१ से ४ तोले तक प्रातः काल सेवन करें। पचन हो जाने पर घी, दूध और भात का भोजन करें। अन्य सब वस्तुओं का त्याग करें। प्रारम्भ में १ तोला मात्रा लें। फिर धीरे धीरे ४ तोले या अधिक ५-७ तोले तक अग्निबल के अनुसार

१-१ इञ्च मोटा करें। फिर चारों ओर जंगली कण्डे रख कर अग्नि लगा देवें। उसे वायु न लगे, इसलिये ४-४ हाथ दूर पर कच्ची दीवार खड़ी कर लेवें। २-३ घण्टे अग्नि लगने पर आंवले अच्छी तरह सीज कर नरम हो जाते हैं। स्वांग शीतल होने पर आंवलों के भीतर से गुठलियां निकाल डाल और उसके समान वजन में घी और शहद मिला मसलकर अमृतवान में भर लेवें। (अ० हृ०)

मात्रा—५ से २० तोले तक। पंच कर्म से शुद्ध हो कुटी में रह कर जनवरी से मार्च के भीतर ३० दिन तक रोज सुबह एक वार सेवन करें। पहले मात्रा ५ तोले लें। फिर शरीर बल और अग्नि बल के अनुसार मात्रा बढ़ावें।

सूचना—यह रसायन पचन हो जाने पर गरम किया हुआ गो दुग्ध का सेवन करें। दूध दिन में ३ या अधिक वार लें। जल और भोजन सब निषेध है। शीतल जल का स्पर्श तक न करें।

उपयोग—इस रसायन के सेवन से शिथिल हुआ शरीर पुनः सुदृढ़ हो जाता है। शास्त्रकार लिखते हैं कि ११ वें दिन बाल-दांत और नख गिर जाते हैं। (परन्तु ऐसा अनुभवमें नहीं आया कुछ निर्बलता आजाती है) फिर थोड़े ही दिनों में शरीर कान्तिवान और हाथी के समान अतुल सामर्थ्यवान बन जाता है। धारणशक्ति, बल बुद्धि और ओज की वृद्धि होती है और मनुष्य पूर्णायु भोगता है।

यह प्रयोग श्री० पं०मदनमोहन मालवयजीके करनेके पश्चात् विशेष प्रकाश में आया है। यह सरल और निर्भय उपाय है।

रसायन सेवन काल में प्यास नहीं लगता। प्राण तत्व बहुत सबल बन जाता है। एक मास तक कुटी में रहे। बाहर न

निकलें, और भोजन का बिलकुल त्याग करें। इतने कठोर नियमों का पालन कर सके उनके लिये यह उत्तम प्रयोग है।

वक्तव्य—शास्त्र मर्यादा अनुसार रसायन सेवन करने के पहले स्नेहन और स्वेदन लेकर फिर हरड़, आंवले, सैंधानमक, सोंठ, वच, हल्दी पीपल, और वायविडङ्ग का चूर्ण तथा गुड़ मिला कर निवाये जलसे लेकर ५-७ दिन तक लेकर पचन संस्था को शुद्ध बना लेना चाहिये। मात्रा ४-६ माशे या अधिक सहन हो सके, उतनी ही लेनी चाहिये।

३. कामदेववटी

बनावट—कूठ, कायफल सैंधानमक; सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, मेथी, अजवायन अजमोद, अडूसा, मोचरस, बिदारीकंद मुसली जायफल चित्रकमूल, जागा, कालाजीरा, गजपीपल, मुनक्का, हरड़, कौंच, तालीसपत्र, दालचीनी, तेजपात, छोटी-इलायची के दाने, सांभर नमक, सैंधा नमक, काला नमक, बहेड़ा, काकड़ा सिंगी, केलेकाकंद, शतावर, असगंध, शठी, मुलहठी, चिरोंजी, गिलोय, जावित्री, लौंग, केशर, खस, गोखरू, सेमल का कद, आंवला, उड़द, पुनर्नवा की जड़, धतूरे के शुद्ध बीज, सिंघाड़ा, रूमीमस्तंगी, जटा मांसी, खरैंटी, गंगेरन, कंघी, सुगन्धवाला, भारंगी, गज पीपल, तिल, शीतलमिर्च, अकल-करा, दन्तीमूल, लोहबान सत्व, वच, काहू के बीज, और कमल गट्टा ये ६४ औषधियां १-१ तोले को कूट बारीक कपड़ छान चूर्ण करें। फिर १६ तोले भूनी भांग, ८ तोले अभ्रक भस्म, ४ तोले वङ्ग भस्म, २ तोले लोहभस्म और १ तोला रससिन्दूर तथा १६० तोले मिश्री मिलावें। पश्चात् घी और शहद गोलियां बन सके, उतना मिलाकर २-२ तोले के मोदक बनालें।

(वृ० यो० त०)

वक्तव्य—हम मिश्री, घी और शहद पहले नहीं मिलाते।

मात्रा—१ से २ माशे। २ माशे मिश्री, २ माशे शहद, और ४ माशे घी के साथ सुबह शाम लेवें और ऊपर दूध पीवें।

उपयोग—इस रसायन के सेवन से वृद्धावस्था और अन्य रोग जनित निर्बलता दूर होकर अग्नि अत्यन्त प्रदीप्त होती है। यह ओषधि वीर्यकारी, महामयहरी (बड़े बड़े रोगों को हरने वाली), क्षुधावर्धक, तेज, कान्ति और स्थूलता को बढ़ाने वाली तथा चिन्ता, चित्तविभ्रम आदि मानसिक विकार नाशक, मद-मत्त, तरुणकामिनियों की मदभंजक और मनो विनोदकारी है। यह चिकित्सक सोगनसिंह ने शत वधुओं से भोग करने वाले महाराजा हमीर के लिये निर्माण की थी, और लोकोपकारार्थ प्रकाशित की थी।

यह रसायन शीत काल में सेवन करने योग्य है। इसके सेवन से निर्बलता दूर होकर देह पुष्ट होती है। इस रसायन में भांग आती है। इस हेतु से पचन क्रिया बढ़ जाती है। जिनको भांग अनुकूल रहती हो, उनके लिये यह अति हितकारक है।

अजीर्ण, संग्रहणी, अर्श या अतिसार से पीड़ित, जिनको बार बार जुकाम होजाता हो वृद्ध, वात रोगी, मलेरिया ज्वर से निर्बल हुई देह वाले, आमवात या आमवात जनित निर्बल हृदय वाले क्षीणशुक्रवाले तथा भांग के व्यसनियों के लिये यह रसायन हितकारक है।

४. मदनकान्ता गुटिका।

बनावट—रस सिंदूर ४ तोले, सोना का वर्क १ तोला, चांदी के वर्क २ तोले, शुद्ध वच्छ नाग १ तोला, शुद्ध शिलाजीत, कपूर और मीठाकूठ २-२ तोले, अफीम १ तोला, जायफल, लौंग, पीपल, अकरकरा, जावित्री, केसर, अगर, दालचीनी, सफेद मूसली, कौंच के बीज, और गिलोय सत्व ये ११ ओषधियां

१-१ तोला तथा अम्बर और कस्तूरी ६-६ माशे लें। पहले रससिंदूर, सुवर्ण, रौप्य और वच्छनाग को मिलावें। फिर केशर कस्तूरी और अम्बर को छोड़ शेष काष्ठादि औषधियों को कूट कर मिलावें। शिलाजीत को धतूरे के रस में मिलाकर डालें; फिर १२ घण्टे धतूरे के रस में खरल करें। दूसरे दिन अदरख के रस में घोटें। तीसरे दिन केशर, कस्तूरी, और अम्बर मिला पके हुए नागर वेल के पान का रस मिला ६ घण्टे खरल कर १-१ रत्ती की गोलियां बना लेवें। (आ० नि० मा०)

मात्रा—१-१ गोली मिश्री मिले हुये दूध के साथ सेवन करें।

उपयोग—यह गुटिका, रसायन, अत्यन्त बल वीर्यवर्धक, कामोत्तेजक और कान्तिप्रद है। इस वटी को रोगानुसार अनुपान के साथ सेवन करने से जीर्णज्वर, प्रतिश्याय, जीर्णवातरोग, धनुर्वात, खंजवात, अर्धांगवात, हिस्टीरिया, श्वास, कास, क्षय, मूर्च्छा, अग्निमांद्य, पाण्डु, बहुमूत्र, मधुमेह आदि दूर होते हैं। स्व० वैद्यराज धीरजराम दलपतराम (सूरत) ने इस वटी का व्यवहार लगभग ५० वर्ष तक किया है। अति सफल प्रयोग है।

सूचना—इस औषध के सेवन काल में लालमिर्च और खटाई नहीं खाना चाहिये; और ब्रह्मचर्य का आग्रह पूर्वक पालन करना चाहिये।

५. निर्विष्यादिवटी (हब्बे जदवार)

बनावट—जदवार खताई (निर्विषी—Delphinium denudatum) जहर मोहरा और चांदीके वर्क, तीनों समभाग मिला गुलाब, केवड़े और वेद मुश्क के अर्क में एक दिन खरल कर २-२ रत्ती की गोलियां बना लेवें।

मात्रा—१ से २ गोली दिन में दो बार खमीरे गावजवां

चन्दनादि अर्क या गो दुग्ध के साथ देवें।

उपयोग—यह औषध ओजवर्द्धक है। हृदय की धड़कन, मस्तिष्क की उष्णता और शारीरिक निर्बलता को दूर करता है। शारीरिक निर्बलता, चक्कर आना, हृदय की धड़कन बार बार बढ़ जाना, मुखमण्डल निस्तेज होजाना, स्फूर्ति का अभाव, अग्निमान्ध आदि विकारों को दूर कर शरीर को सबल बनाता है।

वृक्क और मूत्राशय की शिथिलता के हेतु से मूत्र शुद्धि नहीं होती और रक्त में विष वृद्धि होती रहती है। फिर हृदय की धड़कन और मस्तिष्क में उष्णता उत्पन्न होती है; तब यह औषधि विशेष उपकारक है।

विषम ज्वर आदि रोग या अधिक स्त्री समागम अथवा अपथ्य सेवन से जब शुक्र में उष्णता और पतलापन आजाता है; तब शुक्र को शीतल और गाढा बनाने के लिये इस वटी का उपयोग होता है। यदि मूत्र संस्था में विकृति सुजाक के लीन विष से हुई हो, तो अनुपान रूप से सारिवासव या चन्दनासव देना चाहिये।

तमाखू का धूम्रपान अत्यधिक करते रहने से कितनेक व्यक्तियों को रक्त में विषोत्पत्ति होकर वृक्ककार्य में (मूत्र संशोधन कार्य में) प्रतिबन्ध होता है। फिर मस्तिष्क में उष्णता, चक्कर आना, बेचैनी, अधिक प्रस्वेद आना, निद्राह्रास और हृदय में शिथिलता आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उस पर यह वटी चन्दनादि अर्क के साथ सेवन करायी जाता है।

६. ज्ञानोदयरस।

प्रथम विधि—गांजा १६ तोले, शुद्ध गंधक ८ तोले, जायफल २ तोले, चन्द्रोदय १ तोला, कपूर और केसर ६-६ माशे लें। सबको मिला शहद (लगभग १०' तोले) के साथ खरल

कर २-२ रत्ती की गोलियां बांध कर अकरकरे के चूर्ण में डालते जांय।

सूचना—गांजा में से शाखा और बीजों को निकाल केवल पत्ते लें। फिर १ घण्टे जल में भिगो मलकर जल को निकाल डालें। पश्चात् वार-बार नया जल मिलाकर धोवें। जब तक हरा जल निकले, तब तक नये नये जल के साथ मलकर जल को निकालते रहें। शुद्ध होने पर छाया में सुखा लेवें।

मात्रा—२-२ गोली दिन में दो बार मिश्री मिले हुए दूध के साथ।

उपयोग—यह ज्ञानोदय रस शक्ति वर्द्धक, क्षुधावर्द्धक आनन्द दायक, और शान्ति कारक है। मलेरिया में निर्बल बने हुए को तथा निर्बल पचनशक्ति और निर्बलग्रहणी वालों को यह रसायन शक्तिवर्द्धक रूप से दिया जाता है। गांजा पीने वालों को अधिक हानि पहुँचने पर निद्रा नहीं आती और चित्त भ्रमित सा रहता है, उनको इस रसायन के सेवन से निद्रा आने लगती है और मन शान्त होता है। जीर्ण सुजाक के रोगी को निर्बलता दूर करने, मूत्र मार्ग की वेदना शमन करने और वाजीकर शक्ति देने के लिये यह रसायन अति हितकारक है। एवं कितनीक स्त्रियों का गर्भाशय शिथिल हो जाने से मासिक धर्म शुद्धि न होती हो या गर्भ धारण न होता हो, तो गर्भाशय सबल बनाने के लिये इसका उपयोग किया जाता है।

द्वितीयविधि—धोयी हुई भांग १६ तोले, शुद्ध गन्धक ४ तोले, जायफल २ तोले, और रससिंदूर १ तोला मिलाकर मर्दन करें। फिर मिश्री २३ तोले मिला खरल कर बोतल में भर देवें।

मात्रा—१-१ माशा दिन में ३ बार जल के साथ।

अकलकरा ये ७ औषधियां १-१ तोला तथा सत्व कुचिला (स्ट्रिक्निया) १ माशा, कस्तूरी और अम्बर ६-६ माशे लेवें। पहले चन्द्रोदय और कपूर को मिलावें। फिर केसर, कस्तूरी और अम्बर मिला कर नागर वेल के पान के रस में ३ घण्टे खरल करें। फिर भस्म और कुचिले का सत्व मिलाकर ३ घण्टे खरल करें। पश्चात् शेष औषधियों का कपड़ छान चूर्ण मिला नागर वेल के पान के रस में ६ घण्ट मर्दन कर आध आध रत्ती की गोलियां बनावें और सोने के वर्क पर डालते जाँय।

मात्रा—१ से २ गोली आध छटांक मलाई में रख कर प्रातः काल (या सायंकाल को) सेवन करें। ऊपर से दूध पावें।

उपयोग —यह रसायन अत्यन्त वाजीकर है। यह नपुंसकता और निर्बलता को नष्ट कर थोड़े ही दिनों में शरीर को सुदृढ़ और कामदेव के समान तेजस्वी बना देता है।

सूचना—इस औषध के सेवन काल में लाल मिर्च, तैल, गुड़, खटाई, अधिक नमक और प्रकृति विरुद्ध पदार्थों का उपयोग निषिद्ध है। क्रोध और चिन्ता का त्याग करें, धूम्रपान और सूर्य के ताप का सेवन अधिक न करें। अधिक परिश्रम भी नहीं करना चाहिये; तथा दूध, घी का उपयोग अधिक करना चाहिये।

यह रसायन अत्यन्त कामोत्तेजक है। अतः अधिक आवश्यकता हो तब थोड़े दिनों तक सेवन करके बन्द कर देना चाहिये।

दूसरी विधि—द्विगुण गन्धक जारित रस सिंदूर और कपूर ४-४ तोले, जायफल, समुद्र शोष, लौंग और अकर करा १-१ तोला, केशर ६ माशे और कस्तूरी ३ माशे लें। सबको मिला ६ घण्टे नागर वेल के पान के रस में खरल करके १-१ रत्ती की गोलियां बना लेवें।

मात्रा—१ से २ गोली नागर बेल के पान में दिन में २ बार खाकर ऊपर मिश्री मिला दूध पीवें।

उपयोग—यह रसायन पौष्टिक और कामोत्तेजक है। इसके सेवन से शरीर सबल होता है। वृद्धों को भी वाजीकरण गुण दर्शाता है।

९. नवजीवन रस।

विधि—रससिन्दूर, अभ्रकभस्म, लोहभस्म, शुद्ध कुचिला और त्रिकटु (सोंठ, काली मिर्च और पीपल), सब समभाग मिला अदरख के रस में १२ घण्टे खरल करके आध आध रत्ती की गोलियां बना लेवें। (पं० मुरारीलाल जी शर्मा वैद्य शास्त्री)

मात्रा—१ से २ गोली नागर बेल के पान में, मधुकादि आसव या गोदुग्ध के साथ दिन में दो बार

उपयोग—यह नवजीवन रस रोग से क्षीण हुए को नव-जीवन देने वाला है। यह दीपन, पाचन कीटाणु नाशक, बल कारक, रक्त पौष्टिक, वातनाड़ी पोषक, कामोत्तेजक और वात हर है।

विषमज्वर (मलेरिया) कुछ दिनों तक रह जाने पर देह कृश और निर्बल बन जाती है; तथा रक्त की न्यूनता, मांसकी शिथिलता, अग्निमान्द्य, मलावरोध, अरुचि, उत्साह का अभाव, उदर में वायु संगृहीत होना, मलावरोध होना, अन्न में से योग्य रस-रक्त न बनने से रोगी कृश और निस्तेज बन जाता है। उसे नवजीवन रस देने से आमाशय का रस स्राव और यकृत्पित्त का स्राव, दोनों बढ़ जाते हैं; अन्त्र की पुरः सरण क्रिया तेज होती है; उदर वायु दूर होता है; मलशुद्धि होने लगती है; तथा पचन क्रिया सुधर जाती है फिर रस-रक्तादि धातु योग्य बनकर शरीर सुदृढ़ बन जाता है।

कितनेक अपचन रोगियों के मंद ज्वर बना रहता है या रोज रात्रि को कुछ उत्ताप बढ़ जाता है। उदर में भारीपन और मद मंद वेदना होता है. शरीर निस्तेज और उत्साहहीन हो जाता है, दिन में ३--४ बार थोड़ा थोड़ा दस्त होता है फिर भी योग्य उदर शुद्धि नहीं होती। पेशाब में धातु (कफ) जाता है। शुक्र धातु पतली हो जाती है। द्विदलधान्य (दाल) अधिक खाने में आवे तो आध्मान आ जाता है। घृत वाले पदार्थ अधिक खानें पर अजीर्ण बढ़ जाता है और रात्रि को स्वप्न दोष हो जाता है। एवं गुड़-शक्कर वाले पदार्थ खाने से ज्वर कुछ बढ़ जाता है। ऐसे रोगियों को नवजीवन रस देने से अपचन, मलावरोध' और मंद ज्वर आदि विकार दूर होकर शरार सबल और तेजस्वी बन जाता है।

वात वाहिनियों की विकृति में गतिभ्रंश और ज्ञानभ्रंश, दो प्रकार होते हैं। यदि इनमें ज्ञान वाहिनियां ही नष्ट हो गई हों, तो इस रसायन का उपयोग नहीं होता। किन्तु गति तन्तु (चेष्टा वाहिनियों) के कार्य अव्यवस्थित हो जाने से कम्प होता हो अथवा वात नाड़ियों की निर्बलता से मांस पेशियां सूखती हो, तो उन दोनों प्रकार के वात रोगों पर यह रसायन लाभ पहुँचा देता है।

कितने क बालकों का मूत्राशय पर योग्य काबू न होने से रात्रि को निद्रा में पेशाब कर देते हैं। उनको नवजीवन रस थोड़ी मात्रा में दूध के साथ देने से विकार दूर हो जाता है।

हस्त मैथुन से आयी हुई नपुंसकता, शुक्र का पतलापन, स्वप्न दोष आदि विकारों पर यह रसायन कस्तूरी ½ रत्ती मिले हुए नागरवेल के पान में दिया जाता है। इसके सेवन से शुक्राशय, मूत्राशय और मूत्रन्द्रिय की शिथिलता दूर होती है।

कितनेक निर्बल मनुष्यों को हृदय गति अति मंद हो जाती

है। फिर हृदय स्पंदन योग्य नहीं होता, नाड़ी मंद बलयुक्त किन्तु जल्द चलने लगती है, या बीच में टूटती है, हाथ पैर की अंगुलियां और कान की पाली (अर्थात् कान) शीतल रहती है, थोड़ा श्रम करने पर श्वास भर जाता है; और प्रस्वेद आ जाता है। ऐसे रोगियों को नवजीवन रस नवजीवन प्रदान करता है।

यदि हृदय के पर्दे की जीर्ण विकृति से हृदय में निर्बलता आई हो, तो उसमें हृदय फूलता है। फिर पैरों पर शोथ आता है। दिन में शोथ बढ़ता है और रात्रि को कम होजाता है। प्रातःकाल निद्रा में से उठने पर शोथ कम भासता है। यकृत् की वृद्धि होती है। उदर्याकला में कुछ जल संगृहीत होता है। पेशाब लाल रंग का और कम उतरता है। जिस से विष वृद्धि होकर योग्य निद्रा नहीं मिलती, अन्नका पचन सम्यक् नहीं होता। उदर में वायु भर जाती है; मलशुद्धि नहीं होती। सोने पर हृदय में घबराहट होती है। रात्रि और दिन बैठे ही रहना पड़ता है। ऐसे रोगी को नवजीवन रस दिया जाता है। यदि जलशोथ या जलोदर उत्पन्न हुआ हो, तो रोगी को दूध पर रखना पड़ता है; और अनुपान रूप से पुनर्नवादि क्वाथ या त्रिकण्टकादि क्षीर (चिकित्सा—तत्वप्रदीप प्रथम खण्ड में लिखा हुआ) के साथ दिया जाता है। यदि कफ की अधिकता हो, तो कपूर आध रत्ती मिले हुए नागरबेल के पान में दिया जाता है।

श्वास क्रिया या फुफ्फुस के वायु कोषों में शोथ आ जाने से कफ वृद्धि हुई हो श्वास क्रिया योग्य न होती हो, घबराहट होती हो, तो उसपर नवजीवन रस देने से थोड़े ही दिनों में फुफ्फुस संस्था सबल बन जाती है।

१० काम चूडामणि रस।

विधि—मुक्तापिष्टी, सुवर्णमाक्षिक भस्म, सुवर्ण भस्म, कर्पूर भीम सेनी, जावित्री, जायफल, लौंग, वङ्गभस्म और

रजतभस्म; ये ९ औषधियाँ २-२ तोले तथा चातुर्जात (दालचीनी, तेजपात, छोटी इलायची के दाने और असली नाग केसर) का चूर्ण ९ तोले लें। सबको मिला शत वर के रस में ७ दिन तक खरल करके १-१ रत्ती की गोलियां बना लेवें।

(र० यो० सा०)

मात्रा--१ से २ गोली प्रातः सायं दिन में २ बार धारोष्ण दूध या मिश्री मिले दूध या रोगानुसार अनुपान के साथ देवें।

उपयोग--कामचूड़ामणि शुक्र हीन, गतध्वज और ८०वर्ष के वृद्ध को भी युवा के समान बल प्रदान करता है। असाध्यसे असाध्य ध्वज भंग को भी एक सप्ताह में लाभ पहुँचाता है। इसके अतिरिक्त प्रमेह, मूत्ररोग, अग्निमान्द्य, शोथ, रक्त दोष और स्त्रियों के समस्त रोगों को दूर करता है।

यह रसायन शीतवीर्य, पौष्टिक और कामोत्तेजक है। जिन मनुष्यों ने अधिक स्त्री समागम से या अन्य रीति से अपने शुक्र को नष्ट कर दिया हो, उनके लिये यह अमृत रूप लाभदायक है। पित्त प्रधान प्रकृति वाले, गांजा और शराब के व्यसनी तथा अति मिर्च आदि मसाले खाने वालों को इसका सेवन वीर्यवर्द्धक रूप से कराया जाता है। शास्त्र में ध्वजभंग नाशक अनेक औषधियाँ लिखी हैं। इनमें से अनेकों में अफीम मिली हुई है। जो सत्वर लाभ पहुँचाती है। स्तम्भन शक्ति को बढ़ाती है, तथा मन को आनन्दित बनाती है। किन्तु उनका सेवन दीर्घकाल तक होनेपर या मात्रा अधिक लेने पर परिणाम में हानि पहुंचाती है। इन अफीम प्रधान औषधियों के अतिरिक्त पूर्ण चन्द्रोदय, पुष्प धन्वा आदि औषधियाँ अति उग्र हैं। वे कफ-मेद प्रकृति वालों को अधिक अनुकूल रहती हैं। उनके सेवन से शुक्र में उष्णता उत्पन्न होती है। तथा स्त्रीसमागम की इच्छा पहले की अपेक्षा बलवत्तर बनती जाती

है। अतः इन ओषधियों को भी स्वस्थ कामी मनुष्यों के लिये सच्ची लाभदायक नहीं कहेंगे।

यह कामचूड़ामणि और वसंत कुसुमाकर, आदि रसायन उपरोक्त दोनों प्रकारोंसे भिन्न प्रकार की ओषधियां हैं। वसन्त कुसुमाकर में भी रससिन्दूर, अभ्रक भस्म और कस्तूरी आदि उत्तेजक ओषधियों का योग है। किन्तु कामचूड़ामणि में सब ओषधियाँ शामक हैं, केवल कर्पूर एक ही उत्तेजक ओषध मिलाई है। पर यह वीर्य को गाढ़ा और शीतल बनाता है, शुक्राशय को वातवाहिनियों को दृढ़ बनाता है, तथा मस्तिष्कस्थ केन्द्र पर शामक असर पहुँचाकर क्षण क्षण में उत्पन्न होने वाली मानसिक उत्तेजना को शान्त करता है। इस हेतु से क्षीण वीर्य तथा उष्ण और पतले वीर्य वाले मनुष्यों के लिये यह अति हितकर है।

वर्त्तमान में पाश्चात्य शिक्षा-दीक्षा के प्रभाव से कामोत्तेजक ओषधियों का प्रचार अत्यधिक बढ गया है। शिक्षण दोष और संग दोष से नवयुवकों के ब्रह्मचर्य का भंग विशेषत: छोटी आयु में वीर्य के परिपाक काल से पहले ही हो जाता है। अति स्त्री समागम करने में अपनी बहादुरी मान लेते हैं। किन्तु थोड़ेही समयमें शक्ति का ह्रास हो जाता है या भ्रमवश ऐसी भावना हो जाती है कि मैं नपुंसक हूँ, स्त्री समागम के लिये अयोग्य हो गया हूँ। फिर लज्जा वश किसी सुयोग्य हित चिन्तक वैद्य की सलाह नहीं लेता; और वर्तमान पत्रों पर से निर्णय कर अति उत्तेजक, कामोत्तेजक ओषधियाँ मंगवाकर सेवन करने लगता है। परिणाम में वीर्य अति उष्ण और पतला बन जाता है, मन और देह पर अधिकार नहीं रहता। किसी छोटी बालिका के स्पर्श से या बहन बेटी आदि को देखते ही (बुद्धि अनुचित मानती है फिर भी) मन में उत्तेजना आकर तत्काल

शुक्रपात हो जाता है। किसी के पैरों के घुंघरु की आवाज आई कि तुरन्त उत्तेजना उत्पन्न होती है। एक दिन में ५-७ या अधिक बार ऐसा होता रहता है। ऐसे रोगियों को वसंत कुसुमाकर देने पर भी उत्तेजना आकर हानि पहुँचती है, अतः उनको कामचूड़ामणि का सेवन धैर्यपूर्वक कराया जाता है।

स्त्री समागम के अति योग के हेतु से अनेक नवयुवकों को मुखमण्डल निस्तेज या उदासीन हो जाते हैं। नेत्र गढे में घुस गये हों, ऐसे भासते हैं. किसी भी कार्य के लिये उत्साह नहीं रहता। देह पाण्डु वर्ण की शुष्क और कृश, चक्कर आना, हृदय स्पन्दन की वृद्धि अग्निमान्द्य, मलावरोध, आलस्य, निद्रा की वृद्धि आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उनको यह रसायन धारोष्ण दूध के साथ देने से सत्वर लाभ पहुँचता है।

हस्तमैथुन आदि कृत्रिम उपायों का आश्रय दीर्घकाल तक लेने से कितनेक युवकों को नपुंसकता आजाती है। फिर उदासीनता, निस्तेज वदन, स्मरण शक्ति का ह्रास, कभी उन्माद जैसी अवस्था उपस्थित होना, किसी किसी को वात-प्रकोप के झटके आना, किसी को शुक्र नाश जनित क्षय रोग की संप्राप्ति होना आदि लक्षण या प्रकार उत्पन्न होते हैं।

उन रोगियों को काम चूड़ामणि, अमृतप्राश, च्यवन प्राशावलेह या शतावर्यादि घृत के साथ दिया जाता है; तथा आवश्यकता अनुसार स्थानिक प्रयोग रूप से श्री गोपाल तैल या तिला आदि का उपयोग कराया जाता है।

शराब, गांजा, या सिगरेट आदि धूम्रपान के अति योग से मस्तिष्क में उष्णता, नेत्र में लाली, दृष्टिमान्द्य, वीर्य में पतलापन, स्वप्न दोष स्मरणशक्ति का नाश, किसी किसी को बात बात में क्रोध की उत्पत्ति होना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। उनको कामचूड़ामणि रस अमृतप्राश के साथ देना

चाहिये। तथा चन्दन, कमल, गुलाब और केवड़ा का अर्क पिलाते रहना चाहिये।

अति व्यवायी युवकों को प्राय: शुक्र क्षय होजाता है। फिर भी स्त्री समागम से उपराम नहीं होते। उनको सहवास की इच्छा प्रवल होती जाती है। स्त्री समागम करने पर वीर्यस्राव नहीं होता; अधिक परिश्रम होने पर वीर्य के स्थान पर गरम गरम रक्त थोड़े परिमाण में निकलता है। उस समय मूत्र प्रसेक नलिका में जलन होती है। यह शुक्रक्षीणकी पराकाष्ठा के लक्षण हैं। यह विकार विशेषत: शराबी मनुष्यों को होता है। वे सर्वदा शराब के नशे में मस्त रहते हैं। कुछ वर्षों के पश्चात् क्षयरोगकी संप्राप्ति होकर वे अकाल मृत्यु के मुँह में चले जाते हैं। ऐसे रोगियों को क्षयरोग की प्राप्ति होने के पहले या क्षय की प्रथमावस्था में कामचूड़ामणि का सेवन कराया जाय, तो वे बच जाते हैं।

शुक्र धातु निर्वल हो जाने पर पचन शक्ति मंद हो जाती है। ऐसी अवस्था में घृत या दुर्जर पदार्थों का अधिक सेवन करने या भोजन अति परिमाण में करते रहने से अपचन, कोष्ठ-बद्धता और प्रमेह रोग की उत्पत्ति होती है। फिर पेशाब के साथ धातु (बहुधा बस्ति स्थान में से गाढे श्लेष्म) का स्राव होता रहता है किसी को पेशाब के प्रारम्भ में तथा किसी को पेशाब के साथ साथ विशेष कर अन्त में निकलता रहता है। इस प्रमेह पर कामचूड़मणि का सेवन गिलोय, गोखरु और आंवले के चूर्ण (या क्वाथ) तथा मिश्री के साथ कराया जाता है।

युवावस्था में अति सहवास होने पर वृद्धावस्था में मूत्र संस्था शिथिल हो जाती है। वृक्क निर्वल होने से मूत्रोत्पत्ति योग्य नहीं होती। बस्ति निर्वल बनने से पेशाब धारण नहीं

होता। फिर बराबर पेशाब करना पड़ता है, किसी किसीको पौरुष ग्रन्थि बढ़ जाने के हेतु से भी थोड़ा थोड़ा पेशाब आता रहता है। तथा वात प्रधान लक्षण प्रकाशित होते हैं। उस पर कामचूड़ामणि रस शतावर्यादि के साथ सेवन कराया जाता है।

यह रसायन स्त्रियों के लिये भी अति हितकारक है जिस तरह पुरुषों के शुक्र को शुद्ध शीतल, सबल और गाढा बनाता है। उस तरह स्त्रियों के रज को भी शुद्ध और सबल बनाता है। पुरुषों के शुक्राशय और शुक्र के समान स्त्रियों के बीजाशय और रज पर भी लाभ पहुँचाता है।

कितनीक युवतियों को युवावस्था आजाने पर भी देह कृश होने से बीजाशय का योग्य विकास नहीं होता फिर मासिक धर्म नहीं आता। उनको यदि उष्ण उत्तेजक औषध देकर मासिक धर्म का प्रारम्भ कराया जाय तो कुछ वर्षों के पश्चात् युवावस्था में ही वृद्ध बन जाती है। इसके विपरीत काम चूड़ामणिरस + प्रवाल पिष्टी + अमृतासत्व + सितोपलादि चूर्ण के मिश्रण का सेवन कराया जाय तो देह सबल बनती है, तथा बीजाशय गर्भाशय स्तन आदि अवयवों का योग्य विकास होता है।

सुजाक आदि विकार हो जाने पर व्याधि विष रक्त आदि धातुओं में लीन रहता है जिससे रक्त अशुद्ध रहता है; वीर्य पतला और उष्ण रहता है; तथा रोग निरोधक शक्ति निर्बल रहती है। फिर बार बार विविध प्रकार के विकार ज्वर, अग्निमान्द्य, व्रण विद्रधि दृष्टिमान्द्य, शोथ, बहुमूत्र आदि उपस्थित होते हैं। उनको कामचूड़ामणि अमृता सत्व, मिश्री और दूध के साथ या सारिवादि अरिष्ट के साथ ६-८ मास तक सेवन कराया जाय तो रक्त प्रसादन होकर रोग शमन हो जाते हैं। एवं फिरंग और पूयमेह

हो जाने के पश्चात् पुरुषों के अण्डकोष या स्त्रियों के बीजाशय के समीप में रही हुई वातवाहिनियों और कैशिकाएं संकुचित होकर नपुंसकता आई हो तो वह भी इसके सेवन से दूर हो जाती है।

११ रति वल्लभ चूर्ण।

बनावट—सकाकुल मिश्री ८ तोले, बहमन सफेद, बहमन लाल, सालममिश्री, सफेद मुसली, काली मूसली और गोखरू, ये ६ ओषधियां ४-४ तोले, छोटी इलायची के दाने, गिलोयसत्व, दालचीनी और गाँवजबां के फूल ये ४ ओषधियां २-२ तोले लें। सबको मिला कूटकर कपड़ छान चूर्ण करें।

मात्रा—४से ६ माशे तक समान मिश्री मिलाकर मिश्री मिले दूध के साथ लें।

उपयोग—यह चूर्ण उष्ण प्रकृति वालों को हानिकारक है। इसके सेवन से कामोत्तेजना होती है तथा शीघ्रपतन, मूत्र में वीर्य जाना, वीर्य का पतला पन आदि दोषों को दूर कर वीर्य को गाढा और सबल बनाता है; शरीर को पुष्ट, तेजस्वी और सुदृढ तथा मन को उत्साही बनाता है।

१२. अश्वगंधादि चूर्ण।

प्रथमविधि—असगंध, विधारा, आंवला, गोखरु, गिलोय, इन ५ ओषधियों को सम भाग लेकर कूट कपड़ छान चूर्ण कर शतावरी के स्वरस की भावना देकर सुखालें। समानभाग मिश्री मिला कर रखलें। (राज वैद्य पं० रामचंद्रजी)

मात्रा—आध से १ तोला शहद और घृत में मिलाकर चाटें। ऊपर से गोदुग्ध पीवें।

उपयोग—यह ओषधि रसायन और वाजीकर हैं। एक वर्ष पर्यन्त इसका सेवन करते रहने से शुक्रक्षय, वीर्य दोष,

प्रमेह आदि वीर्य विकार एवं तज्जन्य उपद्रव (असमयपर वृद्धावस्था के लक्षण, स्मरण शक्ति का ह्रास, नेत्र ज्योति की निर्बलता, शिर में चक्कर आना व दर्द होना) आदि रोग मिटते हैं।

यह प्रयोग वाग्भटोक्त है। इसको राज वैद्य पं० रामचंद्रजी ने अनेक बार प्रयोग में लिया है।

१३. विदार्यादि चूर्ण।

विधि—विदारी कंद, सफेद मुसली, सालमपंजा, असगन्ध, बड़े गोखरू, अकरकरा, ये ६ औषधियां समभाग मिला कूट कर कपड़ छन चूर्ण करें। (पं० यादव जी त्रिकमजी आचार्य)

मात्रा—३-३ माशे प्रातः काल को और रात्रि को गरम गोदुग्ध के साथ।

उपयोग—यह चूर्ण वीर्य वर्द्धक और कामोत्तेजक है। स्तंभन शक्ति में भी वृद्धि होती है वात कफ प्रकृति और मेदवाले मनुष्यों के लिये यह हितकारक है।

१४. मुसलीपाक।

बनावट—सफेद मुसली के १ सेर चूर्ण को दूध में मिलाकर मन्दाग्नि से पाक करें। मावा हो जाने पर १ सेर घी मिलाकर अच्छी तरह भून लेवें। पश्चात् सोंठ, कालीमिर्च पीपल, दालचीनी, तेजपात, नाग केशर, हाऊबेर, सौंफ, शतावर जीरा, अजवायन, चित्रकमूल गज पीपल, अजमोद, पीपलामूल, आंवला, कचूर गोखरू, धनियां, असगंध, छोटी हरड़, नागर मोथा, समुद्रशोष, लौंग, जायफल, जावित्री, नाग केसर, तालमखाना, खरैंटी, कंघी, गंगेरन, कौंच के बीज, मुलहठी, मोचरस, सिंघाड़े, कमलगट्टा (जिव्हो निकाले हुए), वंशलोचन, शीतल मिर्च, अकल करा, नेत्रवाला और सफेद चंदन, ये ४१ औषधियां ५-५ तोले लेकर कपड़ छान चूर्ण करें। छिलके निकाले हुए

तिल ४० तोले, रस सिंदूर २॥ तोले, अभ्रक भस्म ५ तोले, लोह भस्म ५ तोले मिलावें। फिर सब पाक के वजन से दूनी शक्कर की चासनी कर पाक मिला २-२ तोले के मोदक बना लेवें।

सूचना—मूल ग्रन्थ में घी में भूनने का नहीं लिखा बिना भूने पाक अधिक काल नहीं रह सकेगा ऐसा मान कर हमने भूनने का पाठ बढ़ाया है।

उपयोग—यह पाक उष्ण वीर्य है। शीत काल में सेवन करने योग्य है। १-१ मोदक रोज प्रातः काल खाकर ऊपर दूध पीते रहने से मंदाग्नि, गुल्म, प्रमेह, अर्श, श्वास, कास, व्रण. क्षय, कामला, पाण्डु, शुक्रक्षीणता, नेत्र की निर्बलता, वातरोग, पित्तरोग, कफ रोग, नपुंसकता, प्रदर, शुक्रदोष, उरः क्षत, रजोदोष, मूत्रकृच्छ्, मूत्राघात, अश्मरी, मलदोष, आनाह, कृशता, और अति बढ़ा हुआ वात रक्त आदि नष्ट हो जाते हैं। यह पाक अग्निवर्धक, कान्तिप्रद, तेजोवर्धक, कामवर्धक. और वलीपलित नाशक है। यह योग क्षीणशुक्र वाले मनुष्य और क्षीण रजवाली स्त्रियों को देखकर अश्वनी कुमार ने निर्मित किया है। शुक्रवृद्धि के लिये यह अद्वितीय योग है।

१५. श्री रतिवल्लभ पुगपाक।

बनावट—चिकनी सुपारी ४० तोले को सरोते से बारीक कतर दोला यन्त्र (उष्ण यन्त्र) में रख जल की वाष्प द्वारा स्वेदन करें। नरम हो जाने पर साफ धोकर सुखा कूट कर कपड़ छान चूर्ण करें। इस चूर्ण को ८ गुने गोदुग्ध में मिलाकर पाक करें। खोआ बन जाने पर ३२ तोले गोघृत मिला कर खूब भूनें। फिर २॥ सेर मिश्री की एक तारी चाशनी बनने पर खोआ मिलावें। पश्चात् पाक होने पर उतार लेवें; तथा छोटी इलायची के दाने, गंगेरन, खरैंटी, पीपल, जायफल, शिवलिङ्गी के बीज, जावित्री, तेजपात,

तालीसपत्र, दालचीनी, सोंठ, खस, नेत्रवाला, नागरमोथा, हरड़, बहेड़ा, आंवला, वंशलोचन, शतावर, कोंचकेबीज (छिल के रहित) मुनक्का, तालमखाना, गोखरू, छुहारा, खिरनी, धनिया, कसेरु, मुलहठी, सिंघाड़े, जीरा, बड़ीइलायची, अजवायन, वराटिका भस्म, जटामासी, सोंफ, मेथी, विदारीकंद, सफेद मुसली, काली मुसली, असगंध, कचूर, नागकेसर सफेद मिर्च नयीचिरोंजी, सेमल के बीज, गज पपल, कमलगट्टा की जिब्बी निकाली हुई गिरी, सफेद चंदन, रक्त चंदन, और लौंग इन ५० औषधियों को कपड़ छान चूर्ण ४-४ तोले मिलावें। पश्चात् रससिंदूर, वङ्ग भस्म, नागभस्म, लोहभस्म और अभ्रक भस्म १-१ तोला तथा कस्तूरी और कपूर ४-४ माशे मिलाकर २-२ तोले के लड्डू बना लें। (यो० र०)

मात्रा—आधे से एक लड्डू तक अग्निबल और शरीरबल के अनुसार खाकर ऊपर मिश्री मिला हुआ दूध २० तोले पीवें।

उपयोग यह पाक शीतकाल में सेवन के लिये अति हितावह है। इस पाक के सेवन से वीर्य की वृद्धि, कामोत्तेजना और अग्नि की दीप्ति होती है। यह पाक हृद्य और पौष्टिक है। वृद्ध मनुष्य भी इस पाक के सेवन से युवा के समान बलवान, तेजस्वी और सुन्दर बन जाता है।

यदि इस पाक में खुरासानी अजवायन, काले धतूरे के शुद्ध बीज, आकलकरा, समुद्र शोष, माजूफल, खसखस और दालचीनी ४-४ तोले तथा भूनीभांग सबके वजन से आधी मिला लेवें, तो यह कामेश्वर मोदक कहलाता है।

सूचना—इस पाक के सेवन काल में खटाई का बिलकुल त्याग करना चाहिये; तथा लड्डू और दूध पच जाने पर भोजन करना चाहिये। दूध पचन होने के पहले भोजन नहीं करना चाहिये।

१६ अहिफेनपाक।

विधि—आकलकरा, केशर, लौंग, जायफल, भांग, शुद्ध

हगुल, ये ६ औषधियां २-२ तोले तथा अफीम १ तोला लें। अफीम को १६ तोले दूध में मिलाकर मावा बना लें। अन्य औषधियों को कूट कर कपड़ छान चूर्ण करें। फिर १६ तोले मिश्री की चाशनी बनावें। कुछ शीतल होने पर उसमें मावा और औषधियां का चूर्ण मिलाकर २-२ रत्ती की गोलियां बना लेवें। (यो० चि०)

मात्रा—१ से २ गोली रात्रि को मिश्री मिले दूध के साथ।

उपयोग—इस औषधि का सेवन करने से क्षय, कृशता आदि व्याधियां दूर होकर शरीर हृष्ट पुष्ट और बलवान बनता है। यह रसायन कामोत्तेजक है। मात्रा हो सके उतनी कम लेनी चाहिये। एवं दूध जितना पचन हो सके उतना अधिक परिमाण में लेना चाहिये।

१७. माजून कुचिला

विधि—शुद्ध कुचिला २ तोले, जावित्री, जायफल, लौंग, और अफीम, चारों ४-४ माशे, केशर ३ माशे, सफेद मिर्च १॥ माशा, कस्तूरी १ माशा, और अम्बर ४ रत्ती लेवें। सब औषधियों को कूट कपड़ छान चूर्ण कर लेवें।

(श्री० पं० गुरुशरणदासजी)

मात्रा—१ से ४ रत्ती तक दिन में दो बार ६ माशे शहद मिलाकर सेवन करें। या २-२ रत्ती की गोलियां बांधकर २-२ गोली दिन में दो बार दूध के साथ सेवन करते रहें। अथवा १० तोले शहद मिलाकर माजून बना लेवें। फिर १ से २ माशे सेवन करें।

उपयोग—यह माजून जीर्ण वातप्रकोप में अतिहित-कारक है। जिन वात रोगी को कभी कब्ज हो, कभी पतला

दस्त लगता हो, उनको यह अधिक अनुकूल रहता है। यह निर्बलता को दूर कर कामोत्तेजना करता है; और वीर्य को बढ़ाता है। पक्षाघात, गृध्रसी, सर्वाङ्ग वात, भिन्न भिन्न स्थान पर बार बार वातप्रकोप होजाना और उदरवात आदि रोगों की जीर्णावस्था में यह औषधि प्रयोजित होती है।

१८. कन्दर्प सुन्दर तैल

बनावट—श्वेत गुञ्जा, खिरनी के बीजों का मगज, जायफल और लौंग चारों को १०-१० तोले मिला कूट कर कपरौटी की हुई बोतल में भरें। फिर बोतल के मुँह पर लोहे के तार की गोली बना डाट की तरह लगा देवें। ताकि तेल टपक सके और औषध चूर्ण न निकल सके। पश्चात् पाताल यंत्र से तेल निकाल लेवें। (श्री० पं० गुरुशरणदासजी)

नोट—यदि इसमें शुद्ध भल्लातक मिलाया जाय तो और विशेष वाजीकरण करता है।

मात्रा—१ सींक भर तेल नागरबेल के पान पर लगाकर सेवन करें। ऊपर मक्खन मिश्री खायें या गोघृत १ छटाँक निवाया करके पीवें।

उपयोग—यह तेल अत्यन्त कामोत्तेजक और बलवर्द्धक है। २१ दिन तक ब्रह्मचर्य के पालन सह सेवन करने पर शरीर सुदृढ़ बन जाता है।

१९. शक्ति संजीवन अवलेह

बनावट—मग्ज पिस्ता ३५ माशा, मग्ज बादाम ३५ माशा, हब्बुल खिजरा ३५ माशा, मग्ज अखरोट ३५ माशा, सकनकूर ३५ माशा, कुलींजन ३५ माशा, सकाकुल ३५ माशा, बहमन सफेद ३५ माशा, बहमन लाल ३५ माशा, तोदरी सफेद ३५ माशा, तोदरी लाल ३५ माशा, तोदरी पीली ३५ माशा, जायफल

१५ माशा, हब्बेकिल किल ३५ माशा, काले तिल ३५ माशा, दालचीनी ३५ माशा, सुम्बलतीस (वालछड़) २३ माशा, साद कुम्पी (नागरमोथा) २३ माशा, लौंग २३ माशा, कबाबचीनी २३ माशा, तुख्म गाजर २३ माशा, तुख्म हलीयून असली २३ माशा, तुख्ममूली २३ माशा, तुख्म सलाम २३ माशा, तुख्म प्याज २३ माशा, तुख्मसिब्बत २३ माशा, इन्द्रयवमीठे २३ माशे, दरुनज अकरबा २३ माशा, जरन्ब २३ माशा, सौंठ ३५ माशा, जावित्री १४ माशा, पीपल १४ माशा, सालम ६ तोला, ताजा सफेद खोपरा ६ तोला, खसखस सफेद ६ तोला, सुरञ्जान २० माशा, बोजीदान २८ माशा, पोदीना २८ माशा, माहसुतर अरावी २८ माशा, केसर २८ माशा, गूगल की लकड़ी (पतली पतली टहनियां) २८ माशा, सुवर्ण वर्क ६ माशा, चाँदी के वर्क ६ माशा, अम्बर ६ माशा, कस्तूरी ६ माशा, शहद और मिश्री सब ओषधियों से तिगुनी (दोनों मिलाकर) लेवें।

विधि—पहले मगजात और जायफल, जावित्री, तेल वगैरह स्निग्ध वस्तुओं को शिला पर खूब बारीक पिसवावें। केसर को अर्क गुलाब केवड़ा में घोटकर अलग रक्खें। कस्तूरी को साफ करके बाल वगैरह निकाल कर शुद्ध करें। काष्ठादि ओषधियों का कपड़ छान चूर्ण करके खरल में डालें फिर कस्तूरी और अम्बर डालकर घोटें। इसकी विधि यह है पहले अम्बर का ४ तोले दानेदार शक्कर अथवा मिश्री के साथ घोटें। फिर सब दवाओं को मिलाकर शनैः शनैः ४ प्रहर घोटें। जब अच्छी तरह घुट जाय तब मगजयात पिसा हुआ खरल में डालकर मिलाकर दो घंटा घोटें। एक जिगर करलें। फिर शक्कर की चासनी ४ तार की अर्थात् अवलेह जैसी चासनी होती है वैसी करके केशर चाशनी में डालकर चाशनी को फिर देखें। जब पतलापन न हो और चाशनी वैसे

हो आजाय तब चाशनी को उतार कर ठंडा कर लें। तदनन्तर खरल की हुई दवाइयाँ डालकर फिर वर्क मिला देवें। फिर चीनी के अमृतबान में या काँच के बर्तन में रखकर ५-७ दिन तक धान्यराशि में दबादें। फिर निकाल कर अग्नि बल के अनुसार देवें।

मात्रा---६ माशे से १ तोला प्रातः सायं चाटकर यथारुचि दूध पीवें।

उपयोग-- वाजीकरण कर्त्ता, पौष्टिक है। वीर्य का अटूट भण्डार है। यह एक यूनानी योग है। हमारे परम्परागत अनुभव से उत्तम सिद्ध हुआ है। अतः सर्व साधारण के हितार्थ पाठकों की सेवा में प्रस्तुत है। वैद्यराज पं० श्री० रामचन्द्रजी

२०. धात्री रसायन (अनोश दारु)

विधि---ताजे पक्के बड़े आंवले २॥ सेर का २४ घण्टे तक दूध में भिगोवें। फिर दूसरे दिन जल में डालकर उबालें। आंवले नरम हो और सरलता से गुठली निकल जाय उतना पकालें। फिर गुठली निकाल लोहे के तार की चलनी से कलईदार बर्तन पर उस पर आंवलों को मसल कर छान लेवें। छने हुए गूदे में १० तोले गोघृत मिलाकर पीतल की कलईदार कड़ाही में मन्दाग्नि पर पकावें और लकड़ी के खोंचे से हिलाते रहें। आंवले पककर घी छोड़ने लगे तब नीचे उतार लेवें। पश्चात् ५ सेर शक्कर को अर्क गुलाब में मिला चाशनी करें। आंवलों को मिलाकर कड़ाही को नीचे उतार लेवें।

फिर छोटी इलाइची के बीज, बड़ी इलाइची के बीज, नागरमोथा, अगर, तगर, जटामांसी, सफेद चन्दन, वंश लोचन, रूमी मस्तंगी, जायफल, जावित्री, केशर, तेजपात, तालीस पत्र,

लौंग, गुलाब के फूल, धनियां, कालाजीरा, कपूर काचरी निर्विषी (अदवार खताई), दालचीनी, आबरेशम कतरा हुआ और बिजौरे के सुखाये हुए छिलके इन २३ ओषधियों को १-१ तोले चूर्ण कर मिलावें। पश्चात् चांदी के वर्क बड़े १०० (१ तोला) और सोना के वर्क २५ (३ माशे) मिला अमृत बान में भर लेवें ४० दिन के बाद उपयोग में लेवें।

इसमें कस्तूरी, अम्बर, प्रवालपिष्टी और मोती की पिष्टी १-१ तोला मिलाने पर यह योग विशेष गुण कारक होता है।

मात्रा—६-६ माशे सुबह भोजन के ३ घण्टे पहले निवाये गो दुग्ध के साथ देवें। रात्रि को सोने से आध घण्टे पहले।

उपयोग—यह योग उत्तम रसायन, वाजीकर, पौष्टिक, आमाशय, मस्तिष्क और हृदय को बलवान बनाने वाला तथा अग्निप्रदीपक है।

२१ शतावरी घृत

विधि—शतावरी का रस २५६ तोले, दूध २५६ तोले, गो घृत १२८ तोले, तथा जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीर काकोली, मुनक्का, मुलहठी, मुद्गपर्णी, माषपर्णी, विदारीकंद और रक्तचन्दन, इन १२ ओषधियों को समभाग मिलाकर किया हुआ कल्क ३२ तोले लें। सबको मिलाकर मंदाग्नि पर पाक करें। (जल भी २५६ तोले मिला लेवें) घृत सिद्ध होने पर शक्कर और शहद १६-१६ तोले मिलाकर एक जीव बना लें।

(भै० र०)

मात्रा—आध से १ तोला तक दूध के साथ।

उपयोग—यह घृत उत्तम पौष्टिक, शीत वीर्य और वाजीकरण है। रक्तपित्त, वातरक्त और क्षीण शुक्र रोगियों के लिये अति हितकारक है। अंगदाह, शिरोदाह, ज्वर, पित्तप्रकोप, योनिशूल

दाह, पैत्तिक मूत्रकृच्छ्र आदि रोगों को शमनकर, बल, वीर्य, वर्ण और अग्नि की वृद्धि करता है; तथा शरीर को पुष्ट बनाता है।

शुक्राशय शिथिल हो जाने पर शुक्र का योग्य अवरोध एवं पित्त प्रकोपके हेतु से शुक्र पतला और उष्ण रहता है; तथा बारबार थोड़ा थोड़ा पेशाब होता रहता है; शिर में उष्णता सारे शरीर में दाह, विविध अंगो में शूल चलता हो, पित्त प्रकोप जनित प्रदर विकार हो और मूत्र कृच्छ्र आदि लक्षण प्रतीत होते हैं उन सबको यह घृत दूर करता है और देह को सबल बनाता है।

क्षय कीटाणु मांसक्षय, प्रदाह जनित स्थानिक (उपवृक्क), मांसक्षय, घातक ग्रन्थि बनकर उपवृक्क शिरा पर दबाव आना, उप वृक्क स्थान में रक्तवाहिनियों में रक्त अत्यधिक भर जाना तथा अर्धेन्दु ग्रन्थि के प्रदाह अथवा दबाव आदि हेतु से उदवृक्क (Suprarenal copsule) की विकृत होती है फिर वैवर्ण्य पाण्डु (Addisons dislase) रोग की प्राप्ति होती है। इस रोग में पाण्डुता; अति दुर्बलता, हृदय स्पन्दन, अति निर्बल हो जाना; श्वास भर जाना, शीर्ष शूल, बारबार जम्भाई आना, मुख और कण्ठ आदि पर ताम्रवर्ण की त्वचा, नाड़ी क्षीणता, आमाशय की उग्रता से क्षुधा वृद्धि और प्रायः वमन तथा क्वचित् अतिसार आदि लक्षण प्रतीत होते हैं। उस रोग पर मुख्य कारण को दूर करने वाली औषधि के साथ इस शतावरी घृतका आध से एक तोले तक सेवन भोजन के प्रारम्भ में कराने से विशेष लाभ पहुँचता है।

क्षय कीटाणु जन्य विकार होने पर बसंत कुसुमाकर के साथ और अन्य प्रकार होने पर तालसिंदूर और नवजीवन रस के साथ इस घृत का प्रयोग करना चाहिये। एवं उपद्रव अनुसार चिकित्सा करनी चाहिये। ग्रन्थि और प्रदाह आदि कारण को दूर करने के लिये बाह्योपचार भी करते रहना

सोंठ, दालचीनी, लौंग, बड़ी कटेली के फल; जमालगोटा, एरण्डबीज, अजवायन इसबन्द (हरमल), बुरादा हाथीदांत, ये २२ ओषधियां ६-६ माशे. वीरबहूटी, केंचुए सूखे, प्याज के बीज और मूली के बीज १-१ तोले; शेर की चर्बी, जंगली सूअर की चर्बी, मुर्गी के अन्डों की जर्दी और चमेली का तेल ५-५ तोले लेवें। पारद गन्धक की कज्जली कर हरताल, सोमल, और वच्छनाग को क्रमशः मिलावें। फिर शेष काष्ठादि ओषधियों को कूटकर चूर्ण करें। उसके साथ हाथीदांत का बुरादा, बीरबहूटी और केंचुए को खरल कर मिलावें। पश्चात् कज्जली वाला चूर्ण फिर चर्बी, तैल आदि मिला अच्छी तरह खरल कर सात कपड़ मिट्टी की हुई बड़ी बोतल में भरें। बोतल के मुंह पर लोहे के तार की गोली लगा देवें जिससे औषध न गिर जाय और तैल टपक कर निकल जाय। फिर पाताल यन्त्र की विधि अनुसार मंदाग्नि देकर तैल निकाल लेवें। यदि यन्त्र में बोतल के चार चार अंगुल ऊंचाई तक बालू भरकर ऊपर कण्डों की अग्नि दें, तो तिला विशेष गुणदायक बनता है। जो तैल टपके उसे चौड़े मुंह की शीशी में भर लेवें। इस तैल का रंग पहले लाल प्रतीत होता है। शीतल होकर जम जाने पर पीला-सा हो जाता है।

उपयोग विधि - इस तैल में से एक चने जितना निकाल कर रोज रात्रि को १५-२० मिनिट तक धीरे-धीरे एक अंगुली से लिङ्ग पर मर्दन करते रहें। सुपारी, सींवन और वृषण को तिला न लग जाय इस बात को सम्हाल लें। कदाच लग जाय तो तुरन्त कपड़े से पोंछ दूसरे गीले कपड़े से साफ कर फिर घृत या तेल लगा लेना चाहिये। मालिश कर लेने के पश्चात् नागरवेल का पान निवाया कर सुहाता सुहाता लपेट ऊपर पतले कपड़े की पट्टी बांधें। फिर कच्चा डोरा लपेट लेवें। रात्रि को खुल न जाय, इसलिये डोरे अधिक लपेट देना चाहिये

दूसरे रोज़ सुबह पट्टी खोल देवें। दिन में बादाम का तैल या मक्खन या धोया घी लगा लेवें। पुनः रात्रि को मालिश कर पट्टी बांधें। इस तरह लेप करते रहने से ५-७ दिन में छोटी छोटी फुन्सियां, फफोले, या खुजली आदि उपद्रव हो जाय, तो तिला लगाना बन्द करें, तथा दिन और रात्रि को तैल लगाते रहें। २-३ दिन में फुन्सियां दूर होने पर पुनः तिला लगाने का प्रारम्भ करें। इस तरह २१ दिन तिला लगाने से पूर्ण शक्ति आजाती है।

हस्त मैथुन, गुदामैथुन, पशुमैथुन, या और रीति से मैथुन करते रहने से लिङ्गेन्द्रिय निर्बल; ढीली और टेढी हो जाती है। ऊपर नीली नीली शिराएं चमकती हों। ये सभी विकार इस तिले के प्रयोग से दूर होते हैं। १०-२० वर्ष के पुराने रोगियों को भी इस तिला से लाभ होगया है।

इसके सेवन काल में मन, वचन, कर्म से ब्रह्मचर्य का पालन करें। और शीतल जल अर्थात् कच्चे पानी से बचें। यदि स्नान करना आवश्यक हो तो इन्द्री को बचा कर सुखोष्ण जल से स्नान करें। सिरका, राई, काचरी, अमचूर आदि की तीक्ष्ण खटाई एवं तीक्ष्णोष्ण मसालों से भी बचें।

२३. वाजीकरण गुटिका।

बनावट—(पिल्युला कोका कम्पोजिटा)

एक्सट्रेक्ट कोका	Ext. Coca	१॥ ड्राम
,, नक्सवामिका	Ext. Nux Vom.	१ ड्राम
,, केनेबिसइंडिका	Ext. Cannabis indica	१ ड्राम
,, डेमियाना	Ext. Damiana	४ ड्राम
फेरी सल्फ	Ferri Sulph.	१ ड्राम

इन सबको मिलाकर १२८ गोलियां बना लेवें। इनमें से प्रातः सायं १-१ तोला मिश्री मिले दूध के साथ सेवन करते रहने से नपुंसकता, और वीर्य की निर्बलता दूर होजाती है।

* समाप्त *

प्रकाशित पुस्तकें

१—रसतन्त्रसार सिद्धप्रयोग संग्रह प्रथम खण्ड पंचम संस्करण
मूल्य अजिल्द रु० ७ पोस्टेज ।॥-)

२—चिकित्सा तत्वप्रदीप प्रथम खण्ड द्वितीय संस्करण प्रेस में छप रहा है। मू० अजिल्द रु० ८) सजिल्द रु० ९ पो० ।॥=)

३ —चिकित्सा तत्वप्रदीप द्वितीय खण्ड..................समाप्त

४ —वैज्ञानिक विचारणा मूल्य रु० १॥।) पोस्टेज ।≡)

५ - रुग्ण परिचर्या मूल्य रु० ३॥) पोस्टेज ॥=)

६—नेत्ररोग विज्ञान छप रहा है। मू० सजिल्द रु० १५) पो० अलग

७—संक्षिप्त औषध परिचय छप रहा है।

सिद्ध परीक्षा प्रदीप, चिकित्सातत्व प्रदीप द्वितीय खण्ड द्वितीय संस्करण, ये दोनों ग्रन्थों थोड़े ही समय में छापने के लिये प्रेस में दिये जायेंगे।

संक्षिप्त औषध परिचय

हमारे प्रेमी पाठक तथा ग्राहकों का कुछ वर्षों से अत्यन्त आग्रह रहा है कि, एक बृहद् सूचीपत्र प्रत्येक औषधि के गुण-धर्म मात्रा तथा अनुपान का उल्लेख करते हुए छपाया जायँ। प्रयत्न करने पर भी युद्ध काल की अप्राप्यता तथा विषमता के कारण हम आज्ञा पालन करने में असमर्थ रहे। अब भी युद्ध समाप्त हुए काफी समय हो गया है परन्तु राजनैतिक कारणों के हेतु से साम्यस्थिति नहीं आ पायी है। फिर भी अत्यन्त आग्रह के कारण हमने एक छोटी सी पुस्तिका 'संक्षिप्त औषध परिचय, छपवाने का साहस किया है। यह छोटी सी पुस्तिका आवश्यकता पर बड़ी भारी सहायक सिद्ध होगी। इसके उत्तरार्ध में रोगानुसार और उनके उपद्रवों के अनुसार अति संक्षेप में औषध योजना का उल्लेख है। तथा इसके पूर्वार्ध में भस्म, कूपी पक्व रसायन; खरलीय

रसायन, गुटि... ...सम्पूर्ण औषधियों का गुण-धर्म, मात्रा और अनुपान संक्षेप में दर्शाया है। यह पुस्तक हर समय प्रत्येक वैद्य के साथ रखने की है। तथा विद्यार्थियों के लिये तो मार्ग प्रदर्शक सिद्ध होगी। यह सप्टेम्बर के अन्त तक तैयार हो जायगी। पृष्ठ संख्या १२० मूल्य ॥=) पोस्टेज ।≡)

रुग्ण-परिचर्या

लेखक—डा० कृ० श्री० म्हसकर M. D. M. A., B. Sc, D. P. H.

यह ग्रंथ परिचारक और परिचारिकाओं (nurses) को परिचर्या शिक्षा देने के लिये लिखा गया है। विविध प्रकार के रोगियों की सेवा शुश्रूषा किस प्रकार से करनी चाहिये? किन-किन नियमों को सम्हालना चाहिये? कितनेक आगन्तुक रोग चोट लगना, जल में डूबना अग्नि में जल जाना, बिजली का धक्का लगना, विष सेवन आदि में तात्कालिक चिकित्सा किस प्रकार करनी चाहिये? और विविध रोगों के उपचारार्थ किस किस वस्तु तथा शस्त्र आदि साधनों की आवश्यकता पड़ती है इत्यादि बातें विस्तारपूर्वक लिखी गई हैं। इनके अतिरिक्त नाड़ी परीक्षा, मल, मूत्र, कफ आदि के निरक्षण और परिक्षण, विविध प्रकार के पट्टीबन्ध (Bandage), वैयक्तिक और सामाजिक स्वास्थ्यविज्ञान, निसर्गोपचार, स्त्रियों और बालकों की परिचर्या, मरणोन्मुखी और मृत व्यक्तियों की परिचर्या आदि विषयों का वर्णन तथा ३०० से अधिक चित्र भी दिये हैं।

साइज २०-३० सोलह पेजी २६ पौण्ड कागज। पृष्ट संख्या ५०० । मूल्य ३॥) पोस्टेज ।≡)।